Downloaded from https:// www.studiestoday.com

कक्षा
12

गृह विज्ञान

कक्षा 12
गृह विज्ञान

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

गृह विज्ञान

HOME SCIENCE

कक्षा – 12

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

पुस्तक : गृह विज्ञान

कक्षा – 12

संयोजक :– **डॉ. विमला डूंकवाल**
अधिष्ठाता, स्नातकोत्तर अध्ययन, बीकानेर

लेखकगण :–
1. **डॉ. कुसुम मित्तल**
विभागाध्यक्ष, गृह विज्ञान राजकीय महाविद्यालय, उदयपुर

2. **डॉ. गायत्री तिवारी**
सहायक आचार्य, गृह विज्ञान महाविद्यालय, (एमपीयूएटी), उदयपुर

3. **श्रीमती स्वर्णलता**
व्याख्याता, राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर

4. **श्रीमती दीप्ति पंचोली**
प्रधानाचार्य, राजकीय उ.मा.विद्यालय, बरना, किशनगढ.,अजमेर

5. **श्रीमती सुनीता मिश्रा**
व्याख्याता, राजकीय बा.उ.मा.विद्यालय, जवाजा, अजमेर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

पुस्तक : गृह विज्ञान

कक्षा – 12

संयोजक :– **प्रो. भारती भटनागर**
डीन, गृह विज्ञान महाविद्यालय(एसकेआरएयू), बीकानेर

सदस्य :–

1. **प्रो. विमला डूंकवाल**
   आचार्य, गृह विज्ञान महाविद्यालय(एसकेआरएयू), बीकानेर

2. **डॉ. रितु माथुर**
   सहायक व्याख्याता, आहार विज्ञान एवं पोषण विभाग,
   महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर

3. **श्रीमती मीनू चतुर्वेदी**
   प्रधानाचार्या, राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, फारकिया, अजमेर

4. **श्रीमती परमजीत कौर बिन्द्रा**
   प्रधानाचार्या, राज. उ.मा. विद्यालय, लक्ष्मण डूंगरी, जयपुर

5. **श्रीमती दीप्ति पंचोली**
   प्रधानाचार्य, राजकीय उ.मा.विद्यालय, बरना, किशनगढ.,अजमेर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रस्तावना

गृह विज्ञान व्यवहारिक शिक्षा होने के साथ–साथ व्यवसायिक एवं पारिवारिक शिक्षा का विषय भी है। इस विषय के विद्यार्थी अपनी दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विविध क्रियाकलापों के वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाते हुए अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति का प्रदर्शन भी कर सकते है जिससे शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से स्वस्थ एवं सम्पन्न व्यक्ति, परिवार, समाज तथा राष्ट्र का निर्माण कर सके। राज्य सरकार के निर्देशानुसार नये पाठ्यक्रम के अनुसार 2015 में कक्षा 11 की पुस्तक लिखी गई थी। इसी के अनुसार 2017 में कक्षा 12 की पुस्तक लिखी गयी।

गृह विज्ञान के प्रथम एवं द्वितीय प्रश्न पत्र में कुल मिलाकर पाँच इकाईयां है। पुस्तक में मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बन्ध से सम्बन्धित विषय वस्तु डॉ. गायत्री तिवारी एवं श्रीमती दीप्ति पंचोली द्वारा सम्मिलित की गई है। पारिवारिक पोषण की विषय सामग्री डॉ. विमला डुकवाल एवं सुनीता मिश्रा द्वारा तथा वस्त्र एवं परिधान की विषयवस्तु श्रीमती स्वर्णलता सिंह द्वारा तैयार की गई है। गृह प्रबन्ध की विषय सामग्री श्रीमती कुसुम मित्तल द्वारा समाविष्ट की गई है। नवीनतम विषयवस्तु सरल, स्पष्ट एवं बोधगम्य भाषा में पर्याप्त व रोचक उदाहरणों, तालिकाओं एवं चित्रों की सहायता से सम्पादित कर प्रस्तुत की गई है। अध्याय के अन्त में महत्वपूर्ण बिन्दु एवं विभिन्न प्रकार के अभ्यासार्थ प्रश्न किये गये है ताकि विद्यार्थी विषय वस्तु को न केवल आसानी से याद कर सके वरन समझ कर अपने दैनिक जीवन में उपयोग में भी ला सके। प्रायोगिक कार्य का सम्पादन करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि विभिन्न आर्थिक स्तर एवं समुदाय के विद्यार्थी इन प्रयोगों को अपनी तथा विद्यालय में उपलब्ध सुविधानुसार क्रियान्वित कर सकें तथा दैनिक जीवन में भी उपयोग में ला सके। कक्षा 11 की तरह यह पुस्तक भी नियमित स्वयंपाठी विद्यार्थियों, अध्यापकों तथा आम नागरिकों के उपयोग हेतु सार्थक है। पुस्तक को और अधिक उपयोगी बनाने हेतु पाठकों, अध्यापकों, प्रशासकों एवं आम नागरिकों के बहुमूल्य सुझाव आमन्त्रित है।

–डॉ. विमला डूंकवाल
अधिष्ठाता, स्नातकोत्तर अध्ययन,
स्वामी केशवानन्द राज. कृषि विश्वविद्यालय,
बीकानेर (राज.)

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पाठ्यक्रम

समय 3.15 घंटे

पूर्णांक 56
सत्रांक 14

क्र.सं.	अधिगम क्षेत्र	अंकभार
1.	मानव विकास एवं पारिवारिक संबंध	15
2.	आहार एवं पोषण	20
3.	वस्त्र एवं परिधान	09
4.	गृह प्रबन्ध	09
6.	गृहविज्ञान प्रसार शिक्षा	03
		कुल 56

क्र.सं.	इकाई	सैद्धान्तिक	अंकभार
1.	I	मानव विकास एवं पारिवारिक संबंध (I) किशोरावस्था में विकास–I शारीरिक, गत्यात्मक एवं यौन विकास (ii) किशोरावस्था में विकास–II सामाजिक, संवेगात्मक एवं संज्ञानात्मक विकास (iii) किशोरावस्था की समस्याएं और उनका प्रबन्धन। (iv) कैरियर एवं वैवाहिक जीवन की तैयारी (v) प्रजनन, स्वास्थ्य और यौन संबंधी रोग (vi) व्यस्कावस्था एवं वृद्वावस्था (vii) जनसंख्या नियन्त्रण (viii) विशिष्ट बालक	15
2.	II	आहार एवं पोषण (i) आहार आयोजन (ii) आहार आयोजन प्रक्रिया (iii) शैशवावस्था में पोषण (iv) बाल्यावस्था में पोषण (v) किशोरावस्था में पोषण (vi) व्यस्कावस्था में पोषण (vii) वृद्वावस्था में पोषण (viii) विशिष्ट अवस्था में पोषण– गर्भावस्था (ix) विशिष्ट अवस्था में पोषण– धात्रीवस्था (x) दस्त व ज्वर के लिए आहार आयोजन (xi) भोज्य पदार्थो में मिलावट (xii) सुरक्षित पेयजल व खाद्य स्वच्छता	20

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

3. III वस्त्र एवं परिधान 09
(i) वस्त्र का व्यक्तित्व से सम्बंध
(ii) वस्त्रों का चुनाव
(iii) वस्त्रों की सिलाई
(iv) तैयार परिधान
(v) धब्बे छुड़ाना
(vi) शोधक पदार्थ
(vii) वस्त्रों का संग्रहण

4. IV पारिवारिक संसाधन प्रबंधन 09
(i) पारिवारिक आय
(ii) घरेलू हिसाब–किताब
(iii) बचत एवं विनियोजन–I
(iv) बचत एवं विनियोजन–II
(v) उपभोक्ता समस्याएं
(vi) उपभोक्ता संरक्षण एवं सहायता
(vii) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम
(viii) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986

5. V गृहविज्ञान प्रसार शिक्षा 03
गृहविज्ञान– पारिवारिक एवं व्यवसायिक शिक्षा

गृह विज्ञान प्रायोगिक

समय : 4 घन्टे पूर्णांक : 30

क्र.सं.	अधिगम क्षेत्र प्रायोगिक	अंकभार
1.	मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बंध	4
2.	आहार एवं पोषण	10
3.	वस्त्र एवं परिधान	6
4.	पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन	4
5.	रिकॉर्ड एवं मौखिक	4+2=6

क्र.सं. **अधिगम क्षेत्र प्रायोगिक** **अंक**

1. मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बंध 04
(I) किशोरावस्था की शक्तियां और कमजोरियां।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(ii) एक किशोर/किशोरी की केस स्टडी पर प्रतिवेदन करना।

(iii) वृद्ध अवस्था समस्याएं व सुझाव की तालिका।

2.	II आहार एवं पोषण	8+2
	(i) किसी भी आयु वर्ग हेतु एक दिवस की आहार तालिका बनाना, व्यंजन पकाना और परोसना।	
	(ii) भोज्य पदार्थो में मिलावट की जांच।	
3.	III वस्त्र एवं परिधान	3+3
	(i) ऐप्रेन व टांकों का निर्माण।	
	(ii) वस्त्र पर से धब्बे छुड़ाना।	
	(iii) वस्त्रशोधक बनाने की विधियां।	
4.	IV पारिवारिक संसाधन प्रबंधन	2+2
	(i) बैंक से जमा निकासी के फॉर्म भरवाना और बैंक से खाता खुलवाने के फॉर्म भरवाना	
	(ii) किसी भी खाद्य वस्तु व सामग्री का लेबल तैयार करना व मानकीकरण करना।	
5.	V रिकॉर्ड	04
6.	VI मौखिक	02
	कुल अंक	30

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

विषय सूची - सैद्धान्तिक

इकाई	पाठ नाम	पृष्ठ
I	**मानव विकास एवं पारिवारिक संबंध**	
1.	किशोरावस्था में विकास I : शारीरिक, गत्यात्मक एवं यौन विकास	1
2.	किशोरावस्था में विकास I : सामाजिक, संवेगात्मक एवं संज्ञानात्मक विकास	7
3.	किशोरावस्था की समस्याएँ और उनका प्रबंधन	14
4.	कैरियर एवं वैवाहिक जीवन की तैयारी	
5.	प्रजनन स्वास्थ्य एवं यौन सम्बन्धी रोग	21
6.	वयस्कावस्था और वृद्धावस्था	27
7.	जनसंख्या नियंत्रण	34
8.	विशिष्ट बच्चे	39
II	**आहार एवं पोषण**	
9.	आहार आयोजन	44
10.	आहार आयोजन प्रक्रिया	48
11.	शैशवावस्था में पोषण	58
12.	बाल्यावस्था में पोषण	66
13.	किशोरावस्था में पोषण	75
14.	वयस्कावस्था में पोषण	83
15.	वृद्धावस्था में पोषण	94
16.	विशिष्ट अवस्था में पोषण : गर्भावस्था	101
17.	विशिष्ट अवस्था में पोषण : धात्रीवस्था	109
18.	दस्त एवं ज्वर में आहार	118
19.	भोज्य पदार्थों में मिलावट	124
20.	सुरक्षित पेयजल व खाद्य स्वच्छता	133
	I- सुरक्षित पेयजल	
	II- खाद्य स्वच्छता	
III	**वस्त्र एवं परिधान**	
21.	वस्त्र का व्यक्तित्व से सम्बन्ध	139
22.	वस्त्रों का चुनाव	143
23.	वस्त्रों की सिलाई	147
24.	तैयार परिधान	157

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

25.	धब्बे छुड़ाना	161
26.	शोधक पदार्थ	170
27.	वस्त्रों का संग्रहण	177
IV	**पारिवारिक संसाधन प्रबंधन**	
28.	पारिवारिक आय	180
29.	घरेलू हिसाब-किताब	185
30.	बचत एवं विनियोग-I	190
31.	बचत एवं विनियोग-II	193
32.	उपभोक्ता की समस्याएं	197
33.	उपभोक्ता संरक्षण एवं सहायता	200
34.	उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम	203
35.	उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम-1986	207
V	**गृहविज्ञान प्रसार शिक्षा**	
36.	गृह विज्ञान - पारिवारिक एवं व्यावसायिक शिक्षा	213

विषय सूची - प्रायोगिक

इकाई	**पाठ नाम**	
I	मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बंध	
	(1) किशोरावस्था की शक्तियां और कमजोरियां	190
	(2) एक किशोर/किशोरी की केस स्टडी पर प्रतिवेदन	192
	(3) वृद्ध अवस्था समस्याएं एवं सुझाव	193
II	आहार एवं पोषण	
	(4) भोज्य पदार्थो की संदर्भ इकाई	194
	(5) बाल्यावस्था में आहार आयोजन	199
	(6) किशोरावस्था में आहार आयोजन	203
	(7) वयस्कावस्था में आहार आयोजन	206
	(8) वृद्धावस्था में आहार आयोजन	212
	(9) गर्भावस्था में आहार आयोजन	215
	(10) धात्रीवस्था में आहार आयोजन	218
	(11) दस्त एवं ज्वर के रोगी हेतुआहार आयोजन	222
	(12) भोज्य पदार्थो में मिलावट की जांच	224

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

III वस्त्र एवं परिधान

(13) ऐप्रिन व टांकों का निर्माण 227

(14) तैयार पोशाक का मूल्यांकन 231

(15) धब्बे छुडने की विधियां 232

(16) जल के तापमान का वस्त्रों पर प्रभाव 236

(17) वस्त्रशोधक बनाने की विधियां 237

IV पारिवारिक संसाधन प्रबंधन

(18) बैंक संबंधित प्रायोगिक कार्य 238

(19) विभिन्न वस्तुओं के लेबल का मूल्यांकन एवं लेबल तैयार करना 240

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई I – मानव विकास एवं पारिवारिक संबंध

किशोरावस्था में विकास

शारीरिक, गत्यात्मक एवं यौन विकास

Adolescent Development
Physical, Motor and Sexual Development

परिचय

किशोरावस्था शब्द अंग्रेजी भाषा Adolescence शब्द का हिन्दी पर्याय है। Adolescence शब्द का उद्‌भव लेटिन भाषा से माना गया है जिसका सामान्य अर्थ है बढ़ना या विकसित होना। बाल्यावस्था से प्रौढ़ावस्था तक के महत्वपूर्ण परितर्वनों जैसे शारीरिक, मानसिक एवं अल्पबौद्धिक परिवर्तन की अवस्था किशोरावस्था है। वस्तुत: किशोरावस्था यौवानारम्भ से परिपक्वता तक वृद्धि एवं विकास का काल है। 10 वर्ष की आयु से 19 वर्ष तक की आयु के इस काल में शारीरिक तथा भावनात्मक रूप से अत्यधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन आते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिक इसे 13 से 18 वर्ष के बीच की अवधि मानते हैं, जबकि कुछ की यह धारणा हैं कि यह अवस्था 24 वर्ष तक रहती है।

एल. कारमाइकेल (1968) के अनुसार, ''किशोरावस्था जीवन का वह समय है, जहाँ से एक अपरिपक्व व्यक्ति का शारीरिक और मानसिक विकास एक चरम सीमा की ओर अग्रसर होता है। दैहिक दृष्टि से एक व्यक्ति तब किशोर बनता है जब उसमें वय: संधि प्रारम्भ होती है और उसमें संतान उत्पन्न करने की योग्यता प्रारम्भ हो जाती है। वास्तविक आयु की दृष्टि से बालिकाओं में वय: संधि (यौवनारम्भ) अवस्था 12 वर्ष की आयु से 15 वर्ष की आयु के मध्य प्रारम्भ होती है। इस आयु अवधि में 2 वर्ष की आयु किसी ओर घट-बढ़ सकती है। बालकों के लिये वय: संधि का प्रारम्भ इसी आयु में प्रारम्भ होता है, बहुधा वह बालिकाओं की अपेक्षा 1 या 2 वर्ष देर से प्रारम्भ होता है।''

कारमाइकेल की उपर्युक्त परिभाषा बड़ी व्यापक रूप में है। जर्सील्ड (1978) की परिभाषा में भी यह स्पष्ट है कि किशोरावस्था वय: संधि के बाद की अवस्था है। जर्सील्ड के अनुसार, ''किशोरावस्था वह अवस्था है जिसमें एक विकासशील व्यक्ति बाल्यावस्था से परिपक्वावस्था की ओर बढ़ता है।''

लेकिन किशोरावस्था को निश्चित अवधि की सीमा में नहीं बांधा जा सकता। यह अवधि तीव्र गति से होने वाले शारीरिक परिवर्तनों विशेषतया यौन विकास से प्रारंभ होकर प्रजनन परिपक्वता तक की अवधि है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार यह गौण यौन लक्षणों (यौवानारम्भ) के प्रकट होने से लेकर यौन एवं प्रजनन परिपक्वता की ओर अग्रसर होने का समय है जब व्यक्ति मानसिक रूप से प्रौढ़ता की ओर अग्रसर होता और वह सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से उपेक्षाकृत आत्म-निर्भर हो जाता है जिससे समाज में अपनी एक अलग पहचान बनती है।

किशोरावस्था को सुविधा की दृष्टि से दो उपअवस्थाओं में बांट दिया गया है– (i) पूर्व किशोरावस्था (ii) उत्तर किशोरावस्था

किशोरावस्था का आरम्भिक काल यौवनारम्भ है। जिसमें अलिंगता समाप्त होकर लिंगता आ जाती है। यह काल बाल्यावस्था की समाप्ति से कुछ पहले शुरु होती है और किशोरावस्था प्रारम्भ होने के कुछ बाद तक चलती है। यौवनारम्भ को कभी–कभी प्राक्–किशोरावस्था भी कहते है। इस समय शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन तेजी से होता है। इसमें बालोचित शरीर, जीवन के प्रति बालोचित दृष्टिकोण और बालोचित व्यवहार पीछे छूट जाते है और उनकी जगह परिपक्व शरीर, बदलती हुई अभिवृत्तियां और नये प्रकार का व्यवहार ले लेते है। यौवनारम्भ लड़कियों में 9–10 वर्ष की आयु से लेकर मासिक धर्म की शुरुआत (13–14 वर्ष) तक का काल लड़कों में यौवनारम्भ 12 वें वर्ष से शुरु होकर प्रथम स्वप्नदोष (14–15 वर्ष) तक रहता है। यौवन विकास आरम्भ होने के बाद भी एक निश्चित गति से कुछ वर्षो तक चलता है, जब तक कि पूर्ण जनन परिपक्वता (Reproductive Maturity) प्राप्त नहीं हो जाती। 13 वर्ष से लेकर 20–21 वर्ष तक के काल को किशोरावस्था कहते है।

(1) **पूर्व-किशोरावस्था**–यह अवस्था 13-14 वर्ष से लेकर 16 या 17 वर्ष की होती है।

लड़कियों में यह अवस्था 13 वर्ष की आयु से 16वर्ष होती है तथा लड़कों में लगभग एक वर्ष बाद प्रारम्भ होती है।

(2) **उत्तर-किशोरावस्था**–लड़कियों की 16 -17 वर्ष से 20-21 वर्ष तक की अवस्था है व लड़कों की 18 वर्ष से 21 वर्ष तक है। पूर्व और उत्तर-किशोरावस्था की विभाजक रेखा सत्रहवें वर्ष के आस-पास मानी जाती है। जबकि सामान्य लड़का या लड़की ग्यारहवीं-बारहवीं कक्षा में होते हैं। माता-पिता उसे प्राय: वयस्क समझने लगते हैं और वह प्रौढ़ों के कार्य क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए या

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

कॉलेज या किसी व्यवहारिक प्रशिक्षण में जाने के लिये तैयार समझा जाता है।

किशोरावस्था की विशेषताएँ

उपरोक्त विवेचन के आधार पर किशोरावस्था की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

(1) **किशोरावस्था शैशवावस्था के लक्षणों की पुनरावृत्ति है:–** किशोरावस्था की मानसिक विशेषताओं का विश्लेषण करने पर यह पाया गया है कि इस अवस्था के कई लक्षण शैशवास्था के लक्षणों से मिलते–जुलते हैं। इसलिये इसे बाल्यावस्था के लक्षणों की पुनरावृत्ति कहा गया है। किशोर बाल्यावस्था की तरह चंचल होते हैं। उनमें बालकों की तरह संवेगशीलता भी अधिक होती है। जैसे किशोरावस्था के संवेग बहुत कुछ वहीं है जो बाल्यावस्था के प्रकार और अभिव्यक्ति के रूप में होते हैं।

(2) **किशोरावस्था सांवेगिक अस्थिरता की अवस्था है:–** किशोरावस्था में बालक के व्यवहार में पाई जाने वाली अस्थिरता अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है। इसलिये इसे 'तूफान व तनाव' की आयु भी कहा जाता है। इस अवस्था में शरीर और ग्रंथियों के परिवर्तनों के कारण संवेगात्मक तनाव बहुत बढ़ जाता है।

गेसेल, (1956) के अनुसार इस आयु में वह अपने संवेगों पर नियन्त्रण करने की प्रबल इच्छा निश्चित रूप से रखता है। इस प्रकार ज्यों–ज्यों पूर्व–किशोरावस्था समाप्ति की ओर बढ़ती है त्यों–त्यों परम्परागत तूफान और तनाव के प्रमाण कम होते जाते हैं। इस प्रकार किशोरों के संवेग प्राय: तीव्र, अनियंत्रित, अभिव्यक्ति वाले और विवेक शून्य तो होते हैं लेकिन उनके संवेगात्मक व्यवहार में प्राय: प्रतिवर्ष उत्तरोत्तर सुधार होता जाता है।

इस अवस्था में संवेगों की अस्थिरता उनके व्यवहार, सामाजिक संबन्धों आदि में अधिक पाई जाती है। इसी अस्थिरता के कारण वह अपने भविष्य के बारे में योजनाएँ नहीं बना पाते है। इसी प्रकार उनकी पसंद में भी अस्थिरता पाई जाती है। इसका कारण किशोरों में छुपी असुरक्षा की भावना है।

(3) **किशोरावस्था परिवर्तन की अवस्था है** ई. हरलॉक (1964):–के अनुसार किशोरावस्था के परिवर्तनों का ज्ञान धीरे–धीरे किशोर को होता जाता है और इस ज्ञान की वृद्धि के साथ–साथ वह वयस्क व्यक्तियों की भाँति व्यवहार करना शुरू कर देता है, क्योंकि वह वयस्क दिखाई देता है। एम. मरेश (1955) के अनुसार किशोरावस्था में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक अर्थात् सम्पूर्ण विकास तेजी से होते हैं। इसमें बाल्यावस्था का शरीर, जीवन के प्रति बाल सुलभ दृष्टिकोण और बाल्यकाल का व्यवहार पीछे छूट जाते हैं और उनकी जगह परिपक्व शरीर, व बलवती हुई अभिवृत्तियाँ ले लेते है। किशोरावस्था में बाल्यावस्था की रूचियाँ, आदतें धीरे–धीरे समाप्त होती जाती हैं वे इस अवस्था में अपनी जिम्मेदारी समझने की कोशिश करते हैं। किशोरावस्था में ये परिवर्तन बहुत तीव्र गति से होते हैं। इसलिये इनमें समायोजन करना मुश्किल हो जाता है लेकिन धीरे–धीरे समायोजन में सफलता मिलती जाती हैं।

(4) **किशोरावस्था समस्या बाहुल्य की अवस्था है:–** प्रत्येक आयु की अपनी समस्याएँ होती हैं लेकिन किशोरावस्था की समस्याएँ अन्य अवस्थाओं की अपेक्षा बहुत होती हैं और अधिक कठिन लगती हैं। बाल्यावस्था में माता–पिता और शिक्षक उसकी समस्याएँ सुलझाने में मदद करते थे। लेकिन किशोर बालक स्वयं अपने माता–पिता, शिक्षकों तथा समाज के अन्य व्यक्तियों के सामने एक समस्या होता है।

किशोरों की समस्याओं के अध्ययनों से पता चलता है कि उनकी संख्या बहुत होती है और वे अधिकांशत: इन बातों के बारे में होती हैं; जैसे–आकृति और स्वास्थ्य, घर के अंदर और बाहर वालों के साथ सामाजिक सम्बन्ध, विषमलिंगीय सम्बन्ध, भविष्य की योजनाएँ, शिक्षा, व्यवसाय का चुनाव, जीवनसाथी का चुनाव, काम सम्बन्धी, रूपया पैसा आदि। इसलिए इस अवस्था को समस्या आयु कहा गया है।

(5) **किशोरावस्था संक्रमण की अवस्था है:–** किशोरावस्था एक संक्रमण की अवस्था है, जिसमें बालक न बालक रहता है और न प्रौढ़। डी.पी. आसुबेल ने सही कहा है, ''हमारी संस्कृति में किशोरावस्था को व्यक्ति की जैव–सामाजिक स्थिति का एक संक्रमणकाल कहा जा सकता है। इस अवस्था में कर्तव्यों, जिम्मेदारियों, विशेषाधिकारों और अन्य लोगों के साथ सम्बन्धों में बहुत परिवर्तन हो जाते हैं। ऐसी स्थितियों में अपने माता–पिता, साथियों और दूसरों के प्रति अभिवृत्तियों का बदल जाना अनिवार्य हो जाता है।

किशोर प्राय: बाल्यावस्था का ही व्यवहार करता है तब उसे डाँटा जाता है कि अपनी अवस्था अथवा आयु के अनुसार व्यवहार करे और जब वह प्रौढ़ की तरह व्यवहार व कार्य करता है तब प्राय: 'बड़े' बनने का आरोप लगाया जाता है। यह कहकर कि अभी बच्चे हो। इस तरह बालक असमंजस की स्थिति में पड़ जाता है।

(6) **किशोरावस्था कामुकता के जागरण की अवस्था है:–** फ्रॉयड के अनुसार किशोर बालक की विजातीय कामुकता में उनकी शैशवकालीन कामुकता बड़ी स्पष्ट झलक मिलती है। किशोरावस्था में काम शक्ति का विकास पाया जाता है। शुरू की लैंगिक रूचियाँ अधिकतर शारीरिक अंतरों पर केन्द्रित होती हैं। लैंगिक क्षमताओं के विकास के साथ किशोर की विषमलिंगीयों के प्रति रूचि का रूप बदल जाता है। अब लड़कों और लड़कियों

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

की रूचि मुख्यत: शारीरिक अन्तरों में नहीं रह पाती है। हालांकि यह रूचि पूर्णतया लुप्त कभी नहीं होती। शुरू में लड़कियाँ किसी भी लड़के को जो कि उनकी ओर थोड़ा भी आकर्षित होता है, पसंद करती हैं। विषमलिंगीयों में रूचि पैदा होने के साथ सदैव उनका ध्यान खींचने की इच्छा होती है। इनके रूप कई हो सकते हैं, जैसे- असाधारण पोशाक, असाधारण ढंग, बाल संवारना आदि। इसलिये इनमें स्वप्रेम की भावना का विकास होता हैं यह ध्यान देने योग्य बात है कि कामेच्छा एक मानसिक शक्ति होती है। यदि किशोरों को शारीरिक कार्य कराया जाये व मानसिक कार्य में व्यस्त रखा जाए तो इस पर अधिक नियन्त्रण रखा जा सकता है।

(7) **किशोरावस्था निश्चित विकास प्रतिमान की अवस्था है:—**आयु में वृद्धि के साथ-साथ व्यवहार में भी निश्चित परिवर्तन पाया जाता है, जैसे यौवनारम्भ से अलिंगता समाप्त होकर लिंगता आ जाती है। यह अवस्था बाल्यावस्था की समाप्ति से कुछ बाद तक चलती है, जैसे सभी किशोरों की यह अभिलाषा होती है कि उनके बड़े-बुजुर्ग उनका अनुमोदन करें। प्रारम्भिक एवं पूर्व समायोजित किशोरावस्था के बालक को कई विकासात्मक कार्यों पर अधिकार प्राप्त करना होता है, जैसे अपनी आयु में लड़के एवं लड़कियों से नये एवं अधिक परिपक्व सम्बन्धों को संपादित करना, पारिवारिक जीवन के लिये तैयार होना आदि।

(8) **किशोरावस्था विकसित सामाजिकता की अवस्था है:—**इस अवस्था में बालक के समाज का क्षेत्र अत्यधिक विकसित हो जाता है। इस अवस्था में बालकों में प्रगाढ़ मित्रता का विकास होता है और उनके बीच बिना जाति, धर्म, आर्थिक-सामाजिक भेदभाव, एक-दूसरे के प्रति घनिष्ठता बढ़ जाती है। इस अवस्था में किशोरों का समूह बहुत व्यापक होता है। यह जरूर है कि घनिष्ठ मित्रों की मण्डली कुछ छोटी होती जाती है और समूह बड़ा होता जाता है। उसके परिचित भी बढ़ जाते हैं। उसकी रूचि समलिंगीय मित्रों से हटकर विषमलिंगीय मित्रों में हो जाती है। दूसरों के प्रति मित्रवत् व्यवहार करते हैं। सामाजिक कार्यों में उत्साह से बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं।

(9) **किशोरावस्था एक दु:खदायी अवस्था है:—**किशोरावस्था की कल्पनाएँ उमंगपूर्ण होती हैं। इन कल्पनाओं में वह अपनी उन समस्याओं के समाधान के लिये कल्पना करता है जो अपूर्ण रह जाती हैं। इस अवस्था में किशोर दूसरों के लिये व अपने लिये भी समस्या बनता है। किशोर अपनी शक्ल-सूरत के बारे में आकुल रहता है। वह स्कूल में अपनी कक्षा में प्रथम रहना चाहता है, वह अपने अन्दर इतनी योग्यताएँ देखना चाहता है कि चारों ओर उसका नाम हो जाये और अपनी लोकप्रियता चाहता है। किशोरों का दु:खी होना इस बात पर निर्भर करता है कि किशोर को जीवन से समायोजन करने में कितनी सफलता या असफलता मिल रही है। सुखी और दु:खी किशोरों की समस्याओं की तुलना से मालूम होता है कि वे मिलती-जुलती हैं। दु:खी किशोर अधिक समय तक दु:खी बने रहते हैं तथा उनमें से अनेकों का दु:ख प्रौढ़ावस्था में भी उनका साथ नहीं छोड़ता। यह देखा गया है कि बाल्यावस्था में बालक अपनी समस्याओं का समाधान अधिक सरलता से कर लेता है, क्योंकि उसे उसके परिवार से बहुत अधिक सहायता मिल जाती है लेकिन किशोरावस्था में उसे इस प्रकार की सहायता प्राप्त नहीं होती और उसके लिये समस्याएँ दु:खदायी हो जाती हैं।

(10) **किशोरावस्था कल्पना बाहुल्य की अवस्था:—**किशोरावस्था के लिए कहा जाता है कि यह जीवन की सुनहरी अवस्था है। उमंगों से भरी अवस्था है। उसकी कल्पनाएँ उमंगपूर्ण होगी। ऐसी उमंगपूर्ण कल्पनाएँ वह एकान्त में करता है। जब कभी वह दु:खी होता है अथवा अपनी समस्याओं का समायोजन नहीं कर पाता है या निराश होता है तो वो एक प्रकार से अपने उमंगपूर्ण कल्पना लोक में विचरण कर सुख प्राप्त करता है। इन कल्पनाओं में वह अपनी उन समस्याओं में समाधान के लिए कल्पना करता है जो अपूर्ण रह जाती है।

I. शारीरिक विकास :

''स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है।'' विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया में शारीरिक विकास को सर्वाधिक महत्वपूर्ण विकास माना जाता है। शारीरिक विकास अच्छा होने पर अन्य विकास भी अच्छे होते हैं। वृद्धि व विकास की यह दर जीवन की भिन्न—भिन्न अवस्थाओं में भिन्न—भिन्न होती है। गर्भावस्था एवं शैशवावस्था के बाद किशोरावस्था में ही वृद्धि व विकास की दर तीव्रतम होती है। इसे किशोरावस्था का वृद्धि स्फुरण (Growth spurt) भी कहते हैं। यह वृद्धि स्फुरण, बालक—बालिका के लैंगिक दृष्टि से परिपक्व होने से पहले एक या दो वर्ष से लेकर परिपक्व होने के बाद छ: मास से एक वर्ष तक रहता है।

बालक—बालिका में वृद्धि स्फुरण का समय भिन्न—भिन्न होता है। बालिकाओं में वय: संधि (Puberty) की अवस्था बालकों से पहले अर्थात् 10—12वें वर्ष की उम्र के दौरान ही आ जाती है। बालिकाओं में वृद्धि स्फुरण 11.5 वर्ष के आस—पास प्रारम्भ होकर 12.5वें वर्ष में अपने शिखर पर पहुँचता है। इसके बाद वृद्धि दर धीमी पड़ जाती है व धीरे—धीरे 15वें व 16वें वर्ष के बीच रूक जाती है। बालकों में वृद्धि स्फुरण 10.5 से 14.5 के बीच शुरू होकर 15.5वें वर्ष में शिखर पर पहुँचता है तथा तत्पश्चात् वृद्धि दर धीमे पड़कर 19—20 वर्ष के बीच जाकर रूक जाती है। किशोरावस्था के शारीरिक परिवर्तन निम्नानुसार है :

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1. **लम्बाई :** नौ से दस वर्ष की उम्र के दौरान लड़के व लड़कियों का कद लगभग बराबर सा रहता है। तत्पश्चात 10–14 वर्ष के बीच लड़कियों की लम्बाई में तीव्र वृद्धि होती है जो धीमी गति से 16–18 वर्ष तक होती रहती है। लड़कों की लम्बाई की तीव्र वृद्धि दर औसतन 12वें से 15वें वर्ष के बीच होती है जो 16वें वर्ष में धीमी होकर 20–22 वर्ष पर आकर रूक जाती है। इस प्रकार लड़कियाँ अपनी परिपक्व लम्बाई पर 18वें वर्ष में तथा लड़के 20–22वें वर्ष के बीच पहुँचते हैं। देर से परिपक्व होने वाले किशोर–किशोरी जल्दी परिपक्व होने वाले किशोर–किशोरियों की परिपक्व लंबाई पूरी होने के बाद भी बढ़ते रहते हैं।

2. **वजन / भार :** किशोरावस्था में भार में वृद्धि केवल वसा की वृद्धि से ही नहीं होती बल्कि अस्थि और पेशी के ऊतकों की वृद्धि से भी होती है। यौवनारम्भ में अस्थियाँ न केवल लंबी हो जाती हैं बल्कि आकृति, अनुपात और आंतरिक रचना में भी बदल जाती है। सत्रह वर्ष की अवस्था तक लड़कियों की हड्डियाँ आकार और विकास की दृष्टि से परिपक्व हो जाती है। लड़कों में अस्थि पंजर का विकास लगभग दो वर्ष बाद पूरा होता है। लड़कियों में भार की वृद्धि प्रथम रजःस्त्राव के ठीक पहले और ठीक बाद में होती है। यह समय अंतराल 11–15 वर्ष का होता है। इसी प्रकार लड़कों में अधिकतम भारत वृद्धि 13वें से 16वें वर्ष में देखी जाती है। इसी कारण 10–15 वर्ष के बीच लड़कियों का अपनी आयु के लड़कों से प्रायः अधिक भार होता है, लेकिन पंद्रह के बाद उसका विपरीत होता है।

3. **शारीरिक अनुपात में परिवर्तनः** यद्यपि यौवनारम्भ होने पर शरीर बढ़ता जाता है, तथा शरीर के सारे अंग समान रफ्तार से नहीं बढ़ते हैं। फलतः बाल्यावस्था के लाक्षणिक विषमानुपात बने रहते हैं। यह बात नाक, पाँवों और हाथों में विशेष रूप से दिखाई देती है। लैंगिक परिपक्वता के बाद सिर की परिधि में केवल पाँच प्रतिशत की वृद्धि ही शेष रहती है। चेहरे की आनुपातिक वृद्धियों के कारण शुरू–शुरू में माथा ऊँचा और चौड़ा हो जाता है और नाक लंबी एवं चौड़ी, किन्तु धीरे–धीरे परिपक्व होने पर लड़के का चेहरा कुछ ऊँचा–नीचा और नोकदार हो जाता है और लड़की का अण्डे की तरह गोल। यौवनारम्भ के ठीक पहले टाँगे धड़ की अपेक्षा बहुत ही लंबी होती है और लगभग 15 वर्ष की आयु तक वैसी ही रहती हैं। बाँहों की वृद्धि का क्रम भी बहुत कुछ यही होता है। धड़ के वृद्धि–स्फुरण से पहले बाँहों की वृद्धि हो जाती है, जिससे वे बहुत लंबी लगती हैं। बड़े किशोर का लम्बा व पतला धड़, कूल्हों एवं कंधों पर चौड़ा होने लगता है और कमर की रेखा स्पष्ट हो जाती है। प्ररूपतः लड़कों के कंधे, कूल्हों से चौड़े और लड़कियों के कूल्हे कंधों से चौड़े हो जाते हैं। किशोरावस्था के उत्तरार्ध तक शरीर के अनुपात युवाओं की भाँति हो जाते हैं।

4. **अन्य शारीरिक परिवर्तन :** यौवनारम्भ के समय जो वृद्धि स्फुरण शुरू हुआ था और पूर्व किशोरावस्था में जो कि घटती हुई दर से चल रहा था, वह उत्तर किशोरावस्था में धीरे–धीरे रूक जाता है। अतः उत्तर किशोरावस्था में जो भी भार वृद्धि होती है वह आम–तौर पर उन भागों में वसा बढ़ जाने से होती है जिनमें पहले वसा नहीं थी या कम थी। फलतः नवकिशोर के दुबलेपन की जगह धीरे–धीरे उत्तर किशोरावस्था में शरीर भरा–भरा सा दिखाई देता है। अस्थि–पंजर की वृद्धि औसतन 18 वर्ष की आयु में रूक जाती है। अस्थियों के परिपक्व आकार प्राप्त कर लेने के बाद भी अन्य प्रकार के ऊतक विकास करते रहते हैं उदाहरणार्थ, अक्ल के दाँत (Wisdom teeth) बीस वर्ष के बाद निकलने प्रारम्भ होते हैं, उससे पहले नहीं। यौवनारम्भ में तेलोत्पादक ग्रन्थियों की अतिरिक्त सक्रियता से त्वचा में अतिरिक्त चिकनाहट आ जाती है जिससे कील–मुँहासों की समस्या हो जाती है। यही समस्या उत्तर किशोरावस्था में सामान्य हो जाती है।

5. **आंतरिक अंगों का विकास :** किशोरों के आंतरिक अंगों में आनुपातिक वृद्धि व विकास होता है जो कि पूर्व किशोरावस्था में तीव्र गति से होता है। बालकों के पाचन तंत्र में आमाशय लंबा हो जाता है जिससे उसकी, धारिता बढ़ जाती है। आंतों की लम्बाई व मोटाई बढ़ जाती है व आहार नाल की माँस पेशियाँ शक्तिशाली व मोटी हो जाती हैं। यकृत का भार बढ़ जाता है। परिसंचरण तंत्र में ह्रदय के आकार व रूधिर वाहिकाओं की लम्बाई और मोटाई में वृद्धि हो जाती है। छाती की चौड़ाई व मोटाई की वृद्धि के साथ–साथ फेफड़ों के भार और आयतन में बढ़त होती है किन्तु यह वृद्धि लड़कों में लड़कियों की अपेक्षाकृत अधिक होती है। जनन ग्रंथियों की सक्रियता में वृद्धि के कारण सम्पूर्ण अंतः स्त्रावी तंत्र में एक अस्थायी असंतुलन आ जाता है। बाल्यावस्था में जो ग्रंथियाँ प्रधान थीं, उनकी प्रधानता अब कम हो जाती है व अन्य ग्रंथियों की प्रधानता (एड्रिनल ग्रंथि, थायरॉइड ग्रंथि, जनन ग्रंथि आदि) बढ़ जाती है जिससे न्यूनतम उपापचय की दर भी कुछ समय के लिये बढ़ जाती है।

II. गत्यात्मक विकास :

किशोरावस्था में शारीरिक विकास के साथ–साथ

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

माँसपेशियों का विकास भी तीव्र गति से होता है। लड़कों की माँस पेशियों की शक्ति में सर्वाधिक वृद्धि चौदह वर्ष की अवस्था से होती है व 20–21 वर्ष तक चलती है। जबकि लड़कियों में चौदह वर्ष तक यह विकास अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है व लगभग 17 वर्ष की अवस्था तक धीमी गति से होता रहता है। किसी भी अवस्था में लड़कों में पेशीय बल लड़कियों से अधिक होता है। इसका कारण लड़कियों की माँस पेशियों का कोमल रहना है। केवल पेशियों के आकार में वृद्धि से ही पेशियों के कौशल नहीं आ जाते, कौशल सीखने के लिये व्यक्ति को प्रशिक्षण, अभ्यास के अवसर, पर्यावरणगत् बाधाओं का अभाव और प्रबल अभिप्रेरण चाहिये।

किशोरावस्था में विविध कौशलों को सीखने का और जब तक वे सीख न लिया जाए तब तक अभ्यास करते रहने का अभिप्रेरण बहुत प्रबल होता है। इसके अतिरिक्त किशोर को यह भी सुविधा रहती है कि उसे कौशल सिखाने वाला कोई न कोई होता है, चाहे वह शिक्षक हो, माता–पिता में से कोई हो या ऐसा अन्य किशोर हो जो उन कौशलों में दक्षता प्राप्त कर चुका हो, जिन्हें वह सीखना चाहता है। सीखने में इस प्रकार जो पथ–प्रदर्शन मिलता है और साथ ही सीखने का जो प्रबल अभिप्रेरण होता है, उससे न केवल किशोर कौशलों को जल्दी सीख जाता है, बल्कि इतनी अच्छी तरह से सीख लेता है कि वे युवा के कौशलों की बराबरी के हो जाते हैं।

गति युक्त कार्यों को करने की योग्यता में वृद्धि लड़कियों में चौदह वर्ष की आयु में और लड़कों में सत्रह वर्ष की आयु में अधिकतम हो जाती है। फुर्ती, नियंत्रण बल और स्थैतिक संतुलन को नापने के लिये जो परीक्षण किये जाते हैं, उनमें लड़कों की तत्संबंधी योग्यता में सर्वाधिक वृद्धि चौदह वर्ष की आयु के बाद होती है। लड़कियों में चौदह वर्ष तक उन्नति होती है और उसके बाद अवनति और इसका कारण क्षमता में न्यूनता न होकर रूचि परिवर्तन होता है। बड़े किशोर अधिकतर शारीरिक बल दर्शाने वाले खेल प्रतियोगिताओं व व्यायाम संबंधी कौशलों में सक्रिय भाग लेने में अत्यधिक रुचि रखते हैं जबकि किशोरियाँ इन कौशलों में सक्रिय भाग लेने की जगह देखने में रुचि रखती हैं। किशोरियाँ अधिक से अधिक पेचीदे ढंग से नृत्य करने, गोता लगाने और ऐसे अन्य खेलों में आनन्द लेती हैं जिनमें बल से कहीं अधिक महत्त्व पेशीय समन्वय का होता है। यदि उन्हें व्यायाम वाले खेलों की प्रतियोगिताओं में भाग लेना ही होता है तो वे अन्य लड़कियों से ही प्रतियोगिता करती हैं क्योंकि लड़कों की अपेक्षा अन्य लड़कियों की योग्यताएँ ही उनके बराबर की होती हैं।

III. यौन विकास :

किशोरावस्था में शारीरिक विकास के साथ–साथ यौन विकास भी प्रारम्भ हो जाता है। यौवनारम्भ काल (Puberty stage) से ही यौन अंगों में बदलाव शुरू हो जाते हैं और किशोरावस्था के दौरान पूर्ण हो जाते हैं। किशोरावस्था में होने वाले बदलावों को दो भागों में बाँटा जा सकता है :–

1. **मुख्य लैंगिक लक्षण (Primary sex characteristics) :** बाल्यावस्था में जननेन्द्रियाँ छोटी और कार्य की दृष्टि से अपरिपक्व होती हैं, अतः उनमें संतानोत्पादन की क्षमता नहीं होती है। किशोरावस्था के दौरान जननेन्द्रियाँ आकार में बड़ी हो जाती हैं एवं कार्य की दृष्टि से परिपक्व हो जाती हैं।

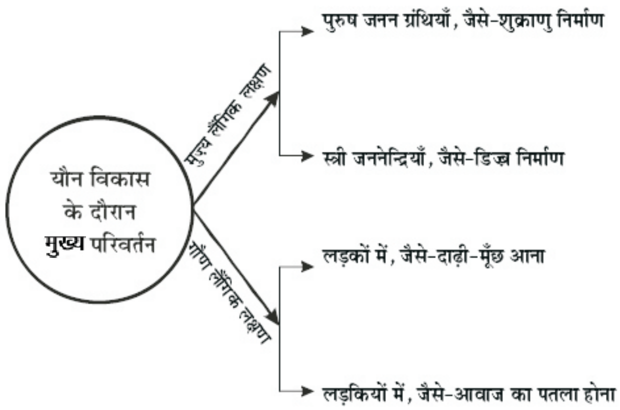

चित्र 1.1 यौन विकास के दौरान मुख्य परिवर्तन

पुरुष जननग्रंथियाँ जो कि वृषणकोष के अंदर रहती है, चौदह वर्ष की आयु में अपने परिपक्व आकार की केवल 10 प्रतिशत ही होती हैं जो कि 20–21वें वर्ष में परिपक्व आकार प्राप्त कर लेती हैं। ये ग्रंथियाँ शुक्राणु का निर्माण करती है तथा साथ ही संतानोत्पादन के लिये आवश्यक शारीरिक एवं मानसिक समायोजनों पर नियंत्रण करने वाले हार्मोन भी उत्पन्न करती हैं। वृषण की द्रुत वृद्धि के शुरू होने के कुछ समय बाद ही शिश्न की वृद्धि में तीव्रता आ जाती है। शिश्न की वृद्धि पहले लम्बाई में होती है और उसके बाद मोटाई में। औसतन 14–15 वर्ष की आयु में जब जननेन्द्रियाँ अपने कार्यों के लिये परिपक्व हो जाती हैं, तब प्रायः स्वप्नदोष होने लगते हैं। वीर्य की अतिरिक्त मात्रा को बाहर निकालने का यह प्राकृतिक तरीका है। स्वप्नदोष प्रायः तब होते हैं जब लैंगिक उत्तेजना के स्वप्न आते हों, मूत्राशय भरा हुआ हो, आँतों में मलावरोध हो, पायजामा तंग हो या ओढ़ना काफी गर्म हो। सप्ताह में औसतन चार बार स्पप्नदोष होना सामान्य बात है। कई लड़कों को इसका तब तक कोई पता नहीं होता जब तक वे बिस्तर या पायजामे पर धब्बे नहीं देखते।

स्त्री जननेन्द्रियाँ अधिकांशतः शरीर के अन्दर होती हैं, अतः उनकी वृद्धि का पता उदर की वृद्धि के अलावा और किसी बात

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

से नहीं चलता। बारह वर्ष की आयु में अंडाशय का वजन परिपक्व भार का 40 प्रतिशत होता है जो कि 20 से 21 वें वर्ष तक परिपक्व आकार व भार प्राप्त कर लेते हैं हालांकि यौवनारंभ काल के मध्य के आसपास वे अपने कार्य के लिये परिपक्व हो जाते हैं। अंडाशय का मुख्य कार्य डिंब पैदा करा है, जो कि संतानोत्पादन के लिये आवश्यक है। इसके अलावा यह गर्भावस्था का नियामक हार्मोन–प्रोजेस्टेरॉन, पुटन हार्मोन, कार्पस ल्युटियम आदि का भी निर्माण करता है। स्त्रीलिंग हार्मोन के कारण ही स्त्री जननेन्द्रियों की रचना एवं कार्यों का विकास होता है, उनके लाक्षणिक मासिक चक्र (Menstruation cycle) चलते हैं व गौण लैंगिक लक्षण विकसित होते हैं। स्त्री जननांगों के परिपक्व होने का पहला सच्चा सूचक लड़कियों का प्रथम रजःस्राव होता है। इसमें गर्भाशय से रूधिर, श्लेष्मा व टूटे–फूटे कोशिकीय ऊतकों के नियत कालिक विसर्जन होते हैं यह आर्तव चक्र रजोनिवृत्ति तक नियमितता के साथ प्रत्येक 28–30 दिन का होता है। रजोनिवृत्ति 45 से 55 वर्ष के बीच में कभी भी हो सकती है। मासिक चक्र प्रारम्भ होने पर प्रथम 6 माह से 1 वर्ष तक रजःस्राव अनियमित रूप से और अनुमानित समयों पर कभी कम व कभी अधिक मात्रा में होता है। इस अवस्था में डिंब विकास (अर्थात डिंब का परिपक्व होना) एवं अंडाशय के पुटक से डिंब का मोचन नहीं होता, फलतः लड़की गर्भवती नहीं हो सकती और बंध्या कहलाती है। शुरू के रजः स्रावों में प्रायः सिरदर्द, पीठ दर्द, ऐंठन एवं उदरशूल होता है और साथ में चक्कर आना, मतली, त्वचा–प्रदाह और यहाँ तक की टाँगों और टखनों में शोथ भी हो जाता है। धीरे–धीरे ये लक्षण कम होते जाते हैं।

2. **गौण लैंगिक लक्षण (Secondary sex characteristics) :** यौवनारम्भ में प्रगति के साथ–साथ लड़के व लड़कियाँ आकृति में असमान होते जाते हैं जिसका कारण मुख्य लैंगिक लक्षणों के विकास के साथ–साथ द्वितीयक/गौण लक्षणों का विकास होना है। लड़के व लड़कियों में गौण लैंगिक लक्षणों का क्रमिक विकास निम्नानुसार होता है :–

लड़कों में :

1. वृषण ग्रंथियों व शिश्न के आकार में वृद्धि शुरू होने के लगभग 1 वर्ष बाद गुप्तांगों के ऊपर बाल उगना।
2. बगल में व चेहरे पर बाल उगना एवं दाढ़ी मूंछ आना।
3. बाँहों, टाँगों, कंधों एवं छाती पर बाल उगना।
4. सभी तरह के बालों का प्रारम्भ में हल्के रंग, थोड़े व मुलायम होना तथा तत्पश्चात घने, कड़े, काले रंग के एवं घुमावदार हो जाना।
5. त्वचा का कठोर, मोटी एवं पीलापन लिये हुए खुरदुरी हो जाना।
6. तेल ग्रंथियों की अत्यधिक सक्रियता से कील मुँहासे होना।
7. बगल की गंधोत्सर्गी स्वेद ग्रंथियों का सक्रिय होना जिससे बगल में पसीना आता है एवं एक खास गंध निकलती है।
8. स्वर का पहले फटना एवं फिर भारी होना।
9. बारह से चौदह वर्ष में दुग्ध ग्रंथियों के आस–पास गांठे होना, जो कुछ सप्ताह एक रहकर स्वतः खत्म हो जाती हैं। इसी प्रकार दुग्ध गंथियों का अल्प काल के लिये बढ़ जाना एवं तत्पश्चात् बाल्यावस्था की तरह चपटे हो जाना।

लड़कियों में :

1. श्रोणि अस्थि के बढ़ने व अधस्त्वक वसा (चर्बी) के विकास के कारण नितंबों की चौड़ाई एवं गोलाई में वृद्धि होना।
2. चुचुक और स्तनमंडल के उठाने के साथ–साथ वसा का जमाव होना, जिससे स्तनमंडल वक्ष की सतह से उठकर शंकु के आकार

तालिका 1.1 यौन परिवर्तन

बलिकाएँ **(Girls)**		बालक **(Boys)**	
विशेषताएं	आयु	विशेषताएं	आयु
स्तन वृद्धि	8–13 वर्ष	अण्ड तथा अण्डकोष वृद्धि	10–13 वर्ष
गुप्तांगों के बालों का विकास	8–14 वर्ष	गुप्तांगों के बाल विकसित होना	10–15 वर्ष
शरीर वृद्धि	$9^1/_2$ – $14^1/_2$ वर्ष	शरीर वृद्धि	$10^1/_2$ – 16 वर्ष
मसिक धर्म होना	10–$16^1/_2$ वर्ष	लिंग वृद्धि	11–$14^1/_2$ वर्ष
बगलों के बालों में वृद्धि (उगना)	गुप्तांगों के बालों के 2 वर्ष के भीतर	आवाज परिवर्तन (टेंटुआ वृद्धि)	लगभग लिंग वृद्धि के समय
तेल (पसीने की ग्रन्थि)	लगभग बगलों के बालों के समय	बगलों तथा चेहरे के बाल	गुप्तांगों के बालों के लगभग 2 वर्ष बाद
		तेल/पसीने की ग्रन्थि	लगभग बगलों के बालों के समय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

का हो जाता है।

3. दुग्ध ग्रंथियों के विकास के कारण स्तनों का बड़ा व गोलाकार होना।

4. नितंब व स्तनों के विकास के बाद गुप्तांगों पर काले व घने बाल उगना।

5. बगलों में बाल उगना एवं बगल की गंधोत्सर्गी स्वेद ग्रंथियों का सक्रिय होना।

6. ऊपरी होंठ, गालों, चेहरे के किनारों एवं तत्पश्चात् ठोड़ी के निचले किनारे पर रोएँ उगना।

7. त्वचा की तेल ग्रंथियों का सक्रिय होना एवं कील मुँहासे निकलना।

8. बालोचित आवाज का पतली, भरी हुई एवं सुरीली हो जाना।

इस प्रकार मुख्य व गौण लैंगिक लक्षणों के विकास के पूर्ण होने के साथ ही एक किशोर युवा तथा किशोरी युवती बन जाती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. किशोरावस्था का उद्भव लेटिन भाषा से माना गया है जिसका सामान्य अर्थ है बढ़ना या विकसित होना।
2. किशोरावस्था को दो उप अवस्थाओं में बाँटा गया है- पूर्व किशोरावस्था और उत्तर किशोरावस्था।
3. किशोरावस्था को तूफान व तनाव की आयु भी कहते हैं।:
4. गर्भावस्था तथा शैशवावस्था के बाद किशोरावस्था में वृद्धि व विकास की दर तीव्रतम होती है।
5. बालक–बालिका में वृद्धि स्फुरण का समय भिन्न–भिन्न होता है। बालिकाओं में वृद्धि स्फुरण 11.5 वर्ष के आस–पास प्रारम्भ होकर 12.5 वें वर्ष में अपने शिखर पर पहुँचता है जबकि बालकों में वृद्धि स्फुरण 10.5 से 14.5 वर्ष के बीच शुरू होकर 15.5 वें वर्ष में शिखर पर पहुंचता है।
6. नौ से दस वर्ष की उम्र के दौरान लड़के व लड़कियों का कद लगभग बराबर सा होता है। तत्पश्चात् 10–14 वर्ष के बीच लड़कियों की लम्बाई में तीव्र वृद्धि होती है जबकि लड़कों की लम्बाई की तीव्र वृद्धि दर औसतन 12वें से 15वें वर्ष के बीच होती है।
7. किशोरावस्था में भार वृद्धि केवल वसा की वृद्धि से ही नहीं होती बल्कि अस्थ और पेशी के ऊतकों की वृद्धि से भी होती है।
8. लड़कियों में सत्रह वर्ष की अवस्था में अस्थियाँ आकार और विकास की दृष्टि से परिपक्व हो जाती है तथा लड़कों में अस्थिय पंजर का विकास लगभग दो वर्ष बाद पूरा होता है।
9. यौवनारम्भ होने पर शरीर बढ़ता जाता है तथापि शरीर के सारे अंग समान रफ्तार से नहीं बढ़ते हैं। फलतः बाल्यावस्था के लाक्षणिक विषयानुपात बने रहते हैं।
10. यौवनारम्भ के समय जो वृद्धि स्फुरण शुरू होता है वह पूर्व किशोरावस्था में घटती हुई दर से चलता रहता है तथा उत्तर किशोरावस्था में धीरे–धीरे रुक जाता है।
11. किशोरों के आंतरिक अंगों में आनुपातिक वृद्धि व विकास होता है जो कि पूर्व किशोरावस्था में तीव्र गति से होता है।
12. किशोरावस्था में विविध कौशलों को सीखने का और जब तक सीख न लें तब तक अभ्यास करते रहने का अभिप्रेरण बहुत प्रबल होता है।
13. बड़े किशोर अधिकतर शारीरिक बल वाले खेल, प्रतियोगिताओं व व्यायाम संबंधी कौशलों में सक्रिय भाग लेन में अत्यधिक रुचि रखते हैं जबकि किशोरियाँ अधिक से अधिक पेचीदे ढंग से नृत्य करने, चक्कर लगाने और ऐसे अन्य खेलों में आनन्द लेती हैं जिनमें बल से कहीं अधिक महत्व पेशीय समन्वय का होता है।
14. किशोरावस्था में शारीरिक विकास के साथ–साथ यौन विकास भी प्रारम्भ हो जाता है। किशोरावस्था के दौरान जननेन्द्रियाँ आकार में बड़ी एवं कार्य की दृष्टि से परिपक्व हो जाती है।
15. लड़के व लड़कियों दोनों में ही जननेन्द्रियाँ यौवनारंभ काल के मध्य के आस पास अपने कार्य के लिये परिपक्व हो जाती है लेकिन 20–21 वर्ष के होने तक परिपक्व आकार प्राप्त कर लेती हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) किशोरावस्था में वृद्धि व विकास की दर तीव्रतम होती है। जिसे कहते हैं –

(अ) तीव्र वृद्धि (ब) वृद्धि स्फुरण
(स) अत्यधिक वृद्धि (द) उपरोक्त में से कोई भी नहीं

(ii) कंधे, कूल्हों से चौड़े होते हैं –

(अ) बालक में (ब) किशोर में
(स) किशोरी में (द) युवती में

(iii) थायरॉइड है :

(अ) त्वचा का भाग (ब) पाचन तंत्र का भाग
(स) परिसंचरण तंत्र का भाग (द) ग्रंथी

(iv) पुरुष जननग्रंथियाँ परिपक्व आकार प्राप्त करती है :

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(अ) 10–12 वर्ष में (ब) 14–15 वर्ष में
(स) 20–21 वर्ष में (द) 30–31 वर्ष में

(v) स्त्री जननांगों के परिपक्व होने का पहला सच्चा सूचक लड़कियों में होता है :
(अ) गुप्तांगों में बालों का उगना
(ब) तेल ग्रंथियों का अत्यधिक सक्रिय होना
(स) प्रथम रजः स्त्राव होना
(द) त्वचा का कठोर व मोटा होना

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) गति युक्त कामों को करने की योग्यता की वृद्धि लड़कियों में .... वर्ष की आयु में और लड़कों में .... वर्ष की आयु में अधिकतम होती है।

(ii) किशोर बालकों में औसतन 14–15 वर्ष की आयु में जब जननेन्द्रियाँ अपने कार्यों के लिये परिपक्व हो जाती हैं तब प्रायः .... होने लगते हैं।

(iii) स्त्री जननेन्द्रियाँ अधिकांशतः शरीर के अन्दर होती हैं अतः उनकी वृद्धि का पता .... की वृद्धि के अलावा किसी बात से नहीं चलता।

(iv) मासिक चक्र रजोनिवृत्ति तक नियमितता के साथ........... दिन का होता है।

(v) .... के जमाव के कारण चुचुक और स्तनमंडल वक्ष की से उठकर शंकु के आकार के हो जाते हैं।

(vi) अंडाशय का मुख्य कार्य .... पैदा करना होता है जो कि संतानोत्पादन के लिये आवश्यक होता है।

3. बालक का शारीरिक विकास उसके व्यक्तित्व का आधार है। समझाइये।

4. किशोरों में शारीरिक विकास के निम्नलिखित प्रतिमानों पर टिप्पणी कीजिये –
(अ) लम्बाई (ब) भार (स) शारीरिक अनुपात

5. 'किशोरावस्था तूफान और तनाव की आयु है' स्पष्ट कीजिये।

6. किशोर एवं किशोरियों के सफल गत्यात्मक विकास में एक शिक्षक एवं माता–पिता का क्या योगदान रहता है? समझाइये।

7. किशोर एवं किशोरियों में यौन विकास के दौरान आए परिवर्तनों के बारे में विस्तार से लिखिये।

8. किशोरावस्था की विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) ब (iii) द (iv) स (v) स
2. (i) चौदह, सत्रह (ii) स्वप्न दोष (iii) उदर (iv) 28–30
(i) वसा (vi) डिंब

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

2. किशोरावस्था में विकास II
सामाजिक, संवेगात्मक एवं संज्ञानात्मक विकास
Development in Adolescence
Social, Emotional and Cognitive Development

IV. सामाजिक विकास

किशोरावस्था में सामाजिक विकास तीव्रता से होता है। सामाजिक विकास से आशय है ''सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप व्यवहार करना तथा दूसरों के साथ समन्वय स्थापित करने की क्षमता उत्पन्न होना।'' किशोर को समाज के आदर्शों व मूल्यों को समझने के साथ–साथ समाज के विभिन्न व्यक्तियों के व्यवहारों, विचारों और भावनाओं को समझना तथा विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन सीखना भी आवश्यक है। एक किशोर समाज में तभी सम्मान प्राप्त कर सकता है जब उसका व्यवहार समाज के आदर्शों और मूल्यों के अनुरूप हो तथा साथ ही साथ उसका व्यवहार भी समायोजित हो। समायोजित व समाज की प्रत्याशाओं के अनुरूप व्यवहार करने के लिये किशोर में सामाजिक परिपक्वता आवश्यक है। इस अवस्था में सामाजिक विकास को निम्न बिन्दुओं द्वारा समझ सकते हैं '

1. सामाजिक व्यवहार :

बालक जैसे–जैसे बड़ा होता है वैसे–वैसे उसका सामाजिक दायरा विशाल होता जाता है, और उसके व्यक्तित्व निर्माण में घर से बाहर के समाज का हाथ उत्तरोत्तर महत्त्वपूर्ण होता जाता है। बालक की रुचियाँ और अनुभव विशाल हो जाते हैं। अब वह कई समूहों से संबंध रखता है जिनके सदस्य प्रायः अलग–अलग और विविध रुचियों व दृष्टिकोणों वाले होते हैं। बड़े पैमाने पर सामाजिक सम्पर्क रखने से नवकिशोर अपने क्रिया–कलापों को व्यवस्थित करना, नेताओं को चुनना, छोटे पैमाने पर युवाओं की तरह व्यवहार करना, विषम लिंगियों के साथ व्यवहार रखना, वार्तालाप करना, नृत्य करना व सामाजिक स्वीकृत तरीके से व्यवहार करना सीख जाते हैं।

नवकिशोर में यौवनारम्भ काल में पाई जाने वाली नकारात्मक अभिवृत्तियों (Negative attitude) का स्थान विधानात्मक या सकारात्मक अभिवृत्तियाँ (Positive attitude) जैसे दुर्बल के प्रति सहानुभूति, समाज प्रियता, सामाजिक कार्यों में दिलचस्पी, दूसरों को सुधारने की इच्छा, व्यक्ति विशेष के प्रति निष्ठा आदि लेने लगती है। उसका व्यवहार बातूनी, कोलाहलपूर्ण व बेधड़क होने के बजाय मर्यादित व संयत हो जाता है। बड़े किशोरों नवलकिशोर की भाँति सामाजिक परिपाटियों का अंधानुसरण करने की जगह स्वाग्रहिता आ जाती है। उसके अन्दर यह इच्छा जाग्रत होती है कि उसे एक अलग व्यक्ति माना जाये और समूह का अनुमोदन प्राप्त हो। अब वह ध्यानाकर्षण के सूक्ष्म तरीके अपनाता है जैसे– नवीनतम व सुन्दरतम ढंग के कपड़े पहनना, नये लगने वाले विचार प्रकट करना, मनोरंजक कहानियाँ सुनाना आदि। इस अवस्था में सामाजिक भेदभाव अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच जाता है। किशोर–किशोरी दोनों ही उन लोगों से भेदभाव रखते हैं जिन्हें वे जाति, रंग धर्म, सामाजिक, आर्थिक स्थिति या बौद्धिक दोनों ही उन लोगों से भेदभाव रखते हैं जिन्हें वे जाति, रंग, धर्म, सामाजिक, आर्थिक स्थिति या बौद्धिक क्षमता में अपने से हीन समझते हैं। इनके साथ वे जान बूझ कर अशिष्ट व्यवहार करते हैं। किशोरावस्था के अंत तक यह असहिष्णुता (Intolerance) स्वतः ही घट जाती है तथा अब किशोर सामाजिक परिस्थितियों से अच्छा समायोजन कर लेता है और पहले की अपेक्षा बहुत कम लड़ता–झगड़ता है।

2. समूह निर्माण :

यौवनारम्भ काल में जैसे–जैसे नवकिशोर की रूचियाँ बाल्यावस्था के दौड़–भाग के खेलों से हटकर किशोरावस्था के कम दौड़–भाग वाले व अधिक औपचारिक सामाजिक क्रिया–कलापों में होती जाती है। वैसे–वैसे बाल्यावस्था की टोलियाँ टूटती जाती हैं व इनका स्थान नये सामाजिक समूह ले लेते हैं। नवकिशोरों में अधिक चुनाव करने की व बाल्यावस्था की अपेक्षा कम मित्र बनाने की प्रवृत्ति रहती है। किशोरों के समूह बड़े और ढीले–ढाले तथा किशोरियों के छोटे

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

एवं ठोस होते हैं।

किशोरों के सबसे घनिष्ठ और सबसे अच्छे मित्र उनके सखा होते हैं। सखा प्रायः समान लिंग के होते हैं, जिनकी रुचियाँ व योग्यताएं समान होती हैं। इनका संबंध इतना घनिष्ठ व संतोषप्रद होता है कि उनका एक दूसरे पर अत्यधिक प्रभाव होता है। कभी–कभार मतभेद या झगड़े होने पर भी ये बंधन बहुत पक्का होता है व लड़ाई–झगड़े शीघ्र ही सुलटा लिये जाते हैं। तीन या चार घनिष्ठ मित्र मिलकर छोटे–छोटे अंतरंग समूह मंडली (Cliques) बनाते हैं। इनमें सखाओं के कुछ जोड़े भी हो सकते हैं। मंडली के सदस्यों की रुचियों व योग्यताओं में बहुत साम्य होता है। इनके क्रिया कलापों में सिनेमा देखना, खेलकूद की प्रतियोगिताएँ देखना, साथ–साथ पढ़ना, पार्टियों में जाना, बातचीत करना, अलग होने पर टेलीफोन पर बातचीत करना इत्यादि बातें सम्मिलित होती हैं।

बड़े किशोरों के सर्वाधिक घनिष्ठ मित्र अर्थात् सखा संख्या में कम होते हैं तथा वे अपना अधिकांश समय उन्हीं के साथ बिताते हैं। इनके सामाजिक जीवन में सखाओं तथा विषमलिंगीय मित्रों से बनी मंडलियों का अधिक महत्त्व होता है। किशोरों का सबसे बड़ा समूह भीड़ है जो कई मंडलियों के मेल से बना बड़ा और ढीला–ढाला सा समूह है। भीड़ के सदस्यों की रुचियाँ व सामाजिक–आर्थिक स्थिति लगभग समान होती है। भीड़ के क्रिया–कलाप प्रधानतः सामाजिक होते हैं। इनकी मुख्य रुचियाँ बातचीत, खेल, नृत्य व खाने–पीने में होती है। इनके सदस्यों के बीच सामाजिक दूरी होती है। भीड़ का सदस्य बनने से किशोर को सुरक्षा की भावना प्राप्त होती है। उसे लोगों के साथ सफलतापूर्वक निभा सकने का अमूल्य अनुभव प्राप्त होता है। विविध सामाजिक कौशल सीखने का अवसर मिलता है तथा विपरीत लिंग वालों से सामाजिक रूप से स्वीकृत परिस्थितियों में मिलने और उन्हें जानने का अवसर मिलता है। दूसरी तरफ किशोर के भीड़ के जीवन में अत्यधिक लीन हो जाने से वह अपने घर, स्कूल व समाज के कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व भूल जाता है।

कभी–कभी कुछ किशोर–किशोरियों का संबंध भीड़ से नहीं होता है व न ही उनके घनिष्ठ मित्र होते हैं। ऐसे किशोरों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर स्कूल, चर्च व सामाजिक संस्थाएं युवक समूह (Youth club) स्थापित करती है। ये समूह निश्चित आयु सीमा के उन किशोर–किशोरियों के लिये खुले हैं जो उनमें प्रवेश की इच्छा रखते हैं। यह संगठित समूह इन किशोरों को सामाजिक जीवन बिताने के अवसर प्रदान करते हैं। आज कल वाट्सअप और फेसबुक जैसे समूह भी प्रचलित हैं।

3. किशोरावस्था की मित्रता :

किशोरावस्था तक आते–आते बालकों में मित्रों का चुनाव करने की प्रवृत्ति बलवती हो जाती है। किशोर मित्र के रूप में उन्हीं व्यक्तियों को अपनाते हैं :

1. जो उनके समवयस्क हों।
2. जिनकी पसंद व तौर तरीके उनके अनुरूप हों;
3. जिनके अन्दर उनकी पसंद के व्यक्तित्व वाले लक्षण हों।
4. जो उन्हें समझते–बूझते हों।
5. जो उनके समान सामाजिक–आर्थिक स्थिति के हों।
6. जो उनके आदर्शों व मूल्यों के अनुरूप हों।
7. जिनसे उन्हें सुरक्षा की भावना मिलती हो।

नवकिशोर अनुभव हीनता के कारण, विशेष रूप से विषम लिंगीय मित्रों के चुनाव में बहुधा ऐसे मित्र चुन बैठता है जो प्रारम्भ में तो उसके अनुकूल स्वभाव के लगते हैं किन्तु कालांतर में उसके मानकों के अनुरुप सिद्ध नहीं होते। फलतः झगड़ा हो जाता है व मित्रता असमय ही टूट जाती है। उत्तर किशोरावस्था में मित्रों की संख्या का कम महत्त्व होता है व उनके उपयुक्त होने का अधिक। अतः बड़े किशोर के मित्र कम होते हैं व परिचित अधिक। आमतौर पर बड़े किशोर के मित्र समुदाय के भिन्न–भिन्न हिस्सों में रहते हैं या भिन्न समुदायों में भी रहते हैं, किन्तु उसके सर्वाधिक घनिष्ठ मित्र वे ही होते हैं जो उसके काफी निकट रहते हैं, जिनसे वह बार–बार मुलाकात कर सकता है, और समय–असमय उनका सहयोग प्राप्त कर सकता है।

किशोरावस्था के अंत तक लड़के और लड़कियाँ दोनों ही समलिंगीय मित्रों की अपेक्षा विषमलिंगीय मित्रों के साथ अधिक समय बिताने लगते हैं व उनमें अधिक दिलचस्पी दिखाते हैं। इस अवस्था के अंत तक लड़के और लड़कियाँ दोनों ही इस बात के निश्चित मानक बना लेते हैं कि उनके विषम लिंगीय मित्र को कैसा होना चाहिये? लड़के हास परिहास की मनोवृत्ति वाली तथा साहसी लड़कियों को पसंद करते हैं तो लड़कियाँ सदैव लड़को को पौरुष युक्त, साफ–सुथरा और परिहास वृत्ति वाला होना पसंद करती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

नवकिशोर–किशोरियों द्वारा अन्य लोगों की मौजूदगी में हाजिर जवाबी, वाक्–युद्ध, छेड़–छाड़, ऊपरी झगड़ा करना, एक दूसरे को खींचना आदि एक दूसरे में रुचि प्रदर्शित करने के परोक्ष तरीके अपनाये जाते हैं। शुरू के इन लैंगिक संबंधों में लड़कियाँ लड़कों से अधिक आक्रामक होती हैं। किशोर–किशोरियों के इस प्रारम्भिक प्रेम को वयस्क प्रायः हंसी में उड़ा देते हैं व इस तरफ विशेष ध्यान नहीं देते। जबकि किशोर इन परिस्थितियों में स्वयं को असुरक्षित महसूस करते हैं तथा बहुधा शांत और व्यवहार कुशल होने का बहाना करके अपनी परेशानी छुपाने का प्रयास करते हैं। विषमलिंगियों में रुचि पैदा होने के साथ ही सदैव उनका अपनी ओर ध्यानाकर्षण करने की भी इच्छा होती है जिसके लिये विविध उपाय अपनाये जाते हैं जैसे–आडम्बरपूर्ण हाव–भाव और भाषा, असाधारण पोशाक, बाल संवारने का असाधारण ढंग, अपने प्रिय के प्रति उदासीनता दिखाना व धृष्टता का व्यवहार करना तथा अन्य को दुलारना आदि।

पूर्व किशोरावस्था के अंत तक लड़के–लड़कियों के अस्थायी जोड़े बन जाते हैं। अब इनमें नायक–पूजा, प्यार व दीवानेपन की जगह रूमानी आसक्ति आ जाती है, फलतः बड़े किशोरों की सामूहिक क्रियाकलापों में रुचि समाप्त हो जाती है तथा वह अपने साथी के साथ अकेले रहना अधिक पसंद करता है।

आजकल के नवयुवक सुखद और प्रसन्न व्यक्तित्व, स्वच्छता, विश्वसनीयता, दूसरों का ध्यान रखने वाले गुण व अच्छी आकृति को अधिक महत्त्व देते हैं जबकि नवयुवतियाँ अच्छे तौर–तरीकों वाले, स्वच्छ रहने वाले, आकर्षक व उपयुक्त कपड़े पहनने वाले निर्भीक वाक्पटु नवयुवकों को पसंद करती हैं। किशोरावस्था की प्रगति के साथ–साथ प्रेम, प्रणय–याचना और विवाह में रुचि पकाराष्ठा पर पहुँच जाती है। किशोर–किशोरियों में आपस में मिलने–जुलने की प्रवृत्ति व व्यवहार सामाजिक वातावरण के अनुरूप ही होती है।

4. विपरीत लिंग में रुचि :

यौवनारम्भ के समय लैंगिक क्षमताओं का विकास होता जाता है वैसे–वैसे किशोर की विषमलिंगियों के प्रति रुचि का स्वरूप भी बदल जाता है। किशोरावस्था के प्रारम्भिक दिनों में जाग्रत रुचियों का स्वरूप प्रणयात्मक होता है। उसके साथ–साथ उसमें विषमलिंग्रियों के द्वारा पसंद किये जाने की भी प्रबल इच्छा रहती है। विषमलिंगियों में किशोर की रुचि पर उसके मित्रों की रुचि का भी बहुत प्रभाव पड़ता है।

यौवनारम्भ काल में विषमलिंगियों के प्रति लाक्षणिक रूप से द्वेष का भाव होता है जो बदलते–बदलते प्रेम का रूप ले लेता है। इस संक्रमण काल में शुरू–शुरू में लड़के–लड़कियाँ दोनों अपने ही लिंग के अपने से कुछ बड़े व्यक्ति से स्नेह करने लगते हैं एवं तत्पश्चात् अपने से बड़े विषमलिंगीय व्यक्ति से स्नेह करने लगते हैं। यह विषमलिंगीय व्यक्ति कोई भी हो सकता है, चाहे वह शिक्षक हो, बड़ा खिलाड़ी हो, संगीतज्ञ हो, अभिनेता/अभिनेत्री हो, अपने ही परिवार का कोई सदस्य या पारिवारिक मित्र हो। किशोर उसे नायक–नायिका की भांति पूजता है एवं उसका अनुसरण करने की प्रबल इच्छा रखता है।

धीरे–धीरे पूर्व किशोरावस्था की समाप्ति के पहले ही बड़ी आयु के विषम–लिंगियों में इनकी रुचि नष्ट हो जाती है एवं उसकी जगह अपनी आयु के आस–पास की आयु वाले विषमलिंगीय व्यक्तियों में रुचि हो जाती है। प्रारम्भ में लड़कियाँ बिना किसी भेदभाव के ऐसे किसी भी लड़के को पसंद करने लगती है जो उनकी तरफ थोड़ा भी आकर्षित होता है जबकि लड़के किसी खास लड़की की बजाय विविध खूबसूरत लड़कियों की तरफ आकर्षित होते हैं।

चौदह वर्ष की आयु तक लड़कियाँ सामान्यतः अपनी आयु के लड़कों में निश्चित रूप से रुचि लेने लगती हैं, जबकि लड़के अभी भी लड़कियों की उपस्थिति में झेंपते हैं। वे संकोच करते हैं, हालांकि वे लड़कियों में थोड़ी बहुत रुचि दर्शाते हैं किन्तु ऊपरी द्वेषभाव काफी अंश तक बना रहता है।

5. नेता :

नेता बनने के लिये किशोर के अन्दर ऐसे गुण होने चाहिये जो समूह के सदस्यों के गुणों से श्रेष्ठ हों और उनके द्वारा सराहे जाते हों। नवकिशोरों का लाक्षणिक नेता अपनी आयु, शीघ्र परिपाक या प्रशिक्षण के कारण औसत से कुछ ऊँची बुद्धिवाला, औसत से ऊँची शैक्षणिक उपलब्धि वाला और पपिक्वत के औसत से ऊँचे स्तर वाला होता है। उसमें विश्वसनीयता, निष्ठा, बहिर्मुखता (Extrovert) , अत्यधिक रुचियाँ, आत्म विश्वास, शीघ्र निर्णय लेने की शक्ति, सजीवता, अच्छा खिलाड़ी होना, समाज प्रियता, परिहास प्रियता, धीरता, मौलिकता, कार्य कुशलता, अनुकूलन क्षमता, चातुर्य, सष्णुिता, सहयोगात्मक रवैया आदि गुण पाये जाते हैं। बाल्यावस्था में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

नेता बनते और मिटते रहते हैं, किन्तु किशोरावस्था में ऐसा नहीं होता। जो बड़ा किशोर कॉलेज की पहली कक्षा में नेता बन जाता है, इसके अपने सम्पूर्ण कॉलेज जीवन में नेता बने रहने की अधिक संभावना रहती है। चौदह–पन्द्रह वर्ष की आयु तक लड़कियाँ नेता के रूप में लड़कों को चुनना पसंद करती हैं जबकि लड़के अपने नेता के रूप में लड़के को ही चुनते हैं। अतः दोनों ही लिंगों से संबंधित क्रिया कलापों में नेता बहुधा लड़के ही होते हैं। किशोर नेता विविध प्रकार के सामाजिक कार्यों में सक्रिय भाग लेते हैं अतः उनके अन्दर सामाजिक सूझ–बूझ आ जाती है तथा वे समूह की इच्छाओं से समायोजन का महत्त्व समझ लेते हैं।

6. सामाजिक स्वीकार्यता :

नवकिशोर की सबसे बड़ी इच्छा यह होती है कि वह अपने समवयस्कों में लोकप्रिय हो और उनके द्वारा अपनाया जाये। अलग–अलग किशोरों को सामाजिक स्वीकार्यता अलग–अलग मिलती है। उच्च प्रतिष्ठित किशोर जैसे– 'सितारे' को स्वीकरण अधिक मिलता है, कम प्रतिष्ठित किशोर को कम स्वीकरण मिलता है एवं एकाकी किशोर को सामाजिक स्वीकरण बिल्कुल भी नहीं मिल पाता है। अधिकतर किशोरों को अपने बारे में दूसरों की भावनाओं का विविध संकेतों से पता चल जाता है, जैसे – मंडली या भीड़ द्वारा अपनाया जाना, उनके प्रति दूसरों का बर्ताव, उनके प्रयत्नों का सराहा जाना, उनकी गलतियों को क्षमा कर दिया जाना, पार्टी या सामूहिक क्रिया कलापों में उन्हें आमंत्रित करना आदि। समाज में अपनाया जा सकने वाला किशोर फुर्तीला, सामाजिक व्यवहार में आक्रामक ख्याल रखता है व समूह का नेतृत्व ग्रहण करता है। उसका आचरण सत्यनिष्ठ, निष्कपट एवं संयमित होता है। नवकिशोर को अपने साथियों में जितनी लोकप्रियता मिलती है उतनी ही उसकी अपने परिवार के प्रति स्नेह व मैत्री की भावनाएँ होती हैं। उन्हें अपने परिवार के कामों के साथ–साथ घर के बाहर के क्रियाकलापों में भी भाग लेने की अनुमति मिलती है। लोकप्रिय किशोर को सुरक्षा और प्रसन्नता की अनुभूति होती है तथा वह अपने भविष्य के बारे में आशावान और अपनी सफलता के प्रति आश्वस्त हो जाता है। छोटे किशोर की भांति बड़ा किशोर भी सुखी व समायोजित तभी होता है जब उसे उचित मात्रा में सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होती है। बड़े किशोर स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद कॉलेज, प्रशिक्षण–शाला या नौकरी आदि में प्रवेश करते हैं जहाँ उन्हें अपरिचित लोगों के समूह से संबंधित होना होता है। अपरिचित समूह के द्वारा उन्हें अपनाया जाना बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि समूह ने उनके प्रति क्या धारणा बना रखी है। यदि धारणा अनुकूल होती है तो किशोर को अपनाये जाने की संभावनाएँ तथा योग्यताएँ बढ़ जाती है व प्रतिकूल धारणा होने पर उसे अस्वीकृत कर दिया जाता है। समूह द्वारा बनाई गई प्रारम्भिक धारणाएँ कई बातों पर निर्भर करती हैं जैसे– व्यक्ति की शक्ल–सूरत, उसका पहनावा व चाल–ढाल से प्रकट होने वाली सामाजिक–आर्थिक स्थिति, उसका व्यवहार व साहचर्य इत्यादि।

7. सामाजिक परिपक्वता :

किशोरावस्था की समाप्ति तक किशोर अपनी नई स्थिति को सफलता के साथ संभालने के लिये सामाजिक रूप से परिपक्व हो जाते हैं। अब वे समूह के सदस्य के नाते अपने उचित स्थान और कार्य का ज्ञान रखते हैं। जो किशोर सामाजिक परिपक्वता प्राप्त कर लेते हैं और युवा जीवन से समायोजन करने के लिये तैयार रहते हैं, उनकी परिवार पर निर्भरता कम हो जाती है अर्थात् वे स्वयं निर्णय कर सकते हैं, अपने परिवार का और अपना भरण पोषण कर सकते हैं। ऐसे किशोर अपने परिवार वालों से मित्रवत् व्यवहार करते हैं। परिवार के सदस्यों के प्रति स्नेह, निष्ठा, विचारशीलता और सम्मान प्रकट करते हैं। अपने नागरिक कर्त्तव्यों को स्वीकार करते हैं व उन्हें निष्ठा के साथ पूरा करते हैं। वे धर्म, जाति या रंग के आधार पर किसी के प्रति पूर्वागह न रखते हुए सभी तरह के लोगों से अच्छा समायोजन कर लेते हैं। अपने मित्रों को उनके मौलिक स्वरूप में अपनाते हैं तथा उन्हें बदलने का प्रयास नहीं करते। मित्रों के प्रति पूर्ण निष्ठा रखते हैं तथा समय–समय पर उन्हें यथासंभव आवश्यक सहायता प्रदान करते हैं। अब किशोर इतना आत्मनिर्भर होता है कि ऐसी विपरीत परिस्थितियों में जो उसका परिवार, मित्रों या परिचितों के साथ रहना असंभव कर दें, तो भी वह प्रसन्न रह सकता है।

किशोरावस्था में होने वाला सामाजिक विकास यदि व्यवस्थित रूप से होता है तो ऐसे किशोर भविष्य में अच्छे समाज का निर्माण करते हैं।

V. संवेगात्मक विकास

. बाल मनोवैज्ञानिक जी. स्टेनले हॉल ने किशोरावस्था को ''तूफान और तनाव'' की अवस्था बताया है। जीवन चक्र के इस पड़ाव में किशोर की ग्रंथियों से होने वाले स्त्रवण के कारण

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

शारीरिक परिवर्तनों के साथ–साथ उनमें संवेगात्मक अस्थिरता व तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है। किशोरों के संवेग प्रायः तीव्र, अस्थिर, अनियन्त्रित अभिव्यक्ति वाले तथा विवेक शून्य होते हैं। यौवनारम्भ में संवेगात्मक अस्थिरता किशोरों में बदलती रुचियों से उत्पन्न उलझन, ग्रंथियों व शारीरिक परिवर्तनों से उत्पन्न बदलाव, स्वयं को शारीरिक दृष्टि से सामान्य से हीन समझने की प्रवृति, स्वयं की योग्यताओं पर संशय या आत्मविश्वास की कमी अन्तर्द्वन्द्व की स्थिति के कारण होती हैं।

नवकिशोरों को बहुत कम बातें या वस्तुएँ प्रसन्नता दे पाती है। साधारण से साधारण बात भी इन्हें अपनी आलोचना प्रतीत होती है। ये किशोर उदास एवं खिन्न रहकर संवेगात्मक अनुक्रियाएँ अभिव्यक्त करते हैं तथा थोड़ी सी उत्तेजना पाकर ही रो पड़ते हैं।

जननेन्द्रियों की वृद्धि व परिपक्वता जैसे परिवर्तनों के फलस्वरूप होने वाले संवेदनों एवं गौण लैंगिक लक्षणों के विकास से तरूण बालक का ध्यान लिंग संबंधी बातों की ओर हो जाता है लेकिन उसकी लिंग संबंधी रूचियाँ आत्मनिष्ठ एवं व्यक्तिगत होती है। वह इस विषय में किसी से भी बात नहीं कर पाता है। तरूण किशोर अति शर्मिला होता है। वह स्वयं के शारीरिक परिवर्तनों के बारे में बहुत सचेत रहता है तथा सामाजिक टीका–टिप्पणी से बचने के लिये वह सामाजिक समारोहों में जाने से बचता है।

अब तरूण किशोर के जीवन में बाल्यवस्था के भय के स्थान विविध प्रकार की आकुलताएँ अर्थात् काल्पनिक भय ले लेता है। वह अपना समय दूसरे बच्चों के साथ खेलने या स्कूल या घर के कार्यो की अपेक्षा मनोविलास व दिवास्वपनों में व्यतीत करता है। इन दिवास्वपनों में वह स्वयं को एक शहीद, माता–पिता, शिक्षक, मित्रों और सामान्य समाज के द्वारा गलत समझा हुआ तथा सताया हुआ पीड़ित नायक के रूप में कल्पित करता है तथा परेशान होता रहता है। बालक जितना अधिक इन दिवास्वपनों में खो जाता है उतना ही वह वास्तविकता से दूर होता जाता है तथा उसका सामाजिक समायोजन पिछड़ता जाता है।

उम्र के बढ़ने के साथ–साथ किशोर समस्याओं का सामना कुछ शांत होकर करता है। अब वह अपने संवेगों पर नियंत्रण करने की प्रबल इच्छा रखता है किन्तु फिर भी संवेगात्मक उद्दीपन बने रहते हैं व किशोर इनके प्रति अपनी अनुक्रियाएँ प्रदर्शित करते हैं। किशोरावस्था के कुछ प्रमुख संवेग निम्न है :–

1. **क्रोध (Anger) :** किशोरावस्था में क्रोध उद्दीप्त करने वाली परिस्थितियाँ अधिकांशतः सामाजिक होती हैं जैसे किशोर को चिढ़ाया जाना, उसका उपहास किया जाना, उसकी आलोचना करना, उसे उपदेश देना, माता पिता या शिक्षक का व्यवहार अनुचित लगना, टोका–टोकी करना या अनुचित दंड देना, उनकी वांछित सुविधाएँ छीन लेना आदि। किशोर द्वारा प्रारंभ किये गये कार्य के भली भांति पूर्ण न हो पाने या किसी भी ऐच्छिक या नियमित कार्यकलाप में बाधा पड़ने पर भी किशोर क्रोधित हो जाते हैं। क्रोधित होने पर किशोर खिंचा–खिंचा सा रहता है या किसी भी प्रकार की बदमिज़ाज़ी कर सकता है जैसे– अपशब्द कहना, गालियाँ देना, चीजों को पटकना, खाना न खाना, जमीन व दीवार पर लात घूंसे मारकर स्वयं को चोट पहुँचाना, कमरे का दरवाजा बंद करके बैठ जाना, घर से बाहर निकल जाना या रोना चिल्लाना आदि। सामान्यतया किशोर बालक आक्रामक अनुक्रिया के रूप में बड़े किशोर शारीरिक आक्रमण न कर वाणी का आक्रमण करते जैसे– गाली देना, व्यंग्य कसना, खिल्ली उड़ाना या दूसरों को चिढ़ाने वाले विचित्र व्यवहार करना जैसे दबी सीटी बजाना, मेज पर पट पट करना आदि।

2. **भय (Fear) :** किशोरावस्था में आते–आते बाल्यवस्था के भय का स्थान नये–नये भय ले लेता हैं, जैसे अंधेरे मे अकेले होने का भय, रात में बाहर अकेले जाने का भय, बहुत से लोगों या अजनबियों के बीच में रहने का भय, विद्यालय में अपने प्रदर्शन का भय इत्यादि। भय की अनुक्रिया के रूप में किशोर का शरीर जड़वत होकर पीला पड़ जाता है तथा कंप–कंपी व पसीना आने लगता है। लेकिन किशोर अपने डर को छुपाने का प्रयास करता है तथा अपने व्यवहार का औचित्य बताने के लिये बहाने बनाता रहता है ।

3. **आकुलता (Anxitey) :** उम्र बढ़ने के साथ–साथ भय का स्थान आकुलताएँ ग्रहण करने लगती है। वास्तविक चीज़ों या परिस्थितियों की बजाय काल्पिनिक वस्तुएं, स्थिति या बातों से गहराने वाला भय ही आकुलता है। किशोरों में आकुलताएँ परीक्षा के परिणाम, समूह के सामने भाषण करने की झिझक, खेल प्रतियोगिताओं में धाक जमाने की इच्छा तथा लोगों की प्रत्याशाओं पर खरा उतरने की आकांक्षा आदि कारणों से होती है। किशोर–किशोरी अपनी लोकप्रियता,

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रतिष्ठा, शादी व किशोर मित्रों को लेकर भी आकुल रहते हैं। अधिकांश आकुलताएँ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से असमर्थता की भावनाओं से पैदा होती है।

4 **ईर्ष्या (Jealousy)** : ईर्ष्या एक शैशवोचित संवेग है किन्तु किशोरावस्था में यह भी तीव्र व छिपे हुए रूप में प्रदर्शित होता है। तरूण किशोर की ईर्ष्या उन साथियों से होती है जिन्हें अधिक स्वतंत्रता व सुविधाएं प्राप्त होती है या जो शैक्षणिक, खेलकूद या अन्य गतिविधियों में अधिक सफल होते हैं। ईर्ष्यालु किशोर अपनी ईर्ष्या को सूक्ष्म शाब्दिक अनुक्रिया जैसे–व्यंगात्मक टीका–टिप्पणी, उपहास या निंदा के रूप में प्रदर्शित करते हैं। किशोरियाँ कभी–कभी ईर्ष्यावश या उपेक्षित महसूस करने पर रोती चिल्लाती हैं। बड़े किशोरों की ईर्ष्या का कारण उनके प्रेमी/प्रेमिका होते हैं जिनसे उन्हें प्रेम व मनत्व हो जाता है। साथ ही उनकी भावनाओं के प्रति अनिश्चय का भाव भी रहता है। उन्हे सदैव यह संशय बना रहता है के उनके प्रेमी/प्रेमिका उनकी नजर से ओझल होने पर क्या करते है। ऐसी ईर्ष्या की अनुक्रिया वाक्–युद्ध के रूप में प्रकट होती है ।

5. **स्पर्धा (Envy)** : स्पर्धा का उद्दीपन व्यक्ति विशेष की वस्तुओं द्वारा होता है। किशोर न केवल यह चाहते है कि उनके पास भी उतनी ही मात्रा में सुविधाएँ जैसे आलीशान घर या बंगला, बढ़िया कार, महंगे कपड़े, सैल्युलर फोन, प्रतिष्ठा, होटलों में जाने की स्वतंत्रता आदि हो जितनी कि उनके मित्रों के पास है बल्कि वे यह भी चाहते हैं कि उनकी चीज़ें भी उतनी ही अच्छी हो जितनी कि उनके मित्रों की चीज़ें है। ईर्ष्या की भाँति स्पर्धा की प्रारूपिक प्रतिक्रिया (Initialreaction) भी शाब्दिक होती है। किशोर या तो दूसरों की वस्तुओं से तुलना कर नुक्ताचीनी कर सकता है और उनका मजाक उड़ा सकता है या फिर वह अपनी चीज़ों की उत्कृष्टता को बढ़ा–चढ़ा कर बता सकता है। ये शाब्दिक अभिवृत्तियाँ दूसरों का ध्यान व सहानुभूति प्राप्त करने की कोशिश मात्र हैं। कभी–कभी किशोर ईष्ट वस्तुओं की प्राप्ति के लिये आवश्यक पैसा कमाने हेतु नौकरी करते हैं या चोरी का तरीका अपना कर अपनी समस्या को हल कर लेते हैं। इस प्रकार किशोर अपचार (Adolescent delinquency) के पीछे स्पर्धा का भाव ही छुपा रहता है।

6. **स्नेह (Affection)** : किशोरों का स्नेह उन लोगों पर केन्द्रित होता हैं जिनके साथ उनका सुखद संबंध हो और जिनसे उन्हें भरपूर प्यार व सुरक्षा का अहसास हो। बड़े किशोरों का स्नेह एक बार में एक ही व्यक्ति, विशेष रूप से विषमलिंगीय व्यक्ति के ऊपर केंद्रित होता है। इस अवस्था का स्नेह एक आत्मसात करने वाला संवेग है जो किशोर/किशोरी को बराबर उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों के साथ रहने के लिये प्रेरित करता है जिनके प्रति उसका स्नेह सबसे प्रगाढ़ होता है। वह अपने स्नेह के पात्र को एकाग्रचित होकर देखता है, उसकी बात तन्मय होकर सुनता है व उसकी उपस्थिति में बराबर मुस्कुराता रहता है।

7. **हर्ष (Joy)** : हर्ष हल्के रूप में प्रसन्नता या सुख है जो कि एक सामान्य संवेगात्मक अवस्था है। किशोर को हर्ष तब होता है जब वह सफलतापूर्वक अपना कार्य सम्पन्न कर लेता है, समाज के लोगों व सामाजिक परिस्थितियों से अच्छा सामंजस्य बिठा लेता है, विविध सामाजिक परिस्थितियों में स्वयं को श्रेष्ठ महसूस करता है या फिर किसी भी परिस्थिति के हास्यास्पद पहलू को देख पाता है। हर्ष की लाक्षणिक अनुक्रिया के रूप में मुस्कुराने की प्रवृत्ति होती है व कभी–कभी मुस्कुराहट के बाद हँसना भी होता है। लड़कियाँ हर्ष से प्रायः खिलखिलाती है जबकि लड़के अट्टहास करते हैं। हर्ष की अभिव्यक्ति से किशोरों द्वारा रोके गये अप्रिय संवेगों जैसे क्रोध, भय व ईर्ष्या आदि से उन्मुक्त होने का अवसर मिलता है।

8. **जिज्ञासा (Curiosity)** : किशोरों की स्वाभाविक जिज्ञासाँ बाहरी प्रतिबंधों मे दब चुकी होती हैं। अब उनकी जिज्ञासाएँ स्वयं में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों, काम संबंधी विषयों व स्त्री–पुरूष के संबंधों को लेकर होती है। विद्यालयों में शिक्षण के दौरान मिलने वाले नये–नये विषय व समाज में मिलने वाले नये–नये लोगों के प्रति भी किशोर जिज्ञासु होते हैं।

बड़े होते होते किशोर अपने संवेगों पर नियंत्रण रखना भी सीख लेता है। किशोरावस्था के अंत तक वह दूसरों की उपस्थिति में अपने संवेगों का विस्फोट नहीं होने देता तथा अपने संवेगों को किसी सामाजिक रूप से मान्य तरीके से निकालने के लिये उपयुक्त समय की प्रतीक्षा करता है। इस अवस्था में संवेगों का नियंत्रण इतना अधिक भी नहीं किया जाना चाहिये कि किशोर अधीर, चिड़चिड़ा एवं क्रोधी हो जाये बल्कि समय–समय पर सामाजिक स्वीकार्यता के अनुरूप सांवेगिक अनुक्रियाएँ जैसे खेल, नृत्य–गान आदि की प्रतियोगिताएँ होती रहनी चाहिये जिससे वह एक सामान्य जीवन व्यतीत कर सके।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

VI. संज्ञानात्मक विकास

शिशु जन्म के कुछ समय के पश्चात् ही शिशु को इन्द्रियों के द्वारा प्रारम्भिक अनुभव प्राप्त करना प्रारम्भ कर देता है। आयु के बढ़ने के साथ–साथ बच्चे में अनेक ज्ञानात्मक योग्यताओं का विकास होता है और वह वस्तुओं को पहचानने लगता है, याद रखने लगता है तथा क्यों व कैसे जैसे प्रश्नों से अपनी तर्क शक्ति व चिन्तन का विकास करता है। दूसरे शब्दों में संज्ञान से आशय उन सभी ''मानसिक क्रियाओं व व्यवहारों से है जिनके द्वारा बालक सांसारिक गतिविधियों को ग्रहण करता है, अधिगमित करता है, स्मरण रखता है एवं इसके बारे में सोचता है।''

किशोर संज्ञानात्मक विकास के चतुर्थ सोपान पर होते हैं जिसे अमूर्त संक्रियात्मक अवस्था य औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था (Formal oprational stage) कहते हैं। यह ग्यारह से सत्रह–अठारह वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में किशोर विविध विषयों पर सोचना प्रारम्भ कर देते हैं। उनके सोच विचार में तर्क आ जाता है। अब किशोर परिक्ल्पनात्मक ढंग से समस्याओं पर विचार करने लगता है। वह बातों की बारीकी, सम्बन्धिता, क्रमबद्धता आदि को समझने लगता है। प्रतीकात्मक (Symbolic) शब्द, उपमा आदि का आशय समझने लगता है।

इस अवस्था के बालक विविध प्रकार के तर्क–वितर्क, चिन्तन एवं परिकल्पनाएँ करने लगते हैं। किशोर किसी भी समस्या के समाधान के लिये विविध संभावित विकल्पों के बारे में सोच सकता है। उसके विचार अब वास्तविकता से संभावनाओं की तरफ बढ़ते हैं।

किशोर अब मुंह जबानी ही गणित, विज्ञान या तर्क वितर्क के कई सवाल एवं समस्याएँ सुलझा लेता है। किसी भी सवाल या प्रश्न के पूछे जाने पर किशोर के मन मस्तिष्क में उस परिस्थिति का चित्रण हो जाता है जिसके बल पर वह समस्या कासमाधान बौद्धिक क्षमता द्वारा कागज–कलम के बिना या वस्तु विशेष को सामने देखे बिना भी कर सकता है। उदाहरण के लिये छोटे बच्चों को गणित के साधारण गुणा भाग व जोड़–बाकी पहले वस्तु दिखाकर फिर हाथ व उंगलियों पर गिनकर या कागज–कलम द्वारा करने पड़ते हैं जबकि एक किशोर मस्तिष्क में चित्रण द्वारा साधारण जोड़–बाकी, गुणा–भाग मुंह जबानी बिना कागज–कलम के कर सकता है।

किशोरावस्था आते–आते बालक की सोचने विचारने की क्षमता में क्रमबद्धता आ जाती है। उदाहरण के लिये छोटे बालक को ड्रॉइंग करने के लिये देने पर वह कुछ भी मनपसंद चित्र बनाकर उनमें अपनी पसंद के रंग भरेगा चाहे वे रंग वहाँ उपयुक्त हो या नहीं। किशोर को ड्रॉइंग का विषय दिये जाने पर पहले वह विषय वस्तु पर मनन करके मस्तिष्क में उसका चित्रण व उसमें भरे जाने वाले रंगों का एक खाका खींचेगा, फिर कागज पर हल्के हाथ से बाह्य रूप रेखा बनायेगा। रूप रेखा बनने पर उसमें क्रमिक रूप से हल्के से गहरे रंग भरेगा, और वास्तविक व आकर्षक रंग सज्जा के बाद अंतिम परिसज्जा (Finishing touch) प्रदान करेगा जिससे वह तस्वीर बहुत ही आकर्षक व वास्तविक प्रतीत हो।

आपने पूर्व में भी पढ़ा है कि किशोरावस्था दिवास्वप्न की अवस्था है। इस समय किशोर बैठे–बैठे ही बहुत सी कल्पनाएँ करने लगता है तथा कल्पनाओं में ही बहुत सी समस्याओं के भी सुलझा लेता है। जैसे चिड़िया के पंख होते हैं लेकिन अगर उनके भी पंख लगा दिये जायें तो क्या वे उड़ सकेंगे ? ऐसे प्रश्नों का वे तार्किक परीक्षण कर ''हाँ'' या ''नहीं'' में जवाब देते हैं।

किशोर अब विविध प्रकार की क्रियाएँ जैसे योग (Combinativity), पारस्परिक सम्बद्धता (Associativity), व्यतिक्रम (Reversibility) एवं निषेधीकरण (Nulifiability) करने लगता है। उदाहरण के लिये वह अब दो या अधिक वर्गों को आराम से जोड़कर एक बड़ा वर्ग ना लेता है। जैसे :– सभी वृद्ध पुरूष + सभी वृद्ध स्त्रियां = सभी वृद्ध। किशोर इसे व्यतिक्रम में भी समझ सकते हैं जैसे सभी वृद्ध = सभी वृद्ध पुरूष + सभी वृद्ध स्त्रियाँ या फिर सभी वृद्ध पुरूष = सभी वृद्ध स्त्रियाँ। पारस्परिक सम्बद्धता की प्रक्रिया को इस उदाहरण के द्वारा समझाया जा सकता है मान लीजिये कक्षा में कुल 30 विद्यार्थी हैं तथा एक दिन भारत बंद के परिणाम स्वरूप कक्षा में 30 विद्यार्थी अनुपस्थित रहे तो उस दिन कक्षा में कुल कितने विद्यार्थी उपस्थित होंगे ? किशोर इस प्रश्न का उत्त्र देगा कि एक भी नहीं।

तरूण किशोरों की बौद्धिक प्रक्रिया मात्रात्मकता (Quantitative), गुणात्मकता (Qualitative) व प्रभाव (Affective) पर आधारित होती है। किशोर एक साथ कई कारकों को जोड़ सकता है। वह परिस्थितियों को नये से नये स्वरूप में देख कर तर्क कर सकता है तथा दूसरों के

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सलाह–मशवरे पर आसानी से विश्वास नहीं करता है वरन् अपनी स्वयं की राय कायम करता है।

संज्ञानात्मक विकास के कारण एक किशोर में बालकों की तुलना में निम्न परिवर्तन देखे जाते हैं :–

1. किशोर तीव्र आलोचक (Critic) होते हैं। उनका अपने आस–पास के लोगों व वातावरण को देखने व परखने का नज़रिया (Logical) तार्किक एवं विश्लेषणात्मक (Analytical) होता है, जिससे उनके व्यक्तिगत, सामाजिक व संवेगात्मक स्तर पर बहुत प्रभाव पड़ता है। अपनी आलोचनात्मक प्रवृत्ति के कारण ही किशोर अपने माता–पिता व बड़े बुजुर्गों की कमियों को चिन्हित करने लगते हैं जिससे माता–पिता व किशोर–किशोरियों के बीच विवाद व तनाव की स्थिति बन जाती है। हमारे भारतीय माता–पिता अभी तक बढ़ते किशोरों की आलोचना को सहन नहीं कर पाते तथा उनके आपसी संबंध बिगड़ जाते हैं।
2. उत्तर किशोरावस्था आते–आते किशोर अपने से बड़े के साथ सहायक(Subordinate) बन कर कार्य करना पंसद नही करते। अपनी बढ़ती हुई आलोचनात्मक क्षमताओं के कारण वे स्वयं के काल्पनिक प्रतिमान(Ideal) स्थापित करते हैं तथा स्वयं को संसार में एक बड़ा सुधारकर्ता समझने लगते हैं। किशोर ये समझने व मानने लगते हैं कि बड़े उनके साथ न्यायपूर्ण व्यवहार नहीं कर रहे हैं तथा फलतः वे काल्पनिक द्रोही (Idealistic rebelian) बन जाते है। युवा होते–होते यह विद्रोह की भावना स्वयं ही खत्म होती जाती है।
3. संज्ञानात्मक विकास के साथ–साथ किशोर स्वयं की एक अनोखी सी भाषा विकसित कर लेते हैं जिसमें हिन्दी–अंग्रेजी का संगम होता है। एक ही वाक्य का कुछ अंश वे अंग्रेजी में कहेंगे तो शेष वाक्यांश हिन्दी में। जैसे ''लेट्स गो फोर ए पिकनिक, बहुत मजा करेंगे।'' वे अपने शिक्षकों व बड़े बुजुर्गों के नये – नये अनोखे नाम निकालते हैं, जैसे कड़क शिक्षक को भयंकर, सदैव डाँटते रहने वाले शिक्षक व माता – पिता को बादल–बिजली जैसे कई नाम दे देते हैं। बोर होना, मूड ठीक नहीं होना जैसे वाक्यांश उनके मुख्य संवादों में से हैं।
4. किशोर अपने रूप, रंग व अपनी आकृति के बारे में बहुत जागरूक होते हैं। उनकी सीमित समझ के कारण वे महसूस करते हैं कि सारी दुनिया उन्हें देख रही है। फलतः वे घण्टों शीशे के सामने खड़े होकर काल्पनिक दर्शकों के रूप में स्वयं को निहारते रहते हैं।
5. बहुधा किशोर सृजनात्मक होते हैं। अतः माता–पिता व बड़े बुजुर्गों को उनकी सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करना चाहिये। बौद्धिक क्षमता के बढ़ने के साथ–साथ सृजनात्मकता भी बढ़ती जाती है। उनकी सृजनात्मकता के भरपूर विकास के लिये घर व विद्यालय का वातावरण दोस्ताना तथा कुछ लचीलापन लिये हुए होना चाहिये।
6. ज्ञानात्मक विकास के साथ–साथ किशोरों की दिवास्वप्न देखने की प्रवृत्ति में भी वृद्धि होती है। उम्र के बढ़ने के साथ–साथ उनकी परिकल्पनाएँ धनात्मक व सुनिश्चित होने लगती हैं। अब उन्हें सपनों में असफल होने से भय नहीं लगता क्योंकि अब तक वे बुरे अनुभवों से जुझने के लिये सक्षम हो जाते हैं। दिवास्वप्न देखने की प्रवृत्ति के द्वारा वे कल्पनाओं में अपनी समस्याओं के कई संभावित विकल्पों को जाँच परख लेते हैं।
7. किशोरों में बौद्धिक विकास के साथ–साथ दीर्घावधि के मूल्य भी निश्चित होने लगते हैं। उम्र के बढ़ने के साथ–साथ स्वार्थ व आत्मवाद (Spiritual) की भावनाएँ कम होने लगती हैं तथा किशोर में तर्क–वितर्क, मूल्य एवं अभिवृत्तियाँ विकसित होने लगती हैं। इससे वे आत्मविश्वास, प्रतिस्पर्धा तथा स्वतंत्रता के दीर्घावधि मूल्य स्थापित करने में सक्षम होते हैं।

इस प्रकार किशोरावस्था में निम्न विशेषताओं का विकास होता है –

1. तार्किक चिन्तन की क्षमता
2. समस्या समाधान की क्षमता
3. वास्तविक–अवास्तविक में अन्तर समझने की क्षमता
4. वास्तविक अनुभवों को काल्पनिक परिस्थितियों में प्रक्षेपित करने की क्षमता
5. परिकल्पनाओं को विकसित करने की क्षमता

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप व्यवहार करना तथा दूसरों के साथ समन्वय स्थापित करने की क्षमता उत्पन्न होना।
2. नवकिशोर, बड़े पैमाने पर सामाजिक सम्पर्क रखने से

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अपने क्रियाकलापों को व्यवस्थित करने व सामाजिक स्वीकृत तरीके से व्यवहार करना सीख जाते हैं।

3. नवकिशोर में यौवनारम्भ काल में पाई जाने वाली नकारात्मक अभिवृत्तियों का स्थान विधानात्मक अभिवृत्तियाँ लेने लगती हैं।

4. नवकिशोरों में अधिक चुनाव करने की व बाल्यवस्था की अपेक्षा कम मित्र बनाने की प्रवृत्ति रहती है। किशोरों के समूह बड़े व ढीले–ढाले तथा किशोरियों के छोटे एवं ठोस होते हैं।

5. नवकिशोरों के सबसे घनिष्ठ और सबसे अच्छे मित्र उनके सखा होते हैं। सखा प्रायः समान लिंग के होते हैं जिनकी रुचियाँ व योग्यताएँ समान होती हैं। तीन या चार घनिष्ठ मित्र मिलकर छोटे–छोटे अंतरंग समूह – मंडली बनाते हैं। बड़े किशोरों के सर्वाधिक घनिष्ठ मित्र कम होते हैं तथा वे अपना अधिकांश समय उन्हीं के साथ बिताते हैं।

6. कुछ किशोरों का संबंध भीड़ से नहीं होता व न ही उनके घनिष्ठ मित्र होते हैं ऐसे किशोरों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए स्कूल, चर्च व समाजिक संस्थाएँ युवक समूह स्थापित करती हैं।

7. पूर्व किशोरावस्था के अंत तक नायक–पूजा, प्यार व दीवानेपन की जगह रूमानी आसक्ति आ जाती है। फलतः बड़े किशोरों की सामुहिक क्रियाकलापों में रुचि समाप्त हो जाती है तथा वह अपने साथी के साथ रहना पसंद करता है।

8. नवयुवक सुखद और प्रसन्न व्यक्तित्व, स्वच्छता, विश्वसनीयता, दूसरों का ध्यान रखने के गुण व अच्छी आकृति वाली लड़कियों को अधिक महत्त्व देते हैं। जबक लड़कियाँ अच्छे तौर तरीकों वाले, स्वच्छ रहने वाले, आकर्षक व उपयुक्त कपड़े पहनने वाले निर्भीक एवं वाक्पटु नवयुवकों को पसन्द करती हैं।

9. बाल्यावस्था में लैंगिक रुचियाँ अधिकतर शारीरिक अंतरों पर केन्द्रित होती हैं। जैसे–जैसे यौवनारम्भ के समय लैंगिक क्षमताओं का विकास होता है वैसे–वैसे किशोर की विषमलिंगियों के प्रति रुचि का स्वरूप भी बदल जाता है।

10. नेता बनने के लिए किशोर के अन्दर ऐसे गुण होने चाहिए जो समूह के सदस्यों के गुणों से श्रेष्ठ हों और उनके द्वारा सराहे जाते हो। 14–15 वर्ष की आयु तक लड़कियाँ नेता के रूप में लड़के को चुनना पसंद करती हैं जबकि लड़के अपने नेता के रूप में लड़के को ही चुनते हैं।

11. किशोरावस्था की समाप्ति तक किशोर नई परिस्थितियों को सफलता के साथ संभालने के लिये सामाजिक रूप से परिपक्व हो जाते हैं।

12. किशोरावस्था में होने वाला सामाजिक विकास यदि व्यवस्थित रूप से होता है तभी भविष्य में अच्छे समाज का निर्माण संभव है।

13. किशोरावस्था में ग्रंथियों से होने वाले स्त्रवण के कारण शारीरिक परिवर्तनों के साथ–साथ संवेगात्मक अस्थिरता व तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है।

14. किशोरावस्था में संवेग प्रायः व्रीव, अस्थिर, अनियंत्रित अभिव्यक्ति वाले तथा विवेक शून्य होते हैं।

15. नवलकिशोर लिंग संबंधी बातों की ओर आकर्षित हो जाता है किंतु वह अति शर्मिला होता है।

16. तरूण किशोर के जीवन में बाल्यवस्था के भय का स्थान आकुलताएँ ले लेती है। वह अकेला रहकर दिवास्वप्नों में खोया रहना पसंद करता है।

17. पूर्व किशोरावस्था में संवेगों का प्रदर्शन स्वयं को चोट पहुँचाकर, वस्तुओं को तोड़–फोड़ कर आदि आक्रमक क्रियाओं द्वारा किया जाता है जबकि उत्तर किशोरावस्था में संवेग वाणी के आक्रमण यानि गाली गलौच, व्यंग्य, मजाक उड़ाना या चिढ़ाना आदि द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं।

18. संज्ञान से आशय उन सभी मानसिक क्रियाओं व व्यवहारों से है जिनके द्वारा बालक सांसारिक गतिविधियों को ग्रहण करता है, अधिगमित करता है, स्मरण रखता है एवं इसके बारे में सोचता है।

19. किशोर संज्ञानात्मक विकास के चतुर्थ सोपान पर होते हैं जिसे अमूर्त संक्रियात्मक अवस्था या औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था कहते है। यह अवस्था ग्यारह से सत्रह–अठारह वर्ष तक की होती है।

20. संज्ञानात्मक विकास के दौरान किशोर परिकल्पनात्मक ढ़ंग से समस्याओं पर विचार करने लगते हैं तथा बातों की बारीकी, सम्बन्धिता, क्रमबद्धता आदि को समझने लगता है।

21. संज्ञानात्मक विकास के कारण एक किशोर में बालकों की तुलना में विविध परिवर्तन होते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

22. किशोर इस अवस्था में तीव्र आलोचक होते हैं। वे बड़ों के साथ सहायक बनकर काम करना पसंद नहीं करते हैं, स्वयं की एक अनोखी भाषा विकसित कर लेते हैं, अपने रूप, रंग व आकृति के बारे में बहुत जागरूक होते हैं तथा बहुधा सृजनात्मक होते हैं। इस अवस्था में दीर्घावधि मूल्य भी निश्चित होने लगते हैं।

23. इस समय विभिन्न विशेषताओं का विकास होता है – तार्किक चिन्तन एवं समस्या समाधान की क्षमता बढ़ती है, वे वास्तविक एवं अवास्तविक में अन्तर समझने लगते हैं उनमें वास्तविक अनुभवों का काल्पनिक परिस्थितियों में प्रक्षेपण एवं परिकल्पनाओं को विकसित करने की क्षमता आ जाती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) किशोरों के सबसे घनिष्ठ मित्र होते हैं :

(अ) माता–पिता (ब) सखा
(स) पड़ौसी (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(ii) नवकिशोरों का व्यवहार यौवनारम्भ काल की अपेक्षा होता है:

(अ) बातूनी (ब) कोलाहलपूर्ण
(स) बेधड़क (द) मर्यादित

(iii) किशोरों का सबसे बड़ा समूह कहलाता है

(अ) युवक समूह (ब) मंडली
(स) भीड़ (द) सखा

(iv) हमारी संस्कृति में जीवन साथी के चुनाव का विशेषाधिकार होता है –

(अ) युवक (ब) युवती
(स) माता–पिता (द) अ तथा स

(v) किशोरों में आकुलता का कारण है :

(अ) परीक्षा परीणाम
(ब) समूह के सामने भाषण देने की झिझक
(स) लोकप्रियता (द) उपरोक्त सभी

(vi) उत्तर किशोरावस्था में ईर्ष्या एवं स्पर्धा की प्रारूपिक प्रतिक्रिया होती है :

(अ) शारीरिक (ब) शाब्दिक
(स) मानसिक (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(vii) किशोर कब अपने संवेगों पर नियंत्रण करना सीख जाता है ?

(अ) यौवनारम्भ (ब) पूर्व किशोरावस्था
(स) उत्तर किशोरावस्था (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(viii) किशोर संज्ञानात्मक विकास के .... सोपान पर होते हैं :

(अ) प्रथम (ब) द्वितीय
(स) तृतीय (द) चतुर्थ

(ix) किशोर .... ढंग से समस्याओं पर विचार करने लगता है :

(अ) परिकल्पनात्मक (ब) मूर्त
(स) वास्तविक (द) इनमें से कोई नहीं

(x) उत्तर किशोरावस्था में किशोर अपने बड़ों के साथ सहायक बनकर कार्य :

(अ) करना चाहते हैं (ब) नहीं करना चाहते हैं
(स) कभी–कभी करना चाहते हैं (द) तय नहीं कर पाते

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) उत्तर किशोरावस्था में मित्रों की .... का कम महत्त्व होता है व उनके .... होने का अधिक।

(ii) किशोरावस्था के अंत तक लड़के और लड़कियाँ दोनों ही .... मित्रों के साथ अधिक समय बिताने लगते हैं।

(iii) चौदह वर्ष की आयु तक लड़कियाँ नेता के रूप में .... को चुनना पसन्द करती हैं।

(iv) नवकिशोर में यौवनारम्भ काल में पाई जाने वाली नकारात्मक अभिवृत्तियों का स्थान .... अभिवृत्तियाँ लेने लगती हैं।

(v) .... समूह एकाकी प्रवृत्ति वाले किशोरों को सामाजिक जीवन बिताने का अवसर प्रदान करते हैं।

(vi) नवयुवक .... और .... व्यक्तित्व वाली लड़कियाँ पसन्द करते हैं।

(vii) किशोरावस्था में क्रोध उद्दीपन करने वाली परिस्थितियाँ अधिकांशतः .... होती है।

(viii) उम्र बढ़ने के साथ–साथ भय का स्थान ....ले लेती है।

(ix) किशोर संज्ञानात्मक विकास की .... अवस्था में आते हैं।

(x) इस समय किशोरों के सोच विचार में .... आ जाता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(xi) .... की प्रक्रिया द्वारा किशोर विविध रास्तों से एक ही लक्ष्य तक पहुँचने में सक्षम होते हैं।

(xii) तरूण किशोरों की बौद्धिक प्रक्रिया .... , ... तथा .... पर आधारित होती है।

3. मित्र के रूप में किशोर किन व्यक्तियों को अपनाते हैं?

4. किशोरों में सामाजिक व्यवहार का विकास किस प्रकार होता है?

5. एक किशोर में सामाजिक विकास क्यों अनिवार्य है?समझाइये।

6. यौवनारम्भ में संवेगात्मक अस्थिरता क्यों होती है ? समझाइये ।

7. किशोर एवं किशोरी द्वारा संवेग प्रदर्शन में भिन्नता को समझाइये ।

8. स्पर्धा किशोरावस्था में अपचार का एक कारण है । स्पष्ट कीजिये ।

9. किशोरावस्था में संज्ञानात्मक विकास की विशिष्ट उपादेयता को समझाइये।

10. किशोरों में आकार, संख्या, रंग व समय की पारस्परिक संबद्धता का विकास कैसे होता है? समझाइये।

11. संज्ञानात्मक विकास में वातावरण एवं माता–पिता की क्या भूमिका है ?

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) द (iii) स (iv) द (v) द (vi) ब (vii) स (viii) द (ix) अ (x) ब

2. (i) संख्या, उपयुक्त (ii) विषमलिंगीय (iii) लड़कों (iv) विधानात्मक (v) संगठित (vi) सुखद, प्रसन्न (vii) सामाजिक (viii) आकुलताएँ (ix) अमूर्त संक्रियात्मक (x) तर्क (xi) पारस्परिक सम्बद्धता (xii) मात्रात्मकता गुणात्मकता, प्रभाव

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

3. किशोरावस्था की समस्याएँ और उनका प्रबंधन

Problems of Adolescence and their Management

किशोरावस्था को 'समस्याओं की आयु' कहा जाता है। बाल्यावस्था की अपेक्षा किशोरावस्था में समस्याओं की अधिकता होती है। किशोर स्वयं से अधिक परिवार वालों के लिए समस्या होता है। वांछित व्यवहार के बारे में ज्ञान का अभाव, शिक्षक, माता–पिता की अपेक्षाएं, जीवन के तनाव, दबाव आदि समस्याओं के प्रमुख कारण होते है। किशोरों को इस अवस्था में नई चुनौतियों का सामना करना होता है जो बाल्यावस्था की तुलना में अधिक जटिल होती है।

किशोरों को भाँति–भाँति की समस्याओं का सामना करना पड़ता है इस अवस्था की मुख्य समस्या समायोजन को लेकर होती है। एक तरफ तो उसे अपनी तीव्र शारीरिक वृद्धि, संवेगात्मक अस्थिरता एवं समाज में उसके बदलते परिदृश्य के साथ सामंजस्य बिठाना होता है तो दूसरी तरफ उसे स्वयं के लिये एक निश्चित कैरियर चुनना तथा वैवाहिक एवं सामाजिक उत्तदायित्वों को निभाने के लिये खुद को तैयार भी करना होता है। इसी समय वह गलत मित्र मण्डली एवं समस्याओं से तनावग्रस्त होकर कई बार शराब, तम्बाकू, सिगरेट, नशीली दवाओं के चक्कर में पड़कर स्वयं के अमूल्य जीवन को तबाह कर लेते हैं। यही नहीं कई बार तो वें चोरी, मारपीट, स्कूल या घर से भागना आदि अपराधों में भी लिप्त हो जाते हैं। लड़को की तुलना में लड़कियों की समस्याएं अधिक होती है। इस अध्याय में हम किशोरावस्था में होने वाली मुख्य समस्याओं के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

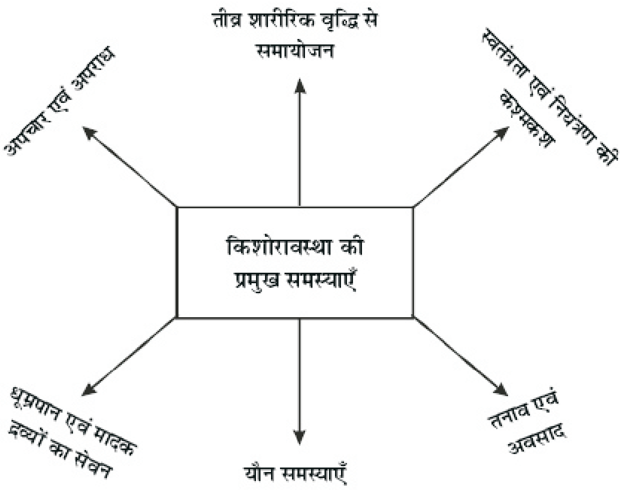

चित्र 3.1 किषोरावस्था की प्रमुख समस्याऐं

1. तीव्र शारीरिक वृद्धि से समायोजन :

किशोरावस्था के प्रारम्भ में शारीरिक वृद्धि एवं विकास अत्यन्त तीव्र गति से तथा विषमानुपातिक होता है। नवकिशोर अपने शरीर में अचानक होने वाले इन तीव्र परिवर्तनों के लिये तैयार नहीं होते हैं। कुछ बालक एकदम लम्बे तो कुछ मोटे–नाटे तो कुछ भयंकर कील–मुँहासों की समस्या से ग्रस्त रहते हैं। ऐसे बालकों को प्रायः सहोदरों व सहपाठियों द्वारा मजाक ही मजाक में कई नाम से जैसे लम्बू, तम्बू, मोमबत्ती, अगरबत्ती, बिजली का खंभा, मोटू, छोटू, पिंपल आदि कहा जाता है तो उन्हें कई बार भीतर तक झकझोर देता है। वृद्धि के साथ अनिवार्यतः होने वाले शारीरिक विषमानुपात तरूण बालक के अन्दर आकुलता पैदा कर देते हैं जो कि आतंक की सीमा तक पहुँच जाती है।

पूर्व किशोरावस्था में होने वाली शारीरिक वृद्धि के कारण पेशियाँ और हड्डियाँ तेजी से बढ़ती हैं तथा उनका पारस्परिक अनुपात भी बदल जाता है पेशियाँ लम्बाई में बढ़कर नई स्थितियों में आ जाती है। उनमें कुछ शारीरिक समन्वयों में असंतुलन एवं फुर्ती में अस्थायी मंदता आ जाती है। वे चलते–फिरते मेज–कुर्सी आदि से टक्कर खाने लगते हैं, संकरी दीवार पर चलना, हाथ छोड़कर साइकिल चलाना जैसे अनेक कौशलों में गड़बड़ा जाते हैं। फलतः बाल्यावस्था में प्राप्त गति संबंधी उपलब्धियाँ बिगड़ जाती है इसे भौंड़ेपन की अवस्था भी कहते हैं। उत्तर किशोरावस्था आते–आते व शारीरिक विकास पूर्ण होने पर समस्या स्वतः ही समाप्त हो जाती है।

2. स्वतंत्रता एवं नियन्त्रण की कश्मकश :

बाल्यावस्था के उत्तरोत्तर विकास के साथ–साथ बालक में शासन का प्रतिरोध करने का भाव बढ़ता जाता है तथा वह अधिकाधिक स्वतंत्र होने की चाह रखता है। शारीरिक वृद्धि एवं आकार–प्रकार में स्वयं को युवा प्रतिरूप में देखने के कारण किशोर स्वयं को बड़ा व शत प्रतिशत सही समझने लगता है तथा अपने निर्णय स्वयं लेना चाहता है, जबकि

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

वास्तव में किशोर अभी पूर्ण रूप से परिपक्व नहीं हो पाया है। फलतः उन्हें माता–पिता, पारिवारिक व सामाजिक सदस्यों द्वारा पूर्ण उत्तरदायित्व नहीं दिया जाता। किशोर प्रत्येक बात को वैज्ञानिक स्वरूप में देखता है तथा पुराने रीति रिवाजों व रुढ़ियों का प्रतिरोध करना चाहता है तथा घर व समाज के बड़े बुजुर्गों द्वारा लगाई गई किसी भी प्रकार की रोक–टोक एवं नियंत्रण से उन्मुक्त होना चाहता है। इस समय माता–पिता को चाहिये कि वे किशोरों को विद्याध्ययन के लिये विषय, व्यवसाय, कैरियर, विवाह के लिये जीवन साथी आदि के चुनाव में खुली सलाह एवं उपयुक्त मार्गदर्शन देवें न कि उन पर अपनी पसंद, इच्छाओं व कठोर अनुशासन को लादकर उन्हें अनावश्यक रूप से प्रतिबंधित करें।

3 तनाव एवं अवसाद :

तरूण बालक का किशोरावस्था की दहलीज पर कदम रखना ही समस्याओं एवं तनावों को आमन्त्रण देना है। किशोरों के पास तनावग्रस्त होने का कोई एक कारण ही नहीं होता है। वे विविध कारणों जैसे तीव्र शारीरिक वृद्धि से प्राप्त युवत्व आकार, बचपन व यौवन के बीच झूलता सामाजिक पड़ाव, पारिवारिक व सामाजिक परिपाटियाँ एवं प्रतिबंध, स्वयं के व्यक्तित्व, व्यवसाय व कैरियर तथा जीवन साथी के चुनाव, तीव्र संवेगशीलता व मनोस्थिति के उतार चढ़ाव आदि के फलस्वरूप तनाव को झेलते हैं। तरूण बालक अपने बदलते हुए शरीर एवं भावों के बारे में जो चिन्ताएँ करते हैं, उन्हें अपने तक ही सीमित रखते हैं तथा उनके बारे में सोचते रहते हैं। सुन्दरता व आकर्षण न पाने पर स्वयं को हीन समझने लगते हैं और अंत में राई का पर्वत बना देते हैं। लड़कियाँ अपनी आकृति को लेकर अति चिंतित रहती हैं व दुबली पतली व छरहरी दिखने के लिये भूखी रहती हैं फलतः शारीरिक कमजोरी व अन्य समस्याऐं पैदा हो जाती हैं। किशोर का अपनी शक्ल सूरत पर होने वाला असंतोष उस समय और अधिक बढ़ जाता है जब वह अपनी बौद्धिक सामर्थ्य या व्यक्तित्व को अपनी आशाओं के अनुरूप नहीं पाता और निराश हो जाता है। उसमें असमर्थता एवं असुरक्षा की भावनाएँ बनी रहती हैं। सामाजिक व सांस्कृतिक दबावों के चलते तथा विद्यार्जन व व्यवसाय में जरा सी भी असफलता प्राप्त होने पर ये दुःखी हो जाते हैं और विविध कार्यों में अरुचि दिखाते हैं। कभी–कभी तो भावावेश में आकर किशोर आत्महत्या जैसे गलत निर्णय भी ले बैठते है। लम्बे समय तक चलने वाला यही तनाव, अपने गंभीर स्वरूप ''अवसाद'' में परिवर्तित हो सकता है, जिससे किशोर/किशोरी को उबारना बहुत ही मुश्किल हो जाता है।

इस अवस्था में माता–पिता व किशोर/किशोरी को चाहिये कि वे अल्पकालिक व छोटे–छोटे सूक्ष्म लक्ष्य निर्धारित करें, जिनकी प्राप्ति उनका उत्साह व कार्य करने की शक्ति बनाये रखें एवं वे अपने जीवन में दीर्घकालिक एवं अन्तिम (Ultimate) लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें।

4. यौन समस्याएँ :

बाल्यावस्था से किशोरवस्था की ओर बढ़ने पर यौवनारम्भ में ही बालकों में यौन वृद्धि एवं विकास अपने चरमोत्कर्ष पर होता है तथा किशोरावस्था खत्म होते–होते बहुत शीघ्र ही तरूण बालक/बालिका एक आकर्षक नवयुवा या नवयुवती के रूप में दिखने लगते हैं। किसी भी किशोर/किशोरी के लिये यह यौन वृद्धि एवं परिपक्वता सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विषय होते हैं। किशोरावस्था में होने वाले ये परिवर्तन जिज्ञासा के विषय होते हैं तथा यदि समवयस्क मित्रों से पहले या बाद में हो तो उनमें भय मिश्रित आकुलता पैदा हो जाती है। हमारे समाज में पारिवारिक बड़े बुजुगों व विद्यालयी शिक्षकों आदि के द्वारा यौन विषयों पर सार्वजनिक रूप से कोई बातचीत नहीं की जाती तथा इसे एक निषेध विषय समझ कर टाल दिया जाता है। ऐसी स्थिति में किशोर/किशोरी घटिया साहित्य या मित्रों के अधकचरे ज्ञान का सहारा लेते हैं तथा अधिकतर भ्रमित रहते हैं।

पुराने समय में विवाह अल्पायु में ही कर दिये जाते थे जिससे किशोरावस्था की यौन इच्छाएं व उत्कंठाएं संतुष्ट हो जाती थी। आजकल विद्यार्जन व व्यावसायिक क्षेत्रों में बढ़ती स्वतंत्रता के कारण विवाह बड़ी उम्र में होने लगे हैं किशोर यौन विकास के विषय पर बड़ों से बातचीत नहीं कर पाते हैं और 'स्वयं' को समाज से अलग–थलग एक पृथक व्यक्तित्व के रूप में महसूस करते हैं। जबकि मीडिया युवक–युवतियों के अंतरंग संबंधों को खुले स्वरूप में प्रदर्शित करते हैं। वास्तविक समस्याएँ तो तब आती हैं जब हमारे किशोर फिल्म व मीडिया की इस काल्पनिक दुनिया को अपने वास्तविक जीवन में उतारने क प्रयास करते हैं। इन समस्याओं से उबरने के लिये किशोर–किशोरियों को चाहिए कि वे अपने उत्साह एवं ऊर्जा को संचित कर सकारात्मक रवैया अपनाते हुए विविध सृजनात्मक क्रियाकलापों जैसे नाटक, वाद–विवाद, संगीत, नृत्य, खेल, व्यायाम आदि में लगायें।

5. धूम्रपान एवं मादक द्रव्यों का सेवन :

बाल्यवस्था से किशोरवस्था में कदम रखने पर किशोरों में धूम्रपान व मादक द्रव्यों जैसे बीयर, शराब, तम्बाकू, गुटखा, नशीली दवाओं आदि के सेवन के प्रति झुकाव की प्रवृत्तियाँ भी लक्षित होने लगती हैं। किशोर के जीवन में आने वाली निम्न परिस्थितियां, समस्याएं तथा तीव्र संवेगशीलता की अवस्थाएँ उन्हें गलत मार्ग पर ढ़केलती हैं :

1. मित्रों द्वारा उकसाना एवं दबाव।
2. स्वयं को अपने मित्रों द्वारा स्वीकारे जाने की इच्छा।
3. शिक्षा या व्यवसाय में असफलता।
4. प्रेम में असफलता।
5. जाने–अनजाने में होने वाली गलतियों के लिये पारिवारिक व सामाजिक मित्रों से पड़ने वाली डाँट–फटकार।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

6. समाज में स्वयं को युवा के रूप में देखने की उत्कंठा।
7. सामाजिक प्रतिष्ठा के चिह्न के रूप में।
8. घर परिवार व सामाजिक परिवेश में अकेला महसूस करने पर।
9. परिवार एवं पारिवारिक मित्रों के प्रति विरोध प्रदर्शन के लिये।
10. कभी–कभार उत्सुकता व जिज्ञासावश स्वयं इनका व प्रभाव आजमाने के लिये।
11. अज्ञानतावश मित्रों द्वारा सॉफ्ट ड्रिंक्स, पान या दवाई के रूप में दिये जाने पर।

उपरोक्त विविध परिस्थितियों में किशोर निम्न प्रकार के नशीले द्रव्यों का उपभोग करते हैं :–

6. मदिरापान : शराब में व्यग्रता/आकुलता को कम करने एवं संवेगों को शांत करने की क्षमता होती है। अतः कुछ किशोर स्वयं को दैनिक जीवन की चुनौतियों को सामना करने में असमर्थ पाने पर अपनी कमियों को छुपाने के लिये या समस्याओं से पलायन करने के लिये शराब का सहारा लेते हैं। शराब न केवल मनुष्य की स्मृति को भुलती है बल्कि इसके अत्यधिक सेवन से शारीरिक संतुलन व सामंजस्य भी बिगड़ जाता है। शराब के नशे में किशोर का स्वयं पर कोई नियंत्रण नहीं रहता तथा वह नकारात्मक व्यवहार जैसे गाली–गलौच, मार–पीट व बड़ों के साथ अभद्रता कर बैठता है।

7. धूम्रपान व तम्बाकू सेवन : तम्बाकू–सिगरेट, हुक्का, गुटखा एवं पान आदि के रूप में ली जाती है। किशोरों द्वारा धूम्रपान एवं पान चबाने को पुरूषत्व के प्रतीक के रूप में देखा जाता है। किशोर–किशोरियों में धूम्रपान व तम्बाकू सेवन की आदत भी मित्र–मंडली के दबाव व हम उम्र समुदाय द्वारा स्वयं को स्वीकारें जाने की इच्छा के फलतः पड़ती है। तम्बाकू में उपस्थित हानिकारक तत्व निकोटीन शरीर को बहुत हानि पहुँचाता है तथा न केवल श्वसन संबंधी कई रोग पैदा करता है बल्कि विविध प्रकार के कैंसर की संभावनाओं को भी बढ़ाता है।

8. नशीली दवाइयाँ : कभी–कभी कुछ दवाइयों को बनाने में कुछ नशीले द्रव्यों का उपयोग किया जाता है जो कि विविध रोगों में लाभदायक होते हैं। अनावश्यक रूप से इन दवाइयों का सेवन व्यक्ति को इनका आदी बना देता है, साथ ही ये स्वास्थ्य को भी गंभीर नुकसान पहुँचाती हैं। इनके उपयोग से किशोरों की शारीरिक शक्तियों का क्षय होता है तथा वे अपनी पूरी शक्ति से कार्य नहीं कर पाते। दूसरी तरफ ये नशीली दवाइयाँ मंहगी भी होती हैं, फलस्वरूप व्यक्ति की आर्थिक स्थिति भी कमजोर हो जाती है। आजकल किशोरों में नशीले पदार्थों जैसे ब्राउन शुगर, गांजा, अफीम, चरस आदि का सेवन दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। किशोर नशीली दवाईयाँ प्राप्त करने के लिये कई बार असामाजिक कार्य करने लगते है। एक बार नशे की लत पड़ जाने पर उसे छोड़ना बहुत कष्टदायक होता है।

आज के बदलते परिपेक्ष में न केवल हमारे किशोर बल्कि किशोरियाँ इन मादक द्रव्यों के चगुल में फँस जाती हैं क्योंकि वे अपनी बदलती हुई शारीरिक, सामाजिक, मानसिक, संवेगात्मक व यौन विकास संबंधी स्थितियों से सामंजस्य नहीं बिठा पाती हैं। किशोर–किशोरियों को चाहिये कि वे इन नशीले द्रव्यों से होने वाले दुष्प्रभावों को जानें, अपने आत्मविश्वास को बटोरें तथ सकारात्मक रवैया अपनाते हुए अपनी इच्छाशक्ति का सदुपयोग कर जीवन की विविध चुनौतियों का सामना करें।

6. अपचार एवं अपराध :

समाज के नियमों की अवहेलना एवं हिंसात्मक व्यवहार करना ही अपराध या अपचर है। जो व्यक्ति समाज के नियमों का पालन नहीं करता वह अपराधी कहलाता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार कोई भी व्यक्ति जन्म से ही अपराधी नहीं होता तथा न ही असामाजिक व्यवहार एक ही रात में सीख लिया जाता है। व्यक्ति विशेष को जन्म के बाद एक अरसे तक मिलने वाली विषम परिस्थितियाँ ही उसे अपचारी बना देती हैं। जो किशोर अपराधी बनते हैं, उनकी दिक्कतें बचपन के दिनों से ही प्रारम्भ हो जाती है। इन किशोरों में अपराधी होने की प्रवृत्ति बचपन से ही देखी जा सकती है। उदाहरण के लिये अधिकतर किशोर किसी न किसी समय छोटी–मोटी चोरी कर रहे होते हैं या स्कूल से भाग जाते हैं लेकिन अपचारी किशोर प्रायः करता रहता है या अधिकतर समय स्कूल से बाहर रहता है।

किशोरावस्था समस्याओं के कारण व प्रबन्धन :

किशोर/किशोरियों के अपराधी प्रवृत्ति को अपनाने के मूल में विभिन्न कारक अपना योगदान देते हैं जैसे (i) शारीरिक दोष या खराब स्वास्थ्य के कारण हीन भावाना पैदा होना, (ii) माता–पिता दोनों या फिर माता या पिता की असमय मृत्यु होने के कारण उनको मिलने वाले प्यार व आत्मीय नियंत्रण क अभाव (iii) परिवार में बड़े बुजुर्गों का कड़ा अनुशासन (iv) सौतेली माता या पिता द्वारा तिरस्कृत व्यवहार (v) प्रतिदिन होने वाले माता–पिता के घरेलू झगड़े या तलाक (vi) परिवार में माता–पिता, बड़े भाई–बहनों या अन्य सदस्यों का अनैतिक कर्मो–झूठ बोलना, स्मगलिंग, अनैतिक यौन संबंधों में लिप्त होना। (vii) बुरे संगी–साथियों की संगति (viii) बालक के बौद्धिक कोशल में कमी या विद्यालय में पढ़ाई की अपर्याप्त सुविधाएं (xi) परिवार का सामाजिक आर्थिक स्तर उच्च या निम्न होना (x) परिवार में बालक की बहुत अधिक मार–पिटाई से उसका ढीठ बन जाना (xi) बालक का मंदबुद्धि होना (xii) किसी भी कारणवश बालक का मानसिक रूप से विक्षिप्त होना (xiii) घर परिवार या विद्यालय अच्छी चारित्रिक शिक्षा का अभाव होना (xvi) खली समय होने पर मनोरंजन के पर्याप्त साधनों, तथा स्वयं की सृजनात्मक रूचियों का अभाव होने पर खाली समय का सदुपयोग नहीं कर पाना (xv) अश्लील साहित्य पढ़ना तथा अश्लील चित्र व फिल्में देखना।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

किशोर/किशोरी अपराधी व्यवहार अज्ञानता की बजाय रोष, वैर, अवज्ञा या शंका के भावों से प्रेरित होकर करता है। उसे महसूस होता है कि समाज ने उसे त्याग दिया है तथा समाज का उस पर कोई ऋण नहीं है। जब किशोर अपनी समस्याओं को उपर्युक्त मार्गदर्शन एवं सुविधाओं के अभाव में हल नहीं कर पाते हैं तो असामाजिक कार्यों की तरफ प्रवृत्त हो जाते हैं।

विद्यालय या कॉलेज में बौद्धिक कौशल व अन्य कौशलों में पिछड़ने पर किशोर शिक्षण संस्थानों से भागने लगते हैं, गलत संगति में फंस कर नशीले द्रव्यों, शराब व धूम्रपान के आदी हो जाते हैं। मादक द्रव्यों के नशे में आकर मित्रों व पारिवारिक सदस्यों से गाली–गलौची करते हैं, मार–पिटाई करते हैं। मादक दव्यों के लिये पैसा जुटाने के लिये चोरी–चकारी करते हैं। शैक्षणिक या व्यावसायिक क्षेत्रों में असफल होने पर डाँट–फटकार के डर के मारे घर में झूठ बोलते हैं, ऊट–पटांग माँगों को लेकर शिक्षण संस्थाओं व कार्यालयों में हड़तालें करवाते हैं, तोड़–फोड़ करते हैं। कभी–कभी ये अपनी नकारात्मक भावनाओं स्थलों पर तोड़ा–फोड़ी कर राष्ट्रीय सम्पदा को नुकसान पहुँचाते हैं, मारपीट आदि भी करते हैं। अधिक से अधिक पैसा कमाने की होड़ में कई बार किशोर गलत धंधों जैसे – चोरी–चकारी, तस्करी आदि में लिप्त हो जाते है। अपनी यौन व्यग्रताओं, आकुलताओं एवं कुंठाओं को निकालने के लिये उचित माध्यम नहीं मिलने पर ये किशोर यौन अपराधों में भी प्रवृत्त हो जाते है।

किशोरों में अपराध प्रवृत्तियों को पनपने से रोकने के लिये उन्हें बचपन से ही माता–पिता का उपयुक्त स्नेह, नियंत्रण, पूर्ण विश्वास व सुरक्षा का वातावरण प्राप्त होना चाहिये। परिवार में बड़े–बुजुर्गो व शिक्षकों को चाहिये कि वे अपना मृदु व्यवहार व अनुशासन बनाये रखते हुए किशोर/किशोरियों को उचित मार्गदर्शन देवें तथा उन्हें बुरी संगति से रोकें। विद्यालय में उपर्युक्त मार्गदर्शन व परामर्श प्रदान किया जाए। बच्चों की रुचियों को देखते हुए उन्हें अपने शैक्षणिक व व्यावसायिक क्षेत्र चुनने में पूरी–पूरी सहायता देवें तथा उनके उत्साह को निरन्तर सृजनात्मक दिशा प्रदान करते रहें। किशोर व किशोरियों को शिक्षक व माता–पिता के द्वारा उचित यौन शिक्षा दी जानी चाहिए।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. किशोरावस्था को समस्याओं का काल कहा जाता है। किशोरों की मुख्य समस्या समायोजन को होकर होती है।
2. लड़कों की तुलना में लड़कियों में समस्याएं अधिक होती हैं।
3. किशोरावस्था के प्रारम्भ में शारीरिक वृद्धि एवं विकास अत्यन्त तीव्र गति से तथा विषमानुपातिक होता है फलस्वरूप कुछ शारीरिक समन्वयों में असंतुलन एवं फुर्ती में अस्थायी मंदता आ जाती है।
4. किशोर तीव्र शारीरिक वृद्धि से प्राप्त युवत्व, बचपन व युवा के बीच झूलते सामाजिक पड़ाव, पारिवारिक व सामाजिक परिपाटियों एवं प्रतिबंध, स्वयं के व्यक्त्वि, व्यवसाय व कैरियर तथा जीवन पारिवारिक व सामाजिक परिपाटियों एवं प्रतिबंध, स्वयं के व्यक्तित्व, व्यवसाय व कैरियर तथा जीवन साथी के चुनाव, तीव्र संवेगशीलता व मनोस्थिति के उतार–चढ़ाव आदि कारणों के फलस्वरूप तनाव को झेलते हैं।
5. बाल्यवस्था के उत्तरोत्तर विकास के साथ–साथ बालक में शासन का प्रतिरोध बढ़ता जाता है तथा वह अधिकाधिक स्वतंत्र होने की चाह रखता है।
6. किशोरों में होने वाले यौन परिवर्तन जिज्ञासा का विषय होते हैं। यदि वह समवयस्क मित्रों से पहले व बाद में हो तो उनमें भयमिश्रित आकुलता पैदा हो जाती है।
7. कई बार किशोर के जीवन में आने वाली परिस्थितियाँ, समस्याएँ तथा तीव्र संवेगशीता की अवस्था उन्हें धूम्रपान व मादक द्रव्यों जैसे शराब, तम्बाकू, गुटखा, नशीली दवाओं आदि के सेवन के लिए प्रेरित करती है।
8. किशोर/किशोरी जन्म से ही अपराधी नहीं होते हैं लेकिन उनमें इस अपराधी प्रवृति को अपनाने के मूल में विविध कारक बचपन से ही अपना योगदान देते हैं।
9. किशोरों में अपराध प्रवृत्तियों को पनपने से रोकने के लिए माता–पिता, शिक्षक एवं बड़े–बुजुर्गों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। वे अपने मृदु–व्यवहार, स्नेह, विश्वास एवं सुरक्षा के वातावरण से किशोर–किशोरियों को उचित मार्गदर्शन दे सकते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न :–

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें:

(i) किशोरावस्था को कहते हैं –

(अ) निरोगी अवस्था (ब) तनावहीन अवस्था
(स) समस्याओं का काल (द) उपर्युक्त सभी

(ii) बाल्यावस्था के उत्तरोत्तर विकास के साथ–साथ बालक में शासन का प्रतिरोध करने का भाव बढ़ता है तथा व अधिक .... होने की चाह करता है।

(अ) स्वतंत्र (ब) निर्भर
(स) बेधड़क (द) मर्यादित

(iii) बाल्यावस्था से किशोरावस्था की ओर बढ़ने पर यौवनारम्भ में ही बालक की .... वृद्धि व .... विकास चरमोत्कर्ष पर होती है।

(अ) शारीरिक (ब) यौन
(स) मानसिक (द) अ और ब

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(iv) किशोरों में अपराधी प्रवृत्तियों को पनपने से रोकने के लिए योगदान देते है।

(अ) माता–पिता (ब) बड़े–बुजुर्ग

(स) शिक्षक (द) उपर्युक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) किशोरावस्था को .... की आयु कहा जाता है।

(ii) किशोरावस्था में शारीरिक समन्वयों में असंतुलन एवं फुर्ती में अस्थाई .... आ जाती है।

(iii) किशोर प्रत्येक बात को .... दृष्टिकोण से देखता है तथा पुराने रीति रिवाजों व रुढ़ियों का प्रतिरोध करता है।

(iv) विद्यार्जन तथा व्यावसायिक क्षेत्रों में बढ़ती स्वतंत्रता के कारण आजकल विवाह .... उम्र में होने लगे है।

(v) दैनिक जीवन की चुनौतियों का सामना करने में असमर्थ होने पर कई किशोर अपनी कमियों को छुपाने के लिए .... का सहारा लेले हैं।

(vi) समाज के नियमों की अवहेलना एवं हिंसात्मक व्यवहार करना ही .... या .... है।

(vii) लड़कों की तुलना में लड़कियों की समस्याएं .... होती है।

3. किशोरावस्था को 'समस्याओं का आयु क्यों कहते हैं ? समझाइये।

4. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें :

(i) तीव्र शारीरिक वृद्धि से समायोजन

(ii) यौन समस्या

(iii) स्वतंत्रता एवं नियंत्रण की कश्मकश

5. किशोरावस्था में किशोर/किशोरी किस प्रकार के तनावों से ग्रसित रहते हैं ?

6. किशोरों में अपराधी प्रवृत्ति रोकने में माता–पिता तथा शिक्षका का योगदान होता है, अध्यापक की सहायता से कक्षा में इस विषय पर स्वयं के अनुभवों के आधार पर चर्चा करें।

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) अ (iii) द (iv) द

2. (i) समस्याओं (ii) मंदता (iii) वैज्ञानिक (iv) बड़ी (v) मादक द्रव्यों (vi) अपचार, अपराध (vii) अधिक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4. कैरियर एवं वैवाहिक जीवन की तैयारी

Preparation of Marriage and Career

किशोरों के जीवन में सर्वाधिक मुश्किल व महत्वपूर्ण कार्य अपने जीवन वृत्ति या कैरियर का चुनाव करना है क्योंकि कैरियर ही उनके व्यक्तित्व का निर्माण करता है। तरूण किशोर स्वयं के लिये कैरियर का चुनाव करने हेतु कई प्रश्नों से जूझता है, जैसे–मैं बड़ा होकर क्या बनूंगा, क्या करूंगा, कैसे करूंगा, कहाँ करूंगा आदि। प्राचीन समय में किशोर के लिए कैरियर का चुनाव बहुत आसान होता था। एक किशोर पुत्र अपने पिता के व्यवसाय का चुनाव करता था तो किशोरी पुत्री स्वयं को एक कुशल गृहिणी के रूप में ढ़ालने के लिये अपनी माँ का अनुसरण करती थी। तेजी से बदलते समय तथा औद्योगिक क्रांति ने आज युवा किशोर–किशोरियों के लिये कैरियर के विविध अवसर खोल दिये हैं। आजकल स्त्रियाँ भी कार्य क्षेत्र में आगे आई हैं तथा विविध व्यवसायों में पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही हैं। अत: आजकल कैरियर या व्यवसाय का चुनाव न केवल लड़कों बल्कि लड़कियों के लिये भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

कैरियर का तात्पर्य (Meaning of career) :– आप सभी ने अपने जीवन में कैरियर शब्द का प्रयोग कई बार किया होगा दैनिक जीवन में कैरियर शब्द निम्न प्रश्नों से शामिल होता है जैसे भविष्य में आप क्या बनना चाहते है? समाज में स्वयं को किस रूप में प्रस्तुत करना चाहते है? कैरियर जीवनवृत्ति या व्यवसाय से अभिप्राय ''जीवन की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए विविध सामाजिक आर्थिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर उपलब्धियों को प्राप्त करना है।''

पूर्व किशोर अवस्था से ही किशोर के कैरियर में रुचि व आकर्षण उत्पन्न हो जाता हैं अत: इस रुचि को पूर्ण करने के लिए किशोर कोई छोटा–मोटा काम धंधा कर पैसा कमाने लगते है एवं स्वतंत्रता का आनन्द उठाते है। इस रुचि का केन्द्र व्यवसाय विशेष में न होकर अधिक से अधिक पैसा कमाने में होता है। इन किशोरों को पैसा जमा करने या परिवार की आर्थिक व्यवसाय में मदद करने में रुचि नहीं होती है। इनके लिए यह मात्र एक साधन है जिसका साध्य है स्वतंत्रता। अत: वे स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए काम करने के उद्देश्य का समय निकालने हेतु पढ़ाई तक छोड़ देते है या भावी उन्नति का विचार न करते हुए साधारण तनख्वाह वाली नौकरी कर लेते है। अंश कालिक नौकरियों में अधिक समय लग जाने से किशोर पढ़ाई के काम में पिछड़ जाते है।

एकत रूणा कशोरक ि लएअ पनेकै रियर/व्यवसायक ाच यन करना वाकई बहुत कठिन कार्य होता है। क्योंकि वह अपने मूल्यों, रुचियों, व्यवसाय के लिए उपलब्ध अवसरों एवं अपनी योग्यताओं में तारतम्य नहीं बिठा पाता। तरूण किशोर का दृष्टिकोण यथार्थवादी और व्यावहारिक न होकर आदर्शवादी होता है एवं उसके निर्णय भी बहुधा

चित्र 4.1 : व्यक्ति एवं कैरियर

कल्पनाओं पर आधारित होते हैं। उम्र के बढ़ने एवं परिपक्वता के साथ–साथ किशोर अपनी क्षमताओं को पहचान कर कैरियर विशेष के लिए प्रयास करता है। व्यावसायिक चुनाव में उसका दृष्टिकोण अब यथार्थवादी एवं व्यावहारिक हो जाता हैं जैसे चार या पांच वर्ष के छोटे बालक खेल–खेल में ही स्वयं को भावी डाक्टर, इंजीनियर, पुलिस आदि के रूप में दिखाते है किन्तु वास्तव में 11–12 वर्ष की आयु तक आते–आते ही उन्हें पता चलता है कि उन्हें किस प्रकार के विषय पढ़ना अच्छा लगता है तथा भविष्य में वे किस व्यवसाय को चुन सकते है। बड़े किशोर के लिए स्थिति तब तक चिन्ताजनक बनी रहती है जब तक उसे यह नहीं

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सूझता कि वह क्या कार्य करना पसन्द करेगा या उसमें किस प्रकार का कार्य करने की क्षमता है। विभिन्न प्रकार के व्यवसायों के बारे में यह जितनी अधिक बातें सुनता या मालूम करता है, उतना ही उसका संशय बढ़ता जाता है। विविध व्यवसायों के बारे में उसकी रुचि एवं आकुलता बढ़ जाती है कि किस व्यवसाय विशेष को वह पसन्द करेगा? उसकी प्राप्ति कैसी होगी? भावी उन्नति के कितने अवसर उपलब्ध होंगे? व्यवसाय उसे पूर्ण आर्थिक व मानसिक संतोष भी दे पायेगा या नहीं? इत्यादि। इस प्रकार बड़े किशोर अभी भी छान बीन करने की अवस्था में होते है तथा अंशकालिक या पूर्णकालिक नौकरियों द्वारा उस काम की परख करते है जिसे वे पसन्द करते है तथा उनके बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करते है।

किशोर के द्वारा व्यावसायिक चयन को निम्न कारक प्रभावित करते है–

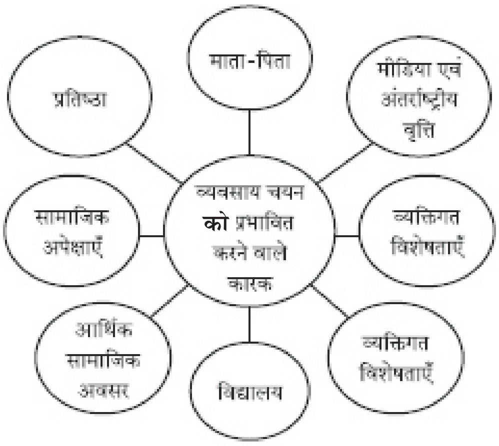

चित्र 4.2 : व्यवसायिक चयन के प्रभावित कारक

1. **माता–पिता (Parents) :** माता–पिता बच्चों के लिए कैरियर के चुनाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। कई बार तो यह प्रभाव वंशानुगत होता है। एक व्यवसायी का पुत्र बचपन से ही अपने घर परिवार में व्यावसायिक माहौल देखकर व्यवसाय विशेष के गुर सीख रहा होता है तथा किशोरावस्था पूरी होते–होते अपने पिता के व्यवाय में हाथ बंटाने लगता है। जैसे चित्रकार का बेटा चित्रकारी व दुकानदार का बेटा दुकानदारी के कौशल में निपुण होता है। माता–पिता द्वारा बच्चों के पालन–पोषण के दौरान दिया गया सहयोगात्मक वातावरण जैसे उनकी रुचियों को बढ़ावा देना, उन्हें विविध प्रकार के खेल व व्यावसायिक प्रशिक्षण दिलवाने आदि से भी बच्चों की किसी व्यवसाय विशेष में रुचि जागृत हो जाती है।

   माता या पिता के समाज में प्रतिष्ठित नौकरियों जैसे प्रिंसीपल, मजिस्ट्रेट, पुलिस अधिकारी आदि या प्रतिष्ठित व्यावसायिक मुकाम जैसे प्राइवेट हॉस्पीटल, साबुन उद्योग आदि होने पर ये माता–पिता बालकों के लिये आदर्श सिद्ध होते है। ऐसे में बालक इनसे प्रेरित होकर उसी कैरियर विशेष में अपनी रुचि प्रदर्शित कर अपने प्रयास करता है। उच्च शिक्षित माता–पिता के घर का वातावरण भी बच्चों में शैक्षणिक रुचियों व दृष्टिकोण को विकसित करता है।

2. **विद्यालय (School):** विद्यालय में प्राप्त होने वाले अच्छे बुरे अनुभव भी किशोर/किशोरियों के कैरियर को प्रभावित करते है। विद्यालयीम ाहौलए वं शक्षकह ाब च्चोंक ारु चियों,क्ष ामताओं, व्यक्तिगत विशेषताओं को पहचान कर उनके भीतर कुछ बनने व कर गुजरने की दृढ़ इच्छा शक्ति पैदा करते है तथा उनके भविष्य को एक आकार प्रदान करते है। कुछ विद्यालयों में व्यवसाय के चयन के लिये व्यावसायिक शिक्षण तथा कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है तो कहीं–कहीं पर विद्यालयों में कैरियर सलाहाकार नियुक्त होते है जो छात्र–छात्राओं को उनकी रुचियों, अभिवृत्तियों व क्षमताओं से अवगत कराकर सही कैरियर चुनने के लिए मार्गदर्शन करते है।

3. **सामाजिक अपेक्षाएं (Social expectations):** किशोरों द्वारा व्यवसाय के चयन को सामाजिक अपेक्षाएं भी प्रभावित करती है। बचपन से ही कुछ व्यवसाय इनके मन मस्तिष्क पर पुरुषोचित या स्त्रियोचित की अमिट छाप छोड़ते है इसीलिए अधिकांश किशोर ऐसे व्यवसाय चुनते है जिनमें अधिक मेहनत या व्यावसायिक कौशल की आवश्यकता हो जैसे डाक्टर, इंजीनियर, कारपेन्टर, मैकेनिक, ड्राईवर, पायलट इत्यादि। किशोरियां ऐसे व्यवसाय चुनना पसन्द करती है जिनमें शारीरिक श्रम कम से कम हो, बुद्धि चातुर्य दिखने का अवसर मिले व कहीं न कहीं समाज सेवा का कुछ भाव जुड़ा हो जैसे डाक्टर, नर्स, अध्यापिका इत्यादि। कई बार व्यक्तिगत रुचियों या अधिक संतुष्टि या धन लाभ के कारण विपरीत व्यवसाय भी चुन लिये जाते है जैसे पुरूष व्यक्ति की अपनी स्वयं की अभिरुचियां तथा व्यक्तिगत विशेषताएं उसके व्यवसाय को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं।

4. **व्यक्तिगत विशेषताएँ (Individual charactreistics):** विविध व्यवसायों के लिये भिन्न–भिन्न योग्यताओं कौशल एवं अभिवृत्तियों की आवश्यकता होती है। कुछ व्यवसायों के लिये कलात्मक निपुणता जैसे संगीतमय मृदुल कंठ, भाषण कौशल, चित्रकारी आदि आवश्यक होते है तो कुछ व्यवसायों के लिये आँखों व हाथों का उत्तम तारतम्य एकाग्रता एवं सृजनात्मकता की आवश्यकता होती है। (जैसे नृत्य, मूर्तिकारी, दस्तकारी आदि में) तो कुछ व्यवसायों में सफलता अर्जित करने के लिए उच्च भौतिक क्षमता (जैसे–चिकित्सा, वकालत आदि) या शारीरिक सौष्ठव (जैसे–विविध व्यायाम व खेल आदि) अपरिहार्य है। व्यक्ति विशेष की कार्यक्षमता तभी बेहतर व श्रेष्ठ होगी जब उसकी उस कार्य में रुचि होगी तथा साथ ही साथ उस कार्य क्षेत्र के लिए उसमे सभी आवश्यक योग्यताएँ हो। अत: किशोर–किशोरियों को सर्वप्रथम अपनी रुचि को देखकर तथा योग्यताओं को परखकर व्यावसायिक क्षेत्र का चयन करना चाहिये तथा किसी भी अर्न्तद्वन्द्व की स्थिति में कैरियर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

काउन्सलर की सलाह लेनी चाहिए।

5. **रोजगार के अवसर (Job opportunities) :** व्यवसायक चयन के लिए किसी भी क्षेत्र विशेष में रुचि होना तथा उसके अनुरूप योग्यताओं का होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उस व्यवसाय में सफलता एवं प्रतिष्ठा अर्जित करने के लिए यह भी आवश्यक है कि आपके पंसदीदा क्षेत्र में रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हो। उदाहरण के लिए एक समय ऐसा था जब दसवी या 12वीं पास करते ही बहुत आराम से नौकरी मिल जाती थी। धीरे-धीरे समय के साथ-साथ पढ़ाई की मांग व स्तर बढ़ता गया और तब प्रत्येक बालक पढ़ लिखकर डॉक्टर या इंजीनियर बनना चाहता था, फिर धीरे-धीरे कम्प्यूटर युग आया जिसने कम्प्यूटर विशेषज्ञों की पूरी फसल ही दे डाली। आज के प्रतिस्पर्धा के युग में एक तरफतो सरकारी नौकरियाँ दिवास्वप्न मात्र रह गयी है तथा चिकित्सा, इंजीनियर व कम्प्यूटर विशेषज्ञों को भी अपनी सेवाओं एवं मेहनत का पूरा-पूरा पारिश्रमिक नहीं मिल पाता, तो दूसरी तरफआधुनिक युग ने और भी कई नये-नये व्यावसायिक क्षेत्रों जैसे-सूचना प्रौद्योगिकी, जैव प्रौद्योगिकी फोरेन्सिक साइन्स, पर्यावरण विज्ञान इत्यादि को जन्म दिया है जिनमें रोजगार के अवसर उपलब्ध है।

6. **सामाजिक आर्थिक स्तर (Socio-economic status) :** प्रत्येक व्यक्ति अपने बराबर या उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर के लोगों में ही उठना-बैठना पसन्द करता है। किशोरों के कैरियर या व्यवसाय के चयन में उनके घर-परिवार व पारिवारिक सदस्यों, माता-पिता के व्यवसाय, परिवार के नियम कायदे आदि का भी बहुत योगदान होता है। प्रत्येक बच्चा अपने जीवन में स्वयं के माता-पिता से उच्च स्थान प्राप्त करना चाहता है तथा उसके लिये प्रयास भी करता है। जैसे विद्यालय शिक्षक का पुत्र/पुत्री चिकित्सक बनना चाहेगा तथा पुरूष नर्स या परिचारिका का पुत्र/पुत्री विद्यालय का प्रिन्सीपल या कॉलेज शिक्षक बनना चाहेगा। इसी प्रकार से एक मजदूर के पुत्र/पुत्री के लिये किसी कम्पनी का मैनेजर बनना दिवास्वप्न की तरह से होगा।

7. **प्रतिष्ठा (Prestige) :** किशोर/किशोरियों के द्वारा व्यवसाय विशेष को चुनने में उस कार्यक्षेत्र से उपलब्ध होने वाली प्रतिष्ठा भी कुछ कम महत्वन हींर खतीह` ास भीि कशोरउ च्चप्ितष्ठाव ालेल ेकप्रिय व्यवसाय ही चुनना चाहते है। किन्तु केवल ऊपरी चमक-दमक से प्रभावित होकर किसी भी व्यवसाय को चुन लेना कभी-कभी भविष्य में घातक भी सिद्ध होता है क्योंकि हर व्यक्ति को किसी व्यवसाय विशेष में प्रतिष्ठा मिल पाना जरूरी नहीं है इसलिये यह आवश्यक नहीं है कि सभी अभिनेता, अभिनेत्री, चिकित्सक या नेता आदि लोकप्रिय एवं प्रतिष्ठित हो।

8. **मीडिया एवं अन्तराष्ट्रीय वृत्ति (Media and global trend):** आधुनिक युग में किशोर/किशोरियों को विविध व्यवसायों के लिये आकर्षित करने व प्रेरित करने में मीडिया जैसे टेलीविजन, इन्टरनेट आदि के महत्व को भी कम नहीं आंका जा सकता क्योंकि इन्हीं की बदौलत किशोर/किशोरियों को देश-विदेश में उभरने व पनपने वाले नये से नये क्षेत्रों के बारे में पता चलता है तथा वे इनकी चकाचौंध से प्रभावित होकर इन क्षेत्रों में प्रविष्ट हो जाते है। मॉडलिंग, रोमांचक, खेल, संगीत मंडलियाँ आदि ऐसे ही कुछ नये क्षेत्र है जिनके पीछे हमारे आज के युवा दौड़ रहे है।

इस प्रकार आपने देखा कि किशोर/किशोरियों के द्वारा किसी भी व्यवसाय को जीवन भर के लिए चुनना एक चुनौतीपूर्ण कार्य हैं। आज के इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में वह आँख बंद करके कोई भी इच्छित व्यवसाय को नहीं चुन सकता। उसे चाहिए कि प्रारम्भ से ही व्यवसाय के चयन को गंभीरता से लें एवं उसे अपनी रुचियों, कौशल व क्षमताओं के अनुरूप व्यवसायिक क्षेत्र का चयन करना चाहिए। क्षेत्र विशेष में उपलब्ध रोजगार के अवसरों तथा उपलब्ध होने वाले सहयोग को जाँच परख कर व्यवसाय का चयन करना चाहिये। इस कार्य की सफलता एवं पूर्णता के लिये वह अपने माता-पिता, अध्यापकों, बड़े भाई-बहनों, विद्यालय में होने वाली वार्ताओं, कार्यशालाओं तथा कैरियर काउन्सलर आदि की सहायता ले सकता है। आज के औद्योगिक व प्रतिस्पर्धात्मक युग मे किशोर-किशोरियों को चाहिए कि वे केवल उपाधियाँ लेकर उच्च शिक्षा अर्जित करने में समय नष्ट करने के बजाय अपने कौशल को परख कर रोजगार परक व्यवसायिक शिक्षण प्राप्त करें ताकि समय रहते स्वरोजगार के लिये गंभीरता पूर्वक प्रयास करें।

वैवाहिक जीवन की तैयारी (Preparation of married life):

किशोरावस्था ही वह समय है जब तरूण किशोर/किशोरी एक

चित्र 4.3

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

भावी युवा बनने को तत्पर है। इसी समय भावी व्यवसाय की तैयारी के साथ-साथ वे स्वयं को एक गृहस्थ जीवन के लिये भी तैयार कर रहे होते है। पिछले अध्यायों में आप पढ़ चुके है कि किशोरावस्था में तीव्र शारीरिक वृद्धि के साथ-साथ यौन विकास भी चरमोत्कर्ष पर होता है। स्वयं के भीतर होने वाले इन शारीरिक परिवर्तनों के कारण किशोर बाल्यावस्था से एकदम बड़े होकर नवयुवक व नवयुवती के रूप में दिखाई देते है। किशोरों के भीतर यह अहसास घर करने लगता है कि अब वे बड़े हो गये है। इसी दौरान इनमें विपरीत लिंग के लिये आकर्षण भी बढ़ता है तथा वे अपनी भावी जीवन साथी को लेकर रंग-बिरंगे सपने बुनने लगते है। किशोरवय के प्रारम्भ में जीवन साथी का चुनाव आकर्षण, पहनावें व चकाचौंध से प्रभावित होता है लेकिन बढ़ती उम्र के साथ-साथ आकर्षण वाली बात खत्म हो जाती है। अब गंभीरता पूर्वक अपने जीवन साथी के बारे में विचार करते है जो कि उन अभिलाषाओं, आकांक्षाओं, आवश्यकताओं एवं सामाजिक-आर्थिक रूप से अरुचिपूर्ण लड़कियों को पसंद करते है तो किशोरियाँ पौरूष युक्त, साफ-सुथरे, परिहास की वृत्ति वाले धीर-गंभीर व आर्थिक रूप से सक्षम लड़कों को पसंद करती है।

बच्चों के किशोरावस्था की दहलीज पर कदम रखते ही माता-पिता व अन्य बड़ों का व्यवहार भी उनके प्रति बदलने लगता है। वे अब बालकों को विविध छोटे-मोटे कार्यों की जिम्मेदारी देने लगते है तथा उनसे बड़प्पन के व्यवहार की उम्मीद की जाती है। पुरातन काल में तो विवाह सम्बन्ध अल्पवय अर्थात बाल्यावस्था में ही हो जाते थे तब किशोरवय आते-आते उन पर घर गृहस्थी के उत्तरदायित्व स्वयंमेव ही आ जाते थे। अब विवाह संबंध बाल्यावस्था में नहीं किये जाते है फिर भी बड़े होते किशोर बालक-बालिका, माता-पिता का ध्यान इस संबंध में बरबस ही खींचते रहते है। आपने कई बार घर में माँ, दादी आदि बुजुर्गो को किशोरियों को बचपन की शैतानियों, मनोवृत्तियों पर टोका टोकी करते देखा होगा जैसे-लड़कियों को ऊँची आवाज में बात करना या हँसी ठठ्ठा करना शोभा नहीं देता या साँझ ढले बाद घर के बाहर अकेले नहीं जाना इत्यादि। इसके अतिरिक्त लड़कियों को अच्छी रसोई बनाना, सिलाई-कढ़ाई करना एवं अन्य घरेलू कामकाज करना आदि सिखाया जाता है। इन सब बातों के पीछे महिलाओं की सोच होती है कि किशोरियों को जल्दी ही विवाह करके दूसरे घर जाना है अत: उन्हें ये सब कामकाज एवं सलीके सीखने चाहिये। इसी प्रकार बड़े होते किशोरों से भी उम्मीद की जाती है कि वे अपने व्यवसाय को सुनिश्चित कर किसी भी प्रकार की नौकरी काम धंधे से जुड़े एवं जीविकोपार्जन की व्यवस्था करें ताकि उनका विवाह किया जा सकें।

आधुनिक युग में वैवाहिक तैयारी के इन मानदण्डों में कुछ परिवर्तन किये गये है। अब माता-पिता के लिये किशोर-किशोरियों के विवाह से पूर्व अच्छी शिक्षा दीक्षा दिलवाकर अपने पैरों पर खड़ा करना मुख्य उद्देश्य हो गया है। किशोरों में स्वप्नदोष व किशोरियों में मासिक स्त्राव प्रारम्भ होने के बाद (जो कि इस अवस्था में मुख्य लक्षण है) माता-पिता या बड़े बुजुर्गों का यह प्रयास रहता है कि किशोरों का ध्यान लैंगिक रुचियों से हटाकर स्वयं के व्यक्तित्व निर्माण, अच्छी शिक्षा अर्जित करने व व्यवसाय विशेष में भली भांति जमने में लगे जिससे वे शीघ्र ही आत्मनिर्भर होकर अपने फैसलें स्वयं कर सकें। उक्त व्यवस्था का दूसरा पहलू यह भी है कि आज के युवक-युवतियाँ अधिक से अधिक पैसा व प्रतिष्ठा अर्जित करना चाहते है तथा विवाह आदि संबंधों को बंधन समझकर इनसे दूर भागने लगे है। विवाह बड़ी उम्र में होने लगे है, फलत: उच्च शिक्षित व आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर युवती विवाह के बाद दूसरे परिवार में आसानी से सामंजस्य नही बैठा पाती है। इसी कारण आजकल विदेशों में तो वैवाहिक तैयारियों के लिये भी कार्यशालाएँ आयोजित की जाने लगी है जहाँ किशोर/किशोरियों को भावी पति व पत्नी बनने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इससे पता चलता है कि न केवल व्यावसायिक बल्कि वैवाहिक क्षेत्र में भी सफ लता प्राप्त करने के लिये किशोर-किशोरियों का स्वयं को मानसिक रूप से तैयार करना आवश्यक है।

महत्वपूर्ण बिन्दुः

1. अपने जीवनवृत्ति या कैरियर का चुनाव करना किशोरों के जीवन का सर्वाधिक मुश्किल व महत्वपूर्ण कार्य है।
2. किशोर अपने कैरियर का चुनाव करने हेतु कई प्रश्नों से जूझता है क्योंकि कैरियर ही आगे चलकर उसके व्यक्तित्व का निर्माण करता है।
3. तरूण किशोरों के लिये कैरियर चुनना अत्यन्त कठिन कार्य होता है क्योंकि उनका दृष्टिकोण यथार्थवादी और व्यावहारिक न होकर आदर्शवादी होता है जबकि बड़े किशोर अपनी योग्यताओं और क्षमताओं को पहचान कर कैरियर विशेष के लिये प्रयास करते है तथा उनका दृष्टिकोण यथार्थवादी एवं व्यावहारिक होता है।
4. कैरियर चुनाव में माता-पिता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यदि माता-पिता प्रतिष्ठित नौकरियों में कार्यरत होते है तो वे किशोर/किशोरी के लिए आदर्श सिद्ध होते है।
5. विद्यालय में प्राप्त होने वाले अच्छे-बुरे अनुभव किशोर/किशोरी के कैरियर को प्रभावित करते है। विद्यालयी वातावरण एवं शिक्षक बच्चों की रुचियों, क्षमताओं एवं व्यक्तिगत विशेषताओं को पहचान कर उनके भविष्य को एक आकार प्रदान कर सकते है।
6. आजकल व्यावसायिक शिक्षण कार्यशालाएँ तथा कैरियर सलाहकार छात्र-छात्राओं को उनकी रुचियों एवं योग्यताओं से अवगत करा उनके कैरियर चुनने के कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है।
7. किशोरों द्वारा व्यवसाय के चयन को सामाजिक अपेक्षाएँ भी प्रभावित करती है।
8. आधुनिक युग में किशोर/किशोरियों का विविध व्यवसायों के लिए आकर्षित करने व प्रेरित करने में मीडिया जैसे टेलिविजन, इन्टरनेट

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

आदि का भी महत्वपूर्ण स्थान है।

9. किसी भी व्यवसाय में सफलता एवं प्रतिष्ठा पाने के लिए क्षेत्र विशेष में रुचि होना या उसके अनुरूप योग्यताओं का होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि यह आवश्यक है कि पंसदीदा क्षेत्र में रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हो।
10. किशोर/किशोरियों को चाहिए कि वे अपने कौशल को परख कर रोजगार परक व्यावसायिक शिक्षण प्राप्त कर समय रहते रोजगार लिये गंभीरता पूर्वक प्रयास करें।
11. किशोरावस्था ही वह समय है जब तरूण किशोर/किशोरी एक भावी युवा बनने को तत्पर है। इसी समय भावी व्यवसाय की तैयारी के साथ-साथ वे स्वयं को एक गृहस्थ जीवन के लिए भी तैयार कर रहे होते है।

अभ्यासार्थ प्रश्नः

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें:

(1) किशोरों के जीवन का सबसे कठिन एवं महत्वपूर्ण कार्य है:

(अ) पैसे कमाना (ब) पढ़ाई करना

(स) कैरियर चुनना (द) उपरोक्त सभी

(2) एक बड़े किशोर के दृष्टिकोण होते है–

(अ) यथार्थवादी और व्यावहारिक

(ब) आदर्शवादी

(स) आशावादी

(द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(3) किशोर/किशोरियों के कैरियर चुनने में मुख्य भूमिका निभाते है:

(अ) माता-पिता (ब) शिक्षक

(स) विद्यालय एवं समाज (द) उपरोक्त सभी

(4) यदि पुत्र अपने पिता का कैरियर चुनता है तो उसे कहते है

(अ) मजबूरी (ब) वंशानुगतता

(स) छान-बीन (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(5) विदेशों में वैवाहिक तैयारियों के लिये आयोजित की जाती है:

(अ) कार्यशालाएं (ब) हवन

(स) सम्मेलन (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये:

(1) कैरियर का चुनाव आजकल न केवल लड़कों बल्कि .... के लिये भी महत्वपूर्ण है।

(2) किशोरों के लिये पैसा एक मात्र साधन है जिसका साध्य है ....।

(3) उच्च शिक्षित माता-पिता के घर का वातावरण भी बच्चों की शैक्षणिक .... व .... को विकसित करता है।

(4) किशोर/किशोरियों को अपनी .... तथा .... को देखकर कैरियर का चुनाव करना चाहिये।

(5) किशोरावस्था के समय किशोर व्यवसाय के साथ-साथ स्वयं को एक .... जीवन के लिये भी तैयार कर रहे होते है।

(6) पुराने जमाने में विवाह संबंध .... अर्थात बाल्यावस्था मे ही हो जाते थे।

3. एक किशोर/किशोरी अपने कैरियर का चयन किस प्रकार करें? समझाइये।
4. विद्यालय एवं माता-पिता किशोरों के कैरियर चुनाव को किस तरह प्रभावित करते है?
5. स्वयं का कौशल, योग्यता एवं अभिवृत्ति कैरियर चुनने में किस प्रकार मदद करते है?
6. आधुनिक युग के माता-पिता एवं किशोरी में विवाह संबंधी विचार धाराओं में क्या परिवर्तन आए है? समझाइये।

उत्तरमाला:

1. (1) स (2) अ (3) द (4) ब (5) अ

2. (1) लड़कियों (2) स्वतंत्रता

(3) रुचियों, दृष्टिकोण (4) रुचि, योग्यता

(5) गृहस्थ (6) अल्पवय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

5. प्रजनन स्वास्थ्य एवं यौन सम्बन्धी रोग

Reproductive health and sexually transmitted diseases

सामान्यत: किशोरों को यौन विकास के बारे में उचित एवं वैज्ञानिक जानकारी नहीं होती है इन समस्याओं के निराकरण के लिए प्रजनन स्वास्थ्य व यौन सम्बन्धी रोगों की जानकारी दी जानी चाहिए। इस अध्याय में हम प्रजनन स्वास्थ्य एवं कुछ यौन रोगों के बारे में पढ़ेंगे।

प्रजनन स्वास्थ्य (Reproductive health)

मानव संतति समाज की आधारशिला है। सन्तति को जन्म देना मानव का स्वाभाविक कर्म है। मातृत्व और पितृत्व की भावना से प्रेरित होकर मानव सन्तानोत्पत्ति करता है। सन्तानोत्पत्ति से वंश क्रम बना रहता है। एक पीढ़ी नष्ट होती है तो उसका स्थान नई पीढ़ी ले लेती है। स्वस्थ प्रजनन तंत्र से तात्पर्य है कि स्त्री व पुरुष दोनों के सभी प्रजनन अंग अपना कार्य नियमित रूप से करते हुए एक स्वस्थ बालक को जन्म दें। दूसरें शब्दों में प्रजनन स्वास्थ्य से अभिप्राय है कि प्रजनन अंगों में किसी प्रकार का अवरोध, रोग व संक्रमण न हो तथा स्त्री व पुरुष दोनों ही मानसिक व सामाजिक रूप से स्वस्थ हो ताकि इस तन्त्र से सम्बन्धित सभी क्रियाओं को सम्पन्न कर सकें।

प्रजनन स्वास्थ्य समझने के लिये स्त्री व पुरुष प्रजनन अंगों तथा उनके कार्यों की जानकारी होना अत्यन्त आवश्यक है।

स्त्री प्रजनन अंग (Femal reproductive organs)

1. **बाह्य प्रजनन अंग:**–लघु और वृहत् भगोष्ठ बार्थोलिन ग्रथियाँ, भगशिश्निका व मूत्र छिद्र। इन सभी अंगों को सम्मिलित रूप से भग प्रदेश कहा जाता है। इस अंग से ही नवजात शिशु के लिंग की पहचान होती है। बाल्यावस्था में यह अंग छोटा, थोड़ा सपाट और केश रहित होता है। शरीर के विकास के साथ-साथ भाग प्रदेश भी बढ़ता व उभरता जाता है।
2. **आन्तरिक प्रजनन अंग:**–योनिच्छेद, योनि, गर्भाशय, डिम्बग्रंथियाँ, अण्डाशय। योनिच्छेद एक महीन पतली झिल्ली जैसा आवरण युक्त होता। क्रियाशीलता की दृष्टि से **गर्भाशय** को ग्रीवा, शरीर एवं शिखा में विभक्त किया जाता है। गर्भाशय के नीचे वाले भाग को ग्रीवा, बीच वाले चौड़े भाग को शरीर और सबसे ऊपरी भाग को शिखा कहा जाता है। **डिम्बग्रंथियों** गर्भाशय को अण्डाशय से जोड़ने वाली नलिकाऐं है इनका एक सिरा गर्भाशय से तथा दूसरा सिरा अण्डाशय से जुड़ता है। **गर्भाशय** के दोनों ओर एक-एक अण्डाशय होता है। इनका मुख्य कार्य अण्डाणु का निर्माण कर अण्डवाहिनी तक पहुँचाना है। गर्भाशय का मुख्य कार्य ''मासिक चक्र'' का है। गर्भाशय में प्रत्येक माह एक अण्डक परिपक्व होकर पहुँचता है। इस अण्डक का शुक्राणु के साथ मेल होने पर गर्भ ठहरता है। गर्भाशय में भ्रुण का पोषण व विकास होता है। यदि अण्डक निषेचित न हो पाए तो अगले मासिक चक्र के पहले शोषित हो जाता है।

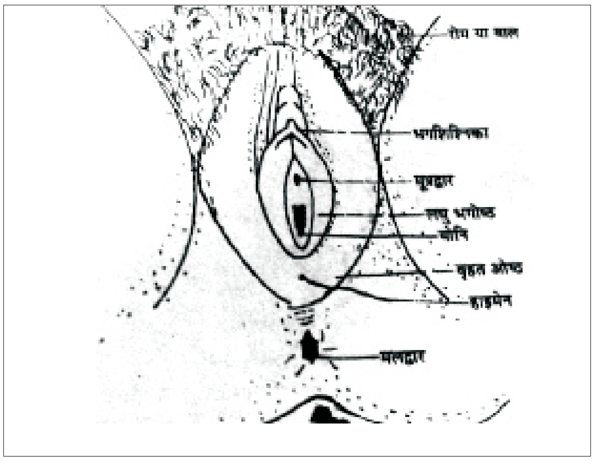

चित्र 5.1 स्त्री बाह्य प्रजनन अंग

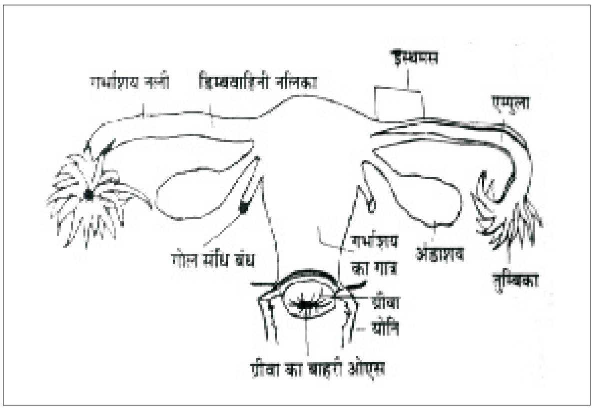

चित्र 5.2 स्त्री आन्तरिक प्रजनन अंग

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पुरुष प्रजनन अंग (Male reproductive organ)

वृषण, शुक्रवाहिका, शुक्राशय, पुरस्थ, शिश्न। वृषण में शुक्राणुओं का निर्माण होता है। मूत्राशय के दोनों ओर एक-एक **शुक्रवाहिका** होती है। यह मूत्राशय व मलाशय के निचले भाग में मध्य से होकर प्रोस्टेड ग्रन्थि के निचले भाग तक जाती है। शुक्राशय, मूत्राशय के पीछे स्थित दो थैलीनुमा रचनाऐं होती है जो एक गाढ़ा द्रव्य निकालती है। **प्रोस्टेड ग्रन्थि** बड़ी व गोलाकार होती है इससे एक तरल द्रव्य स्त्रावित होता है। वृषण, शुक्राशय व प्रोस्टेड ग्रन्थि से निकले स्त्राव वीर्य में शुक्राणु होते है। एक ही शुक्राणु डिम्ब या अण्डक में प्रवेश करता है और इसी को निषेचन कहा जाता है।

स्वस्थ प्रजनन के लिये ध्यान रखने योग्य बिन्दू है:–

1. **विवाह की उम्र (Age of marriage):–** स्वस्थ प्रजनन के लिये यह आवश्यक है कि लड़का व लड़की दोनों ही शारीरिक व मानसिक रूप से परिपक्व हो। ये परिपक्वता लड़कों में प्राय 21 वर्ष तथा लड़कियों में प्राय: 18वर्ष की उम्र तक आती है। अत: लड़के व लड़की का विवाह क्रमश: 21 व 18वर्ष के बाद ही करना चाहिये।
2. **शारीरिक स्वच्छता (Physical hygiene):–** प्रजनन स्वास्थ्य हेतु पुरुष/लड़के व महिला/लड़की को अपने प्रजनन अंगों को नियमित सफाई द्वारा स्वच्छ रखना चाहिये। लड़कियों को विशेष रूप से महावारी के समय बाह्य अंगों की सफाई रखनी चाहिये। संक्रमित अंग प्रजनन प्रक्रिया में बाधक होते है।
3. **प्रजनन क्षमता (Reproduction capacity/ability) :–** जब लड़के व लड़की दोनों ही शारीरिक रूप से परिपक्व हो जाते है तो वे सन्तान सुख प्राप्त करने में सक्षम होते है। कुछ युगल यह सुख प्राप्त करने में सक्षम नहीं होते है। ऐसी स्थिति में पुरुष व महिला दोनों को ही डॉक्टरी जाँच के आधार पर सलाह व इलाज करवाना चाहिये। यदि किसी एक का भी प्रजनन स्वास्थ कमजोर या सही नहीं होगा तो गर्भधारण नहीं हो सकेगा। आज भी हमारा समाज गर्भधारण न होने पर स्त्री को ही इसका जिम्मेदार मानते है। गर्भधारण न होने पर स्त्री की डॉक्टरी जाँच तो करवा ली जाती है लेकिन पुरुष इस जाँच के लिये मानसिक रूप से भी तैयार नहीं होता है। यदि जांच में पुरुष में कोई कमी आती है तो भी पुरुष प्रधान समाज इसे स्वीकार नहीं करता है। अत: स्त्री पुरुष दोनों में ही प्रजनन क्षमता आवश्यक है।
4. **मानसिक स्वास्थ्य (Mental health):–** गर्भधारण के लिये स्त्री व पुरुष दोनों का ही मानसिक रूप से तैयार होना जरूरी है। आजकल पुरुषों के साथ-साथ ज्यादातर महिलाएं भी घर से बाहर नौकरी करती है। पति व पत्नि दोनों ही अपनी नौकरी व केरियर को प्राथमिकता देते है अत: उनके बीच प्रजनन सम्बन्ध में कमी व अस्थिरता आने लगती है। कई युगलों में समय अभाव के कारण पारिवारिक,स ामाजिकव अ ार्थिकर्जिम्मेदारियाँन िनभाप ानेस` तनाव रहता है। यह तनाव उनके मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है और इसका सीधा असर प्रजनन प्रक्रिया पर पड़ता है।
5. **सन्तुलित आहार (Balance diet):–** शारीरिक स्वास्थ्य के लिये पति व पत्नी दोनों को ही अपनी आवश्यकातानुसार सन्तुलित आहार का सेवन करना चाहिये। आहार में पौष्टिक तत्वों की कमी से हीनताजनित रोग हो जाते है। हमारे देश में गर्भावस्था के दौरान 70-90प्रतिशतम हिलाऐंर क्ताल्पतास`ग्रसितह ोतीह`ै ार क्ताल्पतान केवल महिला के स्वास्थ्य को प्रभावित करती है बल्कि गर्भावस्था को भी प्रभावित करती है। रक्ताल्पता ग्रसित गर्भवती महिलाओं में गर्भपात, मातृ-मृत्यु दर आदि समस्याएँ अधिक देखी गई है। अत: रक्ताल्पता की रोकथाम व निदान अत्यन्त आवश्यक है। किशोरियों एवं महिलाओं को अपने आहार में सस्ते व उपलब्ध लौह लवण से भरपूर भोज्य पदार्थ जैसे हरी पत्तेदार सब्जियाँ, साबुत अनाज व दालें, अण्डा, मांस, मछली तिल आदि का सेवन अधिक से अधिक करना चाहिये। सरकार द्वारा इस रोग की रोकथाम व निदान के लिये आंगनबाड़ी केन्द्रों की लाभार्थी किशोरियों एवं गर्भवती महिलाओं, सरकारी स्कूलों की किशोरियों तथा सरकारी चिकित्सालयों में गर्भावस्था के दौरान स्वास्थ्य परीक्षण के लिये गई महिलाओं को लौह लवण व फोलिक अम्ल युक्त गोलियाँ मुफ्त में दी जाती है। गर्भवती महिला को एक गर्भकाल के दौरान 100 गोली (एक गोली प्रतिदिन) व किशोरी बालिका को 1 गोली प्रति सप्ताह दी जाती है। लौह लवण व रक्ताल्पता के विषय में आहार एवं पोषण इकाई से भी ज्ञान प्राप्त कर सकते है।
6. **गर्भधारण अन्तराल (Pregancy Interval):–** गर्भधारण के बीच उचित अन्तराल प्रजनन स्वास्थ्य को इंगित करता है। दो बालकों के बीच में कम से कम तीन साल का अन्तराल होना चाहिये। इस अन्तराल से महिला के प्रजनन अंग अगले गर्भधारण के लिये फिर से तैयार हो जाते है। अस्थाई परिवार नियोजन उपायों के प्रयोग से प्रजनन स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिये प्रजनन अंगों की जानकारी एवं वर्णित बिन्दुओं का अनुसरण करना आवश्यक है। सामान्य स्वास्थ्य की तरह प्रजनन स्वास्थ्य भी केवल रोग या निर्बलता का अभाव ही नहीं अपितु शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक स्वास्थ्य भी है ताकि एक स्वस्थ्य बालक की उत्पत्ति हो।

यौन सम्बन्धी रोग (Sexual diseases)

ऐसे रोग जो मुख्यत: यौन सम्पर्क के कारण फैलते है गुप्त या यौन रोग। इस अध्याय में हम एड्स, गोनोरिया, सिफिलिस आदि के बारे में पढ़ेगें।

(I) एड्स (Aids) :

'एड्स एक लाइलाज रोग है, बचाव ही उपचार है। जिसका पूरा नाम

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चित्र 5.3 : एड्स का चिह्न

'एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिशियेन्सी सिन्ड्रोम (Acquired Immune-deficiency Syndrome-AIDS)

ए	–	एक्वायर्ड	–	किसी अन्य से संक्रमित
आई	–	इंम्यूनो	–	प्रतिरक्षण क्षमता
डी	–	डिफीसिएंसी	–	कमी
एस	–	सिंड्रोम	–	लक्षणों का समूह

एड्स मनुष्य जाति में स्वाभाविक रूप से शुरू नहीं हुआ बल्कि मनुष्य जाति के अपने ही कुछ कर्मों के कारण उपार्जित हुआ है। यह यौन संक्रामक रोग है जोकि इम्यूनो डिफिसिएन्सी वायरस (Human Immune-Deficiency Virus, HIV) नामक विषाणु के द्वारा फैलता है। ये वायरस श्वेत रक्त कणिकाओं पर आक्रमण करता है तथा धीरे-धीरे नष्ट कर देता है। श्वेत रक्त कणिकायें हमारे शरीर को रोगों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करती है। श्वेत रक्त कणिकाओं के नष्ट हो जाने से शरीर की 'प्रतिरक्षात्मक क्षमता' समाप्त हो जाती है तथा व्यक्ति विभिन्न प्रकार के रोगों का शिकार हो जाता है। उसे तरह-तरह के संक्रमण और रोग हो जाते है और व्यक्ति अन्तत: मृत्यु की गोद में समा जाता है।

विश्वस्‍ वास्थ्यस ंगठन के अनुसार 2013 में दुनियाभर में 35 मिलियन लोग एड्स के शिकार थे। भारत में 2.1 मिलियन लोग HIV से ग्रसित है और इस आंकड़े के साथ पूरी दुनिया में पाए जाने वाले मरीजों वाले देशों में इसका तीसरा नंबर है। यूनाइटेड राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार एशिया-पेसिफिक क्षेत्र में पाए जाने वाले कुल एड्स के मरीजों के 40 प्रतिशत मरीज भारत में है।

सबसे ज्यादा जोखिम में युवा पीढ़ी है। क्योंकि आधे से ज्यादा HIV संक्रमित लोग 15 से 24 साल के बीच की उम्र के है। HIV/एड्स की रोकथाम के लिए '**राष्ट्रीय एड्स नियन्त्रण कार्यक्रम**' चलाया जा रहा है। लोगों को एड्स के लिए जागरूक करने के लिए 1 दिसम्बर को एड्स दिवस मनाया जाता है।

हर गुजरते मिनिट के साथ एक भारतीय एच.आई.वी. से संक्रमित हो जाता है। इसकी चिकित्सा व बचाव का टीका अभी तक विकसित नहीं हो पाया है। हालाँकि इस दिशा में विश्व भर में अनुसंधान चल रहे है। यदि इस रोग पर काबू नहीं पाया गया तो समस्त मानव जाति नष्ट हो सकती है अत: इस रोग को समझना, समझाना, बचना व दूसरों को बचाना ही महत्वपूर्ण परिचर्या है। एच.आई.वी. के संक्रमण से मनुष्य के शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता खत्म हो जाती है। परिणामस्वरूप एड्स रोगी को कई तरह के अवसरवादी संक्रमण हो जाते है। जिनसे तरह-तरह की बीमारियाँ हो जाती है। रोगी का शरीर इन बीमारियों से लड़ नहीं पाता है और अंत में ये संक्रमण मौत का कारण बन जाते है।

एच.आई.वी. संक्रमण उन चोरों के समान है जो कि शरीर की रक्षा करने वाले प्रतिरक्षा तत्वों पर अपना आक्रमण करते है और उन प्रतिरक्षा तत्वों रूपी पुलिस थानों को ही अपना अड्डा बना लेते है। खून के परीक्षण से एच.आई.वी. संक्रमण का पता लगाया जा सकता है। विषाणुओं से संक्रमित व्यक्ति को एच.आई.वी. पॉजिटिव कहते है। एच.आई.वी. पॉजिटिव व्यक्ति कई वर्षों (6-10 वर्ष) तक सामान्य प्रतीत हो सकता है और सामान्य जीवन व्यतीत कर सकता है लेकिन इस अवधि में वह दूसरों को यह बीमारी फैलाने में सक्षम होता है। अत: ऐसे व्यक्ति को कुछ सावधानियाँ बरतनी चाहिये ताकि वह अपने जीवन-साथी व बच्चों में यह रोग न फैला सकें तथा स्वयं को भी अवसरवादी संक्रमणों से बचा सकें। एच.आई.वी. पॉजिटिव का मतलब एड्स नहीं है, लेकिन इसके विषाणु द्वारा संक्रमण शरीर में पहुँच चुका है और 6से 10 साल के समय में एड्स विकसित होने लगती है यानि कि व्यक्ति में जब मिश्रित बीमारियों के लक्षण नजर आने लगे तब इस अवस्था को एड्स कहते है।

चित्र 5.4 : एड्स रोग की प्रक्रिया

एड्स के रोगी में वजन घटना, बुखार, दस्त लगना, खाँसी, चर्म रोग तथा अनेक प्रकार की बीमारियाँ जैसे टी.बी., निमोनिया, कैन्सर इत्यादि देखे जा सकते है।

एच.आई.वी. संक्रमण निम्न कारणों से फैलता है:

- असुरक्षित यौन संबंध से।
- बिना जाँचा हुआ संक्रमित रक्त रोगी को चढ़ाने से।
- संक्रमित सीरिंज एवं सुई के उपयोग से।
- संक्रमित व्यक्ति के अंग प्रत्यारोपण से
- एच.आई.वी. संक्रमित माँ के होने वाले बच्चे व स्तनपान

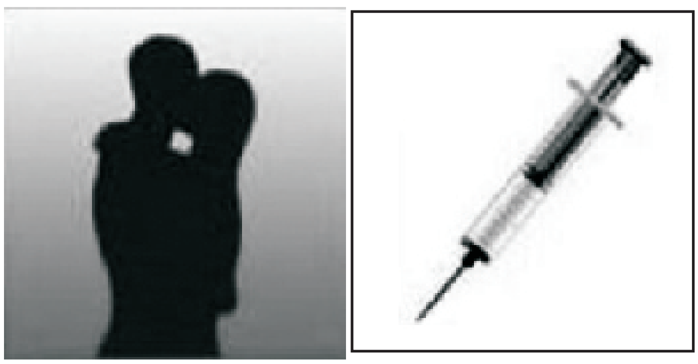

चित्र 5.5 : एड्स के कारण

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

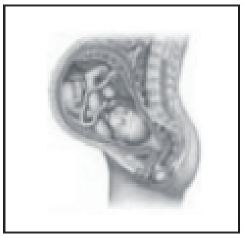

संक्रमित माँ द्वारा

संक्रमित रक्त द्वारा

से।

उपरोक्त एच.आई.वी. फैलाने वाले बिन्दुओं के साथ-साथ यह भी जान लेना आवश्यक है कि एच.आई.वी. किन से नहीं फैलता है ताकि एड्स रोगी अपने आपको एकदम अलग-थलग महसूस कर हीन भावना का शिकार न हो।

एच.आई.वी. निम्न कारणों से नहीं फैलता है:

(i) एच.आई.वी. संक्रमित व्यक्ति के साथ दैनिक प्रयोग की वस्तुओं जैसे टेलीफोन, किताबें, पेन आदि का सहभागी प्रयोग करने से।

(ii) शारीरिक स्पर्श जैसे हाथ मिलाना, छूना, साथ उठना-बैठना व आस-पास खड़े होने से।

(iii) एकह ीअ ॉफ्सि ,क ारखानोंम ेंस ाथ-साथक ामक रनेस े, उपकरणों को मिलकर प्रयोग करने से।

(iv) साथ-साथ खाने-पीने तथा प्लेट, गिलास या अन्य बर्तनों का मिलकर प्रयोग करने से।

(v) सार्वजनिक स्नानघर या शौचालय का प्रयोग करने से।

(vi) हवा में खाँसने, छीकने से।

(vii) कीट पतंगों, मच्छर, जूं, खटमल के काटने व मक्खी आदि से।

एड्स से बचाव: बचाव ही उपचार है।

इस रोग का कोई उपचार व टीका उपलब्ध नहीं है, अत: रोग के कारणों से बचकर ही शत-प्रतिशत बचाव किया जा सकता है:-

(i) जीवन साथी के अलावा किसी अन्य के साथ यौन सम्बन्ध स्थापित नहीं करना चाहिये। यौन रोगियों के साथ यौन सम्पर्क नहीं करना चाहिए।

(ii) यौन सम्पर्क के समय नियमित निरोध (कन्डोम) का प्रयोग करना चाहिये।

(iii) मादक औषधियों के आदी व्यक्तियों द्वारा सुई व सिरिंज का साझा प्रयोग नहीं करना चाहिये।

(iv) कम से कम बीस मिनट पानी में उबाली हुई सुई व डिस्पोजेबल सीरिंज (नष्ट करने योग्य) को काम में लेना चाहिये।

(1) एड्स से पीड़ित महिलाओं को गर्भ धारण नहीं करना चाहिये या डॉक्टर से सलाह लेनी चाहिये। आजकल ऐसी दवाएँ उपलब्ध है जिससे एच.आई.वी. संक्रमित महिला के गर्भ में पल रहे शिशु में एच.आई.वी. की सम्भावना काफी कम की जा सकती है।

(vi) रक्त की आवश्यकता होने पर एच.आई.वी. की जाँच किया रक्त ही ग्रहण करना चाहिये।

(vii) किसी का इस्तेमाल किया हुआ ब्लॅड काम में नहीं लेना चाहिये।

(viii) शरीर में गोदना गोदने एवं नाक व कान छेदने के लिये काम आने वाले उपकरणों को भी कीटाणु रहित करके ही प्रयोग में लेना चाहिये।

(ix) संदेह होने पर एच.आई.वी. जाँच करवानी चाहिये। सरकारी अस्पतालों में सिर्फ 10 रु. का शुल्क लेकर इसकी जाँच की जाती है।

एड्स से सम्बन्धित जानकारी न केवल ग्रसित या उसके परिवार के सदस्यों अपितु सभी को जन संचार माध्यमों द्वारा देनी चाहिये ताकि इस रोग से बचा जा सकें।

यदि व्यक्ति एच.आई.वी. संक्रमित है या उसे एड्स हो गई है तो उसे मुख्य रूप से दो बातों का ध्यान रखना चाहिये। प्रथम बात तो यह कि वो किसी और व्यक्ति को संक्रमित न करें तथा वो स्वयं किसी अन्य बीमारी से संक्रमित न हो। एड्स का अन्त दर्दनाक मौत ही है क्योंकि इस रोग की न तो कोई दवा है, न कोई टीका और न ही इसका कोई इलाज। **एड्स से बचाव ही उपचार है।**

हमारे देश में इस रोग के फैलने की गति को कम करने, इस रोग से होने वाले संक्रमण व मृत्युदर को कम करने, इस संक्रमण से सामाजिक व आर्थिक स्तर पर प्रभाव कम करने तथा इस रोग के प्रति लोगों के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए, 1987 से राष्ट्रीय एड्स नियन्त्रण संस्थान कार्यरत है।

(II) सिफिलिस

सिफिलिस यौन सम्बन्धी रोग है जो कि एक विशेष प्रकार के जीवाणू ट्रेपोनिमा पैलीडम से होता है। यह रोग सिफिलिस रोग से ग्रसित व्यक्ति से यौन सम्पर्क स्थापित करने से फैलता है। यह एक लम्बी अवधि का रोग है जो कि प्रथम दो वर्ष में संक्रमणशील होता है। ट्रेपोनिमा पैलीडम का विकास काल 14-28दिन का होता है। यह रोग दो प्रकार से होता है।

1. उपार्जित 2. जन्मजात

रोग का निदान:

इस रोग का निदान प्रारम्भिक अवस्था यानि कि दो सप्ताह में आसानी से किया जा सकता है। इस रोग का जीवाणु ट्रेपोनिमा पैलीडम, पेनिसिलीन के प्रति काफी संवेदनशील होते है तथा एन्टीबायोटिक्स की उपस्थिति में मर जाते है। इस रोग से बचाव के उपाय है:-वेश्यावृति पर पूर्ण रूप से रोक लगाना, समय-समय पर चिकित्सीय जाँच करवाना, रोगी व्यक्ति के साथ यौन सम्पर्क स्थापित न करना, विद्यालयों व महाविद्यालयों में यौन शिक्षा देना आदि।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(III) गोनोरिया

यह रोग ग्राम निगेटिव बैक्टीरिया नाइसिरिया गोनेरिये (Neisseria Gonohoeae) के कारण फैलता है। इस जीवाणु का विकास काल 2-10 दिनों का रहता है। इस रोग में मूत्र मार्ग की श्लेष्मिक कला, आँखों तथा स्वर यंत्र पर व्रण उत्पन्न होना, मूत्र त्याग करते समय असहनीय जलन, घाव में मवाद भर जाना, बुखार आना आदि है। इस रोग में स्त्रियों के मूत्र मार्ग से एक पीले-रंग का स्त्राव निकलने लगता है। कुछ समय पश्चात् बिना उपचार के ही सारे लक्षण समाप्त हो जाते है परन्तु जीवाणु धीरे-धीरे स्त्री के गर्भाशय व फैलोपियन ट्यूब में प्रवेश कर संक्रमण फैला देते है। जिससे स्त्रियों में बाँझपन हो जाता है।

रोग का निदान:

इस रोग का उपचार व रोकथाम भी सिफिलिस रोग की तरह ही किया जाता है।

महत्वपूर्ण बिन्दुः-

1. सन्तानोत्पत्ति हेतु स्वस्थ प्रजनन तंत्र आवश्यक है।
2. एक स्वस्थ बालक को जन्म देने के लिये स्त्री व पुरुष दोनों के प्रजनन अंगों में किसी प्रकार का अवरोध, रोग एवं संक्रमण नहीं होना चाहिए।
3. स्त्रियों में बाह्य (लघु व वृहत भगोष्ठ, बार्थोलिन ग्रंथियाँ, भगशिश्निका व मूत्र छिद्र) एवं आन्तरिक (योनिच्छेद, योनि, गर्भाशय, डिम्बग्रंथियाँ एवं अण्डाशय) प्रजनन अंग आते है।
4. पुरुषों में वृषण, शुक्रवाहिका, शुक्राशय, पुरूस्थ एवं शिश्न प्रजनन अंग होते है।
5. अण्डक का शुक्राणु के साथ मेल होने पर गर्भ ठहरता है।
6. स्वस्थ प्रजनन के लिये यह आवश्यक है कि विवाह के समय लड़के की उम्र 21 वर्ष तथा लड़की की उम्र 18वर्ष से कम न हो।
7. शारीरिक स्वच्छता, नियमित डॉक्टरी जाँच, संतुलित आहार, गर्भधारण में अन्तराल आदि आयामों का अनुसरण कर प्रजनन स्वास्थ्य हासिल किया जा सकता है।
8. यौन सम्पर्क से होने वाले रोग गुप्त या यौन रोग कहलाते है।
9. एड्स लाइलाज एवं संक्रामक रोग है। इस रोग से बचाव ही इलाज है।
10. एड्स, एच.आई.वी. (ह्यूमन इम्यूनो डेफिशियेन्सी वायरस) नामक विषाणु के संक्रमण से होता है। इस संक्रमण से मनुष्य के शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता समाप्त हो जाती है। फ्लस्वरूप वह विभिन्न संक्रामक रोगों से ग्रसित हो जाता है और अंत में ये रोग उसकी मौत का कारण बन जाते है।
11. रक्त के परीक्षण से एच.आई.वी. संक्रमण का पता लगाया जा सकता है। संक्रमित व्यक्ति को एच.आई.वी. पॉजिटिव कहते है।
12. एड्स असुरक्षित यौन संबंधों, संक्रमित रक्त चढ़ाने, संक्रमित सिरिंज या सुई के उपयोग, संक्रमित व्यक्ति के अंग का स्वस्थ व्यक्ति में प्रत्यारोपण या फिर संक्रमित माँ के होने वाले बच्चे व स्तनपान से फैलता है।
13. सामान्य रहन-सहन जैसे टेलीफोन, कम्प्यूटर, किताबें, बर्तन आदि का सहभागी रूप में प्रयोग करने से या शारीरिक स्पर्श जैसे हाथ मिलाना या साथ उठने-बैठने से एड्स नहीं होता।
14. एड्स से बचाव के लिए रोग को फैलाने वाले कारणों से बचना चाहिये। इससे बचने के मुख्य उपाय है:-सुरक्षित यौन संबंध, निसंक्रमित सुई, ब्लेड व सिरिंज का उपयोग, यौन रोगियों के साथ यौनस 'पर्कन हींक रना,ए ड्सप ीड़ितम हिलाद्व राग र्भधारणव स्तनपान नहीं कराना, केवल जाँच किया हुआ रक्त ग्रहण करना आदि।
15. यदि व्यक्ति एड्स संक्रमित है तो उसे ध्यान रखना चाहिए कि वह किसी और को संक्रमित न करें एवं स्वयं भी किसी बीमारी से संक्रमित न हो।
16. सिफिलिस व गोनोरिया क्रमशः ट्रेपोनिमा पैलीडम एवं नाइसिरिया गोनेरिये द्वारा फैलता है।
17. सिफिलिस व गोनिरिया का इलाज प्रारम्भिक अवस्था में आसानी से किया जा सकता है।
18. वेश्यावृति पर रोक, चिकित्सकीय जांच, संक्रमित व्यक्ति के साथ यौन सम्बन्ध स्थापित न करके तथा यौन शिक्षा द्वारा इन रोगों से बचाव किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्नः

1. निम्न प्रश्नों के लिये सही उत्तर चुने:

(1) भ्रूण का पोषण व विकास निम्न में से कौनसे प्रजनन अंग में होता है:-

(अ) डिम्ब ग्रन्थि (ब) गर्भाशय
(स) योनि (द) अण्डाशय

(2) गर्भवती महिला को एक गर्भकाल के दौरान लोह लवण व फोलिक अम्लयुक्त गोलियों का सेवन करना चाहिये:-

(अ) 75 (ब) 100
(स) 150 (द) 200

(3) एड्स रोग है:

(अ) संक्रामक (ब) असंक्रामक
(स) मानसिक (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(4) एच.आई.वी. विषाणु से फैलता है:

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(अ) हिपेटाइटिस (ब) एड्स
(स) हर्पीज (द) डायरिया

(5) एच.आई.वी. संक्रमण किस कारण से फैलता है?
(अ) संक्रमित सुई के उपयोग से (ब) खाँसने से
(स) वायु से (द) साथ खाना खाने से

(6) सिफिलिस रोग फैलता है?
(अ) ट्रेपोनिमा पैलीडम (ब) नाइसिरिया गोनेरिये
(स) कोई भी नहीं (द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये:-

(1) मानव वंशक्रम बनायें रखने के लिये .... आवश्यक है।

(2) स्त्री व पुरुष दोनों के प्रजनन अंगों में किसी भी प्रकार का अवरोध, रोग व .... नहीं होना चाहिये।

(3) गर्भाशय का मुख्य कार्य .... का है।

(4) .... में शुक्राणुओं का निर्माण होता है।

(5) अण्डक का शुक्राणु के साथ मेल होने पर .... ठहरता है।

(6) एड्स .... के संक्रमण से होता है।

(7) एच.आई.वी. संक्रमित व्यक्ति .... वर्ष तक सामान्य जीवन जी सकता है।

(8) गोनिरिया से पीड़ित स्त्रियों के मूत्र मार्ग से .... रंग का स्राव निकलने लगता है।

3. प्रजनन स्वास्थ से आपका क्या तात्पर्य है?

4. स्वस्थ प्रजनन हेतु स्त्री व पुरुषों को किन बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है और क्यों?

5. एड्स और एच.आई.वी. पॉजिटिव में क्या अंतर है?

6. एच.आई.वी. संक्रमण कैसे फैलता है? इस संक्रमण से बचने के तरीके लिखिये।

7. यौन रोग की रोकथाम कैसे करेंगे?

उत्तरमाला:

1. (1) ब (2) ब (3) अ (4) ब
(5) अ (6) अ

2. (1) प्रजनन तंत्र (2) संक्रमण
(3) मासिक-चक्र (4) वृषण
(5) गर्भ (6) एच.आई.वी.
(7) 6-10 वर्ष (8) पीले रंग

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

6. वयस्कावस्था और वृद्धावस्था
Adulthood and old age

वयस्कावस्था और वृद्धावस्था जीवन की महत्वपूर्ण अवस्थाएँ है। इस अध्याय में हम वयस्कावस्था एवं वृद्धावस्था के बारे में पढ़ेंगे।

वयस्कावस्था (Adulthood)

किशोरावस्था की समाप्ति से वृद्धावस्था के प्रारम्भ होने से पूर्व के काल को वयस्कावस्था कहते हैं। किशोरावस्था के समाप्त होते-होते युवावस्था प्रारंभ होती है। यह वह समय है जब एक किशोर अपनी सम्पूर्ण शारीरिक वृद्धि व विकास को प्राप्त कर मानसिक रूप से स्थिर एक परिपक्व युवा बन जाता है। यह अवस्था प्राय: 20-21 वर्ष से लेकर 40 वर्ष तक होती है । तत्पश्चात् 40 वर्ष से 60 वर्ष तक **प्रौढ़ावस्था** होती है। इसके दौरान शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक आदि विविध प्रकार के परिवर्तन बहुत धीमे-धीमे होते हैं। युवा एवं प्रौढ़ को सामूहिक रूप से वयस्क कहते हैं। ये दोनों ही अवस्थाएँ जीवन में सर्वाधिक लम्बे अंतराल के लिए चलने वाली अवस्थाएँ हैं।

1. **युवावस्था (Early adulthood):-** युवावस्था 21 से 40 वर्ष तक चलने वाली अवस्था है इस अवस्था को पूर्व प्रौढ़ावस्था भी कहते हैं। इस दौरान इसमें अनेक विकासात्मक कार्य होते हैं तथा अनेक शारीरिक व मानसिक परिवर्तन भी होते है युवावस्था में व्यवसाय, वैवाहिक आदि क्षेत्रों में समायोजन करना पड़ता है। युवावस्था में अनेक नवीन समस्याएँ सामने आती हैं जो अब तक आयी समस्याओं से भिन्न होती है। इसके अलावा युवा से यह आशा की जाती है कि वह अपने माता-पिता, शिक्षक, पथ प्रदर्शक व पर्यवेक्षक के बिना ही वह समस्याओं को हल कर सके। **''इस अवस्था के दौरान युवा विशिष्ट जीवन-लक्ष्यों का निश्चित रूप से चुनाव कर लेना है ओर अपनी शक्तियों को अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में लगाता है।''**

युवावस्थाज ीवनक ाव हप ड़ावह ैज बि कशोरअ पनी पढ़ाई पूरी कर चुके होते हैं या करने वाले होते हैं लेकिन अब उनका कैरियर प्राय: निश्चित सा हो चुका होता है। युवाओं का परिचय अब जीवन के यथार्थ से होता है। अब उन्हें अपने भावी जीवनयापन एवं जीविकोपार्जन के लिये आर्थिक प्रयास या नौकरी के अवसरों की तलाश करनी होती है। जो युवा किशोरावस्था में पढ़ाई नहीं कर पाते उन्हें भी अपने जीवन की चंचलता एवं चपलता को थामकर जीविकोपार्जन हेतु विविध काम-धंधों में लगना होता है।

आज के आधुनिक युग में युवतियाँ भी युवाओं की भाँति संघर्ष कर नौकरी/जीविकोपार्जन का कार्य करती हैं। युवावस्था में सुखी होना अधिकांशत: संतोषजनक व्यवसायिक समायोजन पर निर्भर करता है। यदि वह अपने व्यवसाय से खुश नहीं है, वह यह समझता है कि मेरे में उच्च पद व अधिक वेतन पाने की योग्यता है ओर वह अपने सहकर्मियों को पसन्द नहीं करता है तो वह अपने घरेलू जीवन में, सामाजिक जीवन में और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अप्रसन्न रहेगा। नवयुवा जिन्हें हाईस्कूल या कॉलेज में किसी विशेष व्यवसाय का प्रशिक्षण नही मिला होता है, इसलिए वो एक काम को छोड़कर दूसरा अपनाते रहते है। आजकल हाई स्कूल में विधार्थियों की ऐसा व्यवसाय चुनने में मदद करने की कोशिश की जाती है जो कि उनकी योग्यताओं के अनुसार हो। जब विधार्थियों का विषयों का चुनाव रूचि के अनुसार होता है तो व्यवसाय चुनाव सरल तथा ज्यादा संतुष्टी देने वाला होता है।

युवावस्था ही वह समय है जब युवक एवं युवतियों को अपने जीवन में स्थिरता लाने के लिए उपयुक्त जीवन साथी चुनकर विवाह कर गृहस्थी बसानी होती है। इसी दौरान स्त्री-पुरूष संतान पैदा कर उनका पालन पोषण करते हैं तथा अपने परिवार की जिम्मेदारी उठाते हैं। इस प्रकार से युवावस्था वह अवस्था है जब किशोरावस्था की चंचलता की लगाम खींचकर जीवन में आर्थिक व सामाजिक स्थिरता लाने के प्रयास किए जाते है। युवावस्था शारीरिक परिवर्तनों कीअ वस्थाह ैि जसमेंश ारीरिकव म ानसिक्श्र ामक रतेह ुएत था थकान, तनाव आदि को झेलते हुए युवक युवतियों को सामंजस्य बिठाना होता है। यही अवस्था आर्थिक उत्पादन की अवस्था है जिसके

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

फलस्वरूप स्वयं तथा राष्ट्र की उत्पादन क्षमता एवं सुख समृद्धि सुनिश्चित होती है। अत: इस अवस्था में युवक-युवतियों को सशक्त एवं समृद्ध उत्पादक बने रहने के लिए उपयुक्त पोषण हेतु संतुलित आहार आवश्यक है।

2. **प्रौढ़ावस्था (Adulthood):–** प्रौढ़ावस्था को मध्यवय भी कहते है यह अवस्था 40 वर्ष से 60 वर्ष की आयु तक चलती है। इसके प्रारम्भ व अंत में भी कुछ शारीरिक और मानसिक परिवर्तन होते है। इस अवस्था में जनन क्षमता, शारीरिक शक्ति ओर मानसिक स्फूर्ति कम हो जाती है। प्रौढ़ावस्था जीवन का वह समय होता है जब व्यक्ति अपने शिखर पर होता है सामान्यत: शिखर की प्राप्ति चालीस ओर पचास के बीच होता है। इसके बाद व्यक्ति अपनी सफलताओं में स्थिर हो जाता है। यह आर्थिक व सामाजिक स्थिरता की अवस्था है। इस समय प्रौढ़ अपनी आर्थिक एवं सामाजिक उन्नति के चरमोत्कर्ष पर होते हैं। अब वे संवेगात्मक रूप से स्थिर, शांत, सौम्य, एवं अनुभवी प्रौढ़ हैं तथा समाज के विविध आयु वर्ग के लोगों को दिशा निर्देश देते हैं। इस अवस्था में प्रौढ़ अपनी संतान को सामाजिक एवं आर्थिक स्थिरता दिलाने की दिशा में प्रयासरत होते हैं। यही वह समय है जब उनमें वृद्धावस्था के दौरान होने वाले प्रतिगामी शारीरिक परिवर्तनों की शुरूआत हो चुकी होती है। प्रौढ़ावस्था में शरीर और शारीरिक क्रियाओं में कुछ परिवर्तन होते है जो इतने व्यापक होते हैं कि तुरंत दिखाई देने लगते हैं जैसे इस अवस्था में प्राय: शरीर भार बढ़ जाता है, बालों व त्वचा में भी परिवर्तन हो जाते है। माथे के बाल विशेषरूप से पुरूषों के कम होने लगते है। बालों का पकना शुरू हो जाता है। त्वचा व आँखों के नीचे झुर्रियाँ पड़ जाती है। नेत्र ज्योति की तीक्ष्णता घट जाती है। यह अवस्था कामक्षीणता व रजोनिवृत्ति का काल होता है।

वृद्धावस्था (Old age)

मानव जीवन के विकास क्रम में वृद्धावस्था उम्र का आखिरी पड़ाव है। शिशु के जन्म से शुरू होने वाला जीवन चक्र वृद्धावस्था के बाद मृत्यु पर आकर खत्म होता है। शैशवावस्था मानव जीवन का प्रात: काल है तो वृद्धावस्था उसकी जीवन संध्या, जो कि बहुत धीरे गंभीर एवं शांत होती है तथा मृत्यु रूपी रात्रि के सन्नाटे में विलीन हो जाती है। इस अवस्था में शरीर निर्माण कार्य नहीं के बराबर होते है तथा शरीर जीर्ण-शीर्ण होने लगता है। अत: इसे ह्रास की अवस्था भी कहते है। यह ह्रास धीमा या तीव्र हो सकता है। आयु वृद्धि के साथ-साथ व्यक्ति के बल उसकी स्फूर्ति और प्रतिक्रिया की रफ्तार कम होती जाती है। इस क्षति की पूर्ति वह पिछले ज्ञान भण्डार के उपयोग तथा कौशल को बढ़ाकर कर सकता है। उदाहरण के लिये, शारीरिक दुर्बलता के कारण वह सामान्य रूप से नहीं चल पाता।

वृद्धावस्था की वह अवधि जिसमें ह्रास धीमा और क्रमिक होता है और जिसकी क्षतिपूर्ति की जा सकती है जरत्व कहलाती है। यह अवस्था कोई व्यक्ति पचास साल पार करने पर ही प्राप्त कर लेता है तो कोई साठ पैंसठ तक भी प्राप्त नहीं करता। यह व्यक्ति के शारीरिक व मानसिक ह्रास की गति पर निर्भर करती है।

''जरा'' **''जरत्व''** से भिन्न है। यह वृद्धावस्था की वह अवधि है जिसमें शरीर लगभग पूरी तरह टूट जाता है और मानसिक अस्तव्यस्तता आ जाती है। ऐसे व्यक्ति प्राय: सनकी, लापरवाह, अन्यमनस्क, अकेले रहने वाले एवं कुसमायोजित होते है। आम भाषा में इसे सठियाना तथा ऐसे व्यक्तियों को ''सठियाया हुआ'' कहते है। जरा की अवस्था पचपन वर्ष की उम्र में भी आ सकती है और हो सकता है कि न भी आये क्योंकि कई बार व्यक्ति इस अवस्था के आने से पूर्व ही मर सकता है।

वृद्धावस्था का प्रारम्भ प्राय: 60 वर्ष की उम्र से माना जाता है। जब व्यक्ति अपनी सेवाओं से मुक्ति (सेवानिवृत्ति) प्राप्त करता है। अब व्यक्ति अपने घर के सदस्यों के साथ पूर्ण समय बिताते हुए शांत एवं स्थिर जीवन जीता है। वृद्धावस्था की इस शांति में कई प्रकार की उथल-पुथल मचती रहती है। यह उथल-पुथल शारीरिक, आर्थिक एवं मानसिक प्रकार की हो सकती है। सेवानिवृत्ति प्राप्त कर लेने के कारण अब उसकी मासिक आय पेंशन मिलने की अवस्था में कम या फिर न मिलने की अवस्था में बिल्कु ल बंद हो जाती है। फलत: उसे अपनी आर्थिक आवश्यकताओं के लिये घर के अन्य सदस्यों जैसे बेटे, बहू आदि पर निर्भर रहना पड़ता है। वृद्ध अगर अपनी तमाम घरेलू जिम्मेदारियों जैसे बच्चों के विवाह, नौकरी/व्यवसाय आदि से मुक्त नहीं हो पाता है तो उसे आर्थिक परेशानी के साथ-साथ मानसिक यातना भी झेलनी पड़ती है। सेवानिवृत्त होने के बाद उसे अपने कार्यालय तो जाना नहीं पड़ता अत: अब उसे घर पर समय काटने की समस्या आती है। इस समय घर के युवा अपने व्यवसाय व नौकरियों में व्यस्त होते है तो बच्चे अपनी पढ़ाई-लिखाई एवं खेलकूद में मशगुल रहते है। वृद्ध घर में बिल्कुल अकेले पड़ जाते है। ऐसे में यदि जीवन साथी साथ न हो तो यह अकेलापन तनाव एवं अवसाद को जन्म देता है।

वृद्धावस्था में होने वाले परिवर्तन व समस्याएँ:

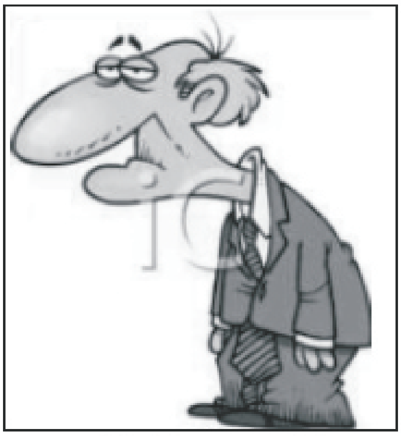

चित्र 6.1 : वृद्ध व्यक्ति

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(I) शारीरिक (Physical) :

1. वृद्धावस्था में नव कोशिकाओं की निर्माण प्रक्रिया की दर शरीर में होने वाली टूट फूट की दर से बहुत कम रहती है। अत: वृद्ध के शारीरिक भार में गिरावट आने लगती है। वसीय ऊतकों तथा तेल व स्वेद ग्रंथियों की संख्या व सक्रियता में कमी होने लगती है। जिससेत वचाप तली,रू खी-सूखीव इ ुर्रीदारह ेकरज गह-जगह से लटक जाती है। वृद्ध दुबले-पतले व कमजोर दिखने लगते हैं।
2. दाँत गिरने लगते है या दाँतों में संक्रमण के कारण दाँत निकलवाने पड़ते है जिससे मुँह पोपला हो जाता है तथा सामान्य भोजन करने व स्पष्ट बोलने में भी कठिनाई आती है।
3. सिर के बाल कम और धूसर हो जाते है। धीरे-धीरे वे इतने कम हो जाते है कि विशेष रूप से पुरूषों का सिर गंजा या लगभग गंजा हो जाता है। हाथ पैरों के नाखून मोटे, सख्त एवं भंगुर हो जाते है।
4. इस अवस्था में वृद्ध की कमर व कंधे कुछ आगे की तरफ झुक जाते है। वह कुछ-कुछ कमान की तरह आगे की ओर झुक कर चलता है और उसका कद कुछ छोटा या घटा हुआ दिखाई देता है।
5. इस अवस्था में क्रियाशील माँस पेशियों में कमी आती है, ऊतकों को जोड़ने वाले सख्त योजक तन्तु (कोलेजन) की मात्रा बढ़ने लगती है व हड्डियों के जोड़ों में उपस्थित स्नेहक द्रव (Lubricant fluid) की मात्रा कम हो जाती है। इससे वृद्धों के जोड़ों की क्रियाशीलता में कमी आती है, इनमें दर्द रहता है और उन्हें उठने-बैठने व चलने-फिरने में तकलीफ होती है।
6. वृद्धावस्था में नाड़ी संस्थान कमजोर हो जाता है। इस कारण उनके देखने, सुनने, सूंघने, स्पर्श करने आदि की शक्ति क्षीण होती जाती है। आयु के बढ़ने के साथ-साथ रंग के प्रति संवेदनशीलताघ ाटतीज ातीह ै व ृद्धप ्राय:द ूर-दृष्टिद ोषस े ग्रसित रहते है। स्वाद कलिकाओं के अपक्षय के कारण स्वादिष्ट से स्वादिष्ट भोजन भी इन्हें स्वादहीन लगता है। वृद्धों की स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है तथा हाथ पैरों की माँस-पेशियों में सामंजस्य भी कम होने लगता है, हाथ-पैर काँपने लगते है। फलत: वृद्ध विविध क्रियाकलापों को प्रवीणता से सम्पन्न नहीं कर पाते है। जरावस्था आते-आते वृद्धों के गिरने, लड़खड़ाने आदि का खतरा बढ़ जाता है।
7. अत: स्त्रावी ग्रंथियों से निकलने वाले विविध हॉर्मोनों के स्त्रवण में कमी आती है। फलत: हॉर्मोन का असंतुलन हो जाता है। पेराथायरॉइड ग्रंथियों से निकलने वाले हॉर्मोन के असन्तुलन के कारण वृद्धों में अस्थि विकृति रोग ''ऑस्टियोपोरोसिस'' होने की संभावना बढ़ जाती है। इस रोग में हड्डियों से कैलशियम व फोस्फोरसनि कलनेक ेद रख निजीभरणक ेद रस े ब हुत अधिक हो जाती है। हड्डियाँ कमजोर हो जाती है व थोड़े से झटके से ही टूट जाती है जो पुन: आसानी से व शीघ्रता से जुड़ भी नहीं पाती है।
8. उम्र के बढ़ने के साथ-साथ रक्त में कोलेस्ट्रॉल व लिपिड्स के स्तर बढ़ने लगते है तथा हृदय संबंधी बीमारियों-उच्च रक्तचाप, एन्जाइना का दर्द (छाती में दर्द), एथरोस्केलरोसिस आदि की संभावनाएँ बढ़ जाती है।
9. वृद्धावस्था में रोग प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास होता है। फलत: विविध प्रकार के संक्रमण वृद्धों को शीघ्र घेर लेते है। उपापचय की दर एवं पेशियों की स्फूर्ति घट जाने से शीत पर्यावरण में शरीर के तापमान का नियमन कठिन हो जाता है।
10. साठ या सत्तर वर्ष की आयु तक नींद की मात्रा में भी एक या दो घण्टों की कमी आ जाती है तथा अधिकतर वृद्धों को अनिद्रा का रोग हो जाता है।

(ii) सामाजिक (Social): वृद्धावस्था में आयु वृद्धि के साथ-साथ सामाजिक क्रिया कलापों में सक्रियता भी कम हो जाती है। उनके सामाजिक जीवन का दायरा सेवानिवृत्ति के कारण ऑफिस के साथियों का साथ छूटने, जीवन-साथी एवं घनिष्ठ मित्रों की मृत्यु तथा विविध बीमारियों के कारण गिरते स्वास्थ्य के कारण सीमित व संकुचित होता जाता है। सामान्यतया स्त्रियाँ पुरूषों की अपेक्षा अधिक समय तक मित्रता बनाए रखती है क्योंकि उनकी मित्र पास-पड़ौस की महिलाएँ ही होती है जबकि पुरूषों के अधिकतर मित्र उनके व्यवसाय के साथियों में से होते है जो समुदाय के दूर-दूर के क्षेत्रों में बिखरे होते है और सेवानिवृत्ति के बाद इकट्ठे नहीं हो पाते। अविवाहित या विधुर लोगों की अपेक्षा विवाहित लोग वृद्धावस्था में सामाजिक दृष्टि से अधिक सक्रिय होते है।

वृद्ध व्यक्ति के लिये पारिवारिक समूह ही उनके सामाजिक जीवन का केन्द्र होता है। उनकी आयु जितनी अधिक होगी साहचर्य के लिये उसे परिवार पर उतना ही अधिक निर्भर रहना पड़ेगा। ऐसे में उन्हें अपने परिवार के कम आयु वाले सदस्यों के साथ कदम मिलाकर चलना होता है जो उनके लिये बहुत कठिन या असंभव-सा होता है क्योंकि पारिवारिक सदस्य भी उन्हें पूरा समय नहीं दे पाते हैं। विचारों में मतभेदों के चलते कम आयु के ये पारिवारिक सदस्य अपने वृद्ध बुजुर्गों का खुले दिल से स्वागत भी नहीं कर पाते। ऐसे में आयु के बढ़ने के साथ-साथ वृद्ध व्यक्ति की अपने आप में रूचि बढ़ती जाती है तथा दूसरों में उसकी रूचि घटती जाती है। पहले उसकी रूचि अपरिचितों में समाप्त होती है, फिर अपने मित्रों में और तब अन्त में घनिष्ठ मित्रों में।

अनेक समुदाय वृद्धों की सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

के उद्देश्य से उनके लिये ऐसे सामाजिक समूह बना रहे है जिनके कार्यकलाप उनकी रूचियों और क्षमताओं के अनुसार आयोजित हों। इन समूहों का उद्देश्य मनोरंजन करना और इस बात के अवसर प्रदान करना है कि एक आयु वर्ग के स्त्री-पुरूष परस्पर मैत्री कर सकें।

(iii)आर्थिक (Economic): स्वास्थ्य के अच्छा व सही होने की दशा में अधिकतर वृद्ध शारीरिक सामर्थ्य रहने तक काम करना और रोजगार में बने रहना चाहते है। कुछ वृद्धों के लिये काम आत्म सम्मान और योग्यता की भावना का आधार है, कुछ के लिये प्रतिष्ठा का साधन है, कुछ काम के द्वारा साहचर्य का आनन्द लेना चाहते है तो कुछ के लिये यह जीविकोपार्जन का एक तरीका है।

उम्र के बढ़ने के साथ-साथ व्यक्ति की उत्पादन की शक्ति पहले की अपेक्षा घटती जाती है। उसका घटता हुआ बल व शक्ति उसके अभिप्रेरण को क्षीण कर देते है और समाज भी अब उसे कार्य करने के अपेक्षाकृत कम मौके देता है। सेवानिवृत्ति इसी व्यवस्था का परिणाम है जो कि लगभग 60 वर्ष की आयु में दी जाती है। सेवानिवृत्ति के पश्चात् वृद्धों को मिलने वाली मासिक आय में काफी हद तक कटौती हो जाती है व कई जगह तो उन्हें पेंशन तक भी नहीं मिलती। सेवानिवृत्ति पर मिला संचित धन भी वे कई बार बच्चों के कल्याण में खर्च कर देते है ऐसे में अब उन्हें अपनी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे-भोजन, वस्त्र आदि के लिये भी अपने बच्चों पर निर्भर रहना पड़ता है। इसी प्रकार व्यवसाय में जमे वृद्ध पुरूषों का कार्य भार भी धीरे-धीरे उनके युवा बच्चों द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है तथा वृद्ध आर्थिक तंगी के शिकार हो जाते है। ऊपर से नित्य प्रतिदिन होने वाली बीमारियाँ तथा उनके निदान के लिये चिकित्सा पर होने वाला खर्च भी बढ़ जाता है इस प्रकार एक तरफ तो वृद्धावस्था में आय के साधन कम हो जाते है व दूसरी तरफ खर्चें बढ़ जाते है जिस कारण वृद्धों को आर्थिक परेशानी उठानी पड़ती है।

(iv) संवेगात्मक (Emotional) : उम्र के बढ़ने के साथ-साथ वृद्धों की संवेगात्मक स्थिरता में भी तीव्र परिवर्तन आते है। वृद्धावस्था में होने वाली संवेगात्मक अस्थिरता का एक मुख्य कारण है कार्यनिवृत्ति। कम आयु वालों को जिनकी दिनचर्या में प्राय: कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों की बहुत भरमार रहती है, पूरी या आधी कार्यनिवृत्ति जीवन का स्वर्णिम काल लगता है। किन्तु, वास्तव में अधिकतर बुजुर्गों के लिये कार्य-निवृत्ति की प्रतीक्षा और उसकी वास्तविकता में बहुत अन्तर होता है। सेवानिवृत्ति होने पर उनके पास काम नहीं होने के कारण वे बिल्कुल ठाले हो जाते है तथा उनका यह खाली वक्त काटे नहीं कटता है। अवकाश युवा के लिये जितना खतरनाक होता है, वृद्ध के लिये उससे भी अधिक खतरनाक होता है। निष्क्रियता, जरा और मृत्यु की उत्प्रेरक है। कार्यि नवृत्त० यक्तिप्‌ ाय:अ पनेप रिवारके ल ोगोंस ेि वशेषत: अपनी पत्नी से अनुचित माँगे करता है, जिससे उसका पत्नी से तनाव और वैमनस्य हो जाता है। विचारों के मतभेद के चलते उसके बच्चों व नाती-पोतों सें संबंध बिगड़ जाते है।

कार्य निवृत्ति के पश्चात् जीवन के शेष वर्षों के लिए पर्याप्त धन का प्रबन्ध नहीं होने पर उसे अपने भविष्य से भय सा लगने लगता है। जिस पुरूष को अपने विवाहित जीवन के अधिकांश वर्षों में रोटी कमाने वाले की भूमिका करनी पड़ती थी, उसे प्राय: कार्य-निवृत्ति के बाद आश्रित की भूमिका करनी पड़ती है। जो स्त्री माँ की भूमिका करने की आदी हो चुकी है और पालक की अधिकार पूर्ण स्थिति में रह चुकी है, वृद्धावस्था में उसे यह भूमिका छोड़ देनी पड़ती हैं। इस प्रकार वृद्धों को अपने बच्चों के ऊपर आश्रित रहने की स्थिति में समायोजन करना पड़ता है तथा यह स्थिति उनके लिये लज्जापूर्ण व दु:खदायी होती है।

बच्चों के बड़े होकर विवाह कर अलग घर बसाने, नौकरी के लिये बाहर जाने या जीवन साथी की मृत्यु आदि से वृद्धों का एकाकीपन बढ़ता जाता है। कार्य निवृत्ति, पारिवारिक मित्रों व जीवन साथी के अभाव के कारण एकाकीपन, आर्थिक तंगी, पारिवारिक सदस्यों से बढ़ते मतभेद, गिरता हुआ स्वास्थ्य, संकुचित होता सामाजिक दायरा आदि कारक वृद्धों में उदासीनता को बढ़ाते है। ये संसार से विमुख होकर अपनी ही कल्पना सृष्टि में जमे रहते है। उनमें कई प्रतिगामी लक्षण जैसे नकारात्मक वृत्ति, मचलना, बालक के समान उत्तेजित हो जाना आदि उभरने लगते है तथा उनके चिड़चिड़े, झगड़ालू, सनकी व विरोधी हो जाने की संभावनाएँ बढ़ जाती है। उनमें भय, आकुलता, निराशा और उत्पीड़न की भावनाएँ अधिक पायी जाती है। ये वृद्ध अपना स्नेह अभिव्यक्त करने में भी कंजूसी दिखाते है तथा किसी भी वस्तु या व्यक्ति पर अपना स्नेह प्रकट करने से डरते है क्योंकि उन्हें यह भय रहताह ै ि कउ न्हेंअ पनीभ ावनाओंक ाप्‌ तिदानस ंभवत:न हीं मिलेगा जिससे उनके प्रयत्न निष्फल हो जायेंगे।

संवेगात्मक स्थिरता के लिये वृद्धों को चाहिये कि वे किसी न किसी प्रकार के रूचिपूर्ण कार्य में स्वयं को लगाये रखें। अपने बच्चों की भावनाओं व आवश्यकताओं को समझकर उनके साथ सांमजस्य बिठा कर चलें तथा स्वयं को विविध प्रकार के सामाजिक क्रियाकलापों में सक्रिय रखें।

वृद्धावस्था में देखभाल (Care in old age)

वृद्धावस्था में होने वाले परिवर्तनों एवं समस्याओं को देखते हुए यह आवश्यक है कि उनकी विशेष देखभाल की जाये ताकि वे अपने जीवन का अन्तिम चरण आराम से शान्ति पूर्ण ढंग से बिता सकें। औद्योगिकीकरण ने हमारे देश के परिवारों के प्रकार में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

भिन्नता ला दी है। संयुक्त परिवारों की जगह एंकाकी परिवार ने ले ली है और यह वृद्धों को एंकाकी जीवन बिताने पर मजबूर करता है जबकि इस अवस्था में उसे परिवार के अन्य सदस्यों की मदद की जरूरत होती है। वृद्धों की देखभाल निम्नानुसार करनी चाहिए:-

(I) सन्तुलित आहार (Balance diet): वृद्धों को शारीरिक परिवर्तनों, स्वास्थ्य एवं रूचि के अनुसार आहार दिया जाना चाहिए ताकि उनको सन्तुष्टि मिले। यदि वे खाने से सन्तुष्ट नहीं होते है तो चिड़चिड़े हो जाते है और कई बार पूरे ही घर का वातावरण असामान्य हो जाता है।

(ii) पूर्ण विश्राम व निद्रा (Total rest and sleep): जीवन चक्र के इस पड़ाव में भी पूर्ण विश्राम व निन्द्रा का उतना ही महत्व है जितना कि दूसरे चरणों में। इस अवस्था में शारीरिक सक्रियता के साथ-साथ निद्रा में पहले से कमी आ जाती है। यदि उनकी देखभाल में कोई कमी होगी या परिवार में कोई समस्या होगी तो वे तनावग्रस्त व चिड़चिड़े हो जायेंगे और उनकी नींद में और भी कमी हो जायेगी। अत: परिवार में इस तरह की स्थिति पैदा न हो कि वृद्ध परेशान हो। वृद्धों का कमरा शोरगुल से दूर होना चाहिये ताकि वे चैन की नींद सो सकें।

(iii) आवास (Residence): हर व्यक्ति चाहता है कि उसका स्वयं का एक आवास हो। अपनी आकांक्षाओं, आवश्यकताओं और उपलब्ध साधनों के आधार पर आवास निर्माण हेतु वह वयस्कावस्था से ही प्रयासरत रहता है। स्वयं द्वारा निर्मित मकान में आवास करने पर उसे आत्मिक सन्तुष्टि तो मिलती ही है, साथ ही साथ उसके साथ कई सुखद स्मृतियाँ भी जुड़ी होती है और वे अपने आप को सुरक्षित भी महसूस करते है। कई बार आर्थिक परिस्थितियों एवं पारिवारिक कारणों से उन्हें अपना यह घर छोड़ना पड़ता है तो वृद्धों को जगह परिवर्तन से समायोजन करना होता है। यह समायोजन उनके लिये सबसे कठिन होता है। वृद्धों का कमरा बहुत ठण्डा नहीं होना चाहिये। उसमें बड़ी खिड़कियाँ हों ताकि पर्याप्त रोशनी रहें, घर के शान्त स्थान पर हो तथा कमरे में या आस-पास मनोरंजन के साधन उपलब्ध हो।

(iv) चिकित्सा सुविधाएँ (Medical facility): व ृद्धोंक ेर ोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। और वृद्ध जल्दी ही बीमार पड़ जाते है। उन्हें श्वसन सम्बन्धी तकलीफें, हृदय सम्बन्धी रोग, मधुमेह, ऑस्टियोपोरोसिस, गठिया आदि घेर लेते है। अत: उन्हें नियमित चिकित्सा सुविधाओं की आवश्यकता होती है। ये सुविधाएं यदि घर के आस-पास होती है तो वे स्वयं ही समय-समय पर अपनी स्वास्थ्य जाँच करवा लेते है, अन्यथा परिवार के किसी सदस्य को यह जिम्मेदारी लेनी होती है। कई बार आर्थिक संकट के कारण वृद्ध अपना इलाज नहीं करवा पाते है। हर व्यक्ति को वृद्धावस्था के लिये कुछ धन संचय करके जरूर रखना चाहिये।

(v) सक्रियता (Activenees): वृद्धावस्था के आते ही परिवार के सदस्य एवं वे स्वयं यह सोचने लगते है कि अब वह किसी काम को करने योग्य नहीं रहे। यदि वृद्ध परिवार के साथ रहते है और उन्हें परिवार से सम्मान व स्नेह मिलता रहता है तो वह अपने आपको उपेक्षित महसूस नहीं करेंगे। वे परिवार के छोटे-छोटे कार्यों में हिस्सा लेने लगेंगे। वृद्ध अपने खाली समय में छोटा-मोटा काम धन्धा करके धन अर्जित कर सकते है। इस धन द्वारा वह कुछ हद तक अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते है। सेवानिवृत्ति के बाद वे समाज सेवा कर के सक्रिय जीवन बिता सकते है। इससे वे अपने को अकेला महसूस नहीं करेंगे तथा समाज भी उनके अनुभवों से लाभान्वित होगा। अत: यह आवश्यक है कि परिवार के सदस्य उन्हें इस अवस्था में सक्रिय रहने के लिये प्रेरित करें।

(vi) आर्थिक सहायता (Economic help): हर व्यक्ति भविष्य के लिये कुछ न कुछ पूंजी बचाकर रखता है ताकि कठिन समय में उसे आर्थिक मदद के लिये जूझना न पड़े। बुढ़ापा भी एक ऐसा समय है जब व्यक्ति शारीरिक रूप से इतना सक्षम नहीं होता है कि वह अपनी सभी आवश्यकताओं के लिये धन अर्जित कर सके। हमारी प्राचीन संस्कृति में बूढ़े मां-बाप की पूरी जिम्मेदारी बेटे-बहू बखूबी निभाते थे, लेकिन समय व परिस्थितियों के साथ इसमें भी बदलावअ ानेल गाह ैव ृद्धोंक ोप रिवारक े स दस्यए कब ोझ समझने लगे है एवं उनकी देखभाल के लिये सदस्यों के पास समय नहीं होता है। सीमित आय और अपने स्वयं के खर्चों के रहते वृद्धों की चिकित्सा एवं परवरिश के लिये धन की कमी भी रहती है। सन्तान का नौकरी व व्यवसाय की वजह से पैतृक स्थान से स्थानान्तरण होने की वजह से कई बार वृद्ध के लिये आवास की समस्या भी हो जाती है। ऐसे में कई वृद्ध व्यक्ति अपनी सन्तानों के साथ रहने की अपेक्षा अपने ही मकान में अकेले रहना पसन्द करते है। इस तरह की व्यवस्था पाश्चात्य देशों में आम है, किन्तु आजकल भारत जैसे पूर्वी देशों में भी व्यस्त जिंदगी और भावनात्मक तनाव की स्थिति के चलते संयुक्त परिवारों के टूटने से वृद्धाश्रम व इसी तरह की अन्य संस्थाओं की स्थापना होने लगी है और आज भारत में इस तरह की कई संस्थाएं है। किन्तु यदि वृद्ध व्यक्तियों को सुखी रहना है तो उनके लिए यही काफी नहीं है कि समाज उनकी शारीरिक और आर्थिक आवश्यकताएँ पूरी करें। वृद्धावस्था में सुखी होने का अर्थ स्वस्थ होना, आर्थिक रूप से सुरक्षित होना, समाज द्वारा अपनाया जाना, अकेला न होना, उपयोगी होने की भावनाओं का होना, धर्मनिष्ठा तथा संतुष्ट होना है।

वृद्धावस्था की समस्याओं और उनकी विशेष देखभाल की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सरकार ने सेवानिवृत्त वृद्धों कोअ ार्थिकस हायताद ेनेक े ि लयेप ेंशन,क ु छम ा्राम ें म ुफ्त दवाईयाँ, रेल या बस में कम किराये पर यात्रा जैसी कई सुविधाएँ दे रखी है। इनके अलावा बसों में उनके लिये विशेष सीट आरक्षित

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

होती है ताकि वे आराम से बैठकर यात्रा कर सकें। परिवार के सभी सदस्यों को उनका विशेष ध्यान रखना चाहिये। वृद्धों को भी परिवार के युवाओं और बच्चों के साथ सामंजस्य रखना चाहिये ताकि उनकी अपनी प्रतिष्ठा बनी रहें।

महत्वपूर्ण बिन्दुः

1. युवावस्था प्रायः 20-21 वर्ष यानि कि किशोरावस्था के समाप्त होते-होते प्रारम्भ होकर 40 वर्ष तक होती है। तत्पश्चात् प्रौढ़ावस्था प्रारम्भ होती है जो वृद्धावस्था के प्रारम्भ होने के पूर्व तक बनी रहती है।
2. युवा एवं प्रौढ़ को सामुहिक रूप से वयस्क तथा किशोरावस्था की समाप्ति से वृद्धावस्था के प्रारम्भ होने से पूर्व के काल को वयस्कावस्था कहते हैं।
3. युवावस्था जीवन का वह पड़ाव है जब किशोर अपनी पढ़ाई पूरी कर चुके होते हैं तथा उनका कैरियर प्रायः निश्चित सा हो चुका होता है। इस दौरान शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक आदि विविध प्रकार के परिवर्तन बहुत धीमे-धीमे होते हैं।
4. प्रौढ़ावस्था आर्थिक व सामाजिक स्थिरता की अवस्था होती है। इस समय प्रौढ़ आर्थिक व सामाजिक उन्नति के चरमोत्कर्ष पर होते हैं तथा वे संवेगात्मक रूप से स्थिर, शांत, सौम्य एवं अनुभवी प्रौढ़ होते हैं तथा समाज के विविध लोगों को दिशा-निर्देश देते हैं।
5. वृद्धावस्था जीवन की अन्तिम अवस्था है। वृद्धावस्था में शरीर निर्माण कार्य नहीं के बराबर होते है तथा शरीर जीर्ण-शीर्ण होने लगता है। अतः इसे ह्रास की अवस्था भी कहते है।
6. वृद्धावस्था की वह अवधि जिसमें ह्रास धीमा और क्रमिक होता है और इनकी क्षतिपूर्ति की जा सकती है, जरत्व कहलाती है।
7. जरा, जरत्व से भिन्न है। इसमें शरीर लगभग पूरी तरह टूट जाता है और मानसिक अस्तव्यस्तता आ जाती है।
8. वृद्धावस्था में नव कोशिकाओं की निर्माण प्रक्रिया की दर शरीर में होने वाली टूट-फूट की दर से बहुत कम होती है। अतः वृद्ध के शारीरिक भार में कमी आने लगती है।
9. वृद्धावस्था में कमजोरी, दाँत गिरना, संक्रमण, सिर के बालों का रंग बदलना व गिरना, नाखून सख्त, भंगुर व मोटे होना तथा कमर, कंधों का झुकना, हाथ-पैरों में दर्द, अनिद्रा, सुनने, सूंघने व स्वाद लेने की क्षमता में तथा स्मृति में कमी जैसे लक्षण दिखाई देते है।
10. वृद्धावस्था में रोग प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास होता है, जिससे कई प्रकार के संक्रामक रोग उन्हें घेर लेते है।
11. वृद्धावस्था में आयु वृद्धि के साथ-साथ सामाजिक क्रियाकलापों में सक्रियता कम हो जाती है।
12. वृद्ध व्यक्ति के लिए पारिवारिक समूह ही उनके सामाजिक जीवन का केन्द्र होता है।
13. वृद्धावस्था में होने वाली संवेगात्मक अस्थिरता का एक मुख्य कारण है कार्य निवृत्ति या सेवानिवृत्ति। संवेगात्मक स्थिरता के लिये वृद्धों को चाहिये कि वे किसी न किसी प्रकार के रूचिपूर्ण कार्य में स्वयं को लगाये रखें। अपने बच्चों की भावनाओं व आवश्यकताओं को समझकर उनके साथ सामंजस्य बिठाकर चलें तथा स्वयं को विविध प्रकार के सामाजिक क्रियाकलापों में सक्रिय रखें।
14. वृद्धावस्था में होने वाले परिवर्तनों एवं समस्याओं को देखते हुए उनकी विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है।
15. वृद्धों को शारीरिक परिवर्तनों, स्वास्थ्य एवं रूचि के अनुसार संतुलित आहार दिया जाना चाहिए।
16. परिवारजनों के साथ सामंजस्य न हो पाने के कारण कई वृद्ध व्यक्ति अपने मकान में अकेले रहना पसंद करते है, किन्तु इससे उनकी देखभाल संबंधित अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है।

अभ्यासार्थ प्रश्नः

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें:-

(1) युवावस्था प्रायः होती है :

(अ) 18-19 से 40 वर्ष तक की।
(स) 19-20 से 40 वर्ष तक की।
(ब) 18-20 से 40 वर्ष तक की।
(द) 20-21 से 40 वर्ष तक की।

(2) आर्थिक व सामाजिक स्थिरता की अवस्था होती है :

(अ) युवावस्था (ब) प्रौढ़ावस्था
(स) बाल्यावस्था (द) वृद्धावस्था

(3) वृद्धों का एकाकीपन बढ़ता जाता है:

(अ) जीवन साथी की मृत्यु से
(स) बच्चों के विवाह कर अलग घर बसाने से
(ब) बच्चों के नौकरी के लिये बाहर जाने से
(द) उपरोक्त सभी

(4) वृद्धों का आहार निम्नानुसार दिया जाना चाहिए:

(अ) शारीरिक परिवर्तनों (स) स्वास्थ्य
(ब) रूचि (द) उपरोक्त सभी

(5) वृद्धावस्था में हड्डियों के जोड़ों में उपस्थित स्नेहक द्रव की मात्रा हो जाती है:

(अ) कम (स) यथावत्
(ब) अधिक (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये:

(1) .... वह समय होता है जब कि किशोर अपनी सम्पूर्ण

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

शारीरिक वृद्धि व विकास को प्राप्त कर मानसिक रूप से स्थिर एक परिपक्व युवा बन जाता है।

(2) युवा एवं प्रौढ़ को सामूहिक रूप से .... कहते हैं।

(3) शैशवावस्था मानव जीवन का .... है तो वृद्धावस्था उसकी .... है।

(4) वृद्ध व्यक्ति के लिये .... ही उनके सामाजिक जीवन का केन्द्र होता है।

(5) वृद्धावस्था का प्रारम्भ प्रायः .... की उम्र से माना जाता है।

3. टिप्पणी लिखो–

1. युवावस्था

2. प्रौढावस्था

4. सेवानिवृत्त होने के बाद व्यक्ति को प्राय: किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है?

5. वृद्धावस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तन व उससे सम्बन्धित समस्याओं के बारे में विस्तार से लिखिये।

6. एक वृद्ध महिला की देखभाल आप कैसे करेंगे? समझाइये।

उत्तरमाला:

1. (1) द (2) ब (3) द (4) द (5) अ

2. (1) युवावस्था (2) वयस्क
   (3) प्रात:काल, जीवन संध्या
   (4) पारिवारिक समूह (5) 60 वर्ष

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

7. जनसंख्या नियंत्रण
Population Control

भारत आबादी के इतने वर्षों बाद भी अनेक समस्याओं से ग्रसित है, उनमें से सबसे गंभीर भंयकर समस्या है 'बढ़ती जनसंख्या'। यही समस्या अन्य अनेक समस्याओं के मूल में है। गरीबी, बेरोजगारी, घटते संसाधन, भ्रष्टाचार, निरक्षरता और सामाजिक समस्यायें आदि अनेक समस्याओं की जड़ यही है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की आबादी 1 अरब 21 करोड़ है इसमें 62 करोड़ पुरुष और 58करोड़ महिलाएं है यदि विश्व की जनसंख्या का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो चीन के बाद भारत का जनसंख्या में दूसरा स्थान है। परन्तु वह दिन भी दूर नहीं जब भारत चीन से भी आगे निकल जाएगा। विभिन्न अध्ययनों से यह पता चला है कि सन् 2025 तक भारत चीन को भी पछाड़ देगा और विश्व का सबसे ज्यादा आबादी वाला देश बन जाएगा।

हमारे देश में प्रत्येक 1.2 क्षण में एक शिशु का जन्म, प्रत्येक मिनट में 50 शिशु, प्रति घण्टा 3 हजार शिशु, प्रतिदिन 72 हजार बच्चे प्रत्येक वर्ष 1 करोड़ 70 लाख की वृद्धि यानि प्रतिवर्ष दो दिल्ली तैयार हो जातीहै ाज नगणनाके अ नुसार1 901मेंभ ारतक ीज नसंख्याके वल

तालिका 7.1 : जनगणना

जनगणना वर्ष	कुल जनसंख्या (मिलियन में)	1901 की तुलना में वृद्धि (%)
1901	238.4	-
1911	252.1	5.75
1921	251.3	5.42
1931	279.0	17.02
1941	318.7	33.67
1951	361.1	54.47
1961	439.2	84.25
1971	548.2	129.44
1981	683.3	186.64
1991	846.3	255.0
2001	1028.7	330.8
2011	1210.2	408.0

238.4 मिलियन थी जो 2011 में बढ़कर 1210.2 मिलियन हो गयी है। यदि जनसंख्या वृद्धि की तुलना 1901 की जनसंख्या से की जाए तो पता चलता है कि 1911 में जनसंख्या वृद्धि 5.75% थी जो वर्तमान में 48% हो गई है।

जनसंख्या, वृद्धि दर, जन्म-मृत्यु दर और लिंगानुपात (भारत 1901-2011): स्त्रोत - जनगणना 2011, भारत सरकार।

चिकित्सीय सुविधाएं, संक्रामक रोगों पर नियन्त्रण, मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्रों की उपलब्धता से बाल एवं मातृ मृत्यु दर कम होती जा रही है तथा जन्म-दर बढ़ती जा रही है फलत: जनसंख्या निरन्तर तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। मृत्यु दर में काफी हद तक गिरावट आने से जो स्थिति उत्पन्न हुई है वह जनसंख्या विस्फोट है।

जनसंख्या वृद्धि के कारण:–

1. जन्मदर का मृत्यु दर से अधिक होना
2. जल्दी शादी और सार्वभौमिक विवाह प्रणाली
3. गरीबी और निरक्षरता
4. पुराने सांस्कृतिक आदर्श
5. अवैध प्रवासी

जनसंख्या विस्फोट से उत्पन्न समस्याएँ–

विश्व की करीब 16प्रतिशत आबादी भारत में निवास करती है जबकि विश्व का केवल 2.4 प्रतिशत भूमि क्षेत्र ही भारत के पास है। आबादी की तुलना में स्थान कम है, जो संसाधनों की उपलब्धता पर दबाव डालता है और फ्लस्वरूप कई समस्याएँ पैदा हो गई है।

1. **भूखमरी:–** भोजन हमारी मूलभूत आवश्यकता है। भारत एक कृषि प्रधान देश है लेकिन बढ़ती जनसंख्या के कारण कृषि योग्य भूमि निरन्तर आवासीय भूमि में बदलती जा रही है। फ्लस्वरूप एक ओर तो खाद्यान्न के पैदावार में कमी होना स्वाभाविक है, तो दूसरी ओर जनसंख्या की भोजन सम्बन्धी आवश्यकताएँ निरन्तर बढ़ती जा रही है। कहने का तात्पर्य है कि भोज्य पदार्थों का उत्पादन जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में नहीं हो पायेगा। आज भी हमारे देश की जनसंख्या के 24

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 7.2 : जनसंख्या, वृद्धि दर, जन्म–मृत्यु दर और लिंगानुपात

वर्ष	जनसंख्या (मिलियन में)	जनसंख्या में परिवर्तन	वृद्धि दर	अशोधित जन्म दर	अशोधित मृत्यु दर	लिंग अनुपात (प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाएं)
1901	238.4		–	45.8	44.4	972
1911	252.1	13.7	0.56	49.2	42.6	964
1921	251.3	-0.8	-0.03	48.1	47.2	955
1931	279.0	27.7	1.04	46.4	36.3	950
1941	318.7	39.7	1.33	45.2	31.2	945
1951	361.1	42.4	1.25	39.9	27.4	946
1961	439.2	78.1	1.95	41.7	22.8	941
1971	548.2	109.1	2.2	41.2	19	930
1981	683.3	135.1	2.22	37.2	15	934
1991	846.3	163.1	2.14	32.5	11.4	927
2001	1028.7	182.3	1.97	24.8	8.9	933
2011	1210.2	181.5	1.64	–	–	940

प्रतिशत भाग को दो समय का भोजन भी मुश्किल से मिल पाता है। भोजन की कमी का प्रभाव बच्चों के शारीरिक व मानसिक विकास तथा वयस्कों की कार्यक्षमता पर पड़ता है जो हमारे देश के भावी विकास को अवरूद्ध करते है। अत: यह आवश्यक है कि जनसंख्या वृद्धि दर पर नियन्त्रण किया जाये।

2. **स्वच्छता का अभाव:**–अधिक जनसंख्या गन्दगी को जन्म देती है। इस समस्या से मुक्ति पाने के लिये अधिक धन, श्रम व समय की व्यवस्था करनी होती है। यदि यह व्यवस्थाएँ समय रहते नियमित रूप से न की जाए तो विभिन्न बीमारियाँ जैसे उल्टी दस्त, बुखार, हैजा, मलेरिया आदि फैल जाती है। कई बार ये बीमारियाँ महामारी का रूप भी ले लेती है और कई लोगों की मृत्यु का कारण बन जाती है।

3. **स्वच्छ पीने योग्य पानी की कमी:**–बड़े शहरों से लेकर छोटे गांवों तक में जल की कमी देखी जा सकती है। इस कमी का एक कारण

चित्र 7.1 : भुखमरी

चित्र 7.2 : पानी की कमी

जनसंख्या वृद्धि है क्योकि जितने अधिक लोग होंगे, पानी उतना ही अधिक खर्च होगा। आपने पढ़ा व सुना होगा कि बढ़ती जनसंख्या की आवास ईधन व उद्योगों की आवश्यकता पूर्ति हेतु वनों की कटाई दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। परिणाम स्वरूप बारिश अनियमित रूप से हो रही है और साल दर साल भू–जलस्तर गिरता जा रहा है। देश के कई राज्यों में बाढ़ की स्थिति है तो दूसरे राज्यों में अकाल की स्थिति पिछले कई सालों से निरन्तर बनी हुई है। इसके अतिरिक्त जल की कमी बीमारियों को भी आमन्त्रित करती है।

4. **आवास की कमी:**–जल की कमी के साथ–साथ प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता में कमी होती जा रही है। भूमि की कमी के कारण अब पहाड़ों, जंगलों और झीलों पर भी अतिक्रमण दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। जगह–जगह झुग्गी झोपड़ियों कुकरमुत्ते की तरह बढ़ती जा रही है। जहाँ पर रहने, पानी, सफाई आदि की व्यवस्था नहीं के बराबर होती है जो कि बीमारियों को जड़ है। वर्षों पूर्व जिस एक मकान में एक परिवार निवास करता था आज उसी मकान में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चित्र 7.3 : आवागमन की समस्याएँ

कई परिवार एक साथ रहते है, कारण-जनसंख्या वृद्धि।

5. **आवागमन की समस्याएँ:**—आपने बसों और रेलगाड़ियों में भीड़ तो देखी ही होगी यहां तक कि कई बार लोगों को उनकी छतों पर बैठकर यात्रा करते भी देखा होगा। ये दृश्य जनसंख्या विस्फोट की ही देन है। हालाँकि हमारे देश में प्रतिवर्ष आगमन के साधनों में वृद्धि की जाती है, फिर भी लगातार जनसंख्या वृद्धि के कारण स्थिति लगभग ज्यों की त्यों ही बनी रहती है।

6. **अपर्याप्त वस्त्र:**—देश में वस्त्रों का निर्माण न केवल देशवासियों की आवश्यकता पूर्ति हेतु बल्कि वस्त्रों तथा पोशाकों का निर्यात कर विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिये भी किया जाता है। वस्त्रों के निर्माण में प्रतिवर्ष वृद्धि देखी गई है फिर भी गरीबी की रेखा के नीचे बसर कर रहे परिवारों को पर्याप्त वस्त्र उपलब्ध नहीं होते है। और कई बार बच्चों व वृद्धों की शीत ऋतु में इस कारण से मृत्यु भी हो जाती है।

7. **सीमित चिकित्सा एवं शिक्षा सुविधाएँ:**—आपने पढ़ा कि अधिक जनसंख्या गन्दगी को और गन्दगी बीमारियों को आमन्त्रित करती है इससे चिकित्सा सुविधाओं की आवश्यकताएँ बढ़ जाती है। हालाँकि केन्द्र व राज्य सरकारें पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत चिकित्सा मद पर बजट का बड़ा हिस्सा खर्च करती है फिर भी आपने सरकारी अस्पतालों में मरीजों को लम्बी कतार में खड़े हुए देखा होगा और अस्पताल में भरती मरीजों को पलंग की जगह जमीन पर लेटे हुए भी देखा होगा। यह भी जनसंख्या विस्फोट का ही नतीजा है। वर्ष दर वर्ष विद्यालयों एवं महाविद्यालयों की संख्या में बढ़ोत्तरी होने के बावजूद इनमें दाखिलों की समस्या का अनुभव आपने भी किया होगा।

चित्र 7.4 : सीमित चिकित्सा सुविधाएँ

कहने का तात्पर्य यह है कि हम साधनों में कितनी ही वृद्धि क्यों न कर लें, जब तक जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण नहीं होगा उपरोक्त सभी समस्याओं का समाधान नहीं हो पायेगा। जनसंख्या विस्फोट के फलस्वरूप गरीबी, पर्यावरण प्रदूषण, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, शोषण, अपराध जैसी कई समस्याएँ भी हमारे सामने मुंह फाड़े खड़ी है। सरकार द्वारा चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाएँ जैसे परिवार नियोजन, रोजगार योजनाएँ, कार्य के बदले भोजन योजना, ग्रामीण विकास योजनाएँ, सुखी परिवार एवं अच्छे स्वास्थ्य के लिये बच्चों व माताओं के लिये कार्यक्रम आदि के बावजूद भी समस्याओं में कोई विशेष कमी नहीं आई है। इसका मुख्य कारण यह है कि हम अपनी जनसंख्या वृद्धि पर सार्थक अंकुश नहीं लगा पाये है।

जनसंख्या शिक्षा

हमारे देश में जनसंख्या वृद्धि के कई कारण है, जैसे कम उम्र में शादी होना, अशिक्षा, गरीबी, निम्न जीवन स्तर, परिवार नियोजन की जानकारी का अभाव, पुत्र की चाहत, जितने हाथ उतना काम की विचारधारा, धार्मिक अन्धविश्वास आदि। भारत की तेज रफ्तार से बढ़ती हुई आबादी हमारे चहुँमुखी विकास के लिए बाधक सिद्ध हो रही है। इस बढ़ती आबादी की दर को घटाने के लिए यह जरूरी है कि प्रत्येक नागरिक में जनचेतना की भावना को जागरूक कर परिवार को सीमित एवं स्वस्थ रखने के तरीकों की तरफ प्रेरित किया जाये।

जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रण में लाने का सबसे कामयाब तरीका है कि हम अपने परिवार को सीमित रखें। इसके लिये सरकार ने तीसरी

चित्र 7.5 : सुखी परिवार

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पंचवर्षीय योजना के तहत परिवार नियोजन कार्यक्रम जिसे अब ''**परिवार कल्याण कार्यक्रम**'' कहते है, चला रखा है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अनुरूप जन्मदर को घटाकर जनसंख्या को स्थिर रखना है। भारत ही पहला देश है जिसने परिवार नियोजन को योजनाबद्ध तरीके से संजोकर क्रियान्वित किया है।

परिवार नियोजन

''परिवार नियोजन का अर्थ है, दम्पत्तियों द्वारा इच्छानुसार बच्चों को जन्म देकर परिवार को सीमित रखने के लिए योजना तैयार करना जिससे कि परिवार शारीरिक, मानसिक, आर्थिक एवं संवेगात्मक रूप से सुखी, सन्तुष्ट एवं प्रसन्न रह सकें।

परिवार नियोजन का उद्देश्य मात्र जन्म दर को ही नियन्त्रित नहीं करना है बल्कि परिवार के सभी सदस्यों के कल्याण एवं स्वास्थ्य की देखभाल भी करना है।

चित्र 7.6 : परिवार नियोजन कार्ड

भारत में परिवार नियोजन एसोसियेशन की स्थापना सन् 1949 में हुई थी पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत परिवार नियोजन सेवाओं और शिक्षा कार्यक्रमों का विकास और प्रसार किया जाता है। प्रतिवर्ष **11 जुलाई को जनसंख्या दिवस** मनाया जाता है। वर्तमान समय में 'परिवार नियोजन' का नाम बदलकर 'परिवार कल्याण' रखा गया है।

लड़के की चाहत तथा बालिका की उपेक्षा:

सरकार द्वारा परिवार कल्याण कार्यक्रम वृहद् स्तर पर चलाये जाने के बावजूद भी जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण नहीं हो पाया है। इसका एक प्रमुख कारण है हमारे पुरुष प्रधान समाज में वंश वृद्धि के लिये लड़के की चाहत। पुत्र को वंश घटक माना जाता है यानि कि वह धारणा है कि पुत्र के बिना वंश समाप्त हो जायेगा। यही वजह है कि पुत्र की चाहत हर समुदाय व

चित्र 7.7 : बेटी बचाओ अभियान

आर्थिक स्तर के परिवारों में अत्यधिक होती है। इस चाह से एक ओर तो परिवारक ाअ ाकारब ढ़ताज ाताह ,त ादे ूसरीअ ारइ सप ुत्रच ाहतस बालिका भ्रूण हत्या को प्रोत्साहन मिला है। फलस्वरूप समाज में लड़कियों का अनुपात लड़कों की अपेक्षा गिरता जा रहा है, यह भविष्य के लिये एक खतरे का विषय है। मनुष्य जाति की रक्षा हेतु यह आवश्यक है कि बालक की तरह बालिका को भी समाज में जीने का अधिकार मिले तथा जन्म के पश्चात् उसे बालक के समान भोजन, शिक्षा, वस्त्र, स्वास्थ्य आदि की पर्याप्त सुविधाएँ मिलें।

आज स्थिति बदल रही है। शिक्षा तथा रोजगार के द्वारा बालिकाएं समाज में सम्मानित स्थान पा रही है। किन्तु फिर भी अभी स्थिति को और सुधारने की जरूरत है जिसकी जिम्मेदारी युवा तथा किशोर वर्ग की है। जनसंख्या शिक्षा द्वारा बढ़ती जनसंख्या से उत्पन्न समस्याओं को अवगत कराते हुए परिवार को नियोजित व सीमित रखने के लिये परिवार कल्याण कार्यक्रम के बारे में किशोरों एवं किशोरियों को जानकारी दी जाये।

जनसंख्या पर नियंत्रण के लिए परिवार नियोजन के कार्यक्रमों का प्रचार-प्रसार करना होगा, उन्हें लोकप्रिय बनाना होगा, जनसाधारण में लड़कों का मोह हटाना होगा और आम जनता को शिक्षित बनाना होगा। सरकार को कम संतान उत्पन्न करने वाले दम्पत्तियों को सम्मानित करना चाहिए या कोई पुरस्कार देना चाहिए जिससे लोग प्रोत्साहित होकर संतान उत्पत्ति में कमी लाएँ।

महत्वपूर्ण बिन्दु:

1. जनसंख्या वृद्धि हमारे देश की सबसें गम्भीर समस्या है। विश्व की जनसंख्या के आधार पर चीन के बाद भारत दूसरे स्थान पर है।
2. जनगणना के अनुसार 1901 में भारत की जनसंख्या केवल 238.4 मिलियन थी जो 2011 में बढ़कर 1210.2 मिलियन हो गयी है।
3. जनसंख्या विस्फोट ने हमारे सामने कई समस्याएं जैसे भुखमरी, स्वच्छ पीने योग्य पानी की कमी, आवास की कमी, स्वच्छता का अभाव, आवगमन की समस्याएँ, सीमित चिकित्सा एवं शिक्षा सुविधाएँ, पर्यावरण प्रदूषण, बेरोजगारी, शोषण आदि उत्पन्न कर दी है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4. भारत की तेज रफ्तार से बढ़ती हुई आबादी हमारे चहुँमुखी विकास के लिए बाधक सिद्ध हो रही है। इस बढ़ती जनसंख्या को नियंत्रण में लाने के लिये सरकार ने ''परिवार कल्याण कार्यक्रम'' चला रखा है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के अनुरूप जन्मदर को घटाकर जनसंख्या को स्थिर रखना है।
5. आधुनिक युग में जहाँ लड़कियाँ हर क्षेत्र में लड़कों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही है, वही पुत्र प्राप्ति की इच्छा जनसंख्या वृद्धि का एक बड़ा कारण है।
6. जनसंख्या शिक्षा द्वारा बढ़ती जनसंख्या दर को घटाने हेतु परिवार कल्याण कार्यक्रम के द्वारा लोगों को जनसंख्या शिक्षा दी जा रही है।

अभ्यासार्थ प्रश्नः

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें:

(1) सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है:–

(अ) भारत (ब) चीन

(स) पाकिस्तान (द) जापान

(2) 1901 की तुलना में 2011 में भारत की जनसंख्या में वृद्धि हो गई:–

(अ) 186.64 प्रतिशत (ब) 330.8प्रतिशत

(स) 84.27 प्रतिशत (द) 408.0 प्रतिशत

(3) जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रण में लाने का सबसे कामयाब तरीका है:–

(अ) कल्याण कार्यक्रम (ब) रोजगार योजना

(स) परिवार नियोजन (द) ग्रामीण विकास योजनाएँ

(4) जनसंख्या वृद्धि का एक बड़ा कारण है:–

(अ) औद्योगिकीकरण (ब) पुत्र की चाह

(स) शहरीकरण (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(5) विश्व का करीब .... प्रतिशत आबादी भारत में निवास करती है:–

(अ) 16 (ब) 17

(स) 18 (द) 15

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये:–

(1) बढ़ती जनसंख्या के कारण कृषि योग्य भूमि निरन्तर .... भूमि में बदलती जा रही है।

(2) .... के फलस्वरूप गरीबी, बेरोजगारी, पर्यावरण प्रदूषण, शोषण, अपराध जैसी कई समस्याएँ हमारे सामने मुँह फाड़े खड़ी है।

(3) .... द्वारा दम्पति स्वयं की इच्छानुसार सुनियोजित तरीके से एक या दो बच्चों को जन्म देकर अपने परिवार को छोटा एवं सीमित रख सकते है।

(4) .... तथा .... द्वारा बालिकाएँ आज समाज में सम्मानित स्थान पा रही है।

3. बढ़ती आबादी का भोजन, आवासीय भूमि, पीने का पानी एवं स्वच्छता पर क्या प्रभाव पड़ रहा है?

4. परिवार नियोजन कार्यक्रम क्या है और कब शुरू हुआ था?

5. एक किशोर/किशोरी बढ़ती जनसंख्या दर को घटाने मे क्या योगदान दे सकते है?

6. जनसंख्या वृद्धि एवं उससे उत्पन्न समस्याओं पर, कक्षा में अध्यापक की सहायता से चर्चा करें।

उत्तरमालाः

1. (1) ब (2) द (3) स
   (4) ब (5) अ

2. (1) आवासीय (2) जनसंख्या विस्फोट
   (3) परिवार नियोजन (4) शिक्षा, रोजगार

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

8. विशिष्ट बच्चे
Children with Special needs

यद्यपि सभी बालकों का गर्भकालीन विकास लगभग समान रूप से होता है। किन्तु फिर भी जन्म के बाद यह देखा गया है कि सभी बालकों का शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और सामाजिक विकास समान नहीं होता है। इस अन्तर का कारण अनुवांशिकता और वातावरण की भिन्नता है। अत: विकास क्रम में विभिन्नतायें पायी जाती है। ये विभिन्नतायें, शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, संवेगात्मक और शैक्षिक किसी भी क्षेत्र में हो सकती है। कोई बालक अधिक बुद्धिमान होता है तो कोई मूर्ख किसी का व्यक्तित्व प्रतिभाशाली होता है। तो किसी का निकृष्ट। कोई बहुत अधिक लोकप्रिय होता है। तो कोई एकांतप्रिय इस प्रकार कुछ बालक अपनी आयु के बच्चों के समान होते है। किन्तु कुछ आगे और पीछे। अत: बालक अपनी आयु समूह के मानदण्डों के अनुसार शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक और संवेगात्मक तथा अन्य किसी क्षमता में कम या अधिक होता है या समान्य व्यक्ति से भिन्न प्रकार की क्षमतायें रखता है। उसे विशिष्ट या असाधारण कहा जाता है। **क्रो एण्ड क्रो के अनुसार**–विशिष्ट या असाधारण शब्द ऐसे गुणों या ऐसी गुणों वाले व्यक्ति के अनुसार किया जाता है जो कि सामान्य व्यक्ति द्वारा प्रदर्शित किया जाता है इसके कारण ही उसकी व्यावहारिक प्रतिक्रियाऐं प्रभावित होती है।

''विशिष्टब ालकव हब ालकह ेतेह ैज ेाअ न्यब ालकोंस` शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भाषायीक और सामाजिक तौर पर इस सीमा तक भिन्न होते है कि उन्हें सामान्य जीवन जीने के लिए तैयार करने हेतु प्रयासों की आवश्यकता होती है।''

I. शारीरिक अक्षमता से युक्त बालक:–

वे बालक जिनमें किसी प्रकार का शारीरिक दोष या विकृति होती है। ये दोष जन्मजात भी हो सकते है। जन्म के समय प्रसव की असावधानी से हो जाते है या दुर्घटना, बीमारी, चोट के कारण हो सकते है। वे बच्चे शारीरिक रूप से **अक्षम** कहलाते हैं। क्योंकि इनकी शारीरिक कमी उनकी सामान्य क्रियाओं को प्रभावित करती है। जिससे इनके समायोजना में कठिनाई होती है। वे बालक मानसिक रूप से स्वस्थ समायोजन में असफल होने पर ये बालक हीनभावना का शिकार हो जाते है। **क्रो और क्रो के अनुसार**–वे बालक शारीरिक रूप से अक्षम कहे जाते है। जिनके शारीरिक दोष उन्हें शारीरिक क्रियाओं में भाग लेने से रोकते हैं अथवा सीमित रखते हैं।

शारीरिक रूप से अक्षम बालकों के प्रकार:–

1. **अंधे और कमजोर नजर वाले बालक**–अंधे बालक वह होते हैं जिन बालकों को बिल्कुल भी दिखाई नहीं देता है। अन्धे बालकों को विद्यालय में ब्रेल पद्धति से शिक्षा दी जाती है। इसमें शब्द उभरे हुए होते है इन उभरे शब्दों को बालक छूकर महसूस कर सकता है ऐसे बालकों को हस्तकला या गायन की शिक्षा दी जानी चाहिए। इन बालकों को अस्पताल, पोस्ट ऑफिस, सड़क पर चलने व बस में सफर करने जैसे अनुभवों का भी ज्ञान करना चाहिए। कमजोर नजर वाले बालक वे होते हैं जिन्हें दिखायी तो देता है किन्तु बहुत कम मात्रा में। इन बालकों को अंधे बालकों की तुलना में शिक्षा देना आसान होता है। इन बच्चों के लिए श्यामपट्ट पास में रखें। कक्षा में उचित प्रकाश व्यवस्था हो, बड़े अक्षरों वाली पुस्तकों का प्रयोग करें तथा समय-समय पर नेत्र परीक्षण एवं इलाज करवायें।

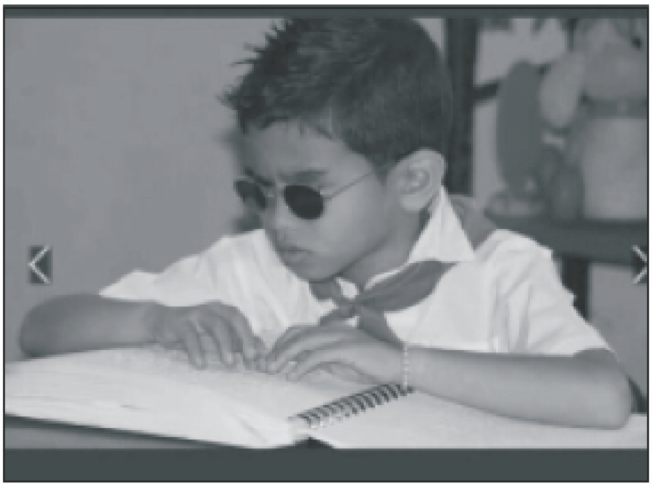

चित्र 8.1 : ब्रेल पद्धति

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

2. मूक एवं बधिर तथा कम सुनने वाले– बालक वे बालक हैं जो बोलने एवं सुनने में असमर्थ होते हैं। जो बालक जन्म से ही सुन पाने में असमर्थ होते हैं वे बोलना नहीं सीख पाते क्योंकि इनकी बोल–चाल की इन्द्रियों का विकास नहीं हो पाता। जो बालक बोलना सीखने के बाद श्रवण शक्ति खोते है वे बोल तो सकते है किन्तु सुनने में असमर्थ होते है। कई बार बालकों की सुनने की शक्ति तो ठीक होती है किन्तु वाक् कोषों के दोष या अन्य किसी कारणवश वे ठीक प्रकार से बोल नहीं पाते। मूक बधिर बालकों को मूक–बधिर विद्यालय में भेजना चाहिए जहां उन्हें ओष्ठ पठन विधि द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है। इन्हें समझाते समय इशारों का प्रयोग करना चाहिए ताकि वे जल्दी समझ सकें। आंशिक बधिरता में श्रव्य साधनों का उपयोग लाभकारी होता हैं। इन बालकों को दस्तकारी या अन्य घरेलू उद्योग–धन्धों का प्रशिक्षण देना चाहिए।

चित्र 8.2 : सांकेतिक भाषा

3. अपंग बालक–जिनकी मॉसपेशियाँ व अस्थियाँ पूर्ण विकसित नहीं होती है। जिससे वे चलने–फिरने तथा अन्य किसी कार्य को करने में अक्षम या असमर्थ होते है। अपंग कहलाते है। बालक दुर्घटना या रोग के कारण या गर्भावस्था में ही विकलांग हो जाते है। अपंग बालक साधारण अवस्था में अपनी हड्डियों या मांसपेशियों का ठीक–ठाक प्रयोग नहीं कर पाते है। ऐसे बालकों के लिए अपंगता के अनुसार विशिष्ट उपकरण जैसे कृत्रिम हाथ, पैर, व्हील चेयर आदि का उपयोग किया जाना चाहिए। अधिक अपंग बालकों को उनके लिए अलग से बने विशिष्ट विद्यालयों में शिक्षा दी जानी चाहिए। उन्हें इस प्रकार की व्यावसायिक शिक्षा दी जायें जिसमें उसकी शारीरिक अक्षमता बाधक नहीं हो। कम अपंग बालकों को विविध क्रियाओं व्यायाम, खेलकूद आदि के द्वारा सामान्य बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

4. भाषा दोषयुक्त बालक–जो बालक स्पष्ट: उच्चारण नहीं कर पाते है। धीरे–धीरे बोलते है। हकलाते है, तुतलाते है तथा अटक–अटक कर बोलते है। भाषा दोषयुक्त बालक कहलाता है। वाणी का दोष शारीरिक या मानसिक कारणों से हो सकता है। छोटी आयु के वाक् दोषों को अधिक आसानी से दूर किया जा सकता है। अत: इन बालकों को

चित्र 8.3 : अपंग बालक

नाक, कान व गले को विशेषज्ञ को दिखाएँ। बोलने का ठीक–ठाक अभ्यास कराये। इनके सामने कभी भी तुतलाकर या अशुद्ध भाषा में ना बोले तथा इन्हें विविध प्रकार से खेलों तथा व्यावसायिक प्रशिक्षणों जैसे लकड़ी का काम, बुनना, दर्जी का काम, मिट्टी के खिलौने बनाना, चित्रकला, मूर्तिकला आदि में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करें।

5. नाजुक बालक–नाजुकब ालकश ारीरिकरू पस ेद ुबले–पतले और कमजोर होते हैं। इनमें कार्य क्षमता कम होती है। शरीर में पौष्टिक तत्वों की कमी, लम्बे समय तक चलने वाली बीमारी या दोष पूर्व रचना आदि के कारण बालक निर्बल हो जाते हैं। उचित देखरेख के प्रभाव में इनकी शारीरिक अक्षमता बढ़ती जाती हे। ऐसे बालकों को ज्यादा थकाने वाले खेल न खेलने देवे, पढ़ाई के बीच–बीच में आराम दें।

II.मानसिक विकार युक्त बालक :–

मंद बुद्धि बालकों से अभिप्राय उन बालकों से है। जो अपनी आयु के बालकों के समान मानसिक रूप से अपरिपक्व होते हैं। उनका विकास सामान्य रूप से कम होता है तथा कुछ तो इतने अधिक अपरिपक्व होते हैं कि अपने जीवन निर्वाह की सामान्य क्रियायें जैसे–भोजन ग्रहण करना, वस्त्र पहनना, मल–मूत्र त्याग करने के लिए हर पल दूसरे की सहायता की आवश्यकता होती है। इन बालकों में शारीरिक कमी कोई नहीं होती है। शारीरिक रूप से ये सुन्दर व हष्ट–पुष्ट हो सकते हैं किन्तु बौद्धिक विकास न्यून होता है। इनके सीखने की गति धीमी होती है या नहीं होती है। इस प्रकार के बालकों को सभी प्रकार के समायोजना में बाधा आती है।

1. मानसिक विक्षिप्तता:–विविध वंशानुगत कारकों के फलस्वरूप जन्म से पहले या बाद में तीव्र दीर्घकालिक कुपोषण के फलस्वरूप या फिर किसी दुर्घटना के सदमें के कारण हो सकती है। फलत: बालक की सामान्य बुद्धि का क्षय हो जाता है।

2. मंद बुद्धि:–बालकों की बुद्धि लब्धि 70–85 से कम होती है व इनका शारीरिक विकास भी धीमी गति से होता है तथा इन बालकों

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

का अन्य व्यक्तियों से समायोजन कठिन होता है। इन बालकों में निम्न विशेषताएँ देखी जाती है:–

(i) इनकी निरीक्षण शक्ति तथा स्मरण शक्ति बहुत निर्बल होती है।

(ii) ये सीखने में त्रुटियाँ अधिक करते है।

(iii) ये बहुत अल्प समय के लिये ध्यान केन्द्रित कर पाते है।

(iv) ये सीखी गई बातों का उपयोग नई परिस्थितियों में नहीं कर पाते है।

(v) ये बालक परीक्षा में बार-बार अनुत्तीर्ण होते है। अतएव अपनी आयु के अनुसार छोटी कक्षाओं में रह जाते है।

(vi) विद्यालय में असफलता के कारण शीघ्र निराश हो जाते है।

(vii) ये बौद्धिक कार्यों की अपेक्षा शारीरिक कार्यों से अधिक रुचि लेते है।

(viii) दूसरों की बजाय अपनी अधिक चिन्ता करते है।

(ix) इनकी संवेदनशीलता अति तीव्र होती है तथा छोटी से छोटी बात भी इन्हें चुभ जाती है। ये अपने संवेगों को रोक पाने में भी असमर्थ होते है।

(x) दूसरों से बातचीत करते समय ये कहते कम तथा सुनते अधिक है।

(xi) इन बालकों में आत्म विश्वास का अभाव होता है अत: ये निर्णय नहीं ले पाते।

(xii) इन बालकों की संकल्प शक्ति (Determination power) बहुत कम होती है अतएव ये किसी बात का दृढ़ निश्चय नहीं कर पाते।

(xiii) ये बालक सूक्ष्म विषयों पर विचार नहीं कर पाते इसलिये व्याकरण, गणित तथा विज्ञान आदि विषयों में इनकी रुचि नहीं होती है।

(xiv) इन बालकों के दाँत देर से निकलते है तथा चलने तथा खड़े होने की क्षमता इनमें देर से आती है, बोलना भी ये देर से सीखते है।

मंद बुद्धि बालकों की शिक्षा में शारीरिक क्रियाओं को प्रमुखता देनी चाहिये। ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण द्वारा इन बालकों की निरीक्षण शक्ति बढ़ाने की कोशिश करनी चाहिये। मंदबुद्धि बालकों की रुचियों को विकसित करके उन्हें संगीत तथा चित्रकला आदि की शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

इस प्रकार शारीरिक एवं मानसिक रूप से असक्षम बालकों के लिए हमें चाहिए कि हम सबसे पहले उन्हें अपने समान एक सामान्य सामाजिक उपयोगी सदस्य समझें। उनके प्रति किसी प्रकार की कृपा या दया भाव न रखकर उन्हें सम्पूर्ण स्नेह प्रदान करें। सामुदायिक सुविधाओं में उनका खास ख्याल रखें जैसे साईन बोर्डों का स्पष्ट होना तथा ऊंचे नीचे होने की बजाय धरातल पर होना। उनके आत्मविश्वास को जगायें, उन्हें विशिष्ट रोजगार परक प्रशिक्षण देवें तथा उनके द्वारा बनाई गई कलाकृतियों को प्रदर्शित करें। समय-समय पर प्रोत्साहित करें।

III. प्रतिभाशाली बालक (Gifted Children)

जहाँ एक ओर निम्न बुद्धि-लब्धि के आधार पर कुछ बालकों को मंदबुद्धिक हाज ताहै व हीअ सैतस अ धिकबुद्धि-लब्धिह नेप र बालकों को '**प्रतिभाशाली**' कहा जाता है। इनकी बुद्धि-लब्धि 130-140 से अधिक होती है।

टरमैन के अनुसार, "140 बुद्धि-लब्धि से ऊपर वाले बालक प्रतिभावन माने जाते हैं।"

प्रतिभाशाली बालक सामान्य बच्चों से भिन्न होते है। इन का स्वास्थ्य सामान्य की तुलना में अच्छा होता है। व्यक्तित्व आकर्षक होता है। इन बच्चों में ध्यान केन्द्रित करने की योग्यता, ग्रहणशीलता समायोजन की क्षमता, संवेगात्मक परिपक्वता, और तर्क करने की अधिक क्षमता होती है।

प्रतिभाशालीब ालकोंक े लिएि वद्यालयम ेंअ लगक क्षाओंक ी व्यवस्था, विस्तृत पाठ्यक्रम, शिक्षकों द्वारा व्यक्तिगत शिक्षण पुस्तकालय की सुविधा प्रोत्साहन और पुरस्कार व अतिरिक्त सहगामी क्रियाओं की व्यवस्था की जा सकती है। प्रतिभाशाली बालकों के माता-पिता व अभिभावकों को सर्वप्रथम अपने बच्चों की जिज्ञासाओं को संतुष्ट करना चाहिए। उन्हें स्वतन्त्रता, साधन व सुविधाएँ देनी चाहिए।

IV. अपचारी बालक

जब कोई व्यक्ति समाज के नियमों को तोड़ता है या नियम विरुद्ध कार्य करता है तो उसे 'अपराधी' कहा जाता है और जब इन्हीं सामाजिक नियमों को बालक तोड़ता है तो उसे 'अपचारी बालक' कहा जाता है। बाल अपराध के कई वंशानुगत व वातावरण संबंधी कारक है। बाल अपराधों को रोकने के लिए पारिवारिक, विद्यालयी प्रयास व सामाजिक प्रयास किए जाने चाहिए।

V. समस्यात्मक बालक

प्रत्येक बालक को जीवित रहने के लिए नये वातावरण में समायोजन करना पड़ता है। सामान्य बालक जब वातावरण के साथ समायोजन नहीं कर पाते है तो समस्यात्मक बन जाते है। जब बालकों की इच्छा की पूर्ति ना हो, परिवार व समाज का उचित मार्गदर्शन ना हो, प्रेम का अभाव हो, कठोर नियन्त्रण हो, उनकी उपेशा हो इन समस्याओं का निरन्तर उन की जीवन में आने से उनके व्यवहार को समस्यात्मक बना देती है। कुछ प्रमुख समस्यात्मक व्यवहार

(1) अंगूठा चूसना

(2) नाखून काटना

(3) बिस्तर गीला करना

(4) झूठ बोलना

(5) चोरी करना

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(6) हकलाना

(7) दिवास्वप्न देखना

(8) भयभीत बालक

(9) विध्वंसकारी बालक

(10) ईर्ष्यालु बालक

(11) क्रोधी बालक आदि

माता-पिता, शिक्षक व अन्य लोग प्रारंभ से ही बालक की समस्या का निराकरण उचित निर्देशन द्वारा करें तो उनका व्यवहार थोड़े समय में सामान्य हो सकता है।

महत्वपूर्ण बिन्दुः—

1. आनुवांशिकता और वातावरण में असमानता के कारण बालकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा अन्य प्रकार के गुणों में सार्थक भिन्नता पाई जाती है।
2. जिन बालकों के गुण समूह मानदण्डों के अनुरूप होते है उन्हें सामान्य बालक कहते है तथा जिन बालकों में समूह मानदण्डों की अपेक्षा कम या अधिक गुण पाये जाते है उन्हें विशिष्ट या असाधारण बालक कहते है।
3. असाधारण बालक विभिन्न प्रकार के होते है। असाधारणता उनकी बुद्धि, शरीर, सामाजिक व्यवहार, समायोजन, संवेग भाषा आदि किसी भी एक या अधिक क्षेत्रों से संबंधित होती है।
4. शारीरिक रूप से असक्षम बालक जन्म से या फिर किसी दुर्घटना या भयंकर रोग के कारण ऐसे हो जाते है। इस शारीरिक असक्षमता के कारण उनकी वृद्धि, विकास एवं सीखने की क्षमता सामान्य तरीके से नहीं हो पाती।
5. शारीरिक असक्षमता विभिन्न प्रकार की होती है जैसे अपंग, अन्धे, या कमजोर, नजर वाले, मूक बधिर, कम सुनने वाले, निर्बल या नाजुक एवं हकलाने या दोषयुक्त वाणी वाले। उपयुक्त शिक्षा और प्रशिक्षण देकर इन्हें भी समाज का उपयोगी सदस्य बनाया जा सकता हैं।
6. बालक जो मानसिक रूप से विक्षिप्त हो, किसी भयंकर रोग, दुर्घटना या घटना के कारण अपना दिमागी संतुलन खो चुके हों या जिनमें पागलपन के लक्षण हो, उन्हें मानसिक रूप से असक्षम या मंद बुद्धि बालक कहते हैं।
7. मानसिक विक्षिप्तता विविध वंशानुगत कारकों के फलस्वरूप जन्म से पहले या बाद में तीव्र दीर्घकालिक कुपोषण के फलस्वरूप या फिर किसी दुर्घटना के कारण हो सकती है।
8. मानसिक रूप से दुर्बल व्यक्ति स्वयं अपना काम करने एवं अपनी सहायता करने के अयोग्य होते है। इन बालकों की छोटे बच्चों की तरह देखभाल और सुरक्षा करनी पड़ती है।
9. शारीरिक एवं मानसिक रूप से असक्षम बालकों को अपने समाज एक सामान्य सामाजिक उपयोगी सदस्य समझें।
10. जिनब ालकोंक ीब ुद्धिलब्धि1 30-140स`अ धिकह ोतीह`ैव ह प्रतिभाशाली बालक है।
11. अपचारी व समस्यात्मक बालकों को पारिवारिक, विद्यालय व सामाजिक प्रयास किए जाने चाहिए जिससे उनकी समस्याओं को ठीक किया जा सकें।

अभ्यासार्थ प्रश्न—

1. निम्न प्रश्नों सही उत्तर चुनें—

1. जिन बालकों के गुण समूह मानदण्ड़ों की अपेक्षा कम या अधिक होते है, उन्हें कहते है—
   (अ) साधारण बालक (ब) अपंग बालक
   (स) असाधारण बालक (द) मंद बुद्धि बालक
2. बालकों में शारीरिक असक्षमता हो सकती है –
   (अ) जन्म जात (ब) दुर्घटना के कारण
   (स) किसी भयंकर रोग के कारण (द) उपरोक्त सभी
3. मंद बुद्धि बालकों की शिक्षा में प्रमुखता देनी चाहिए –
   (अ) मानसिक क्रियाओं को (ब) शारीरिक क्रियाओं को
   (स) तनावों को (द) उपरोक्त में से कोई भी नहीं
4. बौद्धिक कुशलता में पिछड़े हुए बालकों को कहते हैं—
   (अ) दुर्बल (ब) सबल
   (स) निडर (द) मंद बुद्धि बालक
5. मंद बुद्धि बालकों की बुद्धि लब्धि .... से कम होती हैं।
   (अ) 70-85 (ब) 90-95
   (स) 95-100 (द) 105-110

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

1. उचित प्रकार से .... और .... देकर असक्षम बालकों को भी समाज का उपयोगी सदस्य बनाया जा सकता है।
2. पूर्णतया अन्धे बालकों को अंध विद्यालय में .... पद्धति से शिक्षा दी जानी चाहिए।
3. बालक जो बोलने एवं सुनने में असमर्थ होते है उन्हें कहते है .... बालक।
4. शरीर में पौष्टिक तत्वों की कमी, लम्बे समय तक चलने वाली बीमारी या दोषपूर्ण रचना आदि के कारण बालक .... हो जाते है।
5. मानसिक रूप से दुर्बल व्यक्ति स्वयं अपना काम करने एवं अपनी सहायता करने के .... होते है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

6. मंद बुद्धि बालकों की रुचियां को विकसित करके उन्हें .... तथा .... आदि की शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।
7. प्रतिभाशाली बालकों की बुद्धि लब्धि .... से अधिक होती है।

3. असाधारण या विशिष्ट बालक हो परिभाषित कीजिए
4. टिप्पणी लिखो–
   1. समस्यात्मक बालक
   2. अपचारी बालक
   3. प्रतिभाशाली बालक
5. बालक शारीरिक एवं मानसिक रूप से असक्षम किन–किन कारणों से हो सकता है?
6. मंद बुद्धि बालक को भी समाज का एक उपयोगी सदस्य बनाया जा सकता है? कैसे ? उदाहरण सहित समझाइये।
7. आपके पड़ौस में एक शारीरिक रूप से अपंग बालक है। आप उसके साथ कैसा व्यवहार करेंगे? कक्षा में अध्यापक की सहायता से चर्चा करें।

उत्तरमाला–

1. (1) स	(2) द	(3) ब
(4) द	(5) अ	
2. (1) शिक्षा, प्रशिक्षण	(2) ब्रेल	(3) मूक–बधिर
(4) निर्बल	(5) अयोग्य	(6) संगीत, चित्रकला
(7) 130–140		

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई II – आहार एवं पोषण

9. आहार आयोजन

Meal Planning

पिछली कक्षा में आप पढ़ चुके हैं कि मनुष्य भोजन केवल भूख शांत करने के लिए ही नहीं लेता है अपितु भोजन उसके शरीर को स्वस्थ रखने, शक्ति प्रदान करने, कार्यक्षमता बनाए रखने, शारीरिक वृद्धि एवं शरीर को सुचारु रूप से चलाने आदि के लिए भी आवश्यक है। ये सभी कार्य तभी सुचारु रूप से हो सकते हैं जब भोजन में सभी पोषक तत्त्व हमारी शारीरिक स्थिति तथा क्रियाशीलता के अनुरूप उपस्थित हों। परिवार के विभिन्न सदस्यों की उम्र, लिंग, स्थिति एवं क्रियाशीलता अलग–अलग होती है, फलस्वरूप उनकी पोषण संबंधी आवश्यकताएं भी भिन्न–भिन्न होती हैं। परिवार के सभी सदस्यों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए आहार आयोजन अति आवश्यक है।

आहार आयोजन एक कला के साथ–साथ एक विज्ञान भी है। विविध रूपों में तैयार, खुशबूदार, स्वादिष्ट व आकर्षक तरीके से परोसा गया भोजन न केवल आपकी भूख बढ़ाता है बल्कि आपकी कलात्मकता को भी दर्शाता है। जबकि दूसरी तरफ सीमित संसाधनों को उपयोग में लाते हुए सभी भोज्य समूहों में से विविध भोज्य पदार्थों का चयन कर पारिवारिक सदस्यों की पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना आपकी बौद्धिक क्षमता को भी प्रदर्शित करता है। आहार आयोजन केवल कागज पर दिन भर की योजना बनाना ही नहीं है वरन् इस प्रक्रिया में भोजन की योजना से लेकर खरीदना, पकाना, संग्रहण व परोसने तक की क्रियाएं सम्मिलित हैं। परिवार के सभी सदस्यों को उनकी पौषणिक आवश्यकताओं के अनुरूप भोजन उपलब्ध कराना ही आहार आयोजन है। दूसरे शब्दों में परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न खाद्य पदार्थों को उनके पौष्टिक गुणों के आधार पर आहार में सम्मिलित करना आहार आयोजन कहलाता है, अर्थात् आहार आयोजनद्व ाराप रिवारके स भीस दस्योंक ेस ंतुलितभ ोजनउ पलब्ध कराया जा सकता है।

आहार आयोजन का महत्त्व :– एक सफल आहार आयोजन कई दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह परिवार के सभी सदस्यों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं की भली–भाँति आपूर्ति तो करता ही है साथ ही साथ आयोजित आहार प्रत्येक सदस्य की रुचि के अनुरूप भी होता है। भोजन में विविधता उत्पन्न करने की दृष्टि से भी आहार आयोजन कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। भोजन को वैविध्यपूर्ण बनाने के अलावा यह कम कीमत पर पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराने का भी अद्वितीय साधन है। इसके द्वारा गृहिणी अपने समय, शक्ति व धन तीनों साधनों की बचत कर सकती है। चार–पाँच दिन पूर्व आहार की योजना बना लेने से घर में उपस्थित पदार्थों एवं बाजार से खरीदे जाने वाले सामान के बारे में पहले से ही पता लग जाता है। इसके द्वारा गृहिणी को भोज्य पदार्थों के संग्रहण, घरेलू उत्पादन की सम्भावनाओं, मौसम के अनुरूप खाद्य पदार्थों की उपलब्धता आदि के बारे में अच्छी जानकारी प्राप्त हो जाती है। इतना ही नहीं आहार आयोजन द्वारा बचे हुए भोज्य पदार्थों का उपयोग भी भली प्रकार से किया जा सकता है। संक्षिप्त में कहें तो आहार आयोजन से पौष्टिक, स्वादिष्ट, सुरुचिपूर्ण भोजन तैयार किया जा सकता है, जिसमें आकर्षक रंग, सुगन्ध, स्वाद इत्यादि का अद्भुत संगम होता है।

आहार आयोजन की आवश्यकता :– एक परिवार में भिन्न–भिन्न आयु, लिंग एवं विविध प्रकार के कार्य करने वाले सदस्य होते हैं, जैसे–छोटे बच्चे, स्कूल में पढ़ने वाले बच्चे, कॉलेज जाने वाले किशोर, ऑफिस में कार्य करने वाले पुरुष, घर एवं बाहर का काम करने वाली महिलाएं एवं वृद्ध माता–पिता आदि। शारीरिक स्थिति एवं क्रियाशीलता के आधार पर इन सभी की पोषण संबंधी आवश्यकताएं भी भिन्न–भिन्न होती है। यदि परिवार का कोई सदस्य अधिक अथवा भारी शारीरिक श्रम जैसे–खेती, खदान में कार्य एवं मजदूरी आदि करता हो तो उसे अधिक ऊर्जा देने वाले भोज्य पदार्थों (जैसे–अनाज, तिलहन, गुड़ आदि) की आवश्यकता होती हैं। ऐसे लोग जो सिर्फ बैठे रहने के कार्य करते हैं जैसे–ऑफिस में बैठकर कार्य करने वाले, स्कूल, कॉलेज में पढ़ाने वाले या ऐसा कहें कि मानसिक कार्य करने वाले व्यक्तियों को अपेक्षाकृत कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ऐसे व्यक्तियों को तनाव ज्यादा रहता है और इस कारण इन्हें अधिक फल एवं सब्जियां खानी चाहिये। बढ़ती उम्र के बच्चों, किशोरों, गर्भवती तथा धात्री महिलाओं को ऊर्जा, प्रोटीन, विटामिन व खनिज लवण युक्त भोज्य पदार्थों की अधिक आवश्यकता होती है। वृद्ध व्यक्तियों को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि वो अधिक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चलना-फिरना नहीं कर पाते हैं, उन्हें विटामिन व खनिज लवण युक्त भोज्य पदार्थों की अधिक आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त पारिवारिक सदस्यों की पसंद-नापसंद, जलवायु, भोज्य पदार्थों की उपलब्धता, समय, श्रम व धन की उपलब्धता आदि भी भोज्य पदार्थों के चयन एवं उपभोग को प्रभावित करते हैं जैसे-छोटे बच्चों को मीठे एवं किशोरों को चटपटे भोज्य पदार्थ पसंद होते हैं। मौसम के आधार से सर्दियों में गर्म भोजन एवं गर्मियों में ठंडे पेय पीना अच्छा लगता है। इसी प्रकार मौसम की फल एवं सब्जियां उसी मौसम में अच्छी लगती है और सस्ती भी मिलती है।

आहार आयोजन के सिद्धान्त :-

1. पौषणिक आवश्यकताएं- आहार योजना का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है परिवार के सभी सदस्यों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करना। प्रत्येक सदस्य की पौषणिक आवश्यकताएं उसके लिंग, आयु, शारीरिक स्थिति व श्रम पर निर्भर करती है। अतः गृहिणी सभी सदस्यों की भिन्न-भिन्न पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सभी भोज्य समूह में से भोज्य पदार्थों का चुनाव करे ताकि आहार संतुलित हो सके।

यह बहुत ही कठिन होता है कि पूरे परिवार के लिए संतुलित आहार की योजना बनाने के लिए अलग-अलग भोज्य पदार्थों का चुनाव कर अलग-अलग व्यंजन बनायें। आप एक ही भोजन में सदस्यों की आवश्यकतानुसार भोज्य पदार्थों की मात्रा कम या ज्यादा कर या व्यंजन में कुछ परिवर्तन कर संतुलित आहार बना सकते हैं जैसे-बच्चों को दूध की जगह दही, छाछ, खीर, कस्टर्ड, पनीर, चीज़ आदि देकर उनकी पोषक तत्त्वों की पूर्ति की जा सकती है। किशोर ज्यादातर चटपटा खाना पसंद करते हैं तो उन्हें सादे पराँठे की जगह भरवाँ या दाल का दे सकते हैं उसी में सब्जियां भी डाल सकते हैं जिससे उनकी पोषण की आवश्यकता को पूरा कर सकें।

2. विविधता :- भोजन में विविधता होनी चाहिये जैसे-रंग, रूप, खुशबू एवं आकार सभी में। सुबह से शाम तक या प्रतिदिन एक ही प्रकार का भोजन खाने से भोजन में रुचि नहीं रह जाती एवं ऐसे भोजन से संतुष्टि भी नहीं मिलती। भोजन में विविधता कई प्रकार से लाई जा सकती है, जैसे-

* हर खाद्य समूह से विभिन्न भोज्य पदार्थों का चयन करना जैसे-रोटी के लिए गेहूँ के आटे की जगह मक्की, जौ, बाजरा या मिस्से आटे का प्रयोग करना।
* विभिन्न प्रकार से भोजन को पकाने के तरीके से भी हम भोजन में विविधता ला सकते हैं, जैसे-उबालना, तलना, भुनना आदि।
* भोज्य पदार्थों की बनावट में विविधता लाकर, जैसे-भोजन में तरल, अर्द्धठोस, मुलायम आदि सभी प्रकार के भोज्य पदार्थों को सम्मिलित करके।
* भोज्य पदार्थों के आकार-प्रकार में विविधता लाकर, जैसे-रंग-बिरंगी फल एवं सब्जियों का इस्तेमाल करके एवं उन्हें भिन्न प्रकार से काटकर भी भोजन को सुन्दर बनाया जा सकता है।

3. क्षुधा संतुष्टि :- भोजन आहार नियोजन इस प्रकार से किया जाना चाहिये ताकि वो भूख को शांत कर सके जब तक कि दूसरे वक्त के भोजन का समय ना हो। भोजन में प्रोटीन, रेशा एवं वसा होनी चाहिये ताकि वो क्षुधा प्रदान कर सके। नाश्ता हमें भारी करना चाहिये ताकि लंच तक हमें भूख ना लगे, जैसे-यदि हम नाश्ते में ब्रेड या बिस्कुट और चाय लेते हैं तो हमें भूख जल्दी लग जायेगी और यदि हम पराँठा एवं दूध का सेवन करते हैं तो हमें भूख जल्दी नहीं लगेगी और हम अच्छे से काम में मन लगा सकेंगे। इस प्रकार क्षुधा संतुष्टि की दृष्टि से भी आहार आयोजन महत्त्वपूर्ण है।

4. आहार समय :- आहार आयोजन करते समय दो आहारों के मध्य समय-अन्तराल एवं पूरे दिन के लिए किये गये भोजन की बारम्बारता का ध्यान रखना चाहिये। साधारणतया हम दिन में तीन से चार बार भोजन खाते हैं। सुबह का नाश्ता, दिन की चाय, दोपहर व रात का भोजन। मजदूरवर्ग दिन में दो ही बार भोजन लेता है तो छोटे बच्चे को कम से कम मात्रा में दिन में पाँच-छः बार में आहार दिया जाता है क्योंकि छोटे बच्चे एक बार में बहुत सारा भोजन ग्रहण नहीं कर सकते। आहार नियोजन करते समय इस सिद्धान्त का भी ध्यान रखना चाहिये।

5. पूरे दिन को एक इकाई माना जाये :- आहार आयोजन करते समय सुबह नाश्ते से लेकर रात्रि भोजन तक की योजना एक साथ ही बना लेनी चाहिये ताकि भोज्य पदार्थों को दिन के विभिन्न आहारों में सम्मिलित किया जा सके। उदाहरण के लिये पूरे दिन में ली जाने वाली अनाज की मात्रा को नाश्ते में ब्रेड, उपमा, पोहा, दोपहर की रोटी, पूरी, चावल व रात के भोजन में पराँठा, बाटी, हलुआ, खीर आदि के रूप में सम्मिलित किया जा सकता है। पूरे दिन को एक इकाई मानकर आहार आयोजन करने से परिवार के सदस्यों की विभिन्न पोषक तत्त्व की दैनिक आवश्यकता पूर्ण की जा सकती है। इससे पूरे दिन के लिए आहार आयोजन जैसी मानसिक प्रक्रिया एक बार ही करनी पड़ती है एवं सभी के लिए पूरे दिन का संतुलित भोजन भी उपलब्ध हो जाता है।

6. समय :- समय भी एक कारक है भोजन आयोजन करने के लिए। जो महिलायें सुबह जल्दी घर से काम पर निकल जाती है वो अपना आधा काम रात्रि को ही कर लेती हैं। जैसे-सब्जियों को काटकर फ्रीज में रखना, आटा लगाकर फ्रीज में रखना आदि। इससे उनका समय भी बचता है और आहार आयोजन भी हो जाता है।

7. भोजन की स्वीकार्यता :- तैयार पके-पकाये भोजन की स्वीकार्यता आहार आयोजन का महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। यदि पूर्ण संतुलित, स्वादिष्ट व आकर्षक रूप में परोसे हुए व्यंजन परिवार के सदस्यों द्वारा खाए ही न जाएं तो आहार आयोजन की सम्पूर्ण मानसिक एवं शारीरिक प्रक्रिया तथा समय एवं श्रम व्यर्थ हो जाता है। अतः आहार का आयोजन करते समय ध्यान रहे कि आहार योजना में भोज्य पदार्थों तथा पकाए गये व्यंजनों

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

का चयन परिवार की रुचि के अनुरूप हो। उदाहरण के लिए दाल एवं हरी सब्जियां बच्चों को पसन्द नहीं होती है। लेकिन यदि उसी को आटे में गूंधकर या भरकर बनाया जाये तो वो खा लेते हैं। भोजन के दौरान एक आहार में दिये गये व्यंजनों की मात्रा बहुत कम या बहुत ही अधिक नहीं होनी चाहिये। जैसे-दोपहर के भोजन में परोसी गई केवल एक रोटी व आधी कटोरी सब्जी या फिर एक साथ 4 रोटी तथा 2 कटोरी दाल आपको स्वीकार्य नहीं होगी। भोजन की कम मात्रा आपको संतुष्ट नहीं कर पायेगी तथा अत्यधिक मात्रा देखकर आपकी भूख खत्म हो जायेगी। अत: आहार योजना में भोज्य पदार्थों के चयन व मात्रा का भी ध्यान रखना चाहिए।

8. पकाने की उचित विधियां :- जैसा कि हमने पढ़ा कि आहार आयोजन कागज पर आहार की योजना बनाना मात्र ही नहीं है वरन् भोज्य पदार्थों का चयन, खरीददारी, संग्रहण, पकाना एवं परोसना भी है। अत: आहार आयोजन करते समय भोज्य पदार्थों को पकाने की उचित विधियों का चयन करना चाहिये। उदाहरण के लिये दिन के आहार में चावल सम्मिलित करने की योजना तो बना ली किन्तु चावल बनाते समय यदि माँड निकाल दिया तो उसकी पौष्टिकता कम हो जायेगी। इसी प्रकार से पकाने के बाद दाल-सब्जियों का पानी फेंकना, भोज्य पदार्थों को बहुत अधिक पकाना आदि कई ऐसी आदतें हैं जो आप दिन भर में कई बार काम में लेते हैं। फलस्वरूप हमारे भोजन की पौष्टिक गुणवत्ता कम हो जाती है। उपरोक्त सिद्धान्तों के आधार पर आहार आयोजन करते समय कई कारक इस प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। आइये इन कारकों के बारे में अध्ययन करें।

आहार आयोजन को प्रभावित करने वाले कारक

1. आयु एवं शारीरिक स्थिति :- आयु एवं शारीरिक स्थिति आहार आयोजन को प्रभावित करने वाले अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारक हैं। शारीरिक स्थितियों या अवस्थाओं में भी पौषणिक आवश्यकताएं भिन्न-भिन्न होती हैं जैसे-गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था के दौरान पौषणिक आवश्यकताएं सामान्य अवस्था की तुलना में काफी बढ़ जाती हैं। उसी तरह एक बीमार व्यक्ति की आहारीय आवश्यकताएं उसकी बीमारी के आधार पर भिन्न होती हैं। बढ़ते बच्चों को ऊर्जा एवं प्रोटीन की मात्रा वयस्क एवं वृद्ध की तुलना में ज्यादा चाहिये।

2. लिंग :- सामान्यतया पुरुषों का शरीर भार एवं आकार स्त्रियों की अपेक्षा अधिक होता है। उनकी शारीरिक संरचना में भी कार्यशील मांसपेशियां अधिक व चर्बी/वसा का जमाव कम होता है। अत: उन्हें ऊर्जादायक भोज्य पदार्थ जैसे-अनाज, शक्कर, गुड़ व घी आदि की अधिक आवश्यकता होती है। विपरीत इसके स्त्रियों में वसा की मात्रा अधिक होती है इसलिये उन्हें कम वसा व अधिक प्रोटीन युक्त भोजन लेना चाहिये।

3. जलवायु एवं मौसम :- ठंडे प्रदेश में रहने वाले लोगों को गर्म प्रदेश में रहने वालों की तुलना में अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है ताकि उनके शरीर का तापमान सामान्य रख सके। यही कारण है कि ठंडे प्रदेश में रहने वालों को अधिक ऊर्जा व प्रोटीन युक्त भोजन का सेवन करना चाहिये।

4. क्रियाशीलता :- क्रियाशीलता के आधार पर भी पौष्टिक तत्त्वों की मात्रा कम या अधिक की जाती है जैसे अधिक शारीरिक श्रम करने वाले व्यक्ति (मजदूर) को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है ताकि वो अपना काम सुचारु रूप से कर सके। उसी प्रकार ऑफिस में बैठने रहने वाले जिनका शारीरिक श्रम अधिक नहीं होता उन्हें कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

5. आय :- किसी भी परिवार की आय का मुख्य भाग भोजन पर ही व्यय होता है। जैसे-जैसे आय बढ़ती है खाने पर खर्च कम होता जाता है। आज के परिवेश में लोगों की ये आम धारणा है कि अमीर लोग ज्यादा पौष्टिक भोजन का सेवन करते हैं जबकि यदि आहार आयोजन के उपरोक्त सिद्धान्तों को प्रयोग में लेकर हम सीमित आय में भी संतुलित भोजन प्राप्त कर सकते हैं। आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होने पर गृहणि (i) महँगे भोज्य पदार्थों जैसे-दूध, अण्डा, मांस, मछली, पनीर, काजू, बादाम आदि को सोयाबीन, दालें एवं मूँगफली जैसे भोज्य पदार्थों का चयन करती है। (ii) मौसम में उपलब्ध एवं सस्ती सब्जियों एवं फलों का चयन करती है। (iii) बचे हुए आहार को दूसरे तरीके से बनाकर जैसे-बची हुई दाल के पराँठे, बची हुई सब्जियों को खिचड़ी में मिलाकर एक नया व्यंजन बना देती है। (iv) विभिन्न भोज्य समूहों के सम्मिश्रण द्वारा कम व्यंजन जैसे-रोटी, दाल, सब्जी की जगह गेहूँ का आटा, बेसन, आलू, पालक, तेल आदि से पराँठा बना सकती है। अत: आहार आयोजन के सिद्धान्तों द्वारा अपने परिवार का आहार संतुलित बना सकते हैं।

6. भोज्य पदार्थों की उपलब्धता :- मौसमी फल-सब्जियां मौसम विशेष में ही आसानी से व सस्ते दामों पर उपलब्ध रहती हैं। यदि हर मौसम में हर चीज का मजा लेना हो तो हम कुछ फल एवं सब्जियों को परिरक्षित करके भी रख सकते हैं ताकि मौसम न होने पर उसका सेवन कर सके। सभी प्रकार के भोज्य पदार्थ हर समय व हर जगह उपलब्ध नहीं होते हैं। जैसे-उत्तर भारत में गेहूँ सस्ते दामों में उपलब्ध है तो दक्षिण भारत में चावल। इसलिए उपलब्धता के अनुरूप ही आहार आयोजन करना चाहिये।

7. सदस्यों की पसन्द-नापसन्द :- घर में रहने वाले सभी सदस्यों की रुचि को ध्यान में रखकर भोज्य पदार्थों का चुनाव करना एक मुश्किल काम है। किन्तु यदि भोज्य पदार्थों को भिन्न प्रकार से बना दिया जाये तो वो सभी को पसन्द आ सकती है जैसे-लौकी की सब्जी अधिकतर सबको नापसन्द होती है लेकिन यदि उसके कोफ्ते बना दिये जाये तो सब आराम से खा सकते हैं। कई बार हम बच्चों के पीछे पड़े रहते हैं कि वो दूध नहीं पीता है। ये आवश्यक नहीं कि उसे दूध ही पिलाया जाये, उसकी जगह खीर, कस्टर्ड, दही, पनीर, आइसक्रीम आदि जो उसे पसन्द हो दे सकते हैं। परिवार के सदस्यों की रुचि का आहार आयोजन में विशेष स्थान है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

8. पारिवारिक रीति-रिवाज एवं संस्कृति :- हर परिवार के अपने-अपने रीति-रिवाज एवं परम्पराएं होती हैं। इन रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं से बहुत अलग हटकर हम आहार आयोजन नहीं कर सकते। जैसे-यदि किसी परिवार या समुदाय में केवल दो समय के भोजन की ही परम्परा हो तो ऐसे परिवार के लिए सुबह का नाश्ता, दोपहर का खाना, शाम की चाय एवं रात के भोजन की आहार योजना सही नहीं रहेगी। ऐसे परिवार के लिए शुरू में आहार आयोजन दो समय के भोजन से प्रारम्भ कर धीरे-धीरे उनके आहार में परिवर्तन लाना चाहिये। अवसर विशेष जैसे-त्योहार, जन्मदिन, विवाह आदि मौकों पर आहार योजना प्रतिदिन से भिन्न होती है। लेकिन वह भी पारिवारिक रीति-रिवाज एवं संस्कृति के अनुरूप होनी चाहिये जैसे-दीपावली तथा होली पर मिठाई एवं विशेष व्यंजन तैयार करना, मकर संक्रांति पर तिल के व्यंजन बनाना, ईद के मौके पर सेवई तथा क्रिसमस के पर्व पर केक बनाना आदि।

महिला का कामकाजी होना :- कामकाजी महिलाओं पर हमेशा ये तोहमत होती है कि वो संतुलित आहार अपने परिवार को नहीं परोस पाती क्योंकि उन्हें दोहरी भूमिका करनी होती है। अकसर ऐसा नहीं होता है। समय निकाल कर ये अपनी पूरी तैयारी करती है कि हमें दूसरे दिन के भोजन में क्या-क्या सम्मिलित करना है। चाहे तो बाजार में उपलब्ध बने-बनाये (Ready to eat) या बनाने के लिये तैयार (Ready to cook) भोज्य पदार्थ जैसे-पिसे हुए मसाले, सॉस, जैम, पकाने के लिए तैयार सब्जियों के हिमीकृत पैकेट इत्यादि सम्मिलित कर सकती है। समय व शक्ति बचाने वाले उपकरणों का प्रयोग करते हुए भी गृहिणी संतुलित आहार का आयोजन कर सकती है। जैसे-दाल, चावल, सब्जी-तीनों एक साथ ही कुकर में तीन अलग-अलग खण्डों में रखकर पका सकती है। टी.वी. देखते समय मटर छील सकती है, सब्जियां साफ कर सकती है और चाहे तो हफ्ते भर का आहार आयोजन भी कर सकती है ताकि हर रोज सोचना ना पड़े कि आज क्या बनाना है।

पोषण संबंधी ज्ञान :- यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बिन्दु है क्योंकि यदि गृहिणी को आहार एवं पोषण संबंधी सामान्य जानकारी नहीं होगी तो आहार आयोजन नहीं कर पायेगी।

उपरोक्त वर्णित सिद्धान्तों एवं कारकों के आधार पर की गई आहार योजना व्यावहारिक एवं लचीली तो होगी ही साथ ही विविधता लिए हुए भी होगी। इस प्रकार के आहार आयोजन से कई लाभ हैं।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. परिवार के सभी सदस्यों को उनकी पौषणिक आवश्यकताओं के अनुरूप भोजन उपलब्ध करना ही आहार आयोजन है।
2. आहार आयोजन से पौष्टिक, स्वादिष्ट एवं सुरुचिपूर्ण भोजन तैयार किया जा सकता है जिसमें रंग, सुगंध, स्वाद इत्यादि का अद्‌भुत संगम होता है।
3. सदस्यों की पौषणिक आवश्यकताएं, भोजन में विविधता, क्षुधा संतुष्टि, आहार का समय, दिन के आहार को एक इकाई के रूप में आयोजित करना, भोजन की स्वीकार्यता तथा पकाने की उचित विधियां आहार आयोजन के सिद्धान्त हैं।
4. आहार आयोजन आयु एवं शारीरिक स्थिति, लिंग, जलवायु एवं मौसम, आय, भोज्य पदार्थों की उपलब्धता, सदस्यों की पसन्द-नापसन्द, पारिवारिक रीति-रिवाज एवं संस्कृति, महिला का कामकाजी होना तथा पोषण संबंधी ज्ञान से प्रभावित होता है।

आहार आयोजन द्वारा परिवार के सभी सदस्यों की पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुने :

(i) आहार आयोजन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है

(अ) गर्भवती के लिए (ब) धात्री के लिए

(स) बच्चों के लिए (द) सभी समूह के लिए

(ii) आहार आयोजन के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है

(अ) दुकानदार (ब) पड़ोसी

(स) शिशु (द) गृहिणी

(iii) परिवार के सभी सदस्यों की पोषक तत्त्वों की आवश्यकताएं होती है।

(अ) एक समान (ब) बराबर

(स) भिन्न-भिन्न (द) अत्यधिक

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।

(i) मौसमी खाद्य पदार्थों के द्वारा कम आय में भी .... बनाया जा सकता है।

(ii) विभिन्न खाद्य पदार्थों को उनके पौष्टिक गुणों के आधार पर परिवार के सभी सदस्यों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए आहार में सम्मिलित करना ही...................।

(iii) शारीरिक-मानसिक स्थिति एवं आयु आहार आयोजन को प्रभावित करने वाले अत्यन्त महत्त्वपूर्ण .... है।

3. स्वयं के आहार आयोजन को प्रभावित करने वाले कारकों को उल्लेख कीजिये।

4. आहार आयोजन के किन्हीं दो सिद्धान्तों का वर्णन कीजिये।

5. निम्नलिखित बिन्दुओं का आहार आयोजन में महत्त्व समझाइये।

अ विविधता ब पोषण संबंधी ज्ञान

स महिला का कामकाजी होना द पारिवार आय

उत्तरमाला :

1 (i) द, (ii) द, (iii) स

2. (i) संतुलित आहार (ii) आहार आयोजन, (iii) कारक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

10. आहार आयोजन प्रक्रिया

Process of Meal Planning

पिछले अध्याय में आपने आहार आयोजन का अभिप्राय, महत्त्व, सिद्धान्त एवं इसे प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में पढ़ा। घरों में आहार आयोजन की प्रक्रिया प्रत्येक गृहिणी द्वारा किसी न किसी स्तर पर की जाती है। कुछ गृहिणियां हफ्ते भर के लिए फल, सब्जी पहले से खरीद लेती हैं, महीने भर का सूखा राशन इकट्ठा लाती है, अगले दिन सुबह से शाम तक के भोजन के विषय में सोच लेती है। इस अध्याय में हम परिवार के लिए संतुलित आहार योजना की व्यावहारिक प्रक्रिया के बारे में पढ़ेंगे। आहार आयोजन करने से पूर्व उसके सिद्धान्तों एवं प्रभावित करने वाले कारकों का ध्यान रखना चाहिये। पुनरावलोकन हेतु इन बिन्दुओं को संक्षेप में नीचे दिया जा रहा है।

(i) आहार आयोजन से परिवार के सभी सदस्यों की दैनिक आवश्यकताओं के अनुसार सभी पौष्टिक तत्त्वों की पूर्ति हो जाती है।

(ii) आहार आयोजन पूरे दिन को एक इकाई मानकर करना चाहिये अर्थात् पूरे दिन के लिए दिए जाने वाले विभिन्न आहारों की योजना पहले से बना लेनी चाहिए।

(iii) आहार नियोजन करने से गृहिणी का बहुत समय, शक्ति एवं धन की भी बचत होती है, एवं पारिवारिक सदस्यों की रुचि के अनुसार होनी चाहिये।

(iv) एक दिन में मुख्यत: 3-4 आहार की योजना बनाई जाती है लेकिन व्यक्ति विशेष व परिवार के सदस्यों की आवश्यकता व आदतों के अनुरूप दिन भर में दिये जाने वाले आहारों की संख्या घटाई या बढ़ाई जा सकती है।

(v) प्रत्येक आहार के मध्य कम से कम 2 से 3 घंटों का अन्तराल होना चाहिये तथा प्रथम आहार का समय प्रात: 7 बजे से प्रारम्भ करके अन्तिम आहार रात्रि 8-9 बजे के मध्य ले लेना चाहिये।

(vi) विभिन्न भोज्य समूहों का चुनाव करके दिन भर में विविध भोजन तैयार करना चाहिये। भोज्य पदार्थों की मात्रा सदस्यों की पौषणिक आवश्यकताओं के अनुरूप होनी चाहिये।

(vii) आहार नियोजन करते समय न केवल संतुलित एवं पौष्टिक आहार की प्राप्ति ही आवश्यक है बल्कि भोजन आकर्षक, मनोहारी, स्वादयुक्त एवं सुपाच्य होना चाहिये जिससे व्यक्ति को पूर्ण तृप्ति एवं संतुष्टि की प्राप्ति हो सके।

आहार आयोजन कैसे करें?

आहार आयोजन करने से पूर्व कुछ व्यावहारिक बातों की जानकारी आवश्यक है। अगर आप दो या तीन घरों में भोजन बनाने एवं परोसने की प्रक्रिया का निरीक्षण करें तो आप देखेंगे कि :-

(i) भोजन बनाने हेतु कच्चे भोज्य पदार्थ लेने का तरीका हर गृहिणी का अलग-अलग होता है। रोटी बनाने के लिए कुछ गृहिणियां मुट्ठी भरकर गिनती करते हुए आटा लेती हैं, तो कुछ कटोरी/कप/गिलास के माप से या कुछ आटा गूंधने वाले बर्तन में अंदाज से। इसी प्रकार सूखी दाल या चावल आदि खाद्य पदार्थों की मात्रा का अनुमान भी लगाया जाता है।

(ii) किसी घर में रोटी बहुत छोटी व पतली बनती है तो कहीं बड़ी व मोटी। इसी प्रकार दाल भी कहीं गाढ़ी तो कहीं पतली बनाई जाती है। कुछ सब्जियां सूखी व रेसे वाली, दोनों प्रकार से बनाई जाती हैं लेकिन तरी को बनाने में प्रयोग में लिए जाने वाले खाद्य पदार्थों एवं पानी की मात्रा भिन्न होती है।

(iii) घरों में भोजन परोसे जाने वाले बर्तन जैसे-कप/गिलास/कटोरी/चम्मच आदि भी अलग-अलग माप के होते हैं। घर के बड़े व वयस्क सदस्यों को दाल-सब्जी आदि बड़ी कटोरियों में परोसते हैं तो छोटे बच्चों को छोटी-छोटी कटोरियों में।

उपरोक्त निरीक्षण के आधार पर आप पायेंगे कि यदि हम आम भाषा में जैसे-दो रोटी, एक कटोरी दाल, 1/2 कप रायता, एक प्लेट चावल, 1/2 कटोरी सब्जी इत्यादि के रूप में आहार योजना बनाएं, तो ऐसी योजना के फलस्वरूप खाए जाने वाले भोज्य पदार्थों की मात्रा दो परिवारों के सदस्यों के लिए अलग-अलग होगी क्योंकि परिवार में भोज्य पदार्थों को मापने व परोसने के काम में लिए जाने वाले बर्तन या इकाई अलग-अलग होते हैं। फलत: इनसे प्राप्त पोषक तत्त्वों की मात्रा में भी भिन्नताह ोगी।इ सप्रकारस े िकयाग याअ ाहारअ ायोजनप रिवारके विभिन्न सदस्यों या भिन्न-भिन्न परिवारों के लिए उपयुक्त नहीं होगा। उदाहरण के लिए यदि दो गृहिणियां एक ही आकार वाली कटोरी के आटे

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

से अलग-अलग आकार में रोटी बनाएं तो एक रोटी में लगने वाले आटे की मात्रा अलग-अलग होगी। ऐसे में यदि रोटी की संख्या के आधार पर गृहिणियां आहार आयोजन करें तो समान संख्या में रोटी खाने पर उपभोग किए गए आटे की मात्रा अलग-अलग हो जाएगी। इसी प्रकार अन्य भोज्य पदार्थों में भी विविधता आ सकती है।

उपरोक्त विविधताओं को नियंत्रित करने हेतु पौषणिक आवश्यकताओं के अनुरूप संतुलित आहार उपलब्ध कराने तथा सीमित साधनों द्वारा अपने स्वयं व अपने परिवार के लिए संतुलित आहार का आयोजन करने के लिए हमें **सन्दर्भ इकाई** (Reference portion) का उपयोग करना चाहिये। सन्दर्भ इकाई से तात्पर्य खाद्य पदार्थ की उस कम से कम मात्रा से है जो हमें उस खाद्य पर आधारित व्यंजन बनाने के लिए चाहिये।

आहार आयोजन के लिए कच्चे खाद्य पदार्थ की एक संदर्भ इकाई

खाद्य पदार्थ	ग्राम/सन्दर्भ इकाई	खाद्य पदार्थ	ग्राम/सन्दर्भ इकाई
अनाज	30	हरी पत्तेदार सब्जियां	100
दाल	30	अन्य सब्जियां	100
अंडा	50	फल	100
मांस/मछली/मुर्गी	50	शक्कर	5
दूध (मि.लि.)	100	घी व तेल	5
कंदमूल	100		

एक सामान्य आकार व मोटाई की रोटी 30 ग्राम आटे से बनी होती है जो न तो बहुत छोटी या बड़ी होती है व न ही पतली या मोटी। 30 ग्राम सूखी दाल से पकी दाल एक मध्यम आकार वाली कटोरी को भर देती है, जिसे एक सामान्य व्यक्ति एक समय में आसानी से ग्रहण कर लेता है। एक सामान्य अंडे व मध्यम आकार के फल का भार क्रमश: 50 ग्राम व 100 ग्राम होता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति के लिए बनाए गए मांसाहारी व्यंजन जैसे-मांस, मछली आदि के लिए कम से कम 50 ग्राम कच्चे खाद्य की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार एक सामान्य वयस्क को परोसी जाने वाली किसी भी प्रकार की सब्जी के लिए कम से कम 100 ग्राम कच्ची सब्जी की आवश्यकता होती है।

परिवार में काम में लिए जाने वाले भोजन बनाने व परोसने के बर्तन तो हम बदल नहीं सकते, अत: यह आवश्यक है कि गृहिणी सन्दर्भ इकाई में दी गई मात्रा का अनुमान लगाने हेतु घर में उपलब्ध किसी बर्तन को माप के लिए चुन ले तथा उसमें भरे जाने वाले विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थों की मात्रा का अनुमान लगा लें। विविध भोज्य पदार्थों की मात्रा का अनुमान लगाने के लिए गृहिणी घर या आस-पड़ोस में उपलब्ध तराजू या मापक चम्मच व कप सेट या मापक गिलास का उपयोग भी कर सकती हैं।

अब हम उदाहरण के तौर पर यह देखेंगे कि एक किशोरी को दिन भर में विविध भोज्य पदार्थों की कितनी सन्दर्भ इकाइयां सम्मिलित करनी चाहिये ताकि उसका आहार संतुलित हो सके। तालिका में 13-18वर्ष की एक किशोरी के लिए दिन भर में आवश्यक विविध भोज्य पदार्थों की इकाई एवं कुल मात्रा दी गई है (कुल मात्रा=ग्राम/सन्दर्भ

किशोरी के लिए संतुलित आहार (13-18वर्ष; NIN, 2010)*

भोज्य समूह	ग्राम/सन्दर्भ इकाई	इकाई संख्या		कुल मात्रा (ग्राम)	
		13-15 वर्ष	16-18वर्ष	13-15 वर्ष	16-18वर्ष
अनाज	30	11	11	330	330
दाल	30	2	2.5	60	75
दूध (मि.लि.)	100	5	5	500	500
कंदमूल	100	1	2	100	200
हरी पत्तेदार सब्जियां	100	1	1	100	100
अन्य सब्जियां	100	2	2	200	200
फल	100	1	1	100	100
शक्कर	5	5	5	25	25
घी व तेल (Visible)	5	8	7	40	35

नोट :- मांसाहारी व्यक्ति प्रतिदिन के भोजन में 30 ग्राम दाल की जगह 50 ग्राम अण्डा/मांस/मछली आदि की एक इकाई का सेवन कर सकते हैं।

*Dietary Guidlines for Indians- A Manual

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई×इकाई संख्या)। भोज्य पदार्थों की ये मात्राएं राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद द्वारा प्रस्तावित की गई हैं।

उपरोक्त तालिका को देखने से पता चलता है कि आपको संतुलित आहार लेने के लिए पूरे दिन में विभिन्न भोज्य समूहों की विभिन्न इकाइयों (मात्रा) का उपभोग करना चाहिये। भोज्य पदार्थों की मात्राओं को हमें अपनी भोजन संबंधी आदतों व भोजन के समय के अनुरूप दिन भर के विविध आहारों में रुचिकर व्यंजनों के रूप में सम्मिलित करना चाहिये। आपकी सहायता के लिए उदाहरणस्वरूप एक किशोरी जिसकी उम्र 17–18वर्ष है, जो कक्षा 11 अथवा 12 की छात्रा है तथा सुबह 8बजे से दिन में 2 बजे तक विद्यालय में रहती है के लिए एक दिन की आहार योजना तालिका में दी जा रही है।

तालिका 10.1 : किशोरी के लिए आहार योजना

आहार/ समय	व्यंजन	परोस मात्रा	भोज्य समूह	इकाई संख्या
सुबह का नाश्ता	दूध	1 गिलास	दूध	2
7–7.30 बजे			शक्कर	2
	टोस्ट	2 ब्रेड/	अनाज	1
		1 पराँठा	मक्खन	1
स्कूल टिफिन	पोहा/उपमा/दलिया	1½ प्लेट	अनाज/बेसन	1½
10–11 बजे	इडली/ढोकला	2	तेल	½
			कंदमूल	½
			मूँगफली	½
दोपहर का भोजन	रोटी/चावल	2/1 करछी	अनाज	3
2–2.30 बजे			घी	1
	दाल पालक/लौकी दाल	1 कटोरी	दाल	1
			लौकी/हरी पत्तेदार सब्जी	½
			तेल	½
	लौकी या किसी अन्य	¾कटोरी	दूध	½
	सब्जी का रायता सलाद			¼
		1 प्लेट	अन्य सब्जियां	½
शाम की चाय	चाय	1 प्याला	दूध	½
5–6बजे			शक्कर	1
	मठरी/शक्कर पारा	3–4	अनाज	1
	/बिस्कुट		तेल	2
	मौसमी फल	1	फल	1
रात्रि का भोजन	रोटी	3	अनाज	3
8–9 बजे			घी	1
	चावल	½प्लेट	अनाज	1
	राजमा	1 कटोरी	दाल	1
			कंदमूल	½
			तेल	½
	पत्तागोभी आलू	1 कटोरी	पत्तागोभी	1
			आलू	½
			तेल	½
रात्रि सोने से पूर्व	दूध	1 गिलास	दूध	2
			शक्कर	2

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 10.2 : भोज्य पदार्थों की इकाइयों का योग। उपरोक्त आहार से प्राप्त विभिन्न भोज्य पदार्थों की इकाइयों का योग :-

भोज्य समूह	नाश्ता	टिफिन	दोपहर का भोजन	शाम की चाय	रात्रि का भोजन	सोने से पूर्व	कुल
अनाज	1	1½	3	1	3+1		10½
दाल		½	1		1		2½
दूध	2		½	½		2	5
कंदमूल		½	–		½+½		1½
हरी पत्तेदार			½		1		1½
सब्जियां	–	–	–	–	–	–	–
अन्य सब्जियां			½+¼		–		¾
फल				1			1
शक्कर/गुड	2			1		2	5
घी व तेल	1	½	1+½	2	1+½+½		7

उक्त तालिका में आपने देखा :

(i) हमने एक किशोरी के संतुलित आहार के लिये आवश्यक भोज्य पदार्थों की कुल मात्रा को इकाई संख्या के आधार पर पूरे दिन के विविध आहारों में वितरित कर दिया है।

(ii) यह आहार योजना एक दिन के लिए नमूना मात्र है। आप प्रतिदिन उपभोग हेतु भोज्य पदार्थों तथा उनसे बनने वाले व्यंजनों के चयन में परिवर्तन ला सकते हैं। लेकिन यह ध्यान रहे कि प्रत्येक भोज्य समूह में से भोज्य पदार्थों की कुल आवश्यक मात्रा की आपूर्ति हो जाये। विभिन्न भोज्य पदार्थों के बारे में आप कक्षा 11 में विस्तार से पढ़ चुके हैं। उदाहरण के लिये अनाज भोज्य समूह से गेहूँ, चावल, मक्का, बाजरा आदि तथा दाल समूह से चना, मूँग, अरहर, उड़द, सोयाबीन आदि का सेवन किया जा सकता है।

(iii) एक ही प्रकार के खाद्य पदार्थ से विविध व्यंजन जैसे अनाज से रोटी की जगह पराँठा, पूरी, बाटी आदि बना सकते हैं। इसी तरह नाश्ते में बिस्कुट की जगह पोहा, सूजी का उपमा, दलिया, पराँठा सादा या भरवाँ, इडली, डोसा, खमन इत्यादि खा सकते हैं। सादी दाल की जगह दाल के अन्य व्यंजन जैसे-सूखी दाल, कढ़ी, दाल के बड़े व हलुआ कचौरी आदि भी खा सकते हैं।

(iv) यह योजना एक भारतीय किशोरी की औसत पौषणिक आवश्यकताओं के अनुरूप है। किशोरियों की उम्र, शारीरिक गठन एवं क्रियाशीलता के अनुरूप उनकी व्यक्तिगत पौषणिक आवश्यकताओं में कुछ भिन्नता हो सकती है। एक छोटे कद की 14 वर्षीय छरहरे बदन वाली कम क्रियाशील किशोरी की पौषणिक आवश्यकताएं 16-18वर्षीय लम्बी व गठीले बदन की अधिक क्रियाशील किशोरी के मुकाबले कम होगी। ऐसे में छोटी किशोरी की मुख्यत: ऊर्जा सम्बन्धी आवश्यकताएं ही कम होती हैं जो कि आहार में अनाज, घी व शक्कर आदि की एक या दो इकाई में कमी करने से पूरी हो जाती है। अन्य भोज्य पदार्थ जैसे दूध, दालें, फल व सब्जियां जो कि वृद्धिकारक व सुरक्षात्मक भोज्य पदार्थ हैं, आहार में इनकी कमी नहीं करनी चाहिये।

(v) किशोरियों की व्यक्तिगत खुराक एवं भोजन सम्बन्धी आदतों के अनुरूप भी उपभोग में किये जाने वाले भोज्य पदार्थों की मात्रा कुछ कम या ज्यादा की जा सकती है, लेकिन यह परिवर्तन भी ऊर्जादायक भोज्य पदार्थों में ही किया जाना चाहिये, अन्य भोज्य पदार्थों में नहीं।

(vi) किशोरी की प्रतिदिन की आहार योजना में लचीलापन होना चाहिये, जैसे-किसी दिन अनाज की 10 इकाइयों की जगह 8-9 इकाइयां तो किसी दिन 11-12 इकाइयों का उपभोग भी कर सकते हैं। इसी तरह किसी दिन हरी पत्तेदार सब्जी बिल्कुल भी न खा सकें तो किसी दिन इसकी डेढ़ से दोगुना मात्रा खाने में ली जा सकती है। लेकिन ऐसा कोई परिवर्तन लम्बे समय तक (कमी या अधिकता की तरफ) नहीं होना चाहिये। लम्बे समय तक ऊर्जादायक भोज्य पदार्थ जैसे-मिठाइयों का सेवन अधिक मात्रा में मोटापे की तरफ ले जायेगा तो वृद्धिकारक या सुरक्षात्मक भोज्य पदार्थ जैसे-दाल, फल व सब्जियों में कमी होने पर शारीरिक वृद्धि में रुकावट या रोगग्रस्त होने की संभावनाएं बढ़ सकती हैं। अत: हमारी आहार योजना सामान्यत: सन्तुलित ही होनी चाहिये।

(vii) उपरोक्त आहार आयोजन में सम्मिलित भोज्य पदार्थों के स्थान पर सस्ते व उपलब्ध भोज्य पदार्थों का चयन कर हम कम आय में भी सन्तुलित आहार का आयोजन कर सकते हैं। उदाहरण के लिये राजमा की जगह चना दाल का चयन किया जा सकता है।

सन्दर्भ इकाई की सहायता से आहार आयोजन के लाभ :

(i) सन्दर्भ इकाई की सहायता से छात्र-छात्रा ही नहीं, अपितु एक कम पढ़ी-लिखी गृहिणी भी संतुलित आहार आयोजन सरलता से कर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सकती है।

(ii) आर्थिक स्थिति के अनुरूप भी आहार को आसानी से सन्तुलित कर सकते हैं।

(iii) भोजन के समूहों के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थ सम्मिलित होते हैं। परिवार के सभी सदस्यों की आयु, लिंग, अवस्था, क्रियाशीलता आदि आधार पर पौष्टिक तत्त्वों की माँग के अनुसार भोज्य पदार्थों का आसानी से चयन कर आहार को सन्तुलित बना सकती है।

(iv) भोज्य पदार्थों को बिना तोले या मापे घर में उपलब्ध किसी भी बर्तन में भरे जाने वाले विभिन्न भोज्य पदार्थों की मात्रा का अनुमान लगा सन्तुलित आहार का आयोजन कर सकते हैं।

(v) एक वर्ष तक के शिशु को उपभोक्ता इकाई में सम्मिलित नहीं करते हैं।

इस प्रकार आपने देखा कि थोड़ा सा चैतन्य होकर संदर्भ इकाइयों की सहायता से आप स्वयं के लिए सन्तुलित आहार का आयोजन कर सकते हैं। सन्तुलित आहार के उपभोग से आप स्वस्थ, क्रियाशील रहेंगे तथा अपने समाज व राष्ट्र के लिए सृजनात्मक कार्य कर सकेंगे। आगे के अध्याय में हम विभिन्न आयु, वर्ग, क्रियाशीलता एवं विशिष्ट शारीरिक स्थितियों के लिए आहार आयोजन का अध्ययन करेंगे। पौषणिक आवश्यकताएं शरीर में होने वाले परिवर्तन एवं समूह विशेष की पौषणिक समस्याओं को आधार मानकर निर्धारित की जाती है। अतः प्रत्येक अध्याय में इन बिन्दुओं को सम्मिलित किया गया है ताकि छात्र-छात्राएं व्यक्ति विशेष की आवश्यकताओं में भिन्नता समझते हुए आहार आयोजन कर सके।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. प्रत्येक घर में गृहिणी द्वारा आहार आयोजन किसी न किसी स्तर पर किया जाता है लेकिन जरूरी नहीं है कि वह आहार सन्तुलित हो।
2. आहार आयोजन के सिद्धान्तों एवं प्रभावित करने वाले कारकों को ध्यान में रखते हुए आहार आयोजन करना चाहिये।
3. हर गृहिणी का कच्चे भोज्य पदार्थ को मापने का तरीका, परोसने के लिए उपयोग में आने वाले बर्तनों का माप तथा तैयार व्यंजन के आकार में भिन्नता होती है।
4. गृहिणी विभिन्न भोज्य पदार्थों को मापने के लिये घर में उपलब्ध किसी एक बर्तन को चुन ले। उसमें भरे जाने वाले भोज्य पदार्थों का अनुमान लगाने के लिये तराजू, माप-चम्मच/कप/गिलास की मदद ले सकती है।
5. पौषणिक आवश्यकताओं के अनुरूप तथा सीमित साधनों द्वारा, स्वयं तथा अपने परिवार के लिये सन्तुलित आहार का आयोजन करने के लिए सन्दर्भ इकाई (Reference portion) का उपयोग करना चाहिये।
6. सन्दर्भ इकाई (Reference portion) खाद्य पदार्थ की उस कम मात्रा को कहते हैं जो उस खाद्य पदार्थ पर आधारित व्यंजन बनाने के लिये चाहिये।
7. सन्दर्भ इकाई की मदद से छात्र-छात्राएं एवं गृहिणियां विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थों को सम्मिलित कर, कम आय में, परिवार के सदस्यों की रुचि अनुसार सन्तुलित आहार का आयोजन कर सकती हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें-

(i) खाद्य पदार्थ की कम से कम मात्रा जो हमें उस खाद्य पर आधारित व्यंजन बनाने के लिए चाहिये है।

(अ) भोज्य समूह (ब) खाद्य पदार्थ

(स) सन्दर्भ इकाई (द) माप

(ii) हरी पत्तेदार सब्जियों की प्रति सन्दर्भ इकाई मात्रा है।

(अ) 50 ग्राम (ब) 200 ग्राम

(स) 100 ग्राम (द) उपरोक्त में से कोई भी नहीं

(iii) चार परिवार की किशोर बालिकाएं प्रतिदिन एक गिलास दूध पीती हैं जिसकी मात्रा होगी

(अ) असमान (ब) निश्चित

(स) समान (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

(i) आहार आयोजन पूरे दिन को एक .... मानकर करना चाहिये।

(ii) आहार में विभिन्नता लाने के लिए विविध भोज्य पदार्थों का चुनाव .... से करना चाहिये।

(iii) अपने परिवार के लिए सन्तुलित आहार का आयोजन करने के लिए हमें .... का प्रयोग करना चाहिये।

(iv) आहार आयोजन के .... एवं प्रभावित करने वाले .... को ध्यान में रखते हुए आहार आयोजन करना चाहिये।

(v) सस्ते व उपलब्ध भोज्य पदार्थों का चयन कर हम कम .... में भी सन्तुलित आहार का आयोजन कर सकते हैं।

3. सन्दर्भ इकाई किसे कहते हैं तथा इसका आहार आयोजन में क्या महत्त्व है।

4. एक कुशल गृहिणी के रूप में आप अपने घर का आहार आयोजन कैसे करेंगी? समझाइये।

उत्तरमाला :

1. (i) स, (ii) ब, (iii) अ

2. (i) इकाई, (ii) भोज्य समूह, (iii) संदर्भ इकाई, (iv) सिद्धान्त, कारकों, (v) आय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

11. शैशवावस्था में पोषण

Nutrition during Infancy

शिशु के जन्म के पश्चात् 1 वर्ष तक की अवस्था को शैशवावस्था कहते हैं। जन्म के बाद 30 दिनों तक वह नवजात शिशु तथा तत्पश्चात् शिशु कहलाता है। गर्भावस्था के बाद शैशवावस्था विकास का वह द्वितीय महत्त्वपूर्ण चरण है जिसमें वृद्धि व विकास की गति अति तीव्र होती है। प्रत्येक प्राणी के जीवनकाल में मुख्य रूप से तीन अवस्थाएं ऐसी हैं जो सर्वाधिक शारीरिक एवं मानसिक वृद्धि को प्रदर्शित करती है। ये अवस्थाएं हैं– जन्म के पूर्व की अवस्था, शिशु अवस्था तथा प्रारम्भिक किशोरावस्था।

शैशवावस्था के दौरान होने वाली शारीरिक वृद्धि व विकास के अनुसार एक स्वस्थ शिशु का जन्म भार 3.2 किलोग्राम तक होता है। जन्म भार गर्भावस्था के दौरान माँ के पोषण स्तर पर निर्भर करता है। शिशु का वजन 6माह में जन्म भार का दुगुना तथा 1 वर्ष में तिगुना हो जाता है। एक स्वस्थ शिशु की लम्बाई 50 से 55 से.मी. जन्म के समय होती है जो कि एक वर्ष पूरा होने पर उस लम्बाई में 23 से 25 से.मी. और वृद्धि हो जाती है। जैसे–जैसे शिशु की लम्बाई में परिवर्तन आता है उसी के अनुसार शिशु के शरीर के अनुपात में भी परिवर्तन आता रहता है जो कि शिशु की उपयुक्त वृद्धि व विकास का द्योतक है।

जन्म के समय शिशु के शरीर में पानी की मात्रा 75 प्रतिशत तथा 12–15 प्रतिशत वसा पायी जाती है। एक साल के अन्त तक शिशु के शरीर में पानी की मात्रा घटकर 60 प्रतिशत हो जाती है तथा वसा की मात्रा बढ़ कर 24 प्रतिशत हो जाती है। एक वर्ष के अन्त तक शिशु की मांसपेशियों का विकास पूरा हो जाता है। शैशवावस्था में शिशु के मस्तिष्क का विकास 90 प्रतिशत तक पूरा हो जाता है तथा सिर की गोलाई के माप में भी अधिकतम वृद्धि होती है। जन्म के समय छाती व सिर के घेरे का अनुपात जो कि एक से भी कम था, शैशवावस्था खत्म होते–होते यह एक से अधिक बढ़ जाता है जो कि शिशु की उपयुक्त वृद्धि व विकास का द्योतक है।

नवजात की हृदय गति अधिकतम होती है 120–140/1 मिनट। जन्म के समय शिशु के रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा 17–20 ग्राम/100 मि.लि. तक होती है। शिशु की लाल रक्त कणिकाएं जल्दी–जल्दी टूटती हैं व 2 माह में ही हीमोग्लोबिन स्तर गिर कर 12 ग्राम/100 मि.लि. तक आ जाता है, लेकिन लाल रक्त कणिकाओं के टूटने से निकलने वाले हीमोग्लोबिन का उपयोग पुन: नई रक्त कणिकाएं बनाने के लिये हो जाता है। जैसे–जैसे शिशु की वृद्धि व विकास होता है तथा शरीर में तरल द्रव्य रक्त की मात्रा बढ़ती जाती है, वैसे–वैसे हीमोग्लोबिन का स्तर भी कम होता जाता है। नवजात की आहारनाल पूर्णत: परिपक्व नहीं होती। नवजात की आहारनाल मातृ दुग्ध प्रोटीन, पायसीकृत वसा तथा सरल कार्बोज का ही पाचन कर पाती है। धीरे–धीरे कुछ ही महीनों में इन पोषक तत्त्वों के पाचन के लिये भी एन्जाइम स्रावित होने लगते हैं। नवजात का उत्सर्जन तंत्र तथा वृक्क अपरिपक्व होते हैं। उसके वृक्क अधिक लवणीय रक्त को नहीं छान सकते तथा मूत्र का सांद्रण भी नहीं कर पाते लेकिन शैशवावस्था खत्म होते–होते शिशु के वृक्क वयस्कों की भाँति कार्य करने लगते हैं।

शैशवावस्था में पोषक तत्त्वों की आवश्यकता–

शैशवावस्था में पोषण स्तर 3 कारकों से प्रभावित होता है :

1. गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था के दौरान माता का पोषण स्तर
2. स्तनपान या ऊपरी दूध व भोजन की पर्याप्तता
3. माता व पिता से प्राप्त जन्मजात विशेषताएं जैसे–छोटे कद वाले माता–पिता की संतान कद में छोटी तथा मोटे माता–पिता की संतान के भविष्य में मोटे होने की संभावनाएं अधिक होंगी।

ऊर्जा : शोध द्वारा यह ज्ञात होता है कि शिशु को ऊर्जा की आवश्यकता वयस्क से प्रति यूनिट शारीरिक भार अधिकतम होती है। जन्म के बाद प्रथम 6माह में ऊर्जा की आवश्यकता अधिकतम 92 किलो कैलोरी/किलोग्राम शरीर भार है, जो कि 6माह बाद कम होकर 80 किलो कैलोरी/किलोग्राम शरीर भार ही रह जाती है। प्रथम 6माह में शिशु के वजन में वृद्धि की दर सर्वाधिक होती है जो कि 6माह के बाद धीरे–धीरे कुछ कम हो जाती है। शिशु को यह ऊर्जा माँ के दूध में तथा पूरक आहार में उपस्थित प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट से प्राप्त होती है।

प्रोटीन : शिशु को प्रोटीन की आवश्यकता एक सामान्य व्यक्ति सेक हींअ धिकह ोतीह ै ।ब ढ़तेह ुएश ारीरके ि नर्माणह ेतुप ्रोटीनक ी आवश्यकता प्रथम 6माह में 1.16ग्राम/कि.ग्रा. तथा 6–12 माह में 1.69

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 11.1 : शैशवावस्था के दौरान शिशु की पोषण संबंधी आवश्यकताएं तालिका में दी गई हैं।

पोषक तत्त्व	शिशु की आयु	
	0-6माह	6-12 माह
ऊर्जा (कि. कै./क्रि.गा वजन)	92	80
प्रोटीन (ग्रा/कि.ग्रा. वजन)	1.16	1.69
प्रत्यक्ष वसा (ग्रा.)	-	19
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	500	500
लोह तत्त्व (मि.ग्रा. वजन)	46	05
जिंक (मि.ग्रा.)	-	-
मैग्निशियम (मि.ग्रा.)	30	45
रेटीनोल (मा.ग्रा.)	350	350
बीटा-कैरोटीन (मा.ग्रा.)	-	2800
थायमिन (मि.ग्रा.)	0.2	0.3
राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	0.3	0.4
नियासिन (मि.ग्रा./वजन)	710	650
विटामिन बी$_6$ (मि.ग्रा.)	0.1	0.4
विटामिन सी (मि.ग्रा.)	25	25
फोलेट (मा.ग्रा.)	25	25
विटामिन बी$_{12}$ (माग्रा.)	0.2	0.2

RDA- 2010 (NIN)

ग्राम/कि.ग्रा. होती है। शिशु के शारीरिक भार में यह वृद्धि, सम्मिलित रूप से मांसपेशियों के बढ़ने, मस्तिष्क का विकास, हड्डियों के लम्बाई व मोटाई में बढ़ने के कारण होती है।

वसा : शिशु को वसा अपनी आवश्यकतानुसार दूध से प्राप्त हो जाता है। शिशु के उचित पोषण के लिए लिनोलिक अम्ल की अधिक आवश्यकता होती है जो कि माता के दूध में अधिक पाया जाता है। शिशु के शरीर में वसीय अम्ल की कमी होने से उनके विकास में कमी आ जाती है तथा शरीर पर जगह-जगह सफेद धब्बे पड़ जाते हैं।

खनिज लवण : शिशु को मुख्य रूप से कैल्शियम, फास्फोरस, लौह तत्त्व, मैग्निशियम की अधिक आवश्यकता होती है। कैल्शियम तथा फास्फोरस शिशु में अस्थियों तथा दांतों का निर्माण करते हैं जबकि लौह-लवण रक्त में हीमोग्लोबिन के निर्माण में सहायक होते हैं। लौह-लवण को छोड़कर बाकी सभी खनिज लवणों की आवश्यकता की पूर्ति शिशु को माता के दूध से हो जाती है।

विटामिन : माता तथा पशु दूध में सभी प्रकार के विटामिन्स पाये जाते हैं। शिशु अपने लिए आवश्यक विटामिन्स की मात्रा माँ के दूध से ही प्राप्त कर लेता है।

विटामिन 'ए'- माँ के दूध में विटामिन 'ए' की पूर्ण मात्रा पायी जाती है। विटामिन 'डी' कैल्शियम तथा फास्फोरस के अवशोषण के लिए महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि यह माता एवं गाय के दूध में पाया जाता है लेकिन दूध शिशु की आवश्यक विटामिन 'डी' की पूर्ति नहीं कर पाता है। इसलिए 'डी' को बाह्य रूप से देना आवश्यक होता है।

विटामिनट 'सी' की आवश्यकता शिशु माँ के दूध से पूरा करता है जबकि छः माह के शिशु की विटामिन 'सी' की आवश्यकता इसकी ड्रोप्स पिलाकर पूरी की जाती है।

विटामिन 'बी' समूह पर्याप्त मात्रा में माता तथा गाय के दूध में विद्यमान रहता है। इसलिए शिशुओं में विटामिन 'बी' समूह की आवश्यकता दूध से पूरी हो जाती है। लेकिन जो शिशु कमजोर माँ से उत्पन्न होते हैं तथा जो कमजोर होते हैं उन्हें अतिरिक्त विटामिन 'बी' समूह की आवश्यकता पड़ती है।

आहार व्यवस्था : शिशुओं की पौषणिक आवश्यकताओं को देखते हुए उनकी आहार व्यवस्था भी दो भागों में यानी कि 0-6तथा 6-12 माह के शिशु के लिए अलग-अलग वर्णित की जा रही है।

(अ) 0-6 माह के शिशु की आहार व्यवस्था- नवजात शिशु के लिए माता का दूध अमृतोपम होता है। नवजात शिशु को जितना लाभदायक एवं पौष्टिक माता का दूध सिद्ध होता है उतनी संसार की कोई अन्य वस्तु नहीं हो सकती। इस समय शिशु को अनिवार्यतः केवल स्तनपान कराना चाहिये तथा अन्य कोई भी भोज्य पदार्थ नहीं देना चाहिये,

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चाहे वह जन्म घुट्टी हो या चाय, दूध, फलों का रस या केवल पानी ही क्यों न हो।

कोलस्ट्रम : शिशु के जन्म के तुरन्त बाद माँ के स्तनों का प्रथम स्रवण हल्के पीले रंग का गाढ़ा, क्षारीय तरल द्रव्य होता है जिसमें भरपूर प्रोटीन एवं प्रतिरक्षी पदार्थ होते हैं, जो शिशुओं को जीवन पर्यन्त विविध रोगों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसे खीस या कोलस्ट्रम कहते हैं। माँ के स्तनों से कोलस्ट्रम का स्राव प्रारम्भिक 2-3 दिनों तक 10-40 एम.एल. होता है, तत्पश्चात् यह श्वेत रंग के पतले दूध में परिवर्तित होने लगता है तथा 10 दिनों में पूर्ण परिपक्व दूध स्रावित होने लगता है। कोलस्ट्रम को हेय, तुच्छ व गंदा स्राव समझकर फेंकना नहीं चाहिये। इसे नवजात शिशु को जरूर पिलाना चाहिये। कोलस्ट्रम में प्रोटीन की मात्रा अधिक पायी जाती है, परन्तु इसमें वसा की मात्रा परिपक्व दूध से कम पायी जाती है। इसमें विटामिन ए और विटामिन k की मात्रा भी अधिक मात्रा में पायी जाती है। जिंक की मात्रा कोलस्ट्रम में 20 मिग्रा/लीटर जबकि परिपक्व दूध में 2.6मिग्रा/लीटर पायी जाती है। कोलस्ट्रम में उपस्थित पोषक तत्त्व की मात्रा तालिका 11.2 में दी गई है।

कोलस्ट्रम शिशु की अपरिपक्व आहार नाल के अनुकूल सुपाच्य होता है तथा शिशु के प्रथम मल के उत्सर्जन में भी सहायता करता है। कोलस्ट्रम के पश्चात् स्रावित होने वाले परिपक्व दूध का संघटन एवं मात्रा भी उसकी पौषणिक आवश्यकताओं एवं शारीरिक ग्राह्यता के अनुरूप होती है।

तालिका 11.2 : पोषणीय आवश्यकता

पोषक	तत्त्व मात्रा
ऊर्जा (किलो कैलोरी)	58
वसा (ग्रा.)	2.9
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	31
फास्फोरस (मि.ग्रा.)	14
लौह (मि.ग्रा.)	0.09
प्रोटीन (ग्रा.)	27
लेक्टोज (ग्रा.)	5.3

तालिका 11.3 : विविध प्रकार के दूध का संघटन (प्रति 100 मि.लि. में)

पोषक तत्त्व	मानव	गाय	भैंस
पानी (ग्रा.)	88	87.5	81
ऊर्जा (किलो कैलोरी)	65	67	117
प्रोटीन (ग्रा.)	1.1	3.2	4.3
कार्बोज (ग्रा.)	7.4	4.4	5
वसा (ग्रा.)	3.4	4.1	6.5
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	28	120	210
फास्फोरस (मि.ग्रा.)	11	90	130
लौह तत्त्व	-	0.2	0.2
कैरोटीन (मा.ग्रा.)	137	174	160
थायमिन (मि.ग्रा.)	0.02	0.05	0.04
राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	0.02	0.19	0.1
विटामिन सी (मि.ग्रा.)			
कैसीनोजिन एवं लैक्टोएल्ब्यूमिन	1.2	3.1	-

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

स्तन दुग्ध का संघटन तथा स्तनपान

'माता का दूध ही सर्वोत्तम दूध है।' माँ का दूध शिशु के लिये अमृत समान होता है। शैशवावस्था के प्रारम्भिक महीनों में शिशु के पाचन अंग अत्यन्त अपरिपक्व अवस्था में होते हैं। वे केवल माता के दूध को छोड़कर कोई अन्य वस्तु सरलता से नहीं पचा पाते हैं। इसलिए स्तनपान ही बच्चे के लिए सबसे उत्तम आहार है। माँ का दूध प्रारम्भ में पतला होता है लेकिन जैसे-जैसे शिशु के पाचन अंगों में मजबूती आती जाती है, दूध में भी गाढ़ापन बढ़ता जाता है। जो माताएं अपने शिशुओं को स्तनपान नहीं कराती हैं, उनके बच्चे कमजोर तथा अधिकांशत: बीमार रहते हैं। तालिका : 11.3 में मनुष्य के स्तन दुग्ध की तुलना गाय व भैंस के दूध से की गई है, जो कि स्तन दूध के अभाव में सामान्यत: शिशु को पिलाये जाते हैं।

स्तनपान से लाभ :-

(i) माँ के दूध में लैक्टोज की मात्रा अधिक पायी जाती है जो कि मैग्निशियम, कैल्शियम तथा एमीनो एसिड के अवशोषण में सहायक होता है।

(ii) माता का दूध स्वच्छ एवं जीवाणुरहित होता है जिससे शिशु में किसी भी प्रकार की विषाक्तता का भय नहीं रहता है।

(iii) माता के दूध में शिशु के लिए आवश्यक सभी प्रकार के पौष्टिक तत्त्व सरलता से मिल जाते हैं।

(iv) माता का दूध शिशु को सही तापक्रम पर प्राप्त हो जाता है तथा दूध को गर्म नहीं करना पड़ता है।

(v) माता के दूध में लैक्टोफेरिन नामक प्रोटीन होता है जो कि शिशु को आँत से सम्बन्धित रोगों के लिए क्षमता प्रदान करती है।

(vi) माता के दूध में अत्यधिक मात्रा में प्रोटीन एवं एण्टीबॉडीज विद्यमान होती है जो कि शिशु को कुपोषण से बचाते हैं तथा गंभीर रोगों से शिशु की रक्षा करते हैं।

(vii) माँ के दूध में लैक्टोज की मात्रा अधिक होने से शिशु को कब्ज की शिकायत नहीं रहती।

(viii) स्तनपान कराने से माता के शरीर में गर्भाशय तथा स्तन की मांसपेशियां, जो कि गर्भ के समय बढ़ जाती हैं, संकुचित होकर सही स्थिति में आ जाती है।

(ix) स्तनपान कराने से बच्चे में Sucking Reflex संतुष्ट होता है तथा शिशु के मुँह का व्यायाम भी होता है जिससे जबड़ों, मुँह तथा गाल की मांसपेशियों के निर्माण में सहायता मिलती है तथा दांत भी सही प्रकार से निकलते हैं।

(x) स्तनपान कराने से माता को मानसिक तृप्ति मिलती है। शिशु भी सन्तुष्टि का अनुभव करता है। इस प्रकार दोनों का भावात्मक सम्बन्ध सुदृढ़ होता है।

(xi) स्तनपान में न तो माता को दूध तैयार करना होता है और न ही कोई पैसा खर्च करना पड़ता है। इस प्रकार दोनों का भावात्मक सम्बन्ध सुदृढ़ होता है

(xii) स्तनपान शिशु की मृत्यु दर को कम करता है।

(xiii) माता के दूध में लवणों की सान्द्रता कम लेकिन शिशु की आवश्यकता के अनुरूप होने से अतिरिक्त लवणों के उत्सर्जन का अनावश्यक भार शिशु के अपरिपक्व वृक्क पर नहीं पड़ता है।

स्तनपान की तैयारी तथा पर्याप्तता :

माता को स्तनपान कराने से पहले तथा बाद में अपने स्तनों को अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिये। जब शिशु माता के स्तनों को चूसता है तो दुग्ध स्त्रावण ग्रन्थियां उत्तेजित हो जाती हैं तथा अधिक मात्रा में दुग्ध का स्त्राव करती है। नवजात शिशु का आमाशय इतना छोटा होता है कि एक बार में 10-12 मि.लि. दूध ही आ सकता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ 1 माह में शिशु के आमाशय की क्षमता 100 मि.लि. दूध तथा 12 माह में 200 मि.लि. दूध तक पहुँच जाती है। इसलिए आरम्भ में शिशु को प्रत्येक 1 घण्टे के अन्तराल पर दूध पिलाना पड़ता है जो कि धीरे-धीरे बढ़ता हुआ 2-3 घण्टे तक पहुँच जाता है व दूध पीने की बारम्बारता में भी कमी आती है।

स्तनपान का समय :

स्तनपान का समय दो प्रकार से निर्धारित किया जाता है।

(i) माँग स्तनपान

(ii) समयानुसार स्तनपान

माँग स्तनपान :-

माँग स्तनपान से तात्पर्य है कि शिशु की माँग अर्थात् रोने पर उसे स्तनपान कराना। जब भी शिशु रोता है, उसे स्तनपान करा दिया जाता है। इसमें कठिनाई तब आती है जब शिशु मुख के अतिरिक्त किसी अन्य कारण जैसे-कान में दर्द, पेट में दर्द, बिस्तर गीला होना आदि कारणों से रोता है व माँ को इसका पता नहीं चलता।

समयानुसार स्तनपान :-

समयानुसार स्तनपान में शिशु को घड़ी के अनुसार समय-समय पर स्तनपान कराया जाता है। सामान्यतया माँग के अनुरूप दूध पिलाने पर शिशु कुछ ही दिनों में स्वयं अपने दूध का समय व अन्तराल निश्चित कर लेता है।

स्तनपान की विधि :

* माता को स्तनपान कराने के पूर्व तथा बाद में अपने स्तनों को अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिये।
* माता को सदैव बैठकर दूध पिलाना चाहिये तथा शिशु का सिर धड़ से थोड़ा ऊपर होना चाहिये। शिशु को हमेशा आराम की अवस्था में चिन्तामुक्त होकर दूध पिलाना चाहिये जिससे दुग्ध का स्त्राव अधिक होता है।
* स्तनपान के लिये चूचुक के अतिरिक्त आसपास का पूर्ण क्षेत्र उसके मुख में देना चाहिये जिससे शिशु के चूसने की प्रक्रिया का पूर्ण दबाव स्तनों पर पड़े।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

* स्तनपान के दौरान शिशु को बारी-बारी से अदल-बदल कर दोनों स्तनों से स्तनपान करवायें।
* शिशु साधारण वेग से स्तनपान करता है। पेट भर जाने पर वह स्वयं ही दूध पीना छोड़ देता है और सो जाता है। यदि बच्चा स्तनपान के बाद तुरन्त सो जाये तथा काफी समय तक सोता रहे तथा प्रति सप्ताह पर्याप्त शारीरिक विकास हो रहा हो तो यह समझना चाहिये कि शिशु को पर्याप्त दूध मिल रहा है।
* स्तनपान कराने के पश्चात् माता को शिशु की पीठ थपथपा कर डकार अवश्य दिलानी चाहिये जिससे स्तनपान के दौरान शिशु जो हवा अपने अन्दर ले लेता है, वह निकल जाये।
* कई बार दूध का निर्माण जरूरत से ज्यादा होता है या माँ किसी कारणवश बच्चे को स्तनपान न करा सके तो दूध की वजह से स्तन अत्यधिक भारी हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में माँ को स्वयं स्तनों से दूध निकालकर उन्हें खाली कर देना चाहिये अन्यथा दुग्ध वाहिकाओं में यह दूध जमकर स्तनों को भारी बना देता है। इस वजह से स्तनपान कराने में भी कष्ट होता है।

स्तनपान में बाधाएं :

माता का दूध शिशु के लिये अतुलनीय, अमूल्य, पूर्ण एवं सर्वोत्तम आहार है जो शिशु के उपयुक्त वृद्धि एवं विकास के लिये आवश्यक है किन्तु कई बार निम्नलिखित अपरिहार्य कारणों से शिशु स्तनपान नहीं कर पाता है।

(i) माता को गम्भीर रोग जैसे-हिपेटाइटिस, हृदयरोग, नेफ्राइटिस आदि हो जाने पर।

(ii) माता के अतिशीघ्र गर्भ धारण कर लेने पर।

(iii) शिशु का वजन अत्यधिक कम होने पर या शिशु के कटे होँठ या फटी तालु के कारण शिशु का स्वयं स्तनपान न कर पाना।

(iv) माता के स्तनों में पर्याप्त दुग्ध निर्माण व स्रावण न होने पर।

(v) माता की अनुपस्थिति

(vi) माता की असमय मृत्यु हो जाने पर।

ऐसीप रिस्थितियोंम ेंि शशुके ज ीवनक ेब नायेर खनेत था पोषण प्रदान करने के लिये शिशु को ऊपरी दूध कप, कटोरी तथा बोतल की सहायता से दिया जाता है। ऊपरी दूध के रूप में शिशु को या तो गाय, बकरी, भैंस आदि पशुओं का दूध दिया जाता है या फिर शिशुओं के लिये विशेष रूप से तैयार किया गया दूध पाउडर। दोनों ही प्रकार के दूध को शिशु के लिये तैयार करना पड़ता है।

पशु दूध :-

पशु का दूध, माता के दूध से भिन्न होता है। माता के दूध के पश्चात् गाय का दूध शिशु के लिये सबसे उत्तम माना जाता है। पशु दुग्ध में प्रोटीन व खनिज लवणों की सान्द्रता बहुत अधिक है व लैक्टोज शर्करा की कमी है। इस कारण छोटे शिशु को पशु दूध में कुछ पानी तथा शक्कर मिलाकर दिया जाता है। आयु के अनुरूप शिशु को गाय का दूध निम्न अनुपात में पानी मिलाकर देना चाहिये।

गाय के दूध को देने से पहले उसे अच्छी तरह उबाल लेना चाहिये जिससे दूध कीटाणु रहित हो जाता है।

पाउडर दूध :

इसे दुग्ध फार्मूला भी कहते हैं। बहुत से शिशु गाय, बकरी, भैंस आदि का दूध पचा नहीं पाते हैं। कई बार कम जन्म भार वाले शिशु एवं समय से पूर्व जन्म लेने वाले शिशुओं के लिए पशु दूध उपयुक्त नहीं रहता है। ऐसी परिस्थितियों में शिशु को बाजार में उपलब्ध डिब्बाबंद दूध दिया जाता है। यह फार्मूला दूध का संघटन तथा संरचना लगभग माँ के दूध के समान तथा शिशु की विशेष पौषणिक आवश्यकताओं के अनुरूप होती है। शिशु की आयु व भार के अनुसार दूध पाउडर की मात्रा तथा इसे तैयार करने की विधि डिब्बे पर निर्देशित होती है। इस पाउडर दूध को डिब्बे पर लिखे निर्देशानुसार स्वच्छ उबले पानी से नि:संक्रमित किये गये बर्तन में तैयार करें तथा नि:संक्रमित की गई कटोरी-चम्मच या बोतल से शिशु को पिलायें। दूध देने के लिये जहां तक सम्भव हो कप या कटोरी-चम्मच का उपयोग करे, बोतल का नहीं। बोतल की सफाई ठीक से नहीं होने पर उसमें जीवाणुओं के पनपने, दूध के संदूषित होने व शिशु के बीमार पड़ने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

6-12 माह के शिशु की आहार व्यवस्था :

शुरू के 4-6महीनों में माता का दूध ही शिशु के लिये सभी पौष्टिक तत्त्वों की पूर्ति कर देता है। तत्पश्चात् शिशु की बढ़ती हुई पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ऊपरी आहार देना आवश्यक हो जाता है।

स्तन त्याग :-

स्तन त्याग से तात्पर्य है शिशु को माँ का दूध छुड़ाना तथा साथ ही मिश्रित आहार की थोड़ी-थोड़ी मात्रा देना अर्थात् स्तनपान को कम

तालिका 11.4 : दूध एवं पानी का अनुपात

आयु	दूध व पानी का अनुपात
0-15 दिन	दिन 1 भाग दूध + 1 भाग पानी
2-6 सप्ताह	2 भाग दूध + 1 भाग पानी
11/2 माह-3 माह	3 भाग दूध + 1 भाग पानी
3 माह से अधिक	बिना पानी वाला दूध

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

करते हुए शिशु को ऊपरी आहार देना।

शिशु की वृद्धि व विकास की दर को बनाए रखने के लिये स्तन दूध के अतिरिक्त दिये जाने वाले ये आहार पूरक आहार/अनुपूरक आहार या परिपूरक आहार कहलाते हैं।

शिशु की उम्र बढ़ने के साथ-साथ मातृ स्तनों में भी दुग्ध निर्माण व स्त्रवण कम हो जाता है। इस कारण माँ स्तनपान के समय का अन्तराल बढ़ाते हुए प्रतिदिन कराये जाने वाले स्तनपान की संख्या में धीरे-धीरे कमी करती है।

माता को स्तन त्याग की प्रक्रिया 6माह से शुरू करनी चाहिये तथा यह प्रक्रिया बहुत ही धीमी गति से होनी चाहिये। यह भी एक प्रकार की कला है जिसमें माता को काफी मेहनत करनी पड़ती है। यदि शिशु को एकदम स्तनपान कराना बन्द कर दिया जाये तो शिशु चिड़चिड़ा हो जाता है तथा माता के स्तनों में भी पीड़ा होने लगती है। स्तनपान छुड़ाने के लिए स्तनों पर कड़वी चीजों जैसे-कुनैन की गोली, नीम आदि का लेप कभी भी नहीं करें। ऐसा करने से शिशु चिड़चिड़ा हो जायेगा और किसी भी प्रकार के दूध व भोजन का सेवन नहीं करेगा।

पूरक आहार :-

शिशु को पूरक आहार प्रारम्भ करना एक क्रमिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक शिशु पूर्णतः दुग्ध आहार की जगह विविधतापूर्ण पारिवारिक भोजन लेने लगता है। इस दौरान शिशु पूर्णतः दुग्ध आहार के स्थान पर घर में बनने वाले विविध भोजन लेने लगता है। पूरक आहार के रूप में शिशु को पूर्ण तरल भोज्य पदार्थ जैसे-फलों का रस, दाल का पानी, दूध आदि से प्रारम्भ कर धीरे-धीरे अर्द्ध ठोस भोज्य जैसे-सूजी की खीर, पतली खिचड़ी एवं दलिया, ठोस-मुलायम भोज्य जैसे-मसला केला, उबला आलू, मसले हुए दाल-चावल, दाल/सब्जी में मसली चपाती तथा पूर्ण ठोस भोज्य पदार्थ जैसे-चपाती, बिस्कुट, मठरी, टोस्ट, सेब आदि दिये जाते हैं।

शिशुक ाेब ढ़तीउ म्रके स ाथ-साथर् शशुक ोि नम्नप ूरक आहार दिये जा सकते हैं :

इस प्रकार 1 वर्ष का होते-होते शिशु घर में पकाए जाने वाले सभी प्रकार के भोज्य पदार्थों को खाने लगता है। छः माह के शिशु को 2-2 घण्टे के अन्तराल पर बारी-बारी से स्तनपान तथा पूरक आहार देवें। धीरे-धीरे समय अन्तराल बढ़ाते हुए 12 माह के शिशु को 3 से 4 घण्टों के अन्तराल पर स्तनपान तथा पूरक आहार दें।

शिशुओं की पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सभी भोज्य समूहों में से विविध भोज्य पदार्थ सन्तुलित आहार तालिका 13.3 के अनुसार देवें। उदाहरण के लिये छः, नौ व बारह माह के शिशु की एक दिन की आहार व्यवस्था क्रमशः तालिका में दी गई है। इन आहार तालिकाओं में अपनी सुविधानुसार परिवर्तन किये जा सकते हैं।

शिशु को पूरक आहार देते समय निम्न बातों का ध्यान रखें :

(i) आहार शिशु के विकास को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त मात्रा में और पर्याप्त पोषक तत्त्वों से युक्त होना चाहिये।

(ii)ए कब ारम ेंके वलए कह ान याप दार्थस म्मिलितर् कयाज ाना चाहिये।

(iii) प्रारम्भ में शिशु भोज्य पदार्थ को मुँह से बाहर निकाल देता है। इसका मतलब यह कतई नहीं है कि भोजन उसे पसन्द नहीं आया बल्कि इसका कारण यह है कि शुरू-शुरू में शिशु को भोजन निगलना नहीं आता है।

तालिका 11.5 : पूरक आहार की सूची

आयु	पूरक आहार
5-6माह	ताजे फल जैसे-संतरे, मौसम्मी का रस, ऊपरी दूध, नारियल पानी, टमाटर व गाजर का रस, दाल, चावल का पानी आदि।
6-7 माह	सूजी की पतली खीर, दाल/सब्जियों का सूप, पतली खिचड़ी/दलिया, दही, उबाल कर मसला हुआ आलू, केला, पपीता, बाजार में उपलब्ध डिब्बाबन्द पूरक आहार आदि।
7-8माह	घर में पकाए हुए विविध भोज्य, जैसे-दाल, सब्जी, रायता, मसली हुई मुलायम चपाती या चावल के साथ अण्डे की जर्दी, बिस्कुट, टोस्ट, मठरी, गाजर, सेब या अन्य फल।
8-10 माह	उपरोक्त के अतिरिक्त मांसाहारी व्यक्ति मुलायम उबला अंडा तथा मांस का शोरबा या सूप सम्मिलित कर सकते हैं।
10-12 माह	घर में बनने वाले सभी प्रकार के भोज्य पदार्थों के साथ-साथ मुलायम, पका हुआ मांस/मछली आदि भी सम्मिलित कर सकते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(iv) नये आहार की मात्रा एक समय में बहुत थोड़ी होनी चाहिये।

(v)ि शशुक ोि नयमितस मयअ ौरअ ानन्ददायकव ातावरणम ेंअ ाहार परोसा जाये।

(vi) प्रारम्भ में शिशु को तरल भोज्य पदार्थ ही देने चाहिये। फिर धीरे-धीरे अर्द्ध-ठोस पदार्थ तथा ठोस पदार्थ प्रारम्भ करना चाहिये।

(vii) फलों का जूस कप में देना चाहिये, बोतल में नहीं।

(viii) शिशु का भोजन सादा व ताजा होना चाहिये।

(ix) अगर शिशु स्वयं खाने का प्रयास करता है तो चम्मच या रोटी का टुकड़ा उसके हाथ में पकड़ा देना चाहिये तथा उसे स्वयं खाने देना चाहिये।

(x) पूरक आहार स्तनपान के साथ-साथ दिया जाना चाहिये।

(xi) भोज्य पदार्थ का ऊर्जा मूल्य बढ़ाने के लिये पूरक आहार में थोड़ा-सा घी या तेल मिलाकर देना चाहिये।

(xii) शिशु की स्वाद कलिकाएं बहुत अधिक विकसित नहीं होती हैं। अत: उसे नित्य प्रतिदिन जितने अधिक नये-नये भोज्य पदार्थ खिलाये जायेंगे वह बड़ा होकर उतना ही विविधतापूर्ण भोजन ग्रहण करेगा।

(xiii) पूरक आहार में नमक व शर्करा की मात्रा कम रखनी चाहिये तथा मीठे व्यंजन भी बहुत अधिक नहीं देने चाहिये।

(xiv) शिशु का आहार सामान्य तापक्रम का होना चाहिये, न बहुत अधिक गर्म और न अधिक ठंडा।

(xv) यदि ऐसा लगे कि शिशु किसी भोज्य पदार्थ में अरुचि दिखा रहा है तो उसे कुछ दिन के लिये बन्द कर देना चाहिये तथा थोड़े दिन बाद पुन: किसी अन्य व्यंजन के रूप में खिलाकर देखना चाहिये।

(xvi) शिशु का भोजन बहुत ही साफ, स्वच्छ बर्तनों में पकाना व खिलाना चाहिये।

(xvii) आहार आयोजन करते समय आर्थिक स्थिति को भी ध्यान में रखा जाना चाहिये।

(xviii) शिशु को भोजन उसके अलग से प्लेट-प्यालों आदि में देना चाहिये तथा ध्यान रखें कि प्लेट व प्याले काँच व चीनी-मिट्टी के न हो तथा उनकी किनारियां तीखी न हों।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. शिशु के जन्म के पश्चात् 1 वर्ष तक की अवस्था को शैशवावस्था कहते हैं। गर्भावस्था के बाद शैशवावस्था विकास का वह द्वितीय महत्त्वपूर्ण चरण होता है, जिसमें वृद्धि व विकास की गति अति तीव्र होती है।

2. शैशवावस्था के दौरान शिशु के शरीर में विभिन्न परिवर्तन होते हैं :

(अ) सामान्य शिशु का जन्म भार लगभग 3.2 कि.ग्रा. तक होता है जो कि 4-6माह में दुगुना तथा 1 वर्ष में तिगुना हो जाता है।

(ब) नवजात शिशु की आहारनाल पूर्णत: परिपक्व नहीं होती, पर धीरे-धीरे कुछ ही महीनों में पाचन के लिये एन्जाइम स्रावित होने लगते हैं।

(स) हीमोग्लोबिन का स्तर जन्म के समय से कम होकर सामान्य हो जाता है।

(द)न वजातक ाउ त्सर्जनत ंत्रत थाव ृक्कअ परिपक्वह ोतेह ैंल ेकिन शैशवावस्था खत्म होते-होते शिशु के वृक्क वयस्कों के भाँति कार्य करने लगते हैं आदि।

3. शैशवावस्था में पोषण स्तर गर्भावस्था एवं धात्रीवस्था के दौरान माता के पोषण स्तर, स्तनपान या ऊपरी दूध व भोजन की पर्याप्तता तथा माता व पिता से प्राप्त जन्मजात विशेषताओं से प्रभावित होता है।

4. शैशवावस्था के समय तीव्र वृद्धि व विकास की दर को बनाए रखने के लिए सभी पोषक तत्त्वों की आवश्यकताएं अधिकतम होती है।

5. 6माह पश्चात् शिशु की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु स्तनपान के साथ-साथ उसे ऊपरी आहार की भी आवश्यकता होती है।

6. 0-6माह तक के शिशु की सभी आवश्यकताएं मातृ दूध से परिपूर्ण हो जाती है, यहाँ तक कि जल की आवश्यकता भी नहीं होती।

7. माँ का दूध अन्य दूध के मुकाबले स्वच्छ, जीवाणु व कीटाणु रहित, सुपाच्य, पौष्टिक, उचित तापक्रम वाला, ताजा तथा सदैव उपलब्ध रहता है।

8. स्तनपान का समय माँग-स्तनपान या समयानुसार-स्तनपान द्वारा निर्धारित किया जाता है।

9. माता को स्तनपान कराने से पूर्व तथा बाद में अपने स्तनों को अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिये।

10. शिशु को सदैव बैठ कर स्तनपान कराएं।

11. नवजात शिशु की दूध ग्रहण करने की क्षमता बहुत कम होती है, जो धीरे-धीरे बढ़कर 12 माह के अन्त तक 200-250 मि.लि. तक हो जाती है।

12. शिशु को स्तनपान छुड़वाकर अन्य भोज्य देना ही स्तन त्याग है और इन भोज्य पदार्थों को स्तन त्याग भोज्य/आहार कहते हैं।

13. शिशु की वृद्धि व विकास की दर को बनाए रखने के लिए स्तन दूध के अतिरिक्त ि दयेज ानेव ालेअ ाहार,प ूरकअ ाहार,अ नुपूरकअ ाहार, परिपूरक आहार कहलाते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) शिशु के जन्म के बाद 1 वर्ष तक की अवस्था को कहते हैं।

(अ) बाल्यावस्था (ब) युवावस्था

(स) शैशवावस्था (द) गर्भावस्था

(ii) एक स्वस्थ शिशु की लम्बाई जन्म के समय कितनी होती है।

(अ) 50-55 से.मी. (ब) 30-40 से.मी.

(स) 42-45 से.मी. (द) 55-60 से.मी.

(iii) जन्म के समय शिशु के शरीर में पानी की मात्रा वसा से होती है।

(अ) कम (ब) ज्यादा

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(स) बराबर (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iv) प्रथम 6माह में शिशु को प्रोटीन की आवश्यकता होती है।

(अ) 1.16ग्रा./किलो शरीर भार (ब) 2.5. ग्रा./किलो शरीर भार

(स) 2.0 ग्रा./किलो शरीर भार (द) 1.0 ग्रा./किलो शरीर भार

(v) स्तनपान छुड़ाने के लिए दिये जाने वाले आहार कहलाते हैं :

(अ) स्तन त्याग आहार (ब) पूरक आहार

(स) परिपूरक आहार (द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।

(i) नवजात की हृदय गति .... होती है।

(ii) जन्म के समय शिशु के रक्त में हीमोग्लोबिन की सान्द्रता .... तक होती है।

(iii) 0-12 माह के शिशु को .... कैल्शियम की आवश्यकता होती है।

(iv) शिशु के जन्म के तुरन्त बाद माँ के स्तनों का पहला स्रवण .... कहलाता है।

(v) कोलस्ट्रम में प्रोटीन की मात्रा परिपक्व दूध से .... पायी जाती है।

(vi) पशु दूध में .... एवं .... की सान्द्रता बहुत अधिक होती है जबकि ...... की कम।

(vii) माँ के दूध में ....शर्करा की मात्रा अधिक पायी जाती है।

(viii) .... से तात्पर्य शिशु को घड़ी के अनुसार स्तनपान कराना है।

3. निम्न पर संक्षेप में टिप्पणी लिखें :

(अ) माँग स्तनपान (ब) कोलस्ट्रम (स) पूरक आहार

4. छः माह के शिशु के लिये एक दिन की आहार तालिका बनाइये।

5. शिशु के जीवन में पौष्टिक आहार का क्या महत्त्व है?

6. 'माँ का दूध सर्वोत्तम आहार है' समझाइये।

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) अ (iii) ब (iv) अ (vi) अ

2. (i) 120-140/मिनट (ii) 17-20 ग्राम/100 मि.लि. (iii) 500 मि.ग्राम (iv) कोलस्ट्रम (v) अधिक (vi) प्रोटीन, खनिज लवणों, लैक्टोज (vii) लैक्टोज (viii) समयानुसार स्तनपान।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

12. बाल्यावस्था में पोषण

Nutrition during Childhood

शैशवावस्था के समाप्त होने से लेकर किशोरावस्था प्रारम्भ होने तक का समय बाल्यावस्था कहलाता है अर्थात् 1 वर्ष से लेकर 10-12 वर्ष की आयु के बच्चे बाल्यावस्था में आते हैं। बाल्यावस्था में कदम रखने पर उसके शारीरिक, सामाजिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं संज्ञानात्मक विकास में विशिष्ट परिवर्तन होते हैं। बाल्यावस्था में होने वाले परिवर्तनों में उनका पोषण स्तर तथा आहार व्यवस्था भी प्रभावित होती है। बाल्यावस्था में पोषण स्तर व आहार व्यवस्था का अध्ययन हम दो भागों में करेंगे।

1. पूर्व बाल्यावस्था :-

एक से छ: वर्ष की आयु के बालक इस समूह में आते हैं। इसे पूर्व-शालीय या विद्यालय पूर्व की अवस्था भी कहते हैं। इस अवस्था में शारीरिक वृद्धि व विकास की तुलना में शारीरिक एवं गत्यात्मक क्रियाओं में परिपक्वता, शरीर पर नियंत्रण तथा सामाजिक एवं संज्ञानात्मक विकास की अधिक प्रधानता होती है।

(I) पूर्व शालीय अवस्था में होने वाले परिवर्तन :

शारीरिक वृद्धि एवं विकास : शैशवावस्था के पश्चात् प्रारम्भिक बाल्यावस्था में लम्बाई, वजन, सिर व छाती का घेरा, वसीय परत आदि की वृद्धि दर में कुछ गिरावट आ जाती है।

तंत्रिका तंत्र व मांसपेशियों का विकास : दो वर्ष का होते-होते शिशु स्वयं चलना-फिरना तथा अपने शरीर पर नियंत्रण करना सीख लेता है।

(II) पोषण सम्बन्धी समस्याएं :

पूर्व शालीय बालक बहुत ही जिज्ञासु एवं नटखट प्रवृत्ति के होते हैं। वे वातावरण की प्रत्येक वस्तु को देखकर व छूकर परखते हैं तथा मुंह में लेते हैं। शारीरिक वृद्धि के कारण इनकी भोजन संबंधी आवश्यकताएं अधिक होती है। इस अवस्था में कई बालक बड़ों से आंख चुराकर विविध अखाद्य पदार्थ जैसे-मिट्टी, चूना, मोम, साबुन आदि खाने लगते हैं। इन अखाद्य पदार्थों को खाने की तीव्र इच्छा को पाईका (Pica) की समस्या कहते हैं। इन अखाद्य पदार्थों को खाने से बालकों की भूख में कमी हो जाती है। पाचन गड़बड़ा जाता है तथा भोजन से प्राप्त पोषक तत्त्वों का अवशोषण ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है। इस प्रकार खाये जाने वाले भोजन की मात्रा में कमी, भोजन के पूर्ण रूप से पौष्टिक न होने, भोजन की गुणवत्ता में कमी, पाचन संस्थान की गड़बड़ी तथा रोग संक्रमण की बढ़ती सम्भावनाओं के फलस्वरूप पूर्व-शालीय बालक विविध प्रकार के कुपोषण जैसे-प्रोटीन, ऊर्जा कुपोषण, रक्तालप्ता, रतौंधी, रिकेट्स, स्कर्वी, बेरी-बेरी, एराइबोपलेविनोसिस व पैलेग्रा आदि का शिकार हो सकते हैं।

पाइका के रूप में खाये जाने वाले अखाद्य पदार्थों के साथ विविध प्रकार के रोगाणु शरीर में प्रवेश करते हैं तथा विभिन्न प्रकार के रोग संक्रमण को बढ़ावा देते हैं। ऐसे बालक प्राय: सर्दी, खाँसी, दस्त, बुखार इत्यादि से ग्रस्त रहते हैं। पूर्व-शालीय बालकों में विविध रोगों से लड़ने के लिये रोगप्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। ऐसे में भूख की कमी, पाइका, आहार की पौष्टिकता/गुणवत्ता में कमी, कुपोषण व रोग संक्रमण की बढ़ती सम्भावनाएं आदि सभी कारक पूर्व-शालीय बालकों के पोषण स्तर पर सम्मिलित रूप से प्रभाव डालते हैं। इसी कारण इस अवस्था में रोग संक्रमण व मृत्यु दर बहुत अधिक पाई जाती है। अतएव इस अवस्था के बालकों के पोषण स्तर एवं आहार व्यवस्था पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

2. उत्तर बाल्यावस्था

छ: वर्ष से लेकर किशोरावस्था प्रारम्भ होने तक के बालक इस समूह में आते हैं। इस अवस्था के बालक विद्यालय जाकर औपचारिक शिक्षा प्राप्त करते हैं अर्थात् इस समय तक इनकी वास्तविक पढ़ाई शुरू हो चुकी होती है। अत: इसे विद्यालयी या शालीय बालक अवस्था भी कहते हैं। इस अवस्था का अंत लिंग एवं व्यक्तिगत भिन्नता के आधार पर अलग-अलग होता है। लड़कियों में किशोरावस्था शीघ्र प्रारम्भ होने के कारण बाल्यावस्था 9-10 के दौरान ही समाप्त हो सकती है जबकि लड़कों में यह अवस्था 11-12 वर्ष तक विद्यमान रह सकती है। इस दौरान उनकी शारीरिक वृद्धि व विकास की दर कुछ धीमी, स्थिर व रेखिक प्रकार की होती है। उनके शारीरिक अंग धीरे-धीरे पुष्टता एवं परिपक्वता प्राप्त करने लगते हैं। बालक शारीरिक गत्यात्मक क्रियाओं में प्रवीणता हासिल कर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

लेते हैं एवं विद्यालय में प्रतिस्पर्धा का हिस्सा बन जाते हैं। बौद्धिक व सामाजिक विकास के साथ-साथ बालक अनुशासन व नैतिकता के महत्त्व को समझने लगते हैं।

(I) किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तन :-

इस अवस्था में वृद्धि की दर लगभग 2 किलोग्राम/वर्ष से बढ़कर 4 किलोग्राम/वर्ष तक बढ़ जाती है। लड़कियों के वजन में वृद्धि, त्वचा या वसीय ऊतकों में बढ़ोतरी के कारण तथा लड़कों में वृद्धि मांसपेशीय विकास के कारण अधिक होती है। लम्बाई में वृद्धि की दर भी 5 से 6.5 से.मी. पायी जाती है जो लड़कियों में लड़कों की अपेक्षाकृत अधिक होती है। लम्बाई की यह वृद्धि टाँगों व हाथों में गर्दन व धड़ की अपेक्षाकृत अधिक होती है।

इस दौरान बालकों के अस्थाई दाँत गिरकर स्थायी दाँत निकलना प्रारम्भ हो जाते हैं तथा शैशवावस्था के प्रारम्भिक 3-4 माह से शुरू होने वाली कलसीभवन की प्रक्रिया अभी भी जारी रहती है। प्रारम्भिक बाल्यावस्था में लड़के एवं लड़कियों की वृद्धि एवं विकास में अधिक परिवर्तन नहीं है जो कि उत्तर बाल्यावस्था में विशेष रूप से दिखाई देता है। छः वर्ष की अवस्था में जो बालिका बालकों से वजन में हल्की एवं कद में ठिगनी थी, दस वर्ष की उम्र होते-होते वे बालकों की अपेक्षा वजन में भारी तथा अधिक लम्बी हो जाती हैं। ऐसा बालिकाओं में शीघ्र प्रारम्भ होने वाले किशोरवय परिवर्तनों के कारण होता है।

(II) पोषण सम्बन्धी समस्याएं :-

उत्तर बाल्यावस्था के बालकों में क्रियाशीलता एवं आत्मनिर्भरता बढ़ जाती है। वे अपना हर कार्य शीघ्रता से निपटाना चाहते हैं तथा किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप पसन्द नहीं करते। इन बालकों की अभिरुचि खेलों के प्रति कुछ अधिक रहती है। ये बालक खेलों में अपनी रुचि तथा विद्यालयों में कक्षा में बढ़ते पढ़ाई के भार में सामंजस्य नहीं बिठा पाते। ये प्रत्येक कार्य को अतिशीघ्र पूरा कर साथियों के साथ अधिक से अधिक खेलना चाहते हैं। अतः भोजन के प्रति लापरवाह हो जाते हैं। विद्यालय में 6-7 घण्टे की पढ़ाई, गृहकार्य, कक्षा में बढ़ती प्रतिस्पर्धा व सहपाठियों के साथ समायोजन के चलते ये बालक तनाव की स्थिति में रहते हैं। तनावग्रस्त रहने से इनकी भूख प्रभावित होती है।

(III) बाल्यावस्था में पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएं :-

बाल्यावस्था के लिये विविध पोषक तत्त्वों की आवश्यकताएं उनकी सामान्य वृद्धि व विकास के पोषक तत्त्वों की माँग के आधार पर निर्धारित की गई है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान समिति के द्वारा बाल्यावस्था के विविध वर्गों के लिये पोषक तत्त्वों की प्रस्तावित मात्राएं तालिका 12.1 में दी गई हैं।

उक्त तालिका को देखने से पता चलता है कि उम्र के बढ़ने के साथ-साथ बालकों के लिये सभी पोषक तत्त्वों की आवश्यकता में वृद्धि होती है। प्रथम वर्ष से लेकर 9 वर्ष तक के बालक-बालिकाओं के पोषक

तालिका 12.1 : बाल्यावस्था के लिये पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्राएं

पोषक तत्त्व	बाल्यावस्था (आयु वर्ष में)				
	1-3	4-6	7-9	10-12	
				बालक	बालिका
ऊर्जा (कैलोरी)	1240	1690	1950	2190	1970
प्रोटीन (ग्रा.)	22	30	41	54	57
वसा (ग्रा.)	25	25	25	22	22
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	400	400	400	600	600
लौह तत्त्व (मि.ग्रा.)	12	18	26	34	19
बीटा कैरोटीन (मा.ग्रा.)	1600	1600	2400	2400	2400
थायमीन (मि.ग्रा.)	0.6	0.9	1.0	1.1	1.0
राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	0.7	1.0	1.2	1.3	1.2
नाइसिन (मि.ग्रा.)	8	11	13	15	13
पाइरिडॉक्सिन (मि.ग्रा.)	0.9	0.9	1.6	1.6	1.6
विटामिन सी (मि.ग्रा.)	40	40	40	40	40
फोलिक अम्ल (मा.ग्रा.)	30	40	60	70	70
विटामिन बी-12 (मा.ग्रा.)	0.2-1.0	0.2-1.0	0.2-1.0	0.2-1.0	0.2-1.0

(NIN 2010)

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तत्वों की मात्राएं सम्मिलित रूप से प्रस्तावित हैं। तत्पश्चात् बालक-बालिकाओं के लिये पृथक-पृथक मात्राएं प्रस्तावित हैं। दस से बारह वर्ष के आसपास बालिकाओं में किशोरवय सम्बन्धी परिवर्तन शुरू हो जाने से बालक व बालिकाओं की पोषक तत्वों की माँग में भी परिवर्तन आ जाता है।

ऊर्जा की आवश्यकताएं भरपूर मात्रा में कार्बोज युक्त भोज्य जैसे-अनाज, गुड़, शक्कर व वसा के समावेश से पूरी होती है। भोजन में अनाज का उपयुक्त समावेश ऊर्जा की आपूर्ति के साथ-साथ भूख को भी शान्त रखता है। भोजन में कार्बोज के पर्याप्त समावेश से प्रोटीन की भी बचत होती है।

भोजन में वसा के उपयोग से तात्पर्य तला-भूना, भारी खाना देने से कदापि नहीं है। बल्कि भोजन में वसा का समावेश विविध व्यंजनों में मक्खन, क्रीम, घी व तेल के उपयोग द्वारा किया जा सकता है।

बढ़ते बच्चों के लिये प्रोटीन की आवश्यकताएं भी अधिक होती हैं क्योंकि प्रोटीन ही शरीर निर्माण करता है। उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन के लिये भोजन में पूर्ण प्रोटीन युक्त भोज्य, जैसे-दूध व दूध से बने पदार्थ (दही, पनीर, छेना), अण्डा, मांस, मछली आदि का समावेश करें। शाकाहारी बालकों के लिये प्रोटीन की गुणवत्ता अनाज व दालों के मिश्रित उपयोग द्वारा बढ़ाई जा सकती है।

शरीर के निर्माण दाँतों व अस्थियों की वृद्धि व विकास, रक्त की वृद्धि के साथ-साथ रक्त में हीमोग्लोबिन स्तर को उन्नत करने आदि के लिये खनिज-लवणों- कैल्शियम एवं लौह तत्त्व तथा विटामिन ए, डी, सी व फौलिक अम्ल की पर्याप्त आवश्यकता होती है। इनकी आपूर्ति भोजन में ताजे फल व हरी पत्तेदार सब्जियों, पीले पत्ते, रसवाले फलों का सेवन करके की जा सकती है। जल विलेय विटामिन 'बी' समूह की आवश्यकताएं ऊर्जा के साथ-साथ बढ़ती जाती है क्योंकि ये विटामिन ऊर्जा के उपापचय में सहयोग देते हैं। बालकों के भोजन में सभी समूह के विटामिनों की आपूर्ति पर्याप्त मात्रा में साबुत अनाज, दालों तथा अंकुरित अनाज व दालों तथा खमीरीकृत व्यंजनों का समावेश कर की जा सकती है जो कि विटामिन के अच्छे स्रोत हैं।

बच्चों को दिनभर में पर्याप्त जल (6-8गिलास) पीने के लिये प्रेरित करना चाहिये। तरल पेय के उपयोग चाय, कॉफी व सॉफ्ट ड्रिंक्स के रूप में न करके अन्य तरल पेय जैसे-नीबू पानी, स्क्वैश के रस, दाल-सब्जियों के सूप, दूध, छाछ आदि के रूप में करना चाहिये।

(IV) आहार व्यवस्था :

बाल्यावस्था के दौरान होने वाली वृद्धि एवं विकास की दर नियमित एवं क्रमिक रूप से बनी रहे ताकि बालक का पोषण स्तर उत्तम बना रहे। इसके लिये माता को अपने बच्चे को तालिकानुसार सन्तुलित भोजन खाने के लिये देना चाहिये।

शैशवावस्था में बालक का मुख्य आहार दूध होता है। पूर्व-शालीय अवस्था तक आते-आते बालक दूध के साथ-साथ घर में पकाये जाने वाले अनाज, दाल, फल व सब्जियां युक्त विविध भोज्य पदार्थ खाने लगता है। जिज्ञासु व चंचल प्रवृत्ति का होने के कारण इन बालकों का मन हमेशा खेलने में लगा रहता है व बालक भोजन पर कम ध्यान देता है। शान्त एवंख ुशनुमाम ाहौलम ेंस मय-समयप र दयाग याि वविधताप ूर्णव मनपसन्द भोजन उसे सन्तुष्टि देता है तथा खाने के लिये प्रेरित करता है।

तालिका 12.2 : बालकों के लिये दैनिक सन्तुलित आहार

भोज्य समूह	भोज्य पदार्थों की मात्रा (ग्रा.)				
	1-3 वर्ष	4-6वर्ष	7-9 वर्ष	10-12 वर्ष	
				बालक	बालिका
अनाज	120	210	270	330	270
दालें	30	45	60	60	60
दूध (मि.लि.)	500	500	500	500	500
कंदमूल	50	100	100	100	100
हरी पत्तेदार सब्जियां	50	50	100	100	100
अन्य सब्जियां	50	50	100	100	100
फल	100	100	100	100	100
शक्कर	25	30	30	35	30
घी/तेल	20	25	25	25	25

नोट : मांसाहारी बालक को 30 ग्राम दाल के बदले 50 ग्राम अण्डा/मांस/मछली दे सकते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

यही वह समय है जब थोड़ा-सा ध्यान व समय देकर बच्चों में भोजन सम्बन्धी स्वच्छ व स्वस्थ आदतों का विकास किया जा सकता है।

पूर्व-शालीय बालकों की आहार व्यवस्था करते समय निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देवें।

(i) बालकों को भोजन नियत समय एवं भूख लगने पर देवें जिससे वे समय पर भोजन करना सीखें।

(ii) छोटे बच्चों की भूख कम होती है। उन्हें अल्प मात्रा में भोजन देवें जिससे वे जूठन नहीं छोड़ें।

(iii) बच्चों को भोजन थोड़े-थोड़े समय के अन्तराल (3-4 घण्टों) पर 5-6बार में देवें।

(iv) खाद्य पदार्थों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटना चाहिये ताकि वे गले में न अटकें।

(v) बच्चों का आहार उनकी पसन्द के अनुरूप सादा कम मिर्च-मसालों वाला होना चाहिये।

(vi) बच्चों को तले-भुने कठोर रेशे वाले तथा मैदे से बने व्यंजन कम देने चाहिये ताकि उनका पाचन तंत्र सुचारु रूप से चलता रहे।

(vii) बच्चों को मीठा पसन्द होता है अत: उनकी रुचि के अनुसार कुछ मीठे व्यंजनों का भोजन में समावेश करना चाहिये। किन्तु अत्यधिक मीठे व दाँतों में चिपकने वाले व्यंजन न हो, न ही दिन में बार-बार ऐसे व्यंजन दिए जायें।

(viii) बच्चों के नाश्ते में ब्रेड-जैम, अचार-पराँठे आदि के साथ-साथ प्रोटीन युक्त भोज्य पदार्थ जैसे-दूध, अण्डों या दालों से बने व्यंजनों का समावेश अवश्य करें।

(ix) प्राय: बालकों को हरी पत्तेदार सब्जियां व दालें पसन्द नहीं आती। इन्हें सादी सब्जियों के रूप में न देकर भरवां पराँठों/पूरी, पकौड़ी, लड्डू आदि के रूप में देवें।

(x) यदि बालक को कोई व्यंजन पसन्द नहीं आये तो उसको बनाने की विधि में परिवर्तन करके देवें।

(xi) बच्चों को एक बार के आहार में विविध भोज्य पदार्थ जैसे-दाल, चावल, रोटी, सब्जी, सलाद आदि नहीं दिये जा सकते, ऐसे में मिश्रित व्यंजनों का उपयोग करें ताकि सन्तुलित भोजन प्राप्त हो सके। जैसे-दाल का पराँठा, दही या सब्जी के रायते के साथ में देने से बालक को अनाज, दाल, दूध व सब्जी आदि भोज्य समूह एक साथ दिये जा सकते हैं।

(xii) बच्चों को विविधता पसन्द होती है। अत: भोजन में रुचि बनाये रखने के लिये भोज्य पदार्थ अदल-बदल कर दें।

(xiii) बच्चों को प्राय: कच्चे फल व सब्जियां जैसे-हरे मटर, फूलगोभी, पत्तागोभी, गाजर, टमाटर आदि पसन्द होते हैं। अत: ये भोज्य पदार्थ कच्चे रूप में साफ व स्वच्छ पानी से धोकर देवें।

(xiv) बच्चों को वक्त-बेवक्त जैसे-दोपहर या रात्रि के भोजन से पहले ब्रेड, बिस्कुट, नमकीन, मिठाई आदि खाने को न देवें। इससे उनकी भूख मर जाती है।

(xv) बच्चों को चाय, कॉफी, सॉफ्ट ड्रिंक्स जैसे-पेय पदार्थों के स्थान पर दाल-सब्जियों के सूप, फलों के रस, छाछ इत्यादि पौष्टिक पेय पीने के लिये देवें।

(xvi) बच्चों को अलग से छोटे रंगीन व आकर्षक प्लेट, प्यालों व गिलास में भोजन परोसें। इससे बच्चों में भोजन का आकर्षण बढ़ता है।

(xvii) छोटे बच्चों को अपने आप भोजन करने के लिये प्रेरित करना चाहिये।

(xviii) बच्चों को प्रारम्भ से ही भोजन से पूर्व व पश्चात् हाथ धोने, मेज-कुर्सी या जमीन पर साथ बैठकर शान्ति से चबा-चबा कर भोजन करने की अच्छी आदतें डालें व भोजन कराते समय बार-बार डांटे व चीखे - चिल्लाए नहीं।

विद्यालयी बालकों के लिये आहार व्यवस्था :

अगर प्रारम्भिक बाल्यावस्था में भोजन सम्बन्धी स्वच्छ व स्वस्थ आदतों की नींव रखी जा चुकी है तो वे उत्तर बाल्यावस्था में आकर पुष्ट व परिपक्व हो जाएगी। इस समय उनकी भोजन सम्बन्धी पसन्द-नापसन्द सुनिश्चित हो चुकी होती है। तथा वे उन्हीं भोज्य पदार्थों को खाने में रुचि दिखाते हैं। इस अवस्था में बालकों को दालें व विशेष रूप से हरी पत्तेदार सब्जियां कम पसन्द होती है।

विद्यालयी बालक के लिये आहार व्यवस्था करते समय निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देवें।

(i) सुबह का नाश्ता पौष्टिक व कम समय में खाया जाने वाला हो, जैसे-भरवां पराँठा या सैण्डविच, दूध आदि।

(ii) घर पर भोजन करने में आनाकानी करने वाले बालक विद्यालय में अन्य सहपाठियों के साथ भोजन करना सीख लेते हैं। अत: स्कूल में मध्यकालीन अवकाश हेतु टिफिन पौष्टिक, सुपाच्य, स्वादिष्ट, रुचिकर हो ताकि बालक पौष्टिक भोजन ग्रहण कर सके।

(iii) बालकों को भोजन सादा व मिर्च-मसालों वाला तथा आकर्षक ढंग से परोसकर देवें।

(iv) बच्चों के आहार में प्रतिदिन नया व रुचिकर व्यंजन सम्मिलित करें व व्यंजन अस्वीकृत कर दिये जाने पर डांटे-डपटे बिना उसके रंग व पकाने की विधि में परिवर्तन करें। जैसे-पालक, मैथी की सब्जी नापसन्द हो तो आटे में गुँधकर परांठे बना कर खिलायें।

(v) बच्चों को पैसे देकर विद्यालय नहीं भेजें। पैसे होने पर वे विद्यालय परिसर या आसपास में मिलने वाला गंदा व संक्रमण युक्त भोजन करेंगे। इससे उनकी भोजन सम्बन्धी आदतें तो प्रभावित होंगी ही तथा स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु-

1. शैशवावस्था के समाप्त होने से लेकर किशोरावस्था प्रारम्भ होने तक का समय बाल्यावस्था कहलाता है। अर्थात् 1 वर्ष से लेकर 10-12 वर्ष के बच्चे बाल्यावस्था में आते हैं।
2. बाल्यावस्था को दो भागों में बांटा गया है। प्रारम्भिक बाल्यावस्था जिसमें एक से छ: वर्ष तक के आयु के एवं उत्तर बाल्यावस्था में किशोरावस्था

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रारम्भ होने तक की आयु के बालक आते हैं।

3. उत्तर बाल्यावस्था को विद्यालयी या शालीय अवस्था भी कहते हैं।

4. शैशवावस्था में वृद्धि दर अति तीव्र, जबकि प्रारम्भिक बाल्यावस्था में कुछ धीमे, उत्तर बाल्यावस्था में बालक के शारीरिक मापों में वृद्धि दर पुनः कुछ हद तक बढ़ जाती है जो किशोरावस्था में अति तीव्र हो जाती है।

5. पूर्व शालीय बालकों की भोजन संबंधी आवश्यकताएं अतिमहत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि उनकी जरूरत, सामाजिक परिवेश, अभिरुचियों व क्षमताओं द्वारा प्रतिबिम्बित होती है।

6. उत्तर बाल्यावस्था में बालकों में भोजन के प्रति रुचि बढ़ाने की आवश्यकता होती है चूंकि वे लापरवाह हो जाते हैं।

7. शरीर के निर्माण, दाँतों व अस्थियों की वृद्धि व विकास हेतु तथा रक्त की वृद्धि, हिमोग्लोबिन स्तर को उन्न करने हेतु ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज लवण, कैल्शियम, लौह तत्त्व एवं विटामिन ए, डी, सी, बी व फोलिक अम्ल की पर्याप्त आवश्यकता होती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) 1 वर्ष से 10-12 वर्ष की आयु तक के बच्चे आते हैं।

(अ) युवावस्था (ब) शैशवावस्था

(स) बाल्यावस्था (द) किशोरावस्था

(ii) प्रारम्भिक बाल्यावस्था को कहते हैं-

(अ) शालीय अवस्था (ब) पूर्वशालीय अवस्था

(स) किशोरावस्था (द) शैशवावस्था

(iii) अस्थाई दाँतों में दंत क्षय की समस्या सर्वाधिक .... बालकों में पाई जाती है।

(अ) 4-5 वर्ष के (ब) 5-6वर्ष के

(स) 9-10 वर्ष के (द) 6-8वर्ष के

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

(i) ..... वर्ष का होते-होते शिशु स्वयं चलना-फिरना तथा अपने शरीर पर नियन्त्रण करना सीख लेता है।

(ii) पूर्व शालीय बालक बहुत ही .... एवं ..... प्रवृत्ति के होते हैं।

(iii) उत्तर बाल्यावस्था के बालकों में .... एवं ...... बढ़ जाती है।

(iv) बच्चों को दिन भर में ...... गिलास जल एवं तरल पेय पीने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

3. पाइका किसे कहते हैं?

4. उत्तर बाल्यावस्था क्या है?

5. बढ़ते बच्चों के लिए प्रोटीन क्यों आवश्यक है।

6. पूर्व शालीय बालकों की आहार व्यवस्था करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।

उत्तरमाला-

1. (i) स (ii) ब (iii) द

2. (i) दो (ii) जिज्ञासु, नटखट
(iii) क्रियाशीलता, आत्मनिर्भरता (iv) 6-8

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

13. किशोरावस्था में पोषण

Nutrition during Adolescence

किशोरावस्था 13-21 वर्ष की अवस्था को कहते हैं। यह अवस्था परिवर्तन की अवस्था होती है। किशोरावस्था अंग्रेजी भाषा के 'एडोलेसेन्स' शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। यह लैटिन भाषा के शब्द एडोलस्र' 'Adolescere' से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है 'परिपक्वता की ओर बढ़ना'। किशोरावस्था बाल्यावस्था के पश्चात् होने वाली वह अवस्था है जो युवावस्था प्रारम्भ होने तक रहती है। किशोरावस्था शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तनों की संक्रातिकाल की अवस्था है।

लड़कियों में यह अवस्था किशोरवय लड़कों की अपेक्षा कुछ पहले प्रारम्भ होती है तथा पहले ही समाप्त हो जाती है। किशोरावस्था लड़कियों में 10-11 वर्ष से प्रारम्भ होकर 17-18वर्ष तक बनी रहती है तो लड़कों में किशोरावस्था 13-14 वर्ष से प्रारम्भ होकर 21 वर्ष तक बनी रहती है। शैशवावस्था के बाद शारीरिक वृद्धि की तीव्रता केवल किशोरावस्था में ही देखने को मिलती है। इस अवस्था में सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है अर्थात् उनका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, बुद्धि, खेल एवं संवेगात्मक विकास होता है।

किशोरावस्था के दौरान होने वाले कुछ परिवर्तन

1. **शारीरिक वृद्धि :** किशोरावस्था परिवर्तनों की अवस्था होती है। इसे पूर्ण वृद्धि की अवस्था भी कहते हैं। इस अवस्था में शारीरिक विकास अत्यन्त ही तीव्र गति से होता है। शारीरिक विकास के अन्तर्गत लम्बाई का बढ़ना, मांसपेशियों की मात्रा में वृद्धि होना, कोमल तन्तुओं में वसा का संग्रहित होना आदि आते हैं।
2. **शारीरिक परिवर्तन :** लम्बाई व वजन में वृद्धि के साथ-साथ किशोर-किशोरियों में कुछ शारीरिक परिवर्तन भी दृष्टिगोचर होते हैं, जैसे- लड़कियों में मासिक धर्म का प्रारम्भ होना, स्तनों व नितम्बों के आकार में परिवर्तन व वृद्धि, चर्बी का बढ़ना, आवाज बारीक होना तथा बगल व जननांगों पर बालों का उगना आदि। लड़कों में दाढ़ी-मूँछ का आना, आवाज में भारीपन, मांसपेशियों में शक्ति एवं दृढ़ता, अस्थियों का विकास आदि। किशोरावस्था में परिवर्तन का मुख्य कारण हारमोन का स्रावण है।
3. **संज्ञानात्मक परिवर्तन :** किशोरवय में सोचने-समझने व तर्क करने की क्षमता का तीव्र विकास होता है। किशोरावस्था अधिकतम विकास की अवस्था होती है। किशोर तर्क-वितर्क करके समय व परिस्थितियों के अनुरूप सही-गलत का निर्णय करने लगते हैं। वे अपनी पढ़ाई व कॅरिअर के प्रति सजग हो जाते हैं तथा अपने निर्णय स्वयं लेना चाहते हैं।
4. **सामाजिक परिवर्तन :** किशोरावस्था को आत्मनिर्भरता की अवस्था भी कहते हैं। इस अवस्था में बालक-बालिका शारीरिक एवं मानसिक रूप से इतने परिपक्व हो जाते हैं कि वे अपना हर काम स्वयं ही करते हैं। वे अपने कामों में दूसरों का हस्तक्षेप जरा भी पसन्द नहीं करते हैं। अब लड़कपन की शैतानियों को छोड़कर उस समाज में एक वयस्क की भाँति शान्त व सौम्य व्यवहार की अपेक्षा की जाती है।
5. **संवेगात्मक व भावनात्मक विकास :** तीव्र शारीरिक परिवर्तन, पढ़ाई व कॅरिअर की चिन्ता तथा समाज में बदलते परिवेश के साथ एक किशोर को सामंजस्य बैठा पाना तनावपूर्ण होता है। किशोरावस्था में किशोर-किशोरियों का जीवन अत्यधिक भावनात्मक होता है तथा उनमें संवेगात्मक अस्थिरता पायी जाती है। उनमें परिपक्वता का अभाव व सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों में दृढ़ता नहीं आने से महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति नहीं हो पाती है। वास्तविक जीवन की कठोरताओं के बीच उनकी आदर्शवादी चिन्तनधारा को जब ठेस पहुंचती है तो वे संवेगात्मक रूप से विचलित हो जाते हैं।

किशोरावस्था में शारीरिक वृद्धि व विकास की दर अति तीव्र होती है। वृद्धि एवं विकास की इस तीव्रता को बनाये रखने के लिये पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकताएं भी बढ़ जाती हैं। दूसरी तरफ किशोर स्वयं में होने वाली तीव्र शारीरिक वृद्धि, शारीरिक परिवर्तन, पढ़ाई व कॅरिअर की चिन्ता, समाज में स्वयं की बदलती हुई स्थिति आदि सभी कारणों से तनाव में रहते हैं तथा अपने भोजन पर पूर्ण ध्यान नहीं दे पाते। पढ़ाई व कॅरिअर में बढ़ती रुचियों के कारण किशोर अधिकतर समय घर से बाहर बिताते

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

हैं जिससे वे समय पर भोजन ग्रहण नहीं कर पाते। घर से बाहर अधिक समय बिताने तथा दोस्तों में स्वयं की स्वीकार्यता के दबाव के कारण उनकी भोजन सम्बन्धी आदतों में तीव्र तथा अवांछनीय परिवर्तन आते हैं। जिससे उनके स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। अत: किशोरावस्था के विकास की तीव्रता को देखते हुए प्रत्येक किशोर के लिये सन्तुलित आहार का विशेष महत्त्व है जिसके अभाव में ये कमजोर एवं कद में छोटे रह जायेंगे तथा इससे इनके भावी कार्यक्षमता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

पोषण सम्बन्धी समस्याएं

1. भोजन सम्बन्धी आदतों में परिवर्तन : बाल्यावस्था से किशोरावस्था में पदार्पण करने के साथ शहरी किशोर-किशोरियों की भोजन सम्बन्धी आदतों में तीव्र परिवर्तन आते हैं। वे घर में परिवार के सदस्यों के साथ भोजन करने के बजाय दोस्तों के साथ रेस्टोरेन्ट में भोजन करना ज्यादा पसन्द करते हैं। ये दाल, रोटी, फल, सब्जी जैसा सादा खाना खाने के बदले बाजार में उपलब्ध तुरन्ता भोजन जैसे-पिज्जा, बर्गर, मैगी, चाउमीन, सैण्डविच, इडली, डोसा, बिस्कुट, आलू के वेफर, चिप्स, चाट, पकौड़ी इत्यादि खाना पसन्द करते हैं। ताजे फल एवं फलों के रस के स्थान पर सॉफ्ट ड्रिंक्स एवं पेय पदार्थ, जैसे-सोडा वाटर, संश्लेषित पेय एवं मादक पेय पदार्थ पीना भी पसन्द करते हैं। अत: साफ-सफाई, शुद्धता एवं स्वच्छता के अभाव में बाजार में उपलब्ध तुरन्ता भोजन न तो पूर्णत: पौष्टिक होते हैं, न ही सेहत के लिये सुरक्षित।

2. मोटापा : किशोरवय में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के दौरान मोटापे की सम्भावनाएं शहरों में दिनों-दिन अधिक ही रहती है। इस अवस्था में शारीरिक लम्बाई के साथ-साथ वजन में भी तीव्र वृद्धि होती है। वजन में यह वृद्धि मांसपेशियों तथा चर्बी के जमाव आदि, दोनों कारणों से ही होती है। लेकिन शारीरिक वसा का यह जमाव लम्बाई में वृद्धि के साथ-साथ सन्तुलित होता जाता है। कई बार किशोरावस्था के दौरान पनपने वाला मोटापा युवावस्था में विभिन्न बीमारियों को आमन्त्रित करता है।

3. कमजोरी एवं दुबलापन : सामान्यतया किशोरियां अपने स्वास्थ्य एवं शारीरिकर चनाक ेल`करश ंकितर हतीह"ँए वंअ पनेभ ेजनक े सामान्य से भी कम कर देती है तथा जबरदस्ती भूखी रहती है। ऐसा करने से उनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। उनके शारीरिक वजन में गिरावट आती है, वे अशक्त एवं कमजोर हो जाती है। मासिक स्राव अनियमित हो जाता है तथा शारीरिक वसा, मांसपेशियों, खून के दबाव एवं उपापचय में गिरावट आती है।

4. एनीमिया/रक्ताल्पता : किशोरावस्था में खून की कमी या रक्ताल्पता की समस्या बाल्यावस्था की अपेक्षा अधिक होती है। क्योंकि हीमोग्लोबिन की कुल आवश्यक मात्रा खून की मात्रा के साथ बढ़ नहीं पाती एवं इसके स्तर में गिरावट होती है। चेहरा व नाखून सफेद एवं बेजान से जान पड़ते हैं।

किशोरावस्था की सभी समस्याओं का निदान कम मिर्च-मसाले युक्त सादे एवं पूर्ण सन्तुलित भोजन में है, जिसमें सभी भोज्य समूहों में से विविध भोज्य पदार्थों का चयन पर्याप्त मात्रा में किया जाये।

बाल्यावस्था से किशोरावस्था में कदम रखने पर वृद्धि व विकास की दर के साथ-साथ किशोर के लिये विविध पोषक-तत्त्वों की आवश्यकताएं बढ़ जाती हैं। उम्र के इस पड़ाव पर शारीरिक वृद्धि दर सर्वाधिक होती है साथ ही पोषक तत्त्वों की माँग भी सर्वाधिक होती है। तत्पश्चात् जैसे-जैसे वृद्धि दर में गिरावट आती है वैसे-वैसे उनकी पौषणिक आवश्यकताओं में भी गिरावट आती है जो कि युवावस्था की पोषक तत्त्वों की आवश्यकताओं पर आकर ठहर जाती है। तालिका में किशोरावस्था के लिये सन्दर्भित वजन एवं विविध पोषक तत्त्वों की प्रस्तावित आहारिक मात्रा भी दी गई है।

तालिका 13.1 : किशोरावस्था के लिये पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्राएं (NIN, 2010)

पोषक तत्त्व	किशोरावस्था (आयु वर्ष में)					
	10-12		13-15		16-18	
	बालक	बालिका	बालक	बालिका	बालक	बालिका
ऊर्जा (कि. कैलोरी)	2190	1970	2450	2060	2640	2060
प्रोटीन (ग्रा.)	54	57	70	65	78	63
वसा (ग्रा.)	22	22	22	22	22	22
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	600	600	600	600	600	600
लौह तत्त्व (मि.ग्रा.)	34	19	41	28	50	30
बीटा कैरोटीन (मा.ग्रा.)	2400	2400	2400	2400	2400	2400
थायमीन (मि.ग्रा.)	1.1	1.0	1.2	1.0	1.3	1.0

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	1.3	1.2	1.5	1.2	1.6	1.2
नियासिन (मि.ग्रा.)	15	13	16	14	17	14
पाइरिडॉक्सिन (मि.ग्रा.)	1.6	1.6	2.0	2.0	2.0	2.0
विटामिन सी (मि.ग्रा.)	40	40	40	40	40	40
फोलिक अम्ल (मा.ग्रा.)	70	70	100	100	100	100
विटामिन बी-12 (मा.ग्रा.)	0.2- 1.0	0.2- 1.0	0.2- 1.0	0.2- 1.0	0.2- 1.0	0.2- 1.0
वजन (कि.ग्रा.)	35.4	31.5	47.8	46.7	57.1	49.9

ऊर्जा : इस अवस्था में ऊर्जा की आवश्यकता किशोर-किशोरियों की लम्बाई, शारीरिक भार, क्रियाशीलता एवं उपापचय की दर पर निर्भर करती है। किशोरियों को किशोरों की अपेक्षा कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है क्योंकि किशोरियों का शारीरिक भार, लम्बाई व उपापचय की दर व शारीरिक श्रम भी अपेक्षाकृत कम होता है।

प्रोटीन : प्रोटीन प्रत्येक कोशिका की संरचना का भाग है। अत: तीव्र शारीरिक वृद्धि व विकास की दर बनाये रखने के लिये किशोरावस्था में प्रोटीन की आवश्यकताएं भी बढ़ जाती हैं। अस्थियों व मांसपेशियों के विकास के लिये प्रोटीन की अधिक आवश्यकता होती है। बालिकाओं में किशोरवय 10-12 वर्ष के दौरान प्रारम्भ होती है, जबकि बालकों में यह अवस्था कुछ देर से यानी कि 12-14 वर्ष के दौरान प्रारम्भ होती है। अतएव 10-12 वर्ष के दौरान शारीरिक वृद्धि एवं विकास की दर बालिकाओं में बालकों की अपेक्षा अधिक होती है।

प्रोटीन की माँग बढ़ने के साथ-साथ उसकी गुणवत्ता को भी ध्यान में रखना चाहिये। शारीरिक वृद्धि व विकास के लिये पूर्ण या उत्तम प्रोटीन युक्त भोज्य पदार्थ जैसे-अण्डा, मांस, मछली, दूध व दूध से बने पदार्थ, दही, खोया, पनीर, चीज आदि का अधिक सेवन करना चाहिये। वनस्पति जगत से प्राप्त प्रोटीन को भी भोज्य समूहों के सम्मिश्रण द्वारा पूर्ण प्रोटीन बनाया जा सकता है, जैसे-अनाज व दालों का साथ-साथ उपयोग करके।

वसा : किशोरवय में शहरीय बालक उच्च शर्करा व वसा युक्त भोज्य पदार्थ, जैसे-केक, पेस्ट्री, पकौड़े, वेफर्स आदि अधिक खाना पसन्द करते हैं जिससे मोटापे की सम्भावनाएं बढ़ जाती है। राष्ट्रीय पोषण संस्थान ने इस अवस्था में दिन-भर में ग्रहण की जाने वाली प्रस्तावित वसा यानी घी, तेल की कुल मात्रा लगभग 25 ग्राम प्रतिदिन प्रस्तावित की है।

विटामिन : किशोरावस्था में सभी विटामिनों की पर्याप्त मात्रा में आवश्यकता होती है। ये प्रस्तावित मात्राएं (तालिका) किशोरावस्था में विटामिन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। विटामिन बी समूह- थायमिन, राइबोफ्लेविन व नियासीन की आवश्यकताएं ऊर्जा की आवश्यकता के साथ-साथ बढ़ती रहती है, क्योंकि ये तीनों विटामिन कार्बोज, वसा व प्रोटीन से प्राप्त होने वाली ऊर्जा के उपापचय में काम आते हैं।

खनिज लवण : किशोरावस्था में विशेष रूप से कैल्शियम, फॉस्फोरस एवं लौह लवण की आवश्यकता बढ़ जाती है। अस्थियों की वृद्धि एवं विकास के लिये कैल्शियम व फॉस्फोरस की आवश्यकता होती है। बढ़ते हुए शारीरिक भार के साथ-साथ तरल द्रव रक्त में भी वृद्धि होती है। रक्त की मात्रा में बढ़ोतरी के साथ-साथ रक्त का हीमोग्लोबिन स्तर भी 2 ग्राम/100 मिलि. किशोर में तथा 1 ग्राम/100 मिलि. किशोरी में बढ़ता है। हीमोग्लोबिन के निर्माण के लिये लौह तत्त्व की आवश्यकता बढ़ जाती है। किशोरियों में इस अवस्था में मासिक धर्म शुरू हो जाता है। इस तरह हर महीने होने वाले लौह लवण के नुकसान की भरपाई प्रतिदिन के भोजन के द्वारा करनी होती है।

किशोरियों में रक्त स्राव होने के बावजूद भी लौह लवण की दैनिक आवश्यक मात्रा किशोरों से अपेक्षाकृत कम प्रस्तावित की गई है क्योंकि एक तो किशोरियों का शारीरिक भार एवं आकार किशोर से कम होता है। अत: उन्हें रक्त परिवहन एवं ऑक्सीजन संवहन के लिये कम लौह लवण की आवश्यकता होती है। दूसरे, किशोरियों द्वारा भोजन से लौह लवण के अवशोषण की दर भी किशोरों की अपेक्षा अधिक होती है।

जल : किशोर-किशोरियों को अपने भोजन में पर्याप्त मात्रा में जल एवं तरल भोज्य पदार्थों जैसे-दूध, दही, छाछ, फलों का रस, दाल व सब्जियों के सूप इत्यादि का सेवन करना चाहिये। उन्हें प्रतिदिन 8-10 गिलास जल का सेवन पानी या तरल भोज्य पदार्थों के रूप में करना चाहिय।

आहार व्यवस्था

उक्त पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एक किशोर/किशोरी को सभी योग्य भोज्य समूहों एवं विविध भोज्य पदार्थों का पर्याप्त मात्रा में सेवन तालिका 13.2 के अनुसार करना चाहिये।

इस अवस्था के लिये आहार आयोजन करते समय निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखें-

1. आहार किशोरवय के दौरान होने वाली शारीरिक वृद्धि व विकास के

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 13.2 : किशोरों के लिये दैनिक सन्तुलित आहार

भोज्य समूह	भोज्य पदार्थों की मात्रा (ग्रा.)	
	13-18वर्ष	
	किशोर	किशोरी
अनाज	420	300
दालें	60	60
दूध (मि.लि.)	500	500
कंदमूल	200	100
हरी पत्तेदार सब्जियां	100	100
अन्य सब्जियां	100	100
फल	100	100
शक्कर	35	30
घी/तेल	25	25

लिये पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता हो।

2. आहार व्यवस्था उनके स्कूल, कॉलेज एवं अन्य क्रियाकलापों के अनुरूप हो।
3. आहार में ऐसे व्यंजन सम्मिलित किये जाएं जो शीघ्र बनाए एवं खाए जा सकें, पौष्टिक हो तथा उनके व्यस्त कार्यक्रमों में व्यवधान ना पहुंचाते हो।
4. आहार में किशोरों की पसन्द के तुरन्ता भोज्य पदार्थ जैसे-सैण्डविच, खम्मन, बर्गर, पिज्जा, चाउमीन, इडली, डोसे आदि का समावेश भी किया जाए ताकि उन्हें घर के बाहर खाना खाने की इच्छा ना हो। उनके टिफिन में नित्य प्रतिदिन नए-नए पौष्टिक व्यंजन देवें जिससे वे बाहर का असुरक्षित भोजन कम खाएं।
5. किशोरों के संवेग अति तीव्र एवं परिवर्तनशील होते हैं जिसका प्रभाव उनकी भोजन सम्बन्धी स्वीकार्यता पर भी पड़ता है। अत: आहार में उनकी मानसिक स्थिति के अनुरूप लचीलापन हो।
6.घ ारम ेंस दैवर्ा कशोरोंक ीप सन्दके प ौष्टिकव क ु रकुरेस् नैक्सक ी व्यवस्था हो जिससे वे मुख्य भोजन के बीच में खा सके। इससे उनकी पौष्टिक आवश्यकताओं की पूर्ति तो होती ही है, साथ ही यह व्यवस्था उनकी कार्यप्रणाली की व्यस्तता के अनुकूल भी होती है।
7. पर्याप्त दूध एवं हरी पत्तेदार सब्जियां किशोर-किशोरियों की कैल्शियम एवं लौह तत्त्वों की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। दूध व हरी पत्तेदार सब्जियां अगर नापसन्द हो तो उन्हें अन्य रूप में देवें। दूध को दही, रायता, छाछ, पनीर, खोये की मिठाई आदि के रूप में दिया जा सकता है। हरी सब्जियों को पराँठे, सैण्डविच, बर्गर, पकौड़े, पाव-भाजी, चाउमीन आदि में सम्मिलित कर देवें।
8. दिनभर में मौसमी फल का समावेश अवश्य करें।
9. भोजन में रुचि बनाए रखने के लिये आहार के रंग, बनावट, स्वाद व सुगन्ध में विविधता लाएं।
10. किशोरवय में मित्रों के साथ पार्टी वगैरह का प्रचलन दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। अत: ऐसा होने पर छोटी-मोटी पार्टी का आयोजन पूर्ण मनोयोग से घर पर ही करें जिससे उन्हें घर में बना स्वच्छ, सुरक्षित एवं पौष्टिक आहार मिल सके।

किशोर-किशोरियों की जीवनशैली को देखते हुए उन्हें सन्तुलित आहार का ज्ञान होना तथा उनमें भोजन सम्बन्धी अच्छी आदतों का निर्माण आवश्यक है। इससे उनकी पौषणिक आवश्यकताएं अनवरत पूरी होती रहेंगी चाहे वे घर में हों या घर से बाहर रह रहे हों।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु-

1. बाल्यावस्था को युवावस्था से जोड़ने वाली अवस्था को किशोरावस्था कहते हैं। यह सामान्यतया 13 से 21 वर्ष मानी जाती है तथा इस दौरान वृद्धि व विकास की गति बहुत तीव्र होती है।
2. लड़कियों में किशोरावस्था लड़कों की अपेक्षा 1-2 वर्ष पहले प्रारम्भ होती है तथा पहले ही समाप्त हो जाती है। किशोरावस्था लड़कियों में 10-11व र्षस ेप्ारम्भह ोकर1 7-18वर्षत कब नीर हतीह ैत ो लड़कों में 13-14 वर्ष से प्रारम्भ होकर 21 वर्ष तक बनी रहती है।
3. किशोरावस्था में लम्बाई व वजन वृद्धि के साथ-साथ किशोर-किशोरियों में कुछ शारीरिक व मानसिक परिवर्तन भी दृष्टिगोचर होते हैं। उनमें सोचने-समझने व तर्क करने की क्षमता का तीव्रता से विकास होता है। तीव्र शारीरिक परिवर्तन, पढ़ाई व कॅरिअर की चिन्ता तथा समाज में बदलते परिवेश के साथ सामंजस्य बैठाने के कारण किशोर के संवेग तीव्र एवं क्षणिक होते हैं तथा वे अपने आप पर नियन्त्रण नहीं रख पाते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4. किशोरावस्था में पदार्पण करने के साथ-साथ किशोर-किशोरियों की भोजन सम्बन्धी आदतों में तीव्र परिवर्तन आते हैं।
5. सामान्यतया किशोरियां अपने स्वास्थ्य व शारीरिक रचना को लेकर अधिक शंकित रहती है। दुबली, पतली, छरहरी एवं सुन्दर बने रहने के लिये वे जान-बूझकर अपना भोजन सामान्य से भी कम कर देती है।
6. तीव्र शारीरिक वृद्धि एवं बढ़ती हुई खून की मात्रा के साथ-साथ रक्त में हीमोग्लोबिन की आवश्यक मात्रा नहीं बढ़ पाती है एवं स्तर में गिरावट होती है। जिससे किशोरावस्था में एनीमिया/रक्ताल्पता की समस्या अधिक होती है। इसके अलावा तेलीय ग्रन्थियों के अति सक्रिय एवं संक्रमण होने के कारण किशोरावस्था में चेहरे पर कील-मुँहासों की समस्या भी रहती है।
7. किशोरावस्था के समय शारीरिक वृद्धि दर सर्वाधिक होती है। अत: किशोर की पोषक तत्त्वों की माँग भी सर्वाधिक होती है।
8. किशोरों के लिये आयोजित किया गया आहार इस प्रकार होना चाहिये जो उनके तीव्र शारीरिक वृद्धि व विकास के लिये पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता हो, उनके स्कूल, कॉलेज एवं अन्य क्रियाकलापों के अनुरूप हो, शीघ्र बनाया व खाया जा सके तथा उनके व्यस्त क्रियाकलापों में व्यवधान ना पहुँचाता हो।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें-

(i) किशोरावस्था सामान्यत: मानी जाती है-

(अ) 14 से 18वर्ष तक (ब) 13 से 21 वर्ष तक

(स) 12 से 20 वर्ष (द) 10 से 15 वर्ष तक

(ii) किशोर के संवेग होते हैं-

(अ) ढीले-ढीले (ब) सुस्त व लम्बे

(स) तीव्र व क्षणिक (द) सामान्य

(iii) 13-15 वर्षीय सामान्य बालिका को लौह तत्त्व की आवश्यकता होती है-

(अ) 30 मिग्रा (ब) 28मिग्रा

(स) 40 मिग्रा (द) 32 मिग्रा

(iv) किशोरावस्था के समय रक्त में हीमोग्लोबिन के स्तर में गिरावट आती है इस रोग को कहते हैं-

(अ) मोटापा (ब) बेरी-बेरी

(स) रक्ताल्पता (द) घेंघा

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

(i) लड़कियों में किशोरावस्था .... वर्ष से प्रारम्भ होकर 17-18वर्ष तक बनी रहती है।

(ii) .... अपने स्वास्थ्य व शारीरिक रचना को लेकर अधिक शंकित रहती है।

(iii) .... समूह की आवश्यकताएं ऊर्जा की आवश्यकता के साथ-साथ बढ़ती जाती है।

(iv) किशोर/किशोरियों को प्रतिदिन .... गिलास जल का सेवन पानी एवं अन्य तरल भोज्य पदार्थों के रूप में करना चाहिये।

(v) किशोरों के लिये व्यवस्था उनके ..../ .... एवं अन्य .... के अनुरूप होनी चाहिये।

3. किशोरावस्था में हो रहे निम्न परिवर्तनों पर चर्चा कीजिये।

(i) शारीरिक वृद्धि

(ii) संज्ञानात्मक परिवर्तन

(iii) सामाजिक परिवर्तन

4. किशोरावस्था के समय पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकता अधिक होती है। क्यों?

5. किशोरों की भोजन सम्बन्धी समस्याओं को उदाहरण के साथ समझाइये।

6. किशोरों के लिये आहार आयोजन करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिये। संक्षेप में लिखिये।

उत्तरमाला-

1. (i) ब (ii) स (iii) ब (iv) स

2. (i) 10-11 (ii) किशोरियों

(iii) विटामिन-बी (iv) 8-10

(v) स्कूल/कॉलेज, क्रियाकलापों

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

14. वयस्कावस्था में पोषण
Nutrition during Adulthood

एक स्वस्थ जीवन जीने के लिये व्यक्ति का आहार सन्तुलित होना आवश्यक है। सन्तुलित आहार वो होता है जिसमें पर्याप्त मात्रा में कार्बोज, वसा, प्रोटीन, विटामिन एवं खनिज लवण उपस्थित हों। हमारे शरीर के लिये आवश्यक पोषक तत्त्व को कई कारक प्रभावित करते हैं। जैसे-लिंग, उम्र, वजन, लम्बाई, शारीरिक क्रियाशीलता, जलवायु एवं मौसम, विशिष्ट शारीरिक अवस्था, शारीरिक बनावट आदि।

किशोरावस्था के समाप्त होते-होते युवावस्था प्रारम्भ होती है। इस समय किशोर अपनी सम्पूर्ण शारीरिक वृद्धि व विकास को प्राप्त कर मानसिक रूप से एक परिपक्व युवा बन जाता है। सामान्यतया 21 वर्ष से 40 वर्ष तक वयस्कावस्था, तत्पश्चात् प्रौढ़ावस्था प्रारम्भ हो जाती है। इसके दौरान शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक आदि विविध प्रकार के परिवर्तन बहुत धीमे-धीमे होते हैं।

'हम जीने के लिये खाते हैं, न कि खाने के लिये जीते हैं' इस उक्ति का तात्पर्य है कि हमें जीवित रहने के लिये भोजन की आवश्यकता है। अत: हमारा उद्देश्य सिर्फ चटपटे एवं स्वादिष्ट भोजन करने में नहीं बल्कि हमारा आहार सन्तुलित होना चाहिये जिसमें सभी पोषक तत्त्व उपस्थित हों जो हमारे शरीर के लिए आवश्यक है।

जैसे-जैसे एक व्यक्ति वयस्क होता है, उसका शारीरिक विकास, लम्बाई व चौड़ाई के रूप में रुक जाता है। परन्तु शारीरिक तन्तुओं का टूटना व मरम्मत लगातार चलता रहता है। अत: सभी जरूरी पोषक तत्त्व वाला भोजन वयस्कों को देना चाहिये जिससे कि उनका शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य बना रहे। वयस्कावस्था में लिया गया सुपोषित भोजन ही प्रौढ़ावस्था में स्वस्थ बनाये रखता है।

वयस्कों में पुरुष व महिला की पोषक आवश्यकता उनके वजन व शारीरिक संरचना की विभिन्नता पर निर्भर करती है।

आई.सी.एम.आर. के द्वारा एक मानक भारतीय पुरुष को इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि 'एक वयस्क पुरुष 20-39 वर्ष की आयु का, जिसका वजन 60 किग्रा होता है वह किसी भी बीमारी से ग्रसित ना हो और शारीरिक स्वास्थ्य एवं क्रियाशील हो। प्रत्येक कार्यिक दिन में वह आठ घंटे काम करता हो, जिसमें मध्यम क्रिया की गतिविधि हो। जब कार्य ना कर रहा हो वह आठ घंटे चलने में, सामान्य गतिविधियों एवं घरेलू कार्यों में व्यतीत करें (तथा आठ घंटे आराम करे।) ऐसे मानक पुरुष की लम्बाई 163 सेमी होती है।

इसी प्रकार आई.सी.एम.आर. द्वारा परिभाषित एक वयस्क भारतीय महिला की आयु 20-39 वर्ष, वजन 50 किग्रा होती है। वह आठ घंटे सामान्य घरेलू कार्य करे या अन्य मध्यम क्रियाशील कार्य करे। वह आठ घंटे आराम करे एवं चार से छ: घण्टे हल्के कार्यों जैसे-बैठने, चलने-फिरने एवं दो घंटे घरेलू कार्यों में व्यतीत करें। ऐसे मानक वयस्क महिला की लम्बाई 151 सेमी मानी गई है।

पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएं-

आईसीएमआर ने वयस्कों के लिये आवश्यक पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक प्रस्तावित मात्रा बताई है। निम्नानुसार-

ऊर्जा-ऊर्जा की माँग शारीरिक क्रियाशीलता, उसमें लगने वाले समय पर निर्भर करता है। शारीरिक श्रम के आधार पर क्रियाशीलता को तीन भागों में बाँटा गया है।

1. अधिक क्रियाशील व्यक्ति- इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले व्यक्ति बहुत अधिक शारीरिक श्रम करते हैं। जैसे- मजदूर, किसान, बोझा ढोने वाला व्यक्ति, कुली, रिक्शा चालक, पत्थर तोड़ना आदि। अत: इन्हें अधिक मात्रा में ऊर्जा उत्पादक भोज्य तत्त्वों की आवश्यकता होती है।
2. मध्यम क्रियाशील व्यक्ति- वे व्यक्ति जो हल्के-फुल्के कार्य तथा घरेलू कार्यों को करते हैं, इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। जैसे-शिक्षक, गृहिणियां, चपरासी, डाकिया, बस कन्डक्टर, सुनार, क्लर्क महिला आदि। अत: इन्हें अधिक क्रियाशील व्यक्ति की अपेक्षा कम ऊर्जा उत्पादक भोज्य तत्त्वों की आवश्यकता होती है।
3. साधारण या कम क्रियाशील व्यक्ति- वे व्यक्ति जो केवल मानसिक कार्य करते हैं तथा घरेलू कार्य अथवा हल्के-फुल्के कार्य भी नहीं करते हैं, वे इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। जैसे- चिकित्सक, मैनेजर, प्रोफेसर, आई.ए.एस. अधिकारी आदि। अत: इनकी ऊर्जा की मांग

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 14.1 : वयस्कावस्था के लिये पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक प्रस्तावित आहारिक मात्राएं (NIN, 2010)

पोषक तत्त्व	क्रियाशीलता					
	कम		साधारण/मध्यम		अत्यधिक	
	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
ऊर्जा (कि. कैलोरी)	2320	1900	2730	2230	3490	2850
प्रोटीन (ग्रा.)	60	55	60	55	60	55
प्रत्यक्ष वसा (ग्रा.)	25	20	30	20	40	20
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	600	600	600	600	600	600
लौह तत्त्व (मि.ग्रा.)	17	21	17	21	17	21
बीटा कैरोटीन (मा.ग्रा.)	4800	4800	4800	4800	4800	4800
थायमिन (मि.ग्रा.)	1.2	1.0	1.4	1.1	1.7	1.4
राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	1.4	1.1	1.6	1.3	2.1	1.7
नियासिन (मि.ग्रा.)	16	12	18	14	21	16
पाइरिडॉक्सिन (मि.ग्रा.)	2.0	2.0	2.0	2.0	2.0	2.0
विटामिन 'सी' (मि.ग्रा.)	40	40	40	40	40	40
आहारीय फोलेट (मा.ग्रा.)	200	200	200	200	200	200
विटामिन बी12 (मा.ग्रा.)	1	1	1	1	1	1
जिंक (मि.ग्रा.)	12	10	12	10	12	10
मेगनी शियनम (मि.ग्रा.)	340	310	340	310	340	310
वजन (कि.ग्रा.)	60	55	60	55	60	55

सबसे कम होती है।

प्रोटीन–यदि प्राणिज स्रोत में लिये जाये तो बेहतर होते हैं। प्रोटीन की पूर्ति हेतु दाल, दूध, सोयाबीन, मांस, मछली, अण्डा आदि भोजन में सम्मिलित किया जाना चाहिये।

वसा–0.5 ग्राम प्रति किलो वजन प्राणिज स्रोत से और 1 ग्राम प्रति किलो वजन वनस्पति स्रोत से लिया जाना चाहिये। वसा 10 से 20 ग्राम प्रत्यक्ष वसा की मात्रा निर्धारित है जो कि घी/तेल आदि के रूप में ली जाती है।

खनिज लवण–कैल्शियम व फॉस्फोरस का अनुपात Ca : P= 1:1 होना चाहिये। महिलाओं में लौह तत्त्व की मांग पुरुषों की अपेक्षा 2 मिग्रा अधिक लेनी चाहिये।

विटामिन–विटामिन की आवश्यकता कैलोरी की आवश्यकता पर निर्भर करती है। (0.5 मिग्रा. थाइमिन, 0.6मिग्रा राइबोफ्लेविन, 6.6मिग्रा. नियासिन प्रति 1000 कैलोरी) अतः विटामिन बी की आवश्यकता क्रियाशीलता पर निर्भर करती है।

वयस्कों को दिनभर में 8–10 गिलास जल का सेवन तरल भोज्य पदार्थ जैसे दूध, दही, छाछ, सूप, चाय, कॉफी, पानी इत्यादि के रूप में करना चाहिये।

पोषण सम्बन्धी समस्याएं

वयस्कावस्था में पोषण उनके व्यवसाय,श्रम, आय एवं दिनचर्या से प्रभावित होता है।

वयस्कों में अतिपोषण अर्थात् मोटापा, अन्य शारीरिक एवं मानसिक रोग जैसे–उच्च रक्तचाप, मधुमेह, हृदय संबंधी बीमारियां, तनाव एवं अवसाद आदि भी इन्हें घेर लेते हैं जिससे इनकी आहार व्यवस्था प्रभावित होती है।

तालिका 14.2 को देखने से पता चलता है कि शारीरिक क्रियाशीलता बढ़ने के साथ-साथ प्रतिदिन ग्रहण की जाने वाली अनाज, दालों, कंदमूल, शर्करा एवं घी/तेल की मात्राओं में वृद्धि प्रस्तावित है क्योंकि ये भोज्य समूह उनके द्वारा किये जाने वाले अधिक श्रम के लिये ऊर्जा व अन्य पोषक तत्त्वों की अधिक माँग की आपूर्ति करते हैं। वयस्कावस्था के लिये आहार आयोजन करते समय आय के अनुरूप भोज्य पदार्थोंक ाच्ानावक रनेप रस भीअ ायव र्गके व यस्कअ पनाअ ाहार सन्तुलित बना सकते हैं।

आहार व्यवस्था–

1. पूरे दिन के भोजन को तीन समय– नाश्ता, सुबह का खाना व शाम के खाने में बांट कर देना चाहिये।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 14.2 : वयस्कों के लिये दैनिक सन्तुलित आहार (NIN, 2010)*

भोज्य समूह	भोज्य पदार्थों की मात्रा (ग्रा.)					
	कम क्रियाशील		मध्यम क्रियाशील		अधिक क्रियाशील	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
अनाज	375	270	450	330	600	480
दालें	75	60	90	75	120	90
दूध (मि.लि.)	300	300	300	300	300	300
कंदमूल	200	200	200	200	200	200
हरी पत्तेदार सब्जियां	100	100	100	100	100	100
अन्य सब्जियां	200	200	200	200	200	200
फल	100	100	100	100	100	100
शर्करा	20	20	30	30	55	45
घी/तेल	25	20	30	25	40	30

नोट : मांसाहारी व्यक्ति 30 ग्राम दाल की जगह 50 ग्राम अण्डा/मांस/मछली इत्यादि का सेवन कर सकते हैं।

2. एक समय के भोजन में सभी पोषक तत्त्व होने चाहिये।
3. जो व्यक्ति बाहर काम पर जाते हैं उनका भोजन टिफिन में पैक करते वक्त यह ध्यान रखना चाहिये कि भोजन सम्पूर्ण पोषण युक्त, आकर्षक, आसानी से बन्द किया जा सके।
4. अगर डिब्बे बंद भोजन में कोई पोषक तत्त्व की कमी रह जाये तो उसे दोपहर के खाने में या शाम के खाने में देना चाहिये।
5. भोजन बनाते समय वसा व तेल के प्रकार का ध्यान रखना चाहिये जिससे हृदय रोग, उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियां होने की संभावना कम हो जाती है।
6. भोजन में कैल्शियम की मात्रा भी पूर्ण होनी चाहिये।
7. महिलाओं के भोजन में आयरन की मात्रा ज्यादा होनी चाहिये। इसके लिये उन्हें अनाज, छिलके सहित दालें हरी पत्तेदार सब्जियां, यकृत, अण्डा व मांस आदि लेने चाहिये।
8. कच्चे फल एवं सब्जियां जो कि रेशेदार भोजन के मुख्य स्रोत होते हैं, इन्हें भी सम्मिलित करना चाहिये।

क्रियाशीलता के अनुसार आहार व्यवस्था–

जैसे-जैसे शारीरिक क्रिया बदलती है वैसे-वैसे रोजाना शरीर के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्त्व भी नहीं घटते-बढ़ते सिवाय विटामिन बी के। विटामिन 'बी' जैसे-थायमिन, राइबोफ्लेविन, नायसिन आदि ऊर्जा के साथ घटते-बढ़ते हैं।

1. जो साधारण क्रियाशील व्यक्ति होता है उसे 450 किलो कैलोरी कम ऊर्जा चाहिये। अत: उसे अनाज, शक्कर, वसा कम मात्रा में लेने चाहिये। इन्हें रेशेदार फल एवं सब्जियां ज्यादा खानी चाहिये।
2. जो अधिक क्रियाशील व्यक्ति होता है उसे 925 किलो कैलोरी ज्यादा ऊर्जा चाहिये। अत: अनाज की मात्रा बढ़ा देनी चाहिये। शक्कर व वसा भी बढ़ानी चाहिये। प्रोटीन, विटामिन ए, बी युक्त भोजन व फल आदि लगभग कम-ज्यादा वैसे ही रहते हैं।

आय वर्ग के अनुसार आहार व्यवस्था

(i) कम आय वर्ग : कम आय वाले व्यक्ति को निम्न तरीके से अपने भोजन में फेर-बदल करनी चाहिये ताकि उसे कम आय में भी सम्पूर्ण पोषक तत्त्व मिल सके। जैसे-

1. दूध व मांस-मछली की मात्रा कम कर देनी चाहिये।
2. अनाज व दालें ज्यादा व दोनों को मिलाकर लेनी चाहिये ताकि गुणवत्ता एवं मात्रात्मक प्रोटीन मिल सके।
3. मौसमी व कम मूल्य वाली सब्जियां प्रयोग में लेनी चाहिये, बजाय महंगे फल व सब्जियों के।
4. मौसम के अनुसार फलों का सेवन करें।
5. दालों को अंकुरित करके खायें जिससे कि ज्यादा मात्रा में विटामिन सी और अन्य विटामिन मिल सकें।
6. वसा व तेल की मात्रा कम करके शक्कर व गुड़ की मात्रा बढ़ा दें ताकि ऊर्जा का स्रोत बना रहे।

(ii) उच्च आय वर्ग

1. दूध व मांस-मछली की मात्रा ज्यादा सेवन करनी चाहिये।
2. अनाज व दालें कम खायें।
3. मूल्य की समस्या नहीं रहेगी इसलिए सभी फल व सब्जियों का ज्यादा से ज्यादा सेवन करें।
4. वसा व तेल की मात्रा उच्चवर्गीय व्यक्तियों के भोजन में ज्यादा होती है

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इसलिये गुड़ व शक्कर की मात्रा कम कर देनी चाहिये ताकि ऊर्जा का सन्तुलन बना रहे।

कम मूल्य का सन्तुलित आहार

कम आयवर्गीय वयस्कों के भोजन को ज्यादा पोषक तत्त्वीय निम्न तरीकों से बनाया जा सकता है।

1. एक अनाज की जगह 2-3 अनाज मिला कर खायें, उसमें से एक मिलैट होना चाहिये।
2. 50 ग्राम हरे पत्तेदार सब्जियां तो खानी ही चाहिये ताकि विटामिन ए, आयरन व कैल्शियम की मात्रा बढ़ सके।
3. सस्तेव प ़िलेफ लज ैसे-पपीता,अ ़मअ ़दिक ़स ेवनक ़रें ़कि विटामिन 'ए' व 'सी' पोषक तत्त्व भोजन में बढ़ सकें।
4. 150 मिलि. दूध लेवें जिससे राइबोफ्लेविन, कैल्शियम आदि पोषक तत्त्व मिल सकें।
5. 10 ग्राम ज्यादा तेल लेवें ताकि ऊर्जा का आवश्यक स्रोत बना सके।

तालिका- 14.3 : साधारण क्रियाशील पुरुष के लिये कम दर का सन्तुलित आहार–

सामग्री	मात्रा (ग्राम)
1. अनाज	460
2. दालें	40
3. हरी पत्तेदार सब्जियां	50
4. दूसरी सब्जियां व जड़ वाली	60+50
5. दूध	150
6. वसा व तेल	40
7. शक्कर व गुड़	30

भोजन की दर कम करने हेतु कुछ प्रस्ताव

1. राशन दुकान से भोजन सामग्री खरीदें।
2. भोजन में ज्वार, बाजरा, रात्रि को ज्यादा प्रयोग करें।
3. अनाज जिसका मूल्य दूसरे भोज्य पदार्थों से कम होता है, ज्यादा लेना चाहिये।
4. बड़ी व मोटी रोटी बनानी चाहिये।
5. किचन गार्डन में मिलने वाली हरे पत्तेदार सब्जियां जो कम दाम में मिले जैसे-पालक, चौलाई, मैथी, मीठा नीम आदि खरीदनी चाहिये।
6. खमीरीकरण, माल्टिंग, अंकुरण आदि विधियां अपनानी चाहिये जिससे पोषक तत्त्व भी मिलते रहेंगे और ज्यादा खर्चा भी नहीं होगा।
7. फूल गोभी, गाजर, चुकन्दर, मूली, प्याज आदि पत्तियों का सेवन करना चाहिये, जो कि पोषक तत्त्वों में प्रचुर मात्रा में होती है।
8. घर पर बनाया हुआ भोजन कम खर्चीला होता है। अत: घर का भोजन टिफिन में ले जायें।
9. भाप से पकाये भोजन तेल व घी में बने भोजन के बजाय कम मूल्य के होते हैं?
10. शक्कर के बजाय गुड़ का प्रयोग करना चाहिये।
11. सस्ते व मौसमी फल एवं सब्जियां जैसे-पपीता, अमरूद आदि भोजन में शामिल करें।
12. प्राकृतिक भोजन, संरक्षित भोजन से सस्ते होते हैं। अत: इनका ज्यादा प्रयोग करें।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु-

1. युवावस्था प्राय: 20-21 वर्ष यानी किशोरावस्था के समाप्त होते-होते प्रारम्भ होकर 40 वर्ष तक होती है। तत्पश्चात् प्रौढ़ावस्था प्रारम्भ होती है, जो वृद्धावस्था के प्रारम्भ होने के पूर्व तक बनी रहती है।
2. वयस्कों की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएं उनके लिंग एवं क्रियाशीलता के अनुरूप भिन्न होती है।
3. भारी भरकम शारीरिक श्रम करने वाले वयस्कों की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएं तो बढ़ जाती है किन्तु उनकी मासिक आय कम होती है। वे अपने वेतन का 60-70 प्रतिशत भाग भोजन पर व्यय करते हैं।
4. सफेदपोश नौकरी करने वाले कम क्रियाशील स्त्री-पुरुष की मासिक आय बहुत अधिक होती है तथा वे महँगे से महँगे भोज्य पदार्थ खरीद सकते हैं।
5. मध्यम स्तर का शारीरिक श्रम करने वाले वयस्कों की मासिक आय भी मध्यम प्रकार की होती है तथा वे भोजन पर पर्याप्त खर्च वहन कर सकते हैं किन्तु व्यावसायिक व्यस्तताओं, पोषण सम्बन्धी अज्ञान एवं उपेक्षा के कारण इस वर्ग के वयस्क भी कई बार सन्तुलित आहार नहीं ले पाते।
6. वयस्कावस्था के लिये आहार आयोजन करते समय आय के अनुरूप भोज्य पदार्थों का चुनाव सभी समूहों में से उचित मात्रा में करना चाहिये।

अभ्यासार्थ प्रश्न-

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें-

(i) वयस्कावस्था प्राय होती है-

(अ) 18-19 से 40 वर्ष तक की

(ब) 19-20 से 40 वर्ष तक की

(स) 18-20 से 40 वर्ष तक की

(द) 20-21 से 40 वर्ष तक की

(ii) आर्थिक व सामाजिक स्थिरता की अवस्था होती है-

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(अ) युवावस्था (ब) प्रौढ़ावस्था
(स) बाल्यावस्था (द) वृद्धावस्था

(iii) ऑफिस में बैठकर काम करने वाले युवक-युवती होते हैं-
(अ) अधिक क्रियाशील (ब) मध्यम क्रियाशील
(स) कम क्रियाशील (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iv) भारी भरकम शारीरिक श्रम करने वाले स्त्री-पुरुषों के वेतन का .... प्रतिशत भाग भोजन पर खर्च होता है।
(अ) 40-50 (ब) 60-70
(स) 70-80 (द) 80-90

(v) मोटापे का शिकार अधिक होते हैं-
(अ) लकड़हारा व रिक्शाचालक
(ब) मछुआरा व कुम्हार
(स) साहूकार व राजपत्रित अधिकारी
(द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(vi) सन्तुलित आहार में कम क्रियाशील वयस्क पुरुष के लिये अनाज की प्रस्तावित मात्रा है।
(अ) 480 (ब) 375
(स) 360 (द) 690

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

(i) .... वह समय होता है जबकि किशोर अपनी सम्पूर्ण शारीरिक वृद्धि व विकास को प्राप्त कर मानसिक रूप से स्थिर एक परिपक्व युवा बन जाता है।

(ii) युवा एवं प्रौढ़ को सामूहिक रूप से .... कहते हैं।

(iii) .... व्यक्ति की मासिक आय बहुत अधिक होती है तथा शारीरिक श्रम कम करना पड़ता है।

(iv) वयस्क महिला व पुरुष को प्रतिदिन अपने आहार में क्रमशः .... और .... मिग्रा. लौह तत्त्व लेना चाहिये।

(v) ऊर्जा की सर्वाधिक आवश्यकता .... श्रम करने वाले पुरुष को होती है।

3. स्त्री-पुरुष की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएं भिन्न होती है, समझाइये।

4. वयस्कों का आहार आयोजन करते समय आप किन बातों का ध्यान रखेंगे।

5. कम मूल्य में उचित पोषक भोजन हेतु कुछ सुझाव प्रस्तावित करें।

उत्तरमाला-

(1) (i) (द) (ii) (ब) (iii) (स)
(iv) (ब) (v) (स) (vi) (ब)
(2) (i) युवावस्था (ii) वयस्क (iii) कम क्रियाशील
(iv) 30, 28 (v) अधिक।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

15. वृद्धावस्था में पोषण

Nutrition during Oldage

वृद्धावस्था, प्रौढ़ावस्था के पश्चात् आने वाली अवस्था है। मानव जीवन के विकास क्रम में वृद्धावस्था उम्र का सबसे आखिरी पड़ाव है, जो प्रौढ़ावस्था के बाद आती है। इस अवस्था में शरीर निर्माण कार्य नहीं के बराबर होते हैं तथा विघटनात्मक प्रक्रियाएं निरन्तर त्वरित गति से होती हैं। परिणामस्वरूप शरीर जीर्ण-शीर्ण होने लगता है। अत: इसे जरावस्था भी कहते हैं। यह अवस्था लगभग 60 वर्ष की उम्र से प्रारम्भ होती है।

वृद्धावस्था में शारीरिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं, जिनका वृद्ध व्यक्ति के पोषण एवं स्वास्थ्य पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।

शारीरिक परिवर्तन

वृद्धावस्था में शारीरिक वजन में कमी तथा मांसपेशियों की क्रियाशीलता में गिरावट आती है। शारीरिक शिथिलता एवं ऊतकों के चयापचय में कमी हो जाती है। परिणामस्वरूप चयापचय दर में कमी एवं शारीरिक कुल ऊर्जा की माँग कम हो जाती है। वृद्ध व्यक्तियों के शरीर में विविध हार्मोनों का स्त्रवण कम तथा असन्तुलित होने के कारण अस्थि संस्थान में खनिजों की कमी होने लगती है। परिणामस्वरूप हड्डियां कमजोरव भ ुरभुरीह ोज ातीह ैव ट ूटनेक ीस म्भावनाब ढ़ज ातीह ै। वृद्धावस्था में सामान्यत: अस्थि विकृति रोग आस्टियोपोरोसिस हो जाता है। पीठ वक्र हो जाती है, दाँत व मसूड़े कमजोर हो जाते हैं। मसूड़े कमजोर हो जाने के कारण दाँत गिरने लगते हैं। वृद्धावस्था में कोलेजन नामक संयोजक तन्तुओं के सख्त होने के कारण जोड़ों में कठोरता आ जाती है व दर्द रहता है। त्वचा का लचीलापन कम हो जाता है। मांसपेशियों का क्षय होने के कारण त्वचा झुरीदार हो जाती है व लटक जाती है। नाखून कठोर व बाल सफेद हो जाते हैं। नाड़ी संस्थान के कमजोर हो जाने के कारण स्वाद कलिकाओं की तीव्रता में कमी, स्मृति कमजोर होना, ऊंचा सुनना, दृष्टि कमजोर होना स्वाभाविक लक्षण हैं। पाचन संस्थान एवं उत्सर्जी संस्थान कमजोर हो जाता है। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण हो जाती है। वृद्ध व्यक्ति सर्दी-जुकाम व अन्य संक्रामक बीमारियों से जल्दी ग्रस्त हो जाते हैं। मांसपेशीय शिथिलता के कारण उन्हें श्वसन सम्बन्धी तकलीफें, हृदय रोग तथा ऐथ्रोस्क्लेरोसिस होने की सम्भावना बढ़ जाती है। शारीरिक क्रियाशीलता में कमी एवं हार्मोनल असन्तुलन के कारण वृद्धावस्था में मधुमेह की सम्भावना बढ़ जाती है।

सामाजिक परिवर्तन

नौकरी से सेवानिवृत्ति के पश्चात् वृद्धावस्था में शारीरिक शिथिलता के कारण वृद्ध व्यक्तियों का सामाजिक क्षेत्र घर-परिवार एवं पास-पड़ोस तक सीमित हो जाता है।

मनोवैज्ञानिक परिवर्तन

शारीरिक कष्टों के बढ़ते, आर्थिक तंगी के चलते एवं अकेलेपन की मार से वृद्धावस्था में मानसिक परेशानियां गहरा जाती हैं। अधिकांश वृद्ध चिड़चिड़े स्वभाव के हो जाते हैं। परिवार एवं समाज से स्वयं को तिरस्कृत महसूस करते हैं व दु:खी रहते हैं। जीवन के प्रति निराशावादी विचारधारा के चलते अधिकतर वृद्ध मनोवैज्ञानिक रूप से मानसिक अवसाद से ग्रसित हो जाते हैं। जीवन की नीरसता एवं चिन्ताओं को कम करने के लिये तथा सामान्य शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिये हल्के शारीरिक श्रम एवं मनोरंजन की व्यवस्था आदि करना आवश्यक है।

शारीरिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों का प्रतिकूल प्रभाव उनके पोषण स्तर एवं स्वास्थ्य पर पड़ता है। परिणामस्वरूप उनकी जीवन क्षमता कम हो जाती है। वृद्धावस्था में होने वाले परिवर्तन कम से कम हो इसके लिये आवश्यक है कि वृद्ध अपनी शारीरिक क्रियाशीलता को बनाए रखे तथा शारीरिक क्षमता के अनुरूप अपने भोजन में वांछित परिवर्तन कर पूर्ण सन्तुलित एवं पौष्टिक भोजन ग्रहण करें।

पोषण सम्बन्धी समस्याएं

शरीर के बाह्य अंगों में परिवर्तन के साथ-साथ आन्तरिक अंगों में शिथिलता के परिणामस्वरूप उनकी कार्यक्षमता क्षीण हो जाती है। पाचन शक्ति दुर्बल हो जाती है व अंत:स्त्रावी ग्रन्थियों की निष्क्रियता के कारण

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चयापचय दर में कमी आती है। भोजन का पाचन अवशोषण एवं उपापचय ठीक से नहीं हो पाता है। दाँत टूटने एवं लार का स्त्रवण कम होने के कारण भोजन चबाने में कठिनाई होती है व स्वाद कलिकाओं की तीक्ष्णता में कमी के कारण भोजन के स्वाद की अनुभूति नहीं हो पाती। आहारनाल से स्त्रावित होने वाले पाचक रसों-आमाशयी, अग्नाशयी, आंत्र व पित्त रस में कमी के कारण भोजन का पाचन ठीक प्रकार से नहीं हो पाता तथा अपच की समस्या उत्पन्न हो जाती है। आमाशयिक संवरणी के क्षीण हो जाने के कारण अम्लीय भोजन बार-बार ग्रसनी तक पहुंचता है व खट्टी डकार, छाती में जलन आदि की समस्याएं होती हैं। पाचन की गड़बड़ी के साथ-साथ पोषक तत्त्वों के अवशोषण की दर में भी कमी आती है तथा विभिन्न पोषक तत्त्वों की कमी की सम्भावना बढ़ जाती है। आहारनाल की मांसपेशियों की क्षीणता के कारण आँतों की क्रमाकुंचन की गति में शिथिलता आ जाती है। परिणामस्वरूप अपशिष्ट समय पर निष्कासित नहीं हो पाते। इस कारण कब्ज की शिकायत बनी रहती है। वृद्धावस्था में आँत्र संक्रमण का खतरा भी रहता है। अकसर संक्रमण के कारण दस्त एवं अतिसार की सम्भावना बढ़ जाती है।

पौषणिक आवश्यकताएं

वृद्धावस्था में पौषणिक आवश्यकताएं मुख्यत: शारीरिक परिवर्तनों पर निर्भर करती है। पोषक तत्त्वों की आवश्यकताएं निम्नानुसार होती हैं :-

(i) **कैलोरी :** वृद्धावस्था में आधारीय उपापचय दर में कमी आ जाती है। साथ ही शारीरिक क्रियाशीलता भी काफी कम हो जाती है। वस्तुत: वृद्धावस्था में साधारण परिश्रम करने वाले सामान्य वयस्क पुरुष की कैलोरी माँग की अपेक्षा 25 प्रतिशत कम कैलोरी की आवश्यकता होती है। इस अवस्था में कैलोरी का उपभोग शारीरिक भार को सामान्य बनाए रखने हेतु होना चाहिये। शारीरिक शिथिलता के कारण उच्च ऊर्जा युक्त भोजन शारीरिक वजन में वृद्धि करता है व मोटापे के कारण होने वाली बीमारियों को जन्म देता है।

(ii) **प्रोटीन**-वृद्धावस्था में शरीर के तन्तुओं में टूट-फूट की प्रक्रिया अधिक होती है, अत: इन तन्तुओं की मरम्मत हेतु प्रोटीन अत्यावश्यक है। चूँकि वृद्ध व्यक्तियों की भूख कम हो जाती है एवं पाचन शक्ति भी क्षीण होने लगती है। परिणामस्वरूप वृद्ध व्यक्ति कम भोजन ग्रहण करने लगते हैं जिससे उनके शरीर में प्रोटीन के अभाव के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। वृद्धावस्था में प्रोटीन की आहारिक आवश्यकता में कमी नहीं आती है। उन्हें 1 से 1.4 ग्राम प्रोटीन प्रति कि. ग्राम शारीरिक वजन के अनुपात में आहार में प्रतिदिन लेना चाहिये।

(iii) **वसा**-वसा ऊर्जा का मुख्य स्त्रोत है। वृद्धावस्था में कम वसा युक्त आहार लेना चाहिये। प्रतिदिन 30 ग्राम से अधिक वसा नहीं लेना चाहिये। तेलों में आवश्यक वसीय अम्ल की मात्रा अधिक होती है अत: आहार में घी के स्थान पर तेल का प्रयोग करना चाहिये। वृद्धावस्था में अधिक वसा का सेवन मोटापा तथा अनेक बीमारियों जैसे-मधुमेह, हृदय सम्बन्धी रोगों को जन्म देता है।

(iv) **खनिज लवण**-वृद्धावस्था में खनिज लवणों जैसे-लोह तत्त्व एवं कैल्शियम का अवशोषण कम हो जाता है। रक्त में लौह तत्त्व एवं कैल्शियम के स्तर को बनाए रखने हेतु आहार में पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम एवं लौह तत्त्व युक्त पदार्थ जैसे-दूध व दुग्ध पदार्थ, हरी पत्तेदार सब्जियां आदि सम्मिलित किये जाने चाहिये। लौह तत्त्व की कमी से रक्ताल्पता एवं कैल्शियम की कमी से ऑस्टियोपोरोसिस की सम्भावना बढ़ जाती है।

(v) **विटामिन**- शरीर की ऊर्जा की मांग कम होने के कारण अधिकतर वृद्ध कम कैलोरी युक्त भोजन ग्रहण करते हैं। जिससे आहार में विटामिनों की कमी आ जाती है व अधिकांश वृद्धों में विटामिन कुपोषण के लक्षण दिखाई देते हैं। इस कमी को पूरा करने के लिये उन्हें आहार में ताजे फल व सब्जियों का पर्याप्त मात्रा में सूप व जूस के रूप में सेवन करना चाहिये। शारीरिक तंत्र को सुचारु एवं सामान्य बनाए रखने हेतु प्रतिदिन एक मल्टी विटामिन की गोली लेनी चाहिये।

(vi) **जल**-वृद्ध व्यक्तियों को प्रतिदिन कम से कम 1.5 से 2 लीटर जल का सेवन करना चाहिये जिससे मूत्र द्वारा चयापचय के व्यर्थ पदार्थ शरीर से बाहर निकल सकेंगे।

(vii) **रेशा**-यद्यपि रेशा का कोई भी पोषण मूल्य नहीं होता है। आँतों की सक्रियता एवं उत्तम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। वृद्धावस्था में प्राय: कब्ज की शिकायत हो जाती है। बड़ी आँतों की पेशियां कमजोर हो जाती हैं। उनमें शिथिलता उत्पन्न हो जाती है इसलिये कब्ज हो जाता है। कब्ज की स्थिति में सुधार लाने के लिये आहार में पर्याप्त मात्रा में रेशों का होना अत्यावश्यक है। रेशों की पूर्ति हेतु नरम सब्जियां एवं फलों का प्रयोग किया जाना चाहिये। रात्रि भोजन के पश्चात् इसबगोल की भूसी दूध के साथ सेवन करने से कब्ज की शिकायत दूर हो जाती है।

वृद्धावस्था में आहार व्यवस्था-

पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वृद्ध महिला एवं पुरुष को अपने भोजन में विविध भोज्य पदार्थों का चयन तालिका 15.1 के अनुरूप करना चाहिये।

तालिका 15.1 वृद्ध पुरुष व महिला के लिये दैनिक सन्तुलित आहार(NIN, 2010)

भोज्य समूह	भोज्य पदार्थों की मात्रा (ग्राम)	
	पुरुष	महिला
अनाज	285	210
दालें	75	60
दूध (मि.लि.)	300	300
कंदमूल	200	200
हरी पत्तेदार सब्जियां	100	100
अन्य सब्जियां	200	100
फल	200	200
शक्कर	20	20
घी/तेल	25	20

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

वृद्धावस्था में आहार आयोजन करते समय निम्नलिखित सिद्धान्तों व कारकों को ध्यान में रखना चाहिये।

1. वृद्धों के लिये उनकी पोषणिक आवश्यकता के अनुरूप कम ऊर्जा, उच्च प्रोटीन युक्त, विटामिन एवं खनिज लवणों से परिपूर्ण सन्तुलित भोजन की व्यवस्था होनी चाहिये।
2. वृद्ध व्यक्ति एक बार में पेट भर कर भोजन ग्रहण नहीं कर सकते। अत: दिन में 5-6बार अल्प मात्रा में ताजा, सात्त्विक, हलका एवं सुपाच्य भोजन होना चाहिये।
3. भोजन नरम, मुलायम, कम मिर्च मसाले वाला होना चाहिये।
4. भोजन में घी-तेल चिकनाई का प्रयोग कम से कम किया जाये।
5. भोजन में तरल अर्द्धतरल भोज्य पदार्थ जैसे- दूध, छाछ, सूप, शिकंजी, फलों का रस, खिचड़ी, दलिया आदि सम्मिलित किया जाना चाहिये।
6. कब्ज से बचाव हेतु पर्याप्त मात्रा में रेशेदार नरम सब्जियों तथा फलों का प्रयोग किया जाना चाहिये।
7. अस्थि विकृति तथा रक्ताल्पता से बचाव हेतु आहार में पर्याप्त मात्रा में दूध व दुग्ध पदार्थ एवं हरी पत्तेदार सब्जियों का समावेश करें।
8. पर्याप्त मात्रा में पानी का सेवन किया जाना चाहिये।
9. रात्रि का भोजन सोने से कम से कम 2-4 घण्टे पूर्व करना चाहिये तथा सोने से पूर्व दूध का सेवन वांछित है।
10. भोजन रुचिकर विविधता युक्त प्रसन्नचित्त वातावरण में उनकी मनोवृत्ति के अनुकूल होना चाहिये जिससे वह प्रसन्नतापूर्वक रुचि से भोजन ग्रहण करें।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. मानव जीवन के विकासक्रम में वृद्धावस्था उम्र का सबसे आखिरी पड़ाव है जिसमें निर्माण कार्य नहीं के बराबर होते हैं। परिणामस्वरूप शरीर जीर्ण-शीर्ण होने लगता है।
2. वृद्धावस्था में शारीरिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं, जिन का वृद्ध व्यक्ति के पोषण एवं स्वास्थ्य पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।
3. वृद्धावस्था के दौरान वृद्ध को विभिन्न पाचन सम्बन्धी समस्याओं से गुजरना पड़ता है। मुख गुहिका में दांत टूटने, लार स्रवण दर, स्वाद कलिकाओं की तीक्ष्णता एवं पाचक रस कम स्रावित होने के कारण भोजन का पाचन एवं अवशोषण की दर में कमी आ जाती है। अत: कुपोषण की सम्भावना बढ़ जाती है।
4. वृद्धावस्था की पौषणिक आवश्यकताएं मुख्यत: इस समय होने वाले शारीरिक परिवर्तनों पर निर्भर करती है। शारीरिक क्रियाशीलता में कमी होने के कारण ऊर्जा की मांग कम हो जाती है, लेकिन तन्तुओं की मरम्मत हेतु प्रोटीन की आवश्यकता में कमी नहीं आती है। शारीरिक क्रिया तंत्र को सुचारु एवं सामान्य बनाए रखने हेतु विटामिनों एवं खनिज लवणों का समावेश पर्याप्त मात्रा में किया जाना चाहिये।
5. वृद्ध व्यक्तियों के लिये आयोजित आहार कम ऊर्जा व उच्च प्रोटीन युक्त, सन्तुलित, पूर्ण पौष्टिक अल्प मात्रा में दिन में 5-6बार ताजा, नरम, मुलायम एवं हलका होना चाहिये।
6. आहार में पर्याप्त मात्रा में जल एवं तरल पेय पदार्थ, रेशेदार नरम सब्जियां एवं फल, दूध व दुग्ध पदार्थों का समावेश अधिक होना चाहिये।
7. भोजन रुचिकर विविधता युक्त प्रसन्नचित्त वातावरण में उनकी मनोवृत्ति के अनुकूल होना चाहिये जिससे वह प्रसन्नतापूर्वक रुचि से भोजन ग्रहण करें।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) मानव जीवन के विकास क्रम में उम्र का आखिरी पड़ाव कहलाता है :

(अ) बाल्यावस्था (ब) वृद्धावस्था
(स) शैशवावस्था (द) युवावस्था

(ii) वृद्धावस्था में .... परिवर्तनों की गति तीव्र होती है :

(अ) विघटनात्मक (ब) सृजनात्मक
(स) मानसिक (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iii) वृद्धावस्था के दौरान अस्थि से सम्बन्धित होने वाले रोग को कहते हैं :

(अ) एनीमिया (ब) ऑस्टियोपोरोसिस
(स) रिकेट्स (द) बेरी-बेरी

(iv) वृद्धावस्था में आधारीय उपापचय दर में आ जाती है :

(अ) कमी (ब) तीव्रता
(स) समानता (द) उपरोक्त सभी

(v) वृद्धावस्था में शरीर के तन्तुओं की मरम्मत हेतु मुख्य रूप से आवश्यक होता है :

(अ) ऊर्जा (ब) वसा
(स) प्रोटीन (द) जल

(vi) लौह तत्त्व की कमी से हो सकता है :

(अ) कुपोषण (ब) रक्ताल्पता
(स) ऑस्टियोपोरोसिस (द) रिकेट्स

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) जीवन चक्र का आखिरी पड़ाव, जिसमें शरीर निर्माण कार्य

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

नहीं के बराबर होता है, उसे कहते हैं ....।

(ii) वृद्धावस्था की पौषणिक आवश्यकताएं मुख्यत: इस समय में होने वाले .... परिवर्तनों पर निर्भर करती है।

(iii) अधिक .... का सेवन मोटापा तथा अनेक बीमारियों जैसे- मधुमेह, हृदय सम्बन्धी रोगों को जन्म देता है।

(iv) वृद्धजनोंक ाभ ोजनत ाजा,स ात्त्विक,ह लकाए वं. .... होना चाहिये।

3. वृद्धावस्था को जरावस्था क्यों कहते हैं?

4. एक वृद्ध को किस प्रकार की पोषण सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है? समझाइये।

5. एक वृद्ध महिला का आहार आयोजन करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिये?

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) अ (iii) ब
   (iv) अ (v) स (vi) ब
2. (i) वृद्धावस्था (ii) शारीरिक (iii) वसा (iv) सुपाच्य

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

16. विशिष्ट अवस्था में पोषण : गर्भावस्था
Nutrition during Special Stage : Pregnancy

गर्भावस्था एक अस्थाई एवं विशिष्ट शारीरिक अवस्था है। यह सामान्यत: 280 दिन (9 माह 7 दिन) या 40 सप्ताह की होती है। गर्भावस्था में गर्भवती स्त्री के गर्भाशय में एक निषेचित अण्ड कोशिका, एक भ्रूण तत्पश्चात् एक गर्भस्थ शिशु का रूप धारण करती है जो जन्म के समय लगभग 3 किलो वजन का होता है। यह एक प्रकृति प्रदत्त वरदान है कि गर्भाधान के समय जो कोशिका अंडाणु व शुक्राणु के निषेचन से बनी थी वह 9 माह 7 दिन की अवधि पूर्ण कर प्रसवोपरान्त एक पूर्ण विकसित स्वस्थ जीवित शिशु के रूप में प्राप्त होती है। एक कोशिका से पूर्ण परिपक्व शिशु विकसित होने का अंतराल गर्भावस्था कहलाता है।

गर्भकालीन अवस्था के 9 माह 7 दिन के समय को मुख्यत: तीन अवस्थाओं में बाँटा जा सकता है–

(i) डिम्ब अवस्था–गर्भाधान से दो सप्ताह तक

(ii) भ्रूणावस्था–डिम्बावस्था (15 दिन) से 2 माह) तक व

(iii) गर्भस्थ शिशु अवस्था–तीसरे माह के प्रारम्भ से शिशु जन्म तक।

गर्भकालीन अवस्था में माता के शरीर में कई परिवर्तन आते हैं। कुछ परिवर्तन बाह्य होते हैं जो सभी को दिखाई देते हैं। इन बाह्य परिवर्तनों के साथ–साथ अनेक आन्तरिक परिवर्तन होते हैं जिनका संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

गर्भावस्था के दौरान होने वाले परिवर्तन :

गर्भावस्था के दौरान गर्भवती स्त्री की शरीर रचना व कार्यप्रणाली में विविध परिवर्तन होते रहते हैं जिनके साथ उसे सामंजस्य बैठाना पड़ता है। उसके शरीर भार में 10–12.5 किलो ग्राम की वृद्धि होती है जो कि प्रथम चरण में नहीं के बराबर (1–1.5 कि. ग्रा.) व द्वितीय तथा तृतीय त्रैमासिक चरण में 3–5 व 4–5 किलो ग्राम होती है। वजन में यह वृद्धि गर्भस्थ शिशु के वृद्धि व विकास, अपरा के निर्माण, गर्भाशय के बढ़ते आकार, उल्वकोष तरल, मातृ वसा व स्तनों के भार में वृद्धि, मेद रक्त आयतन अन्य शारीरिक तन्तुओं एवं कोशिकीय तरल पदार्थ वृद्धि आदि कारणों से होती है। शरीर का क्षेत्रफल तथा वजन जितना अधिक होता है उपापचयात्मक दर भी उतनी ही अधिक होती है। गर्भावस्था में वजन एवं शरीर के क्षेत्रफल दोनों में तीव्र गति से वृद्धि होती है। परिणामत: गर्भकाल में आहारीय उपापचय दर 10–25 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। गर्भकाल में गर्भाशय का बढ़ता भार मूत्राशय पर पड़ता है जिससे मूत्राशय में संक्रमण होने की संभावना बढ़ जाती है। गर्भावस्था के प्रारम्भ के 2–3 महीनों में मूत्र उत्सर्जन की क्रिया में वृद्धि हो जाती है।

गर्भावस्था में रक्त मात्रा में वृद्धि के साथ रक्त परिसंचरण दर में वृद्धि हो जाती है। रक्त की मात्रा में वृद्धि के कारण रक्त में हीमोग्लोबिन का प्रतिशत कम हो जाता है। गर्भावस्था में कम–से–कम 12–13 ग्राम/100 मि.लि. हीमोग्लोबिन उपस्थित रहना चाहिए जो कि घटकर 7–8ग्राम/100 मि.लि. हो जाता है। इस से गंभीर रक्ताल्पता होने का डर रहता है।

अधिक रक्त के परिवहन का कार्यभार हृदय पर पड़ने से उच्च रक्तचाप हो जाता है व रक्तचाप के बढ़ने से टाँगों की शिराएं विस्फारित होकर फूल जाती है। नाड़ी गति में वृद्धि हो जाती है। वृक्क की ओर भी रक्त परिसंचरण बढ़ जाता है, जिससे वृक्क को भी रक्त छानने हेतु अधिक कार्य करना पड़ता है। जैसे–जैसे गर्भ का समय बढ़ता है और प्रसव का समय नजदीक आता है वैसे–वैसे श्वसन क्रिया में उथलापन आने लगता है और गर्भवती माँ उथला साँस लेने लगती हैं। शरीर में ऑक्सीजन की मांग बढ़ जाती है। गर्भावस्था में गर्भिणी के नाड़ी संस्थान में परिवर्तन के कारण नींदक मअ ातीह ,ॅस वभावम ेि चड़चिड़ापनअ ाज ातीह ,ैस ुस्तीए वं आलस्य के वशीभूत होकर अधिक–से–अधिक विश्राम करना चाहती है। किसी विशेष वस्तु के खाने के प्रति चाह तथा किसी वस्तु से विशेष घृणा हो जाती है। बार–बार प्यास का अनुभव, बार–बार मूत्र त्यागने की इच्छा, वमन, रक्तचाप का बढ़ना आदि अनेक कष्ट नाड़ी संस्थान में परिवर्तन के कारण ही होते हैं। उसकी पीठ एवं कमर की पेशियों में भी खिंचाव होता है, जिसके कारण कमर एवं पीठ में दर्द हो जाता है। गर्भावस्था के बढ़ने के साथ–साथ शरीर में बढ़ते शिशु को स्थान देने व प्रसव के लिए अनुकूलन प्रारम्भ हो जाते हैं। उदर की पेशियां ढीली व लचीली होकर गर्भाशय की वृद्धि के लिए स्थान देती है। गर्भाशय अब श्रोणि अंग न रहकर मांसपेशीय थैली का रूप ले लेता है जिसमें भ्रूण अपरा तथा उल्व तरल उपस्थित रहते हैं। उदर प्रदेश की त्वचा में खिंचाव से लम्बी–लम्बी धारियों के निशान पड़ जाते हैं। प्रसव के लिए योनि मार्ग व ग्रीवा की श्लेष्मिक झिल्ली मोटी हो जाती है, रक्त कोशिकाओं का जाल बढ़ जाता है, त्वचा नीले रंग की हो जाती है व पेशियां ढीली व लचीली हो जाती है, साथ–ही–साथ श्रोणि मेखला के जोड़ व स्नायु भी ढीले पड़ जाते हैं जिससे प्रस्व के दौरान शिशु

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

को बाहर आने के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध हो सके।

पोषण संबंधी समस्याएं :

गर्भधारण एक सामान्य एवं स्वाभाविक शारीरिक प्रक्रिया है परन्तु इस अवधि में लगभग सभी स्त्रियों को हॉर्मोनल परिवर्तनों के कारण गर्भकालीन समस्याओं से गुजरना पड़ता है। प्रात:कालीन वमन, भोजन के प्रति अरुचि, पाचन संबंधी परेशानियां, रक्ताल्पता, उच्च रक्तचाप, शारीरिक सूजन, पैरों में बांयटे आना आदि समस्याओं के कारण गर्भवती स्त्री असुविधा एवं बेचैनी महसूस करती है। अत: गर्भावस्था के दौरान गर्भवती स्त्री को विशेष देख-भाल एवं परिचर्या की आवश्यकता होती है। इन कष्टों को दूर करने के लिए गर्भिणी को आहार विशेष का ध्यान देना चाहिए व धैर्यपूर्वक शारीरिक परिवर्तनों से समन्वय करना चाहिए। गर्भिणी को किसी कुशल चिकित्सक के संरक्षण में नियमित जाँच करवाते रहना चाहिए जिससे शारीरिक कष्टों के चलते कोई जटिल समस्या उत्पन्न न हो और यदि हो तो शिशु एवं मातृ मृत्यु दर को रोका जा सके। गर्भावस्था में उत्पन्न होने वाली पोषण संबंधी समस्याएं निम्नलिखित हैं-

1. जी मिचलाना या प्रात:कालीन वमन : गर्भावस्था के प्रथम 2-3 माह में महिला को सुबह-सुबह उठते ही चक्कर आना, जी मिचलाना, उबकाईव उ लटीअ ानेक ास मस्यार हतीहै ाए ेसाश ारीरम ेंह ॉर्मोन परिवर्तन तथा गर्भाशय में भ्रूण की उपस्थिति से महिला का सामंजस्य नहीं हो पाने से उत्पन्न मनोवैज्ञानिक कारणों से होता है। इस स्थिति में महिला को सुबह उठते ही थोड़ा-सा ठोस आहार जैसे-टोस्ट, बिस्किट, भुने चने आदि खाना चाहिए, तत्पश्चात् तरल पदार्थ पीना चाहिए। तीन माह पूरे होते-होते यह समस्या स्वत: ही ठीक हो जाती है। किन्तु यदि ऐसा न हो एवं उलटियां पूरे दिन भर या लम्बे समय तक होती रहती हो तो निर्जलीकरण या विषाक्तता की स्थिति उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। महिला ठीक प्रकार से भोजन ग्रहण नहीं कर पाती है एवं उसके पोषण स्तर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। ऐसी स्थिति में चिकित्सक से परामर्श लेना अनिवार्य है।

2. पाचन संबंधी परेशानियाँ : गर्भाशय के बढ़ते आकार की वजह से आमाशय पर दबाव पड़ता है साथ ही इस अवस्था में प्रोजेस्ट्रोन नामक हॉर्मोन का स्रावण अधिक होता है। इस हॉर्मोन की अधिकता से पेशियाँ मुलायम होकर ढीली पड़ जाती हैं। इस के प्रभाव से आहारनाल की पेशियों में शिथिलता आ जाती है। आंतों की क्रमाकुंचन दर कम होने के कारण भोजन आगे की ओर अग्रेसित नहीं हो पाता व आमाशय में 40-48घंटों तक बिना पचे पड़ा रहता है एवं **अपच** की परेशानी होती है। कई बार अम्लीय भोजन आमाशय से आहार नली में पहुँच जाता है, फलत: डकारें आना व छाती में जलन की समस्या उत्पन्न हो जाती है। बड़ी आंतों में जल की पुनर्वशोषण की दर बढ़ जाती है जिससे मल सूख जाता है। पेशियों के शिथिल पड़ जाने के कारण सूखे मल के उत्सर्जन में कठिनाई बढ़ जाती है तथा **कब्ज** की शिकायत हो जाती है। गर्भावस्था में रक्त के आयतन में वृद्धि होने के कारण शरीर की सभी शिराएं फूल जाती हैं। मलद्वार की फूली हुई शिराओं पर शुष्क मल उत्सर्जन का दबाव पड़ता है इससे इन शिराओं के फटने का भय बना रहता है तथा शुष्क मल के निष्कासन के समय शिराएं फट जाती है जिससे रक्तस्राव होने लगता है। बवासीर अधिकांशत: कब्ज की शिकायत होने से होता है।

पाचन संबंधी इन परेशानियों से निबटने के लिए आहार व्यवस्था में निम्न परिवर्तन करने चाहिए-

1. एक बार भरपेट भोजन न करके दिन में 5-6बार थोड़ी-थोड़ी मात्रा में भोजन करना चाहिए।
2. भोजन में प्राकृतिक रोचक भोज्य पदार्थों को सम्मिलित करें।
3. पर्याप्त मात्रा में जल एवं तरल पेय पदार्थ आदि का सेवन करें।
4. आहार एवं शौच के समय में नियमितता बरतें।
5. शौच जाने से पूर्व गुनगुने पानी में नीबू का रस पीएं।
6. सुबह-शाम खुली हवा में टहलना व हलका व्यायाम करते रहें जिससे पेशीय गतिशीलता बनी रहे।

3. रक्ताल्पता, उच्च रक्तचाप एवं सूजन : गर्भावस्था में शारीरिक वजन बढ़ने के साथ-साथ रक्त की कुल मात्रा में भी 1 से 2 लिटर तक की वृद्धि होती है लेकिन तरल रक्त में वृद्धि के साथ-साथ हीमोग्लोबिन में आनुपातिक वृद्धि नहीं हो पाती जिससे महिला के रक्त का हीमोग्लोबिन स्तर सामान्य (12-14 ग्राम/100 मि.लि.) से गिर जाता है। ऐसे में हीमोग्लोबिन स्तर 11 ग्राम/100 मि.लि. से कम होने पर महिला को रक्ताल्पता की अवस्था में माना जाता है। कभी-कभी तो यह स्तर 7-8ग्राम/100 मि.लि. तक गिर जाता है एवं भयंकर रक्ताल्पता होने से महिला के पोषण स्तर एवं शिशु के विकास, दोनों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

रक्त की मात्रा में वृद्धि होने से हृदय पर अधिक रक्त परिवहन का कार्यभार बढ़ जाता है। रक्त नलिकाओं को भी अब अधिक रक्त वहन करना पड़ता है, अत: सामंजस्य बिठाने के लिए शिराएँ विस्फारित होकर फूल जाती हैं किन्तु फिर भी शिराओं में रक्त का दाब बढ़ा हुआ रहता है जिससे उच्च रक्तचाप की समस्या पैदा होती है। गर्भाशय के बढ़ते भार से शिराओं पर दाब पड़ता है तथा शरीर के निचले हिस्सों-टाँगों एवं पैरों में रक्त परिवहन अवरुद्ध हो जाता है। ऐसे में शिराओं से तरल द्रव्य बाहर निकलकर अंतर कोशिकीय स्थलों एवं ऊतकों में एकत्रित हो जाता है जिससे सूजन (Oedema) हो जाता है। धीरे-धीरे सूजन शरीर के अन्य परिधीयअ ंगोंज ैसे-हाथ,च ेहरे,प ैरोंअ ादिप रभ ाीफ ैलनेल गतीहै। गर्भवती महिला का रक्तचाप सामान्य होना चाहिए। रक्तचाप अधिक होने पर चिकित्सकीय परामर्श लेना चाहिए।

रक्ताल्पता से निबटने के लिए लौह तत्त्व से भरपूर भोज्य पदार्थों का नियमित सेवन करें। चिकित्सक द्वारा दी गई लौह तत्त्व एवं फॉलिक अम्ल की गोलियों का चिकित्सकीय निर्देशों के अनुरूप नियमित सेवन करें। उच्च रक्तचाप एवं सूजन की स्थिति में भोजन में नमक का प्रयोग कम-से-कम करें।

4. पैरों में बांयटे आना :

गर्भावस्था में कभी-कभी पैरों में बांयटे आते हैं। ऐसा महिला के शरीर में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

कैल्शियम की कमी के कारण हो सकता है क्योंकि गर्भस्थ शिशु की कैल्शियम की आवश्यकताएं बहुत अधिक होती है जिसे महिला प्रतिदिन के भोजन द्वारा ग्रहण नहीं कर पाती। ऐसे में चिकित्सक के परामर्श से कैल्शियम एवं विटामिन ई की गोलियां खाने से आराम मिलता है।

पोषण संबंधी आवश्यकताएं :

एक स्वस्थ माँ ही एक स्वस्थ शिशु को जन्म देने में सक्षम हो सकती है। गर्भावस्था के दौरान गर्भस्थ शिशु की वृद्धि एवं विकास गर्भवती महिला के शारीरिक स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर पर निर्भर करता है। गर्भावस्था के दौरान होने वाले शारीरिक परिवर्तन सामान्य रूप से हों तथा गर्भावस्था के दौरान होने वाली समस्याएं कम-से-कम हों, इसके लिए आवश्यक है कि गर्भवती महिला सुपोषित हो। गर्भावस्था से पूर्व गर्भावस्था के समय के पोषण का शिशु के स्वास्थ्य पर प्रभाव होता है। यदि माता अस्वस्थ, निर्बल, बीमार, कमजोर अथवा किसी गंभीर बीमारी से ग्रस्त होंगी तो वह स्वस्थ शिशु को जन्म नहीं दे सकेगी। ऐसा भी हो सकता है कि प्रसव के दौरान माँ एवं शिशु दोनों की मृत्यु हो जाए अथवा माँ एवं शिशु में से किसी एक की जान चली जाए। इसके लिए आवश्यक है कि गर्भवती महिला स्वयं की पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ गर्भस्थ शिशु की पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी दैनिक आहार से पूर्ण करे। अत: गर्भवती महिलाओं के लिए पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक मात्रा की अनुशंसा अतिरिक्त आवश्यकताओं के रूप में की गई है। पौष्टिक तत्त्वों की अतिरिक्त मात्राओं को सामान्य महिला की दैनिक मात्रा में जोड़ देने पर किसी भी श्रेणी की कार्यशील गर्भवती महिला की दैनिक आवश्यकता ज्ञात की जा सकती है। एक कम, मध्यम एवं अधिक श्रम श्रेणी वाली महिला की पौषणिक आवश्यकताएं एवं गर्भावस्था के लिए अतिरिक्त आवश्यकताएं तालिका 16.1 – में दी गई हैं।

तालिका 16.1 :- गर्भवती महिला के लिए पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक प्रस्तावित आहारिक मात्राएं- (NIN, 2010)*

पौष्टिक तत्त्व	क्रियाशीलता			गर्भावस्था के लिए अतिरिक्त आवश्यकता
	कम	मध्यम	अधिक	
ऊर्जा (कि. कैलोरी)	1900	2230	2850	+350
प्रोटीन (ग्राम)	55	55	55	82.2
प्रत्यक्ष वसा (ग्राम)	20	25	30	30
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	600	600	600	1200
लौह तत्त्व (मि.ग्रा.)	21	21	21	35
बीटा कैरोटीन (मा. ग्राम)	4800	4800	4800	6400
थायमिन (मि.ग्रा.)	1.0	1.1	1.4	+0.2
राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	1.1	1.3	1.7	+0.3
नियासिन (मि.ग्रा.)	12	14	16	+2
पिरीडॉक्सिन (मि.ग्रा.)	2.0	2.0	2.0	2.5
विटामिन 'सी' (मि.ग्रा.)	40	40	40	60
आहारीय फोलेट (मा.ग्रा.)	200	200	200	500
विटामिन बी-12 (मा.ग्रा.)	1.0	1.0	1.0	1.2
मैग्नीशियम (मि.ग्रा.)	310	310	310	310
जिंक (मि.ग्रा.)	10	10	10	12

तालिका को देखने से पता चलता है कि गर्भावस्था में लगभग सभी पोषक तत्त्वों की अतिरिक्त मात्राएं प्रस्तावित की गई हैं।

गर्भावस्था में ऊर्जा की अतिरिक्त आवश्यकता शरीर भार एवं आकार में वृद्धि के कारण होती है। इन दोनों में वृद्धि होने से आहारीय चयापचय दर में वृद्धि हो जाती है। परिणामत: कैलोरी की मांग बढ़ जाती है। I.C.M.R. के भोज्य विशेषज्ञों ने गर्भावस्था में 350 Kcal अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यकता बताई है। कैलोरी की प्राप्ति हेतु आहार में अनाज, शर्करा, वसा का उपयोग किया जाना चाहिए, परन्तु बहुत अधिक नहीं। गर्भवती को एक बार भरपेट भोजन ग्रहण न करके थोड़ी-थोड़ी मात्रा में दिन में 5-6बार भोजन ग्रहण करना चाहिए।

गर्भवती महिला के लिए अतिरिक्त प्रोटीन की आवश्यकता शरीर में होने वाली सामान्य टूट-फूट की नियमित मरम्मत के अतिरिक्त गर्भस्थ शिशु के शरीर निर्माण तथा उसके स्वयं के नये ऊतकों एवं तन्तुओं के निर्माण के लिए होती है। प्रोटीन की आपूर्ति के लिए गर्भिणी को अपने आहार में उच्च गुणवत्ता वाले पूर्ण प्रोटीन युक्त भोज्य पदार्थों जैसे-दूध, पनीर, सोयाबीन, सूखे मेवे, मांस, मछली, अंडा आदि का सेवन करना चाहिए।

गर्भकाल में वसा बढ़ाये जाने की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि आहार में वसा के अधिक प्रयोग से गर्भाशय में चर्बी का संग्रह हो जाता है। मोटापा बढ़ता है। मोटापा बढ़ने से कई बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। संतृप्त वसा जैसे-घी, डालडा आदि का उपयोग कम-से-कम किया जानाच ाहिएक योंकिस् वास्थ्यके ि लएय ेज यादाह ानिकारकह ोतेहैं। असंतृप्त वसा का उपयोग स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है।

गर्भस्थ शिशु की अस्थियों एवं दाँतों के निर्माण के लिए अतिरिक्त कैल्शियम की आवश्यकता होती है। दैनिक भोजन के द्वारा कैल्शियम की निरन्तर आपूर्ति नहीं होने की दशा में गर्भस्थ शिशु माता के शरीर, हड्डियों एवं दाँतों में संचित कैल्शियम से अपनी आवश्यकताएं पूर्ण करता है परिणामत: माता की अस्थियाँ एवं दाँत दुर्बल हो जाते हैं तथा उसे अस्थिमृदुता (Oesteomalacia) रोग हो जाता है। इसलिए गर्भकाल में 1.2 ग्राम प्रतिदिन कैल्शियम का सेवन करना चाहिए। कैल्शियम की अत्यधिक आवश्यकता की पूर्ति उच्च कैल्शियम युक्त भोज्य पदार्थों जैसे-दूध व दूध से बने पदार्थ, (दूध, दही, पनीर, छाछ) हरी पत्तेदार सब्जियाँ, बंदगोभी, शलजम, फूलगोभी एवं अंडा आदि आहार में सम्मिलित करना चाहिए। अतिरिक्त आवश्यकता हेतु कैल्शियम की गोलियाँ या टॉनिक का सेवन किया जाना चाहिए।

गर्भस्थ शिशु के शरीर में रक्त एवं हीमोग्लोबिन के निर्माण के लिए लौह तत्त्व आवश्यक होता है। यदि माता के आहार में पर्याप्त मात्रा में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

लौह तत्त्व नहीं होता है तो शिशु माता के रक्त से अवशोषित करने लगता है, जिसके कारण गर्भवती स्त्री गंभीर रक्ताल्पता रोग का शिकार हो जाती है। अत: गर्भवती महिला को लौह तत्त्व से भरपूर भोज्य पदार्थ जैसे-हरी पत्तेदार सब्जियाँ, पालक, मेथी, बथुआ, गुड़, यकृत, मांस, मछली, अंडे आदि का सेवन प्रचुर मात्रा में करना चाहिए। गर्भावस्था के अन्तिम तीन महीनों में लौह लवण की मांग बहुत अधिक बढ़ जाती है। अत: चिकित्सक के परामर्श से लौह लवण की गोलियाँ अथवा टॉनिक लेना आवश्यक होता है। गर्भावस्था के भोजन में फॉलिक अम्ल की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए क्योंकि यह मेगालोब्लास्टिक रक्त अल्पता से सुरक्षा करता है। सम्पूर्ण अनाज, मूँगफली, तिल, फलियाँ, हरी पत्तेदार सब्जियाँ, सूखी यीस्ट, अण्डे एवं यकृत आदि भोज्य पदार्थों में हों तो फॉलिक अम्ल बहुतायत से मिलता है। अत: गर्भवती महिला के आहार में प्रतिदिन इन भोज्य पदार्थों को अवश्य ही सम्मिलित करना चाहिए।

थायमिन, राइबोफ्लेविन व नियासिन की आवश्यकताएं ऊर्जा की आवश्यकताओं के अनुरूप बढ़ती हैं, क्योंकि ये तीनों विटामिन ऊर्जा के उपापचय अर्थात् कार्बोज, वसा व प्रोटीन का ऑक्सीकरण कर ऊर्जा मुक्त करने के उपयोग में आते हैं। गर्भस्थ शिशु की वृद्धि व विकास के लिए विटामिन सी, बी-12 व ए अति आवश्यक हैं। विटामिन सी कोलेजन (Collagen) का निर्माण करता है। यह कोलेजन शरीर की विभिन्न कोशिकाओं एवं ऊतकों को जोड़ने के काम आता है। विटामिन बी-12 पर्निशियस रक्ताल्पता से बचाव हेतु आवश्यक है इसके अभाव में गर्भवती माता के रक्त में लाल रक्त कणिकाओं की मात्रा में कमी हो जाती है। विटामिन ए शरीर की वृद्धि एवं आँखों के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। गर्भावस्था में इन की अतिरिक्त आवश्यकता बहुत कम है जिसकी आपूर्ति प्रतिदिन के लिए प्रस्तावित सामान्य मात्राओं से ही हो जाती है।

गर्भवती महिला को पौष्टिक तत्त्वों के साथ-साथ जल और तरल पदार्थों की भी आवश्यकता होती है। जल एवं तरल पदार्थ रक्त की तरलता बनाएर खनेम ेंए वंअ पशिष्टप दार्थोंके उ त्सर्जनम ेंस हायकह ेतेह ैं। गर्भवती महिला को दिन भर में 7-8गिलास जल पीना चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में जल की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। फलों का रस, सब्जियों का सूप, दूध, छाछ आदि व अन्य पेय पदार्थ दैनिक आहार में सम्मिलित करने चाहिए।

आहार व्यवस्था :

गर्भकाल में शिशु के पूर्ण व यथोचित विकास हेतु सभी पौष्टिक तत्त्वों की आपूर्ति के लिए महिला को अपने भोजन में विविध भोज्य पदार्थों का चयन तालिका- के अनुरूप करना चाहिए।

तालिका- 16.2 :: गर्भवती महिला के लिए दैनिक संतुलित आहार (NIN, 2010)*

भोज्य समूह	**भोज्य पदार्थों की मात्रा (ग्राम)**			
	क्रियाशीलता			**अतिरिक्त आवश्यकता**
	कम	**मध्यम**	**अधिक**	
अनाज	270	330	480	-
दालें	60	75	90	-
दूध (मि.लि.)	300	300	300	+200
कंद मूल	200	200	200	-
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	100	100	100	+50
अन्य सब्जियाँ	200	200	200	-
फल	100	100	100	+100
शर्करा	20	30	45	-
घी/तेल	20	25	30	+10

नोट : मांसाहारी महिला 30 ग्राम दाल के बदले 50 ग्राम अण्डा/मांस/मछली इत्यादि का उपयोग कर सकती है।

तालिका के अनुसार आहार आयोजन करने से पूर्व निम्न बातों को ध्यान में रखें-

1. गर्भवती स्त्री गर्भावस्था के किस चरण में है? क्योंकि प्रथम तीन माह में महिला को अतिरिक्त पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकता नहीं होती है। अवस्था के बढ़ने के साथ-साथ पौष्टिक तत्त्वों की माँग भी बढ़ती जाती है जो कि अंतिम तीन माह में सर्वाधिक होती है।
2. गर्भवती महिला को सुबह-सुबह सोकर उठते ही तरल पदार्थ, चाय, कॉफी, दूध, छाछ आदि पीने के लिए नहीं देवें, वरन् उसे ठोस पदार्थ जैसे-बिस्कुट, टोस्ट, भुने चने आदि खाने को दें।
3. गर्भवती महिला को एक बार में अधिक भोजन न देकर 5-6बार में थोड़ी-थोड़ी मात्रा में भोजन देवें।
4. आहार सादा एवं सात्त्विक हो तथा तला भुना अधिक मसाले वाला व गरिष्ठ न हो, जिससे अपच या छाती में जलन की समस्या हो।
5. आहार में गैस उत्पादक भोज्य पदार्थ जैसे-चने व उड़द की दाल, चवले, पत्ता गोभी, फूल गोभी, मूली, आलू इत्यादि का सेवन कम करें।
6. आहार में रेशा युक्त भोज्य पदार्थ जैसे-चोकर युक्त आटा, छिलके वाली दालों, साबुत अनाज, सलाद व फलों को सम्मिलित करें जिससे आहारनाल की सक्रियता बरकरार रहे तथा कब्ज व बवासीर की समस्याएं न हो।
7. भोजन में रेचक पदार्थ जैसे बथुआ, पालक, पपीते आदि का भरपूर सेवन करें।
8. मैदे की रोटी, नॉन या मैदे से बने व्यंजनों का उपभोग कम करें क्योंकि इस से कब्ज की समस्या हो सकती है।
9. आहार में प्रचुर मात्रा में तरल पेय पदार्थ जैसे-नारियल पानी, सूप, दूध, फलों का रस, शिकंजी, छाछ, इत्यादि का सेवन करें।
10. भोजन में दूध व दूध से बने पदार्थ, हरी पत्तेदार सब्जियाँ व ताजे फलों को पर्याप्त स्थान दें जिससे विटामिन व खनिज लवणों की बढ़ी हुई आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।
11. दैनिक भोजन में अंडा, मांस, मछली आदि को भी स्थान दें। शाकाहारी गर्भिणी को आहार में मिश्रित भोज्य पदार्थ जैसे-अनाज+दाल,

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अनाज+दूध, दाल+दूध आदि सम्मिलित करने चाहिए जिससे प्रोटीन की गुणवत्ता बढ़ाई जा सके।

12. भोजन में नमक का सेवन अत्यधिक नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे सूजन की संभावना बढ़ जाती है।
13. रात्रि का भोजन हलका एवं सुपाच्य हो तथा सोने से 2-3 घंटा पहले कर लें।
14. चिकित्सक द्वारा दी गई गोलियों का सेवन नियम से करें।
15. आहार में चाय, कॉफी आदि का उपभोग कम करें तथा तम्बाकू या मादक पेय बिलकुल भी नहीं लें।
16. कब्ज होने पर रात को सोते समय 2 चम्मच इसबगोल की भूसी अथवा 4-5 मुनक्के गुनगुने दूध के साथ लेने से कब्ज नहीं रहती व सोने से पहले गर्म दूध पीने से नींद भी अच्छी आती है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. गर्भावस्था महिलाओं के जीवन में आने वाली एक अस्थाई एवं विशिष्ट शारीरिक अवस्था है। यह सामान्यत: 9 माह 7 दिन या 40 सप्ताह की होती है।
2. गर्भावस्था के दौरान स्त्री के गर्भाशय में एक निषेचित अण्ड कोशिका पहले एक भ्रूण एवं तत्पश्चात् एक गर्भस्थ शिशु का रूप धारण करती है।
3. गर्भावस्था के दौरान शिशु के विकास के साथ-साथ माँ के शरीर में भी कई तीव्र परिवर्तन होते रहते हैं जिनके साथ उसे सामंजस्य बैठाना पड़ता है। अत: इस अवस्था में भोजन का विशेष महत्त्व है।
4. गर्भावस्था एक सामान्य एवं स्वाभाविक शारीरिक प्रक्रिया है परन्तु इस अवधि में लगभग सभी स्त्रियों को हॉर्मोनल परिवर्तनों के कारण गर्भकालीन समस्याओं से गुजरना पड़ता है। अत: गर्भावस्था के दौरान गर्भवती स्त्री को विशेष देख-भाल एवं परिचर्या की आवश्यकता होती है।
5. गर्भावस्था के दौरान गर्भस्थ शिशु की वृद्धि एवं विकास गर्भवती महिला के शारीरिक स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर पर निर्भर करता है। गर्भावस्था केद ैरानह ेनेव ालेश ाारीरिकप रिवर्तनस ामान्यरू पस ेह ेंत था गर्भावस्था के दौरान होने वाली समस्याएं कम-से-कम हों, इसलिए आवश्यक है कि गर्भवती महिला सुपोषित हो।
6. गर्भवती महिला स्वयं की पौषणिक आवश्यकता की पूर्ति के साथ-साथ गर्भस्थ शिशु की पौषणिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी दैनिक आहार से पूर्ण करे। अत: गर्भवती महिलाओं के लिए पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक मात्रा की अनुशंसा अतिरिक्त आवश्यकताओं के रूप में की गई है।
7. गर्भकाल में शिशु के पूर्ण व यथोचित विकास हेतु सभी पौष्टिक तत्त्वों की आपूर्ति के लिए महिला को अपने भोजन में विविध भोज्य पदार्थों का चयन दैनिक संतुलित आहार (NIN, 2010)* के अनुरूप करना चाहिए।
8. गर्भवती महिला को एक बार में अधिक भोजन न देकर 5-6बार में थोड़ी-थोड़ी मात्रा में हलका सुपाच्य संतुलित एवं पूर्ण पौष्टिक भोजन ग्रहण करना चाहिए।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) एक निषेचित अण्ड कोशिका से शिशु बनने तक का नौ माह सात दिन का अंतराल कहलाता है-

(अ) बाल्यावस्था (ब) गर्भावस्था

(स) शैशवावस्था (द) युवावस्था

(ii) गर्भावस्था को मुख्यत: कितनी अवस्थाओं में बाँटा गया है?

(अ) दो (ब) तीन

(स) चार (द) एक

(iii) कम क्रियाशील गर्भवती महिला को प्रोटीन की आवश्यकता होती है:

(अ) 78.2 (ब) 75.2

(स) 82.2 (द) 55.0

(iv) गर्भावस्था में अतिरिक्त लौह लवण एवं फोलिक अम्ल की आवश्यकता होती है :

(अ) अतिरिक्त ऊर्जा के लिए

(ब) हीमोग्लोबिन के स्तर को बनाए रखने के लिए

(स) माता के वजन के लिए

(द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) गर्भावस्था सामान्यत: .... सप्ताह की एक अस्थाई अवस्था है।

(ii) गर्भावस्था में वजन एवं शरीर के क्षेत्रफल की तीव्र गति से वृद्धि के कारण उपापचय दर .... तक बढ़ जाती है।

(iii) गर्भावस्था में हॉर्मोनल परिवर्तनों के कारण .... समस्याओं से गुजरना पड़ता है।

(iv) महिला की गर्भावस्था के समय कैल्शियम की आवश्यकता .... मि. ग्राम होती है।

(v) .... समूह के विटामिनों की आवश्यकताएं ऊर्जा की आवश्यकताओं के अनुरूप बढ़ती हैं।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

(अ) रक्ताल्पता (ब) पाचन सम्बन्धी समस्याएं

(स) प्रात:कालीन वमन

(द) गर्भवती महिला के लिए दैनिक संतुलित आहार

4. गर्भावस्था महिलाओं के जीवन में आने वाली एक अस्थाई एवं विशिष्ट अवस्था है। स्पष्ट कीजिये।

5. गर्भवती महिला हेतु आहार आयोजन करते समय महत्त्वपूर्ण बिन्दु लिखिये।

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) ब (iii) स (iv) ब

2. (i) 40 (ii) 10-25 प्रतिशत (iii) गर्भकालीन (iv) 1200 (v) बी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

17. विशिष्ट अवस्था में पोषण : धात्रीवस्था

Nutrition during special stage : Lactation

धात्रीवस्था शिशु के जन्म से लेकर प्रायः एक वर्ष या तब तक बनी रहती है जब तक माँ अपने शिशु को स्तनपान कराती है, इसे स्तनपान या दुग्धपान की अवस्था भी कहते हैं। जन्म के पश्चात् नवजात शिशु के लिए माँ का दूध अमृत तुल्य, प्रारम्भिक भोजन, ईश्वर का वरदान है। माता का दूध हरेक शिशु का जन्म सिद्ध अधिकार है। शिशु को मातृ दुग्ध से वंचित नहीं करना चाहिए। जन्म के पश्चात् शिशु को स्तनपान अवश्य करवाना चाहिए।

माँ के दूध में शिशु के वृद्धि, विकास एवं समुचित पोषण के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्त्व विद्यमान होते हैं। शिशु प्रथम तीन माह केवल माँ के दूध पर ही पलता एवं पोषित होता है। शिशु को कम-से-कम छह माह तक अवश्य ही स्तनपान करवाना चाहिए। शिशु इसके बाद भी प्रायः 1-1½ वर्ष तक माँ का दूध पीता रहता है, किन्तु इस दौरान वह मातृ दुग्ध के अतिरिक्त घर में बनने वाले ऊपरी आहार भी खाना शुरू कर देता है। अतः इस दौरान भी वह अपने पोषण के लिए आंशिक रूप से मातृ दुग्ध पर ही निर्भर रहता है। अतएव धात्री माता का स्वस्थ एवं तन्दुरुस्त होना अति आवश्यक है। माँ अगर दुर्बल एवं कमजोर होगी तो स्तनों में दुग्ध निर्माण व स्रवण की दर कम हो जायेगी तथा माँ के अत्यधिक कुपोषित होने की दशा में माँ के स्तन दुग्ध की गुणवत्ता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। ऐसे में शिशु की वृद्धि एवं विकास यथोचित रूप से नहीं हो पाएगा तथा वह दुर्बल एवं कमजोर हो जायेगा तथा विभिन्न रोगों के संक्रमण की संभावनाएं अधिक होंगी।

शिशु के लिये स्तनपान से होने वाले लाभ के विषय में विस्तृत जानकारी शैशवावस्था में पोषण में दी जा चुकी है। शिशु को स्तनपान कराना न केवल शिशु वरन् धात्री माँ के लिए भी लाभप्रद है। क्योंकि:

1. स्तनपान से माँ व शिशु में भावनात्मक संबंध कायम होते हैं। शिशु को स्तनपान कराने से माँ को आत्मिक संतुष्टि एवं आनन्द की अनुभूति होती है। शिशु भी माँ के आँचल में मातृस्नेह का अनुभव करता है व अपने आप को सुरक्षित महसूस करता है। शिशु व माँ के बीच यह लगाव प्रथम सामाजिक संबंध की शुरुआत है।
2. स्तनपान प्राकृतिक गर्भनिरोधक की भाँति कार्य करता है, जो माताएं लम्बे समय तक शिशु को स्तनपान कराती हैं वे देर से गर्भवती होती हैं।
3. स्तनपान कराने से गर्भाशय की मांसपेशियाँ का संकुचन होता है व गर्भाशय अपनी पूर्व आकृति शीघ्रता से प्राप्त कर लेता है।
4. स्तनपान के द्वारा माता के शरीर में गर्भावस्था के दौरान जमा वसीय ऊतक दुग्ध निर्माण हेतु काम आता रहता है तथा माँ 6-10 माह में ही अपना गर्भावस्था से पूर्व का छरहरा स्वरूप प्राप्त कर लेती है।
5. स्तनपान कराने के लिए माँ को किसी प्रकार का कोई खर्च नहीं करना पड़ता, ना ही शिशु के लिए कोई विशेष भोजन व्यवस्था करनी पड़ती है। वह शिशु को आवश्यकतानुरूप उसकी माँग के अनुसार सुपाच्य, पौष्टिक एवं सुरक्षित दूध पिला सकती है।
6. स्तनपान कराने से माँ को स्तन कैंसर होने की सम्भावना कम हो जाती है।

एक स्वस्थ भारतीय महिला 850 मि.लि. दूध प्रतिदिन स्त्रावित करतीहै ाित थात त्पश्चात्इ सकीम ात्राकु छक मह ोकर6 00f म.लि. प्रतिदिन हो जाती है। अध्ययनों के द्वारा, तन्दुरुस्त धात्री महिलाओं में 3-4 माह पर दुग्ध स्त्रवण 1000 मि.लि. प्रतिदिन तक भी देखा गया है, जबकि दुर्बल व कमजोर महिलाओं में पहले 6माह में 600-700 मि.लि. तथा तत्पश्चात् 400-500 मि.लि. दूध ही स्त्रावित हो पाता है।

धात्री महिला के स्तनों से कम दुग्ध स्त्रवण के निम्न कारण हो सकते हैं :

1. धात्री महिला का दुर्बल कृशकाय, कम शरीर भार एवं कुपोषित होना।
2. धात्रीवस्था में पूर्ण पौष्टिक आहार नहीं लेना।
3. धात्रीवस्था में व्रत एवं उपवास रखना, फलतः भोजन ग्रहण नहीं करना।
4. धात्री महिला का आधुनिक विचारों वाला होना जिसमें स्तनपान को हेय दृष्टि से देखा जाता है।
5. धात्री महिला का कामकाजी होने के कारण शिशु को 7-8घंटों के लम्बे समय के लिए बिना स्तनपान के छोड़ना।
6. माता के स्तनों के चूचुक का अंदर की तरफ धँसा होना, चूचुक में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

दरार पड़ना या स्तन की दुग्ध वाहिनियों में दुग्ध जमा हो जाने से स्तनों का भारी होना, जिससे शिशु को दूध पीने में परेशानी हो।

7. शिशु के होंठ, तालु, जीभ आदि में किसी भी प्रकार की विकृति होने पर स्तनपान में कठिनाई होना।
8. दुग्ध निर्माण करने वाले हॉर्मोनों का अल्प स्रवण होना।
9. धात्रीवस्था की बढ़ती हुई समय अवधि।
10. माता का बहुत अधिक उत्तेजित या उद्वेलित होना।

किसी भी कारण से यदि शिशु माँ का दूध पीना कम कर दे तो धीरे-धीरे उसके स्तनों में दुग्ध निर्माण एवं स्रवण स्वत: ही कम होता जाता है। शिशु को बराबर पर्याप्त मात्रा में स्तन दुग्ध उपलब्ध होता रहे इसके लिए आवश्यक है कि धात्री माँ स्वयं हृष्ट-पुष्ट व तंदुरुस्त हो, पर्याप्त पौष्टिक आहार ग्रहण करे तथा शांत एवं प्रसन्नचित्त मन से शांत वातावरण में शिशु को बेझिझक नियमित स्तनपान कराती रहे तथा स्तनपान में यदि कोई परेशानी हो तो तत्काल चिकित्सक से परामर्श लेवें।

पोषण संबंधी आवश्यकताएं :

मातृ दुग्ध के द्वारा शिशु को पौषणिक आवश्यकताएं पूरी होती रहें, इसके लिए आवश्यक है कि दूध पिलाने वाली माँ न केवल स्वयं के पोषण के लिये भोजन करे बल्कि शिशु के लिए स्तन दुग्ध के निरन्तर निर्माण एवं स्रवण के लिये भी अतिरिक्त भोजन ग्रहण करे। धात्रीवस्था के लिए पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकताओं की अनुशंसा अतिरिक्त आवश्यकताओं के रूप में तालिका 17.1 में दी गई है।

तालिका को देखने से पता चलता है कि धात्रीवस्था में लौह लवण एवं मैग्नीशियम को छोड़ कर अन्य सभी पोषक तत्त्वों की अतिरिक्त मात्राएं प्रस्तावित की गई हैं जो कि धात्री महिला के समुचित पोषण एवं स्तन दुग्ध निर्माण एवं स्रवण के लिए आवश्यक है। धात्रीवस्था के दौरान प्रस्तावित पोषक तत्त्वों की इन अतिरिक्त आवश्यकताओं को विविध श्रेणी की क्रियाशील महिला की सामान्य आवश्यकताओं में जोड़ देने से इस अवस्था की महिला के लिये पोषक तत्त्वों की कुल आवश्यक मात्रा ज्ञात की जा सकती है। धात्रीवस्था में अतिरिक्त ऊर्जा की माँग की पूर्ति दो स्रोतों से होती है, एक तो धात्रीवस्था में दैनिक प्रस्तावित अतिरिक्त ऊर्जा की आवश्यक मात्रा से जिस की पूर्ति प्रतिदिन आहार के माध्यम से होती है व दूसरे, गर्भावस्था के दौरान माँ के शरीर में संचित वसीय ऊतकों से। इस अवस्था के लिए लौह तत्त्व की अतिरिक्त मात्रा प्रस्तावित नहीं की गई है क्योंकि जन्म के समय प्रथम तीन माह की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु शिशु माँ के शरीर से अपने यकृत में लौह लवण संचित कर के लाता है। लौह लवण की पूर्ति मातृ दुग्ध से नहीं होती क्योंकि मातृ दुग्ध में लौह तत्त्व नहीं पाया जाता है। धात्रीवस्था में मासिक स्राव न होने के कारण से प्रतिमाह रक्तस्राव के द्वारा होने वाले लौह तत्त्व का नुकसान भी नहीं होता है अत: धात्रीवस्था में अतिरिक्त लौह तत्त्व की आवश्यकता नहीं होती है।

आहार व्यवस्था :

प्रसव के उपरान्त पहले 1¼ माह अथवा 40 दिन के दौरान धात्री महिला की विशेष देख-भाल की जाती है जिसमें तेल की मालिश, गर्म जल

तालिका 17.1 : धात्रीवस्था के लिए दैनिक प्रस्तावित आहारिक मात्राए-(NIN, 2010)*

पोषक तत्त्व	क्रियाशीलता			अतिरिक्त आवश्यकता (माह)	
	कम	मध्यम	अधिक	0-6	6-12
ऊर्जा (कि. कैलोरी)	1900	2230	2850	+600	+520
प्रोटीन (ग्राम)	55	55	55	+19	+13
प्रत्यक्ष वसा (ग्राम)	20	25	30	30	30
कैल्शियम (मि. ग्राम)	600	600	600	1200	1200
लौह तत्त्व (मि. ग्राम)	21	21	21	-	-
बीटा कैरोटीन (मा.ग्रा.)	4800	4800	4800	7600	7600
थायमिन (मि.ग्रा.)	1.0	1.1	1.4	+0.3	+0.2
राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	1.1	1.3	1.7	+0.4	+0.3
नियासिन (मि.ग्रा.)	12	14	16	+4	+3
पिरीडॉक्सिन (मि.ग्रा.)	2	2	2	2.5	2.5
विटामिन 'सी' (मि.ग्रा.)	40	40	40	80	80
आहारीय फोलेट (मा.ग्रा.)	200	200	200	300	300
विटामिन बी-12 (मा.ग्रा.)	1	1	1	1.5	1.5
मैग्नीशियम (मि.ग्रा.)	310	310	310	310	310
जिंक	10	10	10	12	12

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

से स्नान व आराम सम्मिलित हैं। धात्रीवस्था में महिला को उच्च ऊर्जा एवं उच्च प्रोटीन युक्त संतुलित भोजन देना चाहिए। इस दौरान धात्री महिला को देसी दवाइयाँ जैसे–अजवायन, सौंठ, लोद, कमरकस, गौंद, सुपारी, हलदी, बत्तीसा इत्यादि से बने मीठे व्यंजन विशेष पथ्य के रूप में खाने के लिए दिए जाते हैं। ये व्यंजन अत्यधिक घी, गुड़ या शक्कर तथा सूखे मेवे जैसे–काजू, किशमिश, बादाम, अखरोट, पिस्ता, फूल मखाने आदि से मिलाकर बनाये जाते हैं। ये व्यंजन उच्च शर्करा प्रोटीन, वसा एवं खनिज लवण युक्त होते हैं जो महिला को दुग्ध स्रवण हेतु अतिरिक्त ऊर्जा, प्रोटीन एवं अन्य पौष्टिक तत्त्व तो प्रदान करते ही हैं साथ–ही–साथ ये दवा के रूप में भी उपयोगी होते हैं। इन व्यंजनों के उपभोग से मातृ दुग्ध निर्माण व स्रवण में वृद्धि होती है। धात्री महिला की शारीरिक दुर्बलता दूर करने में, रोग प्रतिरोधी क्षमता बनाए रखने में, शरीर के तापमान नियंत्रण में, मदद करते हैं। इनके उपभोग से धात्री महिला को हाथ–पैरों, कमर एवं पेट के दर्द एवं ऐंठन में आराम मिलता है। इन दवाओं की गर्मी से गर्भाशय से होते रक्तस्राव पर नियंत्रण, गर्भाशय को पुन: सिकोड़ने व सफाई की प्रक्रिया में वृद्धि होती है तथा महिलाएं शीघ्र ही स्वस्थ महसूस करने लगती हैं। इन दवाओं युक्त व्यंजनों को धात्री महिला को सुबह–सुबह गर्म दूध के साथ दिए जाते हैं जो उसे विशेष पोषण भी प्रदान करते हैं। देसी दवाओं से बने व्यंजनों के साथ–साथ पूरे 1¼ माह तक धात्री महिला को पर्याप्त मात्रा में दूध व दूध से बने व्यंजन, देसी घी युक्त हलका कम मिर्च मसाले वाला सादा सुपाच्य संतुलित भोजन दिया जाना चाहिए। भोजन में हलके व्यंजन जैसे सूप, दलिया, मूंग की दाल, बथुआ, पालक, मैथी, लौकी, तूरई आदि की सब्जी,अजवायन की मोटी रोटी आदि दिए जाते हैं। धात्रीवस्था में रोग प्रतिरोधी क्षमता क्षीण होने के कारण धात्री महिला दो 1¼ माह तक अजवाइन व बत्तीसे का पानी उबाल कर देना चाहिए। बत्तीसा बत्तीस आयुर्वेदिक जड़ी–बूटियों का योग है जो धात्रीवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण, विशेष औषधि गुणयुक्त एवं गुणकारी है।

धात्रीवस्था में 1¼ माह के दौरान धात्री महिलाओं के आहार में मक्का, बाजरा, चावल, दालें (मूँग दाल के अतिरिक्त) अन्य सब्जियाँ जैसे–गोभी, मटर, भिन्डी, फलियाँ व मिर्च–मसाले आदि भोज्य पदार्थ वर्जित हैं क्योंकि इनके उपभोग से माँ व शिशु के पेट में वायु विकार एवं पाचन संबंधी परेशानियाँ होती हैं। धात्रीवस्था में देसी दवाओं के साथ खट्टे भोज्य पदार्थ जैसे–दही, अचार, चटनी, अमचूर आदि नहीं देने चाहिए क्योंकि इनका उपयोग हानिकारक होता है।

आधुनिकता के विचारों से ओत–प्रोत कामकाजी महिलाएँ आजकल देसी दवाओं के व्यंजन के उपभोग से बचती हैं, उनका मानना है कि इनके उपभोग से वे मोटी, बेडौल व थुलथुल हो जाएंगी। धात्री महिलाओं पर किए गए सर्वेक्षणों तथा देसी व्यंजनों व मातृ दुग्ध की प्रयोगशालाओं में जाँच से पता चला है कि आज के परिप्रेक्ष्य में भी धात्री महिलाओं को दिए गए ये पारम्परिक पथ्य महत्त्वपूर्ण व सेहतमंद है। ये व्यंजन महिला की स्तन दुग्ध निर्माण के लिए अतिरिक्त आवश्यकताओं की तो पूर्ति करते ही हैं साथ–ही–साथ ये स्तनपान के दौरान धात्री महिला के पोषण स्तर में होने वाली गिरावट से बचाते हैं। यदि धात्री माँ इन व्यंजनों का उपभोग कर, अपने शिशु को नियमित व बारम्बार केवल स्तनपान करवाये तो वह स्वयं तो हृष्ट–पुष्ट व तंदुरुस्त रहेगी ही, उसका शिशु भी पर्याप्त व पौष्टिक स्तन दुग्ध पी कर उपयुक्त वृद्धि व विकास करेगा तथा स्वस्थ रहेगा।

धात्री महिला को 1¼ माह के पश्चात् भी स्तन दुग्ध स्रवण हेतु नियमित रूप से आवश्यक अतिरिक्त भोजन करते रहना चाहिए तथा अपने शिशु को तीन माह तक केवल स्तनपान तथा तत्पश्चात् एक वर्ष तक अथवा

तालिका 17.2 : धात्री महिला के लिए दैनिक संतुलित आहार (NIN, 2010)*

भोज्य समूह	भोज्य पदार्थों की मात्रा (ग्राम में) क्रियाशीलता			अतिरिक्त आवश्यकता
	कम	मध्यम	अधिक	
अनाज	270	330	480	+30
दालें	60	75	90	+60
दूध (मि.लि.)	300	300	300	+200
कंद मूल	200	200	200	–
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	100	100	100	+50
अन्य सब्जियाँ	200	200	200	–
फल	100	100	100	+100
शर्करा	20	30	45	–
घी/तेल	20	25	30	+10

नोट : मांसाहारी महिला 30 ग्राम दाल के स्थान पर 50 ग्राम अण्डा/मांस/मछली आदि का उपभोग कर सकती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

जब तक शिशु स्तनपान करे, करवाते रहना चाहिए। धात्री महिला द्वारा शिशु को सामान्य रूप से सफलतापूर्वक स्तनपान कराने के लिए उसे तालिका– के अनुरूप सभी भोज्य समूहों में से विविध भोज्य पदार्थों का पर्याप्त मात्रा में उपभोग करना आवश्यक है।

धात्री महिला के लिए आहार आयोजन करते समय निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखें :-

1. धात्रीवस्था में बढ़ी हुई ऊर्जा एवं प्रोटीन की माँग की पूर्ति हेतु उच्च ऊर्जा एवं उच्च प्रोटीन युक्त आहार देना चाहिए।
2. धात्री महिला की आहार की मात्रा सामान्य दिनों की अपेक्षाकृत विभिन्न भोज्य समूह पर आधारित अतिरिक्त पोषक तत्त्वों की पूर्ति हेतु बढ़ा दें।
3. धात्री महिला को संतुलित पूर्ण पौष्टिक हलका सुपाच्य, सादा एवं कम मिर्च–मसाले वाला भोजन दें।
4. आहार में उच्च गुणवत्ता वाले पूर्ण प्रोटीन युक्त भोज्य पदार्थ जैसे–दूध व दुग्ध पदार्थ, मांस, मछली, अण्डा, दालें, सोयाबीन आदि दैनिक आहार में सम्मिलित करें।
5. महिला के शाकाहारी होने की दशा में भोज्य समूहों के मिश्रित उपयोग (अनाज+दाल, अनाज+दूध, दाल+दूध) के द्वारा प्रोटीन की गुणवत्ता व पौष्टिकता बढ़ाएं।
6. अनाज में साबुत अनाज व दालें, अंकुरित अनाज व दालें तथा खमीरीकृत व्यंजन को सम्मिलित करें जिससे बी समूह के विटामिनों की पर्याप्त आपूर्ति हो सके।
7. आहार में ताजे फल, हरी पत्तेदार सब्जियाँ व अन्य सब्जियों का पर्याप्त मात्रा में उपभोग करें जिससे अतिरिक्त विटामिन व खनिज लवणों की आवश्यकता की पूर्ति हो सके।
8. आहार में गुड़, शर्करा, घी, तेल का सामान्य से कुछ अधिक उपभोग करें लेकिन भोजन तला–भुना एवं गरिष्ठ न हो।
9. आहार में पर्याप्त मात्रा में जल एवं तरल भोज्य पदार्थ जैसे–दूध व दूध से बने व्यंजन, सूप, फलों के रस, शिकंजी व अन्य पौष्टिक घरेलू पेय पदार्थों का अधिक समावेश करें।
10. धात्री माँ को आहार दिन में 3–4 बार की अपेक्षा 5–6बार में थोड़े–थोड़े अन्तराल पर देवें।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. धात्रीवस्था शिशु के जन्म से लेकर प्राय: एक वर्ष या स्तनपान के समय तक बनी रहती है।
2. माँ का दूध शिशु के जन्म के पश्चात् 3 माह तक पर्याप्त रहता है।
3. दुग्ध निर्माण, स्रवण दर एवं दुग्ध का संगठन माँ के पोषण स्तर पर निर्भर करता है।
4. एक स्वस्थ भारतीय महिला प्रारम्भ में 850 मि.लि. दूध प्रतिदिन स्रावित करती है।
5. स्तन दुग्ध निर्माण व स्रवण के लिए माँ को पौष्टिक तत्त्वों के साथ–साथ पर्याप्त मात्रा में जल एवं तरल भोज्य पदार्थ ग्रहण करने चाहिए।
6. धात्रीवस्था में लगभग सभी पौष्टिक तत्त्वों की अतिरिक्त मात्राएं प्रस्तावित की गई हैं ताकि माँ का पोषण स्तर तथा शिशु की वृद्धि व विकास सामान्य रूप से हो सके।
7. पारम्परिक आहार महिला को दुग्ध स्रवण हेतु अतिरिक्त ऊर्जा व अन्य पौष्टिक तत्त्व तो प्रदान करते ही हैं साथ ही ये दवा के रूप में भी उपयोगी होते हैं। अत: ये पारम्परिक पथ्य महत्त्वपूर्ण व स्वास्थ्यवर्द्धक हैं।
8. धात्री महिला द्वारा शिशु को सामान्य रूप से सफलतापूर्वक स्तनपान करानेके ि लए,ध ात्रीम हिलाके ि लएद ैनिकस ंतुलितअ ाहारके अनुरूप सभी भोज्य समूहों में से विविध भोज्य पदार्थों का पर्याप्त मात्रा में उपभोग करना आवश्यक है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) नवजात शिशु केवल माँ के दूध पर पलता है :

(अ) प्रथम 3 माह (ब) प्रथम 4 माह
(स) प्रथम 6माह (द) प्रथम 1 वर्ष

(ii) एक स्वस्थ महिला प्रारम्भ में .... दूध स्रावित करती है :

(अ) 750 मि.लि. (ब) 900 मि.लि.
(स) 1000 मि.लि. (द) 600 मि.लि.

(iii) धात्रीवस्था (0–6माह) में प्रतिदिन के आहार में ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ जाती है :

(अ) 400 कि. कै. (ब) 500 कि. कै.
(स) 450 कि. कै. (द) 600 कि. कै.

(iv) आजकल धात्री माताएं पारम्परिक व्यंजनों का उपभोग नहीं करती हैं क्योंकि वे ....हो जायेंगी :

(अ) मोटी (ब) बेडौल
(स) थुलथुल (द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) धात्रीवस्था शिशु के जन्म से .... करवाने तक बनी रहती है।

(ii) धात्रीवस्था में .... लवण की अतिरिक्त आवश्यकता प्रस्तावित नहीं की गई है।

(iii) पारम्परिक देसी दवाइयों के सेवन से मातृ दुग्ध के .... व .... में वृद्धि होती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(iv) .... को अपने आहार में प्रोटीन की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए मिश्रित भोज्य पदार्थ जैसे–अनाज+दाल, अनाज+दूध, दाल+दूध का उपभोग करना चाहिए।

3. स्तनपान कराना धात्री माँ के लिए भी लाभप्रद है। समझाइये।

4. कम दुग्ध स्रवण के कारणों का उल्लेख कीजिये।

5. धात्रीवस्था में आहार आयोजन करते समय आप किन बातों को ध्यान में रखेंगी?

6. प्रथम 1¼ माह में धात्री माँ को आहार में दी जाने वाली पारम्परिक देसी दवाइयों के महत्त्व को स्पष्ट कीजिये।

उत्तरमाला :

1. (i) अ (ii) द (iii) द (iv) द

2. (i) स्तनपान (ii) लौह (iii) निर्माण, स्रवण
(iv) शाकाहारी महिला

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

18. दस्त एवं ज्वर में आहार

Diet during Diarrhoea and Fever

दस्त एवं ज्वर सामान्य रूप से संक्रामक रोग हैं। दस्त पाचन संबंधी विकार है व ज्वर श्वसन संबंधी रोग। बदलते मौसम के साथ–साथ, रोग प्रतिरोधी क्षमता क्षीण होने के कारण किसी भी आयु वर्ग के व्यक्ति दस्त एवं ज्वर से ग्रसित हो सकते हैं। इस सामान्य बीमारी के उपचार एवं रोकथाम में डॉक्टर की सलाह, दवाइयाँ, स्वच्छता, आराम के साथ उपयुक्त आहार लेना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

रोगावस्था में रोगी व्यक्ति की भूख मंद हो जाती है, पाचन क्षमता क्षीण हो जाती है तथा रोग की प्रकृति, दशा, तीव्रता के कारण विभिन्न पोषक तत्त्वों की आवश्यकताएं प्रभावित हो जाती हैं। इस पाठ में हम दस्त एवं ज्वर की स्थिति में होने वाले शारीरिक परिवर्तन एवं आहारीय प्रबन्धन द्वारा रोगों के उपचार के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

दस्त

यह वह अवस्था है जिसमें मल विसर्जन की आवृति, तरलता एवं मात्रा सामान्य की तुलना में अधिक हो जाती है अर्थात् इस अवस्था में ढीला अथवा पानी के जैसा थोड़ा या बहुत अधिक मात्रा में अगठित मल बार–बार विसर्जित होता है। दस्त से ग्रसित व्यक्ति कमजोर एवं कुपोषित हो जाता है उस की कार्य करने की क्षमता एवं रोग प्रतिरोधी क्षमता क्षीण हो जाती है। बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक विकास अवरुद्ध हो जाता है। दस्त की अवस्था में यदि रोगी का ध्यान नहीं रखा जाये तो शरीर में अत्यधिक मात्रा में खनिज लवणों की क्षति के कारण निर्जलीकरण की स्थिति बन जाती है। शिशु एवं बच्चों के लिए दस्त जानलेवा बन सकते हैं। दस्त सामान्यत: अस्वच्छ वातावरण एवं अस्वच्छकार आदतों के कारण होने वाले संक्रमण के परिणामस्वरूप होते हैं।

दस्त की अवधि एवं तीव्रता के आधार पर दस्त अल्पकालीन (उग्र) अथवा दीर्घकालीन दो प्रकार के हो सकते हैं।

(i) **अल्पकालीन (उग्र) दस्त :** इस प्रकार के दस्त का प्रारम्भ आकस्मिक रूप से पानी के समान तरल अगठित मल विसर्जन से होता है जिसकी आवृति काफी अधिक होती है। रोगी एक घंटे में अनेकों बार मल विसर्जित करता है। दस्त के साथ–साथ अन्य सामान्य लक्षण जैसे–पेट में दर्द,ए ेंठन,क मजोरी,ब ुखारव उ लटीअ ादिस मस्याएंभ ीह ोतीह ैं। अल्पकालीन दस्त की अवधि 24 से 48घंटे होती है। इस अवस्था में निर्जलीकरण के डर के कारण जल एवं खनिज लवण की आपूर्ति करना प्राथमिकता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है जबकि पोषण संबंधी आवश्यकता की पूर्ति करना उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है।

(ii) **दीर्घकालीन दस्त :** इस प्रकार के दस्त अल्पकालीन दस्त की तुलना में लम्बे समय तक रहते हैं। दो सप्ताह या उससे अधिक अवधि तक रहने वाले दस्त को दीर्घकालीन दस्त कहते हैं। इस प्रकार के दस्त में तीव्रता कुछ कम होती है। रोगी एक दिन में 4–5 बार अगठित मल विसर्जित करता है। दस्त की स्थिति में भोजन काफी तेजी से छोटी आंत से गुजर जाता है जिसके परिणामस्वरूप पोषक तत्त्वों के अवशोषण के लिए पर्याप्त समयन हींब चतात थाक ु पोषणज नितर ोगोंके उ भरनेक ीस ंभावना अधिक हो जाती है। अत: आहार द्वारा उपचार का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करना एवं पोषक तत्त्वों की अतिरिक्त आवश्यकता की पूर्ति करना होना चाहिए जिससे पोषक तत्त्वों की क्षतिपूर्ति की जा सके।

आहारीय प्रबंधन

अल्पकालीन दस्त : इस प्रकार के दस्त में शरीर से अत्यधिक मात्रा में जल एवं खनिज लवणों की क्षति के परिणामस्वरूप निर्जलीकरण की स्थिति बन जाती है। यदि समय रहते उपचार नहीं किया जाता है तो मृत्यु हो सकती है। इस स्थिति को समय रहते आसानी से शरीर में जल की क्षतिपूर्ति मौखिक पुनर्जलीकरण चिकित्सा द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। ओ.आर.एस. एवं चीनी का घोल बच्चे को जितना जल्दी–जल्दी दिया जा सके देना चाहिए। नियमानुसार 1 गिलास प्रति एक बार मल विसर्जन की दर से।

ओ.आर.एस. के साथ–साथ अन्य तरल पदार्थ भी दिये जा सकते हैं, जैसे नारियल का पानी, जौ का पानी, नीबू की चाय, फटे दूध का पानी, नीबू की शिकंजी, अनाज का पानी, दाल का पानी आदि। अल्पकालीन दस्त का मुख्य रूप से उपचार जल एवं खनिज लवणों की

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

क्षति की आपूर्ति करना है।

ओरल रीहाइड्रेशन सोल्यूशन (ओ.आर.एस.) क्या है :

निर्जलीकरण से बचने के लिए जल तथा आवश्यक लवणों की भलीभांति आपूर्ति हेतु विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा प्रस्तावित ओरल रीहाइड्रेशन सोल्यूशन दिया जाता है। यह घोल आंगनबाड़ी केन्द्र, स्वास्थ्य केन्द्र एवं दवाओं की किसी भी दुकान से लिया जा सकता है। घोल बनाने के लिए पानी को उबालकर ठंडा करें व 200 मि.लि. (1 गिलास) पानी में ओ.आर.एस. का एक छोटा पैकेट (5.7 ग्राम) डालें व अच्छी तरह मिलाएं। बड़े ओ.आर.एस. के पैकेट (28.5 ग्राम) को एक लिटर पानी में घोलें। ओ.आर.एस. का घोल बनाने के 24 घंटे के अन्दर प्रयोग कर लेवें। घोल की अधिक आवश्यकता होने पर नया घोल बना लें। याद रखें कि 24 घंटा पुराना घोल काम में न लेवें। ओ.आर.एस. की मात्रा आयु व निर्जलीकरण की तीव्रता पर निर्भर करती है। शिशुओं व बच्चों को 24 घंटे में 1-2 लिटर (5-10 गिलास) ओ.आर.एस. दिया जाना चाहिए व वयस्कों को उतने ही समय में 2-4 लिटर (10-20 गिलास) ओ.आर.एस. दिया जा सकता है। ओ.आर.एस. के एक लिटर घोल में सोडियम क्लोराइड 3.5 ग्राम, पोटेशियम क्लोराइड 1.5 ग्राम, सोडियम सिट्रेट 2.9 ग्राम व डक्स्ट्रोज शर्करा 20.0 ग्राम होता है।

दीर्घकालीन दस्त : दीर्घकालीन दस्त हेतु आहारीय परिवर्तन निम्नानुसार हैं।

* **ऊर्जा :** कमजोरी एवं शारीरिक वजन में कमी को पूरा करने के लिए ऊर्जा की मांग में 10-20 प्रतिशत की वृद्धि की जानी चाहिए।
* शारीरिक ऊतकों के निर्माण एवं शारीरिक क्षतिपूर्ति एवं टूट-फूट की मरम्मत हेतु प्रोटीन की आवश्यकता में 50 प्रतिशत की वृद्धि की जानी चाहिए।
* **कार्बोज :** ऊर्जा की बढ़ी हुई मांग को पूरा करने के लिए उच्च कार्बोज युक्त आहार लेना चाहिए लेकिन आंतों को आराम की दृष्टि से रेशे की मात्रा कम-से-कम 1-2 ग्राम दिन होनी चाहिए।
* **वसा :** आंत्र सक्रियता के कारण वसा का पाचन नहीं हो पाता अत: आहार में वसा नियंत्रित करें क्योंकि यह आसानी से पचने योग्य है। आहार में पायसीकृत वसा जैसे मक्खन एवं सम्पूर्ण दूध सम्मिलित करें।
* **खनिज लवण :** आंतों में लौह लवण एवं कैल्शियम का अवशोषण अवरुद्ध हो जाता है। अत: आहार में कैल्शियम एवं लौह लवण युक्त खाद्य पदार्थों को सम्मिलित करें।
* **विटामिन :** विटामिन बी समूह एवं वसा में घुलनशील विटामिनों की क्षति की आहार द्वारा आपूर्ति करनी चाहिए।

आहार एवं आहारीय प्रारूप

(i) आसानी से पचने योग्य, नरम, बिना मिर्च मसाले वाला, निम्न रेशे युक्त, वसा विहीन भोजन प्रस्तावित है।

(ii) आहार में अच्छी तरह से पका हुआ नरम एवं अर्द्ध ठोस आहार सम्मिलित करें।

(iii) रोगी को पर्याप्त मात्रा में तरल पेय पदार्थ पीने चाहिए व थोड़ी-थोड़ी देर में हलका व सुपाच्य भोजन ग्रहण करना चाहिए। मंदागनी के कारण रोगी एक साथ अधिक मात्रा में भरपेट भोजन ग्रहण नहीं कर सकता। अत: 6-8अल्प अवधि आहार प्रतिदिन देवें।

ज्वर :

शरीर के तापक्रम का सामान्य तापक्रम से अधिक होना अर्थात् शारीरिक तापक्रम में 98.4^0 F से बढ़ोतरी हो जाना, ज्वर अथवा बुखार कहलाता है। अवधि एवं तीव्रता के आधार पर ज्वर को तीन प्रकारों में बाँटा जा सकता है-

अल्पकालीन ज्वर : इस प्रकार के ज्वर की तीव्रता बहुत अधिक होती है किन्तु यह अल्प समय तक ही रहता है। जैसे-सर्दी, जुकाम, चिकन पॉक्स, टायफाइड आदि के कारण होने वाला ज्वर।

दीर्घकालीन ज्वर : इस ज्वर की तीव्रता अपेक्षाकृत कम होती है किन्तु यह काफी लम्बे समय तक रहता है। जैसे-तपेदिक या यक्ष्मा रोग टीबी।

मध्यकालीन ज्वर : जैसे मलेरिया।

ज्वर की स्थिति में शारीरिक एवं जैव रासायनिक परिवर्तन

ज्वर की स्थिति में शरीर की आहारीय उपापचय दर में वृद्धि हो जाती है। इसके साथ ही ग्लाइकोजन एवं वसीय तन्तुओं का क्षय होने से शरीर में उपस्थित संग्रहित भण्डार में कमी आ जाती है। प्रोटीन के उपापचय में वृद्धि होने से गुर्दे को अधिक मात्रा में यूरिया मूत्र के रूप में निष्कासित करना पड़ता है जिस कारण इस अंग पर अनावश्यक कार्यभार बढ़ जाता है। अधिक पसीना आने से एवं पसीने के रूप में शरीर से जल, सोडियम क्लोराइड तथा पोटेशियम लवण निकल जाते हैं जिससे व्यक्ति नि:शक्त एवं कमजोर हो जाता है। बुखार में श्वसन क्रिया काफी तेज हो जाती है। साथ ही फेफड़े एवं रक्त परिसंचरण संस्थान को भी अधिक कार्य करना पड़ता है। बुखार के कारण पाचन तंत्र में गड़बड़ियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, जिसके कारण भूख नहीं लगती है। भोजन भी देरी से पचता है। भोजन देखते ही जी मिचलाने लगता है व खाना खाने की इच्छा नहीं होती है।

बुखार की अवस्था में सभी पौष्टिक तत्त्वों की आवश्यकता बढ़ जाती है। यदि लम्बे समय तक रोगी भोजन ग्रहण नहीं करेगा तो कुपोषित हो जाता है। अत: आहार में सुधार एवं परिवर्तन करना अत्यावश्यक हो जाता है। यदि बुखार की स्थिति में सभी आवश्यक पौष्टिक तत्त्वों की शारीरिक आवश्यकता अनुरूप पूर्ति नहीं की जाती है तो शारीरिक कमजोरी बढ़ जाती है। व्यक्ति की रोग प्रतिरोधी क्षमता क्षीण हो जाती है व अन्य संक्रामक रोगों का खतरा बढ़ जाता है। अत: दवाई के साथ-साथ पोषण स्तर में गिरावट न आये इसलिए आहार पर ध्यान देना बेहद जरूरी है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

आहारीय उपचार

ज्वर की स्थिति में आहार, रोग के स्वभाव एवं तीव्रता पर निर्भर करता है। शारीरिक तापक्रम के बढ़ने एवं तंतुओं के अत्यधिक क्षय होने से ऊर्जा की माँग 50 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। बेचैनी एवं अस्थिरता भी ऊर्जा की माँग को बढ़ा देते हैं। ज्वर की स्थिति में रोगी आहार ग्रहण नहीं करता। अत: इस समय ऊर्जा की अधिक माँग की आपूर्ति संभव नहीं होती है किन्तु ज्वर के उतर जाने पर उसे अधिक ऊर्जा युक्त सुपाच्य एवं हल्का भोजन दिया जाना चाहिए ताकि बढ़ी हुई ऊर्जा की माँग को पूरा किया जा सके। प्रोटीन उपापचय अधिक होने के कारण प्रोटीन की माँग बढ़ जाती है। अत: दैनिक आवश्यकता से 50 प्रतिशत अधिक प्रोटीन प्रस्तावित है। प्रोटीन भी उच्च गुणवत्ता वाला होना चाहिए, जैसे-अनाज एवं दालों का सम्मिश्रण, दूध, अण्डा आदि। ज्वर की स्थिति में यकृत एवं वसीय ऊतकों में संग्रहित ग्लाइकोजन भण्डार में कमी आने से कार्बोज की माँग बढ़ जाती है जिसकी आपूर्ति अधिक शर्करा युक्त आहार देकर की जानी चाहिए। ग्लूकोज कार्बोज का सबसे सरलतम रूप होता है। इसका अवशोषण अति शीघ्रता से होता है। यह शरीर में पहुँचकर तुरन्त ऊर्जा प्रदान करता है। अत: 2-2 घंटे के अन्तराल पर ग्लूकोज को पानी में घोलकर या फलों के रस के साथ मिलाकर या दूध के साथ मिलाकर दिया जाना चाहिए। ऊर्जा की माँग की पूर्ति हेतु रोग में सुधार होने पर जब व्यक्ति की पाचन क्षमता विकसित हो जाए तो पायसीकृत वसा युक्त आहार जैसे-क्रीम, मक्खन, दूध, अण्डे की जर्दी दी जा सकती है क्योंकि यह वसा सुपाच्य होते हैं। शरीर से पसीने के रूप में अधिक जल का निष्कासन होता है। जल के साथ सोडियम क्लोराइड तथा पोटेशियम का भी उत्सर्जन हो जाता है। अत: इसकी पूर्ति नमक एवं फलों के रस द्वारा की जानी चाहिए। बुखार की अवस्था में विटामिन 'ए' एवं 'सी' की माँग बढ़ जाती है साथ ही कुल ऊर्जा माँग के अनुपात में थायमिन, राइबोफ्लेविन एवं नियासिन की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। अत: आहार में अंकुरीकरण, खमीरीकरण एवं खाद्य पदार्थों के मिश्रित उपभोग पर आधारित व्यंजनों का समावेश करना चाहिए। संपूर्ण अनाज व दालें भी श्रेयस्कर हैं। बुखार में मूत्र तथा पसीने के माध्यम से अधिक जल उत्सर्जित होता है। अत: 2.5-5 लिटर तक जल की मात्रा दी जानी चाहिए। पेय पदार्थों के रूप में तरल पदार्थ दिये जाने चाहिए। जौ का पानी, फलों के रस, दाल व सब्जियों के सूप, ग्लूकोज पानी, दूध आदि के रूप में रोगी को प्रतिदिन तरल पदार्थ दिए जाने चाहिए।

आहार आयोजन करते समय ध्यान देने योग्य बातें

1. आहार उच्च ऊर्जा, उच्च प्रोटीन व न्यून वसा युक्त हलका, सुपाच्य एवं ताजा होना चाहिए।
2. तरल पेय पदार्थों को अधिकाधिक मात्रा में आहार में सम्मिलित करें जैसे-ग्लूकोज का पानी, फलों का रस, चावल एवं जौ का पानी, फटे दूध का पानी एवं छेना, दाल एवं सब्जियों का सूप आदि।
3. आहार रोगी की रुचि के अनुरूप, स्वादिष्ट एवं सभी पोषक तत्त्वों से परिपूर्ण होना चाहिए।
4. रोगावस्था में सुधार आने पर अर्द्धठोस एवं ठोस किन्तु नरम भोज्य पदार्थ जैसे-दलिया, खिचड़ी, उपमा, सूजी की पतली खीर, मूँग की दाल, रोटी, लौकी की सब्जी आदि दिये जाने चाहिए। ज्वर के उतर जाने पर आहार में धीरे-धीरे परिवर्तन कर सामान्य आहार दिया जाना चाहिए।
5. आहार 2-3 घंटे के अंतराल पर अल्प मात्रा में दिया जाना चाहिए ताकि पाचन तंत्र पर अनावश्यक भार न पड़े।
6. आहार में अधिक मिर्च-मसाले युक्त एवं तले हुए व अत्यधिक रेशे वाले भोज्य पदार्थ वर्जित हैं।
7. भोजन मौसम के अनुरूप उचित तापमान पर आकर्षक ढंग से परोसें जिससे रोगी मन से पर्याप्त मात्रा में भोजन ग्रहण कर सके।
8. आहारीय उपचार के साथ-साथ नियमित रूप से डॉक्टर से परामर्श लेते रहें।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. दस्त वह अवस्था है जिसमें मल विसर्जन की आवृति, तरलता एवं मात्रा सामान्य की तुलना में अधिक हो जाती है, अर्थात् इस अवस्था में अथवा पानी के जैसा थोड़ा या बहुत अधिक मात्रा में अगठित मल बार-बार विसर्जित होता है।
2. अल्पकालीन दस्त की अवधि 24 से 48घंटे होती है। इस अवस्था में निर्जलीकरण के डर के कारण जल एवं खनिज लवण की आपूर्ति करना प्राथमिकता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।
3. दो सप्ताह या उससे अधिक अवधि तक रहने वाले दस्त को दीर्घकालीन दस्त कहते हैं।
4. दीर्घकालीन अतिसार का आहार द्वारा उपचार का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करना एवं पोषक तत्त्वों की अतिरिक्त आवश्यकता की पूर्ति करना होना चाहिए।
5. दस्त के द्वारा द्रव, लवण एवं तंतु प्रोटीन का क्षय हो जाता है। द्रव एवं आवश्यक लवणों की कमी से निर्जलीकरण हो सकता है।
6. निर्जलीकरण की अवस्था से बचने के लिए एवं जल तथा आवश्यक लवणों की भलीभाँति आपूर्ति हेतु विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा प्रस्तावित ओरल रीहाइड्रेशन सोल्यूशन रोगी को दिया जाना चाहिए।
7. ज्वर में शारीरिक तापक्रम के बढ़ने, तन्तुओं के अत्यधिक क्षय, उपापचय दर में वृद्धि, बेचैनी एवं अस्थिरता के कारण ऊर्जा की माँग 50 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। ज्वर में ऊर्जा के साथ-साथ अन्य पोषक तत्त्वों की माँग भी बढ़ जाती है।
8. ज्वर की स्थिति में रोगी आहार ग्रहण नहीं कर पाता है। अत: ज्वर उतर जाने पर उसे अधिक ऊर्जा युक्त आहार दिया जाना चाहिए।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) दीर्घकालीन दस्त के रोगी को कैसा आहार देना चाहिए।

(अ) कार्बोजविहीन (ब) रेशेविहीन

(स) प्रोटीन विहीन (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(ii) अल्पकालीन दस्त की अवधि होती है :

(अ) 4-8घंटे (ब) 14-18घंटे

(स) 24-48घंटे (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iii) मध्यकालीन ज्वर है :

(अ) चिकन पॉक्स (ब) टायफाइड

(स) मलेरिया (द) टी.बी.

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) .... सप्ताह या उससे अधिक अवधि तक रहने वाले दस्त को दीर्घकालीन दस्त कहते हैं।

(ii) यदि दस्त लम्बे समय तक चलता है तो .... एवं .... का क्षय काफी अधिक हो जाता है।

(iii) द्रव एवं आवश्यक लवणों की कमी से शरीर में .... हो सकता है।

(iv) निर्जलीकरण से बचने के लिए WHO. द्वारा प्रस्तावित .... दिया जाना चाहिए।

(v) शारीरिक तापक्रम के बढ़ने एवं तंतुओं के अत्यधिक क्षय होने से ऊर्जा की माँग .... तक बढ़ जाती है।

3. ओ.आर.एस.. क्या है? इसको बनाने की विधि लिखिये।

4. अल्पकालीन दस्त एवं दीर्घकालीन दस्त में अंतर स्पष्ट कीजिये।

5. ज्वर क्या है। ज्वर की स्थिति में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों का उल्लेख कीजिये।

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) स (iii) स

2. (i) दो (ii) द्रव, लवण (iii) निर्जलीकरण (iv) ओ.आर.एस. (v) 50 प्रतिशत

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

19. भोज्य पदार्थों में मिलावट

Food Adulteration

सम्पूर्ण विश्व के व्यापारिक क्षेत्र में खाद्य पदार्थों में मिलावट सामान्य रूप से प्रचलन में है। उपभोक्ता सस्ते–से–सस्ते दामों में अधिक–से–अधिक माल खरीदना चाहता है। व्यापारी को आज के स्पर्धा के युग में बाजार में अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए उपभोक्ता की समस्त आवश्यकताओं को पूरा करना होगा। यह एक कभी न खत्म होने वाला चक्र है। यह मुख्यत: अर्थव्यवस्था पर आधारित है। यदि अर्थव्यवस्था अच्छी है तो लोग आसानी से वह खरीद पाते हैं जो उनके लिए सर्वोत्तम है परन्तु राष्ट्रीय अथवा व्यक्तिगत स्तर पर आर्थिक मंदी के कारण उपभोक्ता सस्ती वस्तुएं खरीदने पर मजबूर हो जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में यदि बाजार में किसी आपदा के परिणामस्वरूप खाद्यान्नों का मूल्य अधिक हो जाता है और उपभोक्ता वही वस्तुएं निम्न दर पर खरीदना चाहता है जो कि विक्रेता के लिए संभव नहीं है। यही मिलावट का मूल कारण है। विक्रेता अधिक–से–अधिक मुनाफा कमाने के लिए निम्न कोटि का घटिया एवं मिलावटी खाद्य पदार्थ विक्रय कर हमारे स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करते हैं।

इस समस्या के निवारण हेतु प्रथम केन्द्रीय खाद्यान्न मिलावट प्रतिबन्ध अधिनियम सन् 1954 में पारित हुआ एवं 1 जून, 1955 को क्रियान्वित हुआ। इस अधिनियम के अन्तर्गत यह सुनिश्चित किया गया है कि किस प्रकार के खाद्यान्नों का विक्रय किया जाए तथा किन खाद्यान्नों को हम मिलावटी करार दे सकते हैं।

मिलावट की परिभाषा :

मिलावट वह प्रक्रिया है जिस के द्वारा खाद्य पदार्थ के मौलिक गुण अथवा स्वरूप में किसी प्रकार का परिवर्तन किया जाता है। यह परिवर्तन उसमें–

(i) बाह्य अथवा निम्न श्रेणी का तत्त्व मिलाने, एवं

(ii) कोई महत्त्वपूर्ण तत्त्व निकालने के द्वारा होता है।

प्रथम प्रकार की मिलावट का अच्छा उदाहरण है दूध में पानी मिलाना और दूसरी प्रकार की मिलावट का उदाहरण है दूध से क्रीम निकालना।

खाद्य पदार्थों में मिलावट उपभोक्ता के स्वास्थ्य को खतरे में डाल सकती है। यदि वह उस के शारीरिक कार्यों को प्रभावित करती है चाहे वह खाद्य पदार्थों में हानिकारक तत्त्व मिलाने अथवा महत्त्वपूर्ण तत्त्व निकालने के कारण की गई हो।

मिलावट के प्रकार

मिलावट उद्देश्यपूर्ण अथवा आपातिक हो सकती है :

1. **उद्देश्यपूर्ण मिलावट :** इस प्रकार की मिलावट विक्रेता स्वयं अधिक–से–अधिक लाभ कमाने के लिए करता है एवं फलस्वरूप उपभोक्ता ठगा जाता है। उसे अपने धन का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। इस प्रकार की मिलावट के अन्तर्गत भोज्य पदार्थों में जान–बूझकर सस्ते एवं घटिया किस्म के बाहरी पदार्थ मिलाये जाते हैं। बहुमूल्य अवयवों या पोषक तत्त्वों का घटिया पदार्थों से विस्थापन कर दिया जाता है या फिर भोज्य पदार्थों में से कुछ अमूल्य पोषक तत्त्वों को निकाल दिया जाता है। उद्देश्यपूर्ण मिलावटी पदार्थों के अन्तर्गत मिट्टी, रेत, मार्बल चिप्स, कंकड़–पत्थर, खड़िया मिट्टी, पानी, खनिज तेल एवं कोलतार रंग आदि आते हैं। यह मिलावटी अवयव स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव डालते हैं। (तालिका : भोज्य पदार्थों में मिलावटी अवयव एवं उसके दुष्प्रभाव)
2. **आपातिक मिलावट :** इस प्रकार की मिलावट मुख्यत: अज्ञानतावश, अनभिज्ञता के कारण, लापरवाही के कारण, दुर्घटनावश तथा उपयुक्त सुविधाओं के अभाव के कारण होती है। आपातिक मिलावटी अवयव जैसे–कीटनाशक अवशेष, कृंताकों के अपशिष्ट, खाद्य में व्याप्त कीट डिंब आदि द्वारा एवं संखिया, सीसा, पारा आदि के आपातिक घात्विक संदूषण एवं सूक्ष्म जैविक संदूषण के कारण हो सकती है।

आपातिक मिलावटी अवयव :

1. आरजीमोन की घास सरसों की खेती के साथ अकसर उग जाती है और फसल की कटाई के समय असावधानी के कारण आरजीमोन की घास के बीज सरसों के साथ मिल जाते हैं व तेल निकालते समय साथ में पिस जाते हैं तो खाद्य सरसों के तेल में आरजीमोन की मिलावट घातक सिद्ध होती है परिणामत: ऐसे तेल के सेवन से एपिडेमिक ड्रॉप्सी नामक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

रोग हो जाता है।

2. लकड़ी के धुएं में विषाक्त गैस क्लोरोओक्जिन पाई जाती है एवं इस धुएं के सम्पर्क में आने पर खाद्य पदार्थ दूषित हो जाते हैं।
3. खाद्य पदार्थों के उत्पादन, वितरण एवं प्रसंस्करण के दौरान स्वच्छ या स्वास्थ्य के लिए हितकर वातावरण या भण्डारण सुविधाओं के अभाव के कारण खाद्यों को नष्ट करने वाले सूक्ष्म जीव तथा फफूंदी, विनाशकारी कीट, कृंतक प्राणी खाद्य पदार्थों में अत्यधिक मात्रा में अपशिष्ट पदार्थ एवं जीवाश्म (शारीरिक अवशेष) छोड़कर दूषित कर देते हैं।
4. सर्वाधिक मात्रा में पाया जाने वाला आपातिक मिलावटी पदार्थ कीटनाशक जैसे–डी.डी.टी. (डायक्लोरो डाय फिनाइल ट्रायक्लोरो इथेन) या मैलेथियन के अंश जो कि वनस्पति भोज्य पदार्थों में मानक मात्रा से अधिक मात्रा में पाए जाते हैं।

खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए वैधानिक तरीके, प्रमाणन पद्धति जैसे प्रभावशाली उपाय किए जा सकते हैं।

आपातिक विषाक्तता निम्नानुसार रोकी जा सकती है–

(1) बाजार का नियमित सर्वेक्षण कर खाद्य पदार्थों में हानिकारक विषाक्त पदार्थों की उपस्थिति के प्रति जन समुदाय को जागरूक करना।

(2) किसानों को कीटनाशकों के प्रयोग का प्रशिक्षण देने हेतु एकीकृत कीट प्रबन्धन कार्यक्रम संचालित करना एवं फसल कटाई के एक सप्ताह पूर्व कीटनाशकों का छिड़काव न करने का सुझाव देना।

(3) जैवीय दरिंदों द्वारा कीटों को नियंत्रित करके।

(4) सुरक्षित कीटनाशक जैसे पायरीथ्रोइड या मैलेथियन के प्रयोग द्वारा।

(5) फल व सब्जियों को पकाने एवं खाने से पूर्व अच्छी तरह धो कर प्रयोग करें।

तालिका- 19.1 : भोज्य पदार्थों में मिलावटी अवयव एवं उसके दुष्प्रभाव

भोज्य पदार्थ	मिलावटी अवयव	हानि/दुष्प्रभाव
अनाज 1. गेहूँ, मक्का, चावल व अन्य अनाज	कंकड़, पत्थर, तिनके, खराब व घटिया किस्म का अनाज आदि	धन का उचित मूल्य न मिलना
2. बाजरा	एरगोट (एक प्रकार की फफूंदी)	विषाक्तता
दालें 3. अरहर दाल	केसरी दाल कोलतार रंग-लेड क्रोमेट- मेटानिल पीला रंग- (खाद्य रंग)	टाँगों का लकवा एवं कैंसर न्यूरो टॉक्सीसिटी पाचन संबंधी विकार, पेट में दर्द एवं घाव कैंसर की संभावना
4. मूँग दाल	मैलाचाइट हरा (हरा रंग)	कैंसर की संभावना-
दूध व दुग्ध पदार्थ 5. दूध	अशुद्ध जल वसा या क्रीम निकालना	पाचन संबंधी विकार, धन का उचित मूल्य न मिलना, दूध की पौष्टिकता कम होना दूध की पौष्टिकता व गुणवत्ता कम होना
6. दूध, मावा, पनीर, एवं कंडेंस्ड मिल्क	स्टार्च	पाचन संबंधी विकार एवं पौष्टिकता व गुणवत्ता कम होना
7. आइसक्रीम	विषाक्त रंग एवं कपड़े धोने का सोडा	आमाशय एवं यकृत संबंधी विकार/रोग

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तेल संबंधी		
8. खाद्य तेल	आरजीमोन तेल खनिज तेल अरण्डी का तेल करंज का तेल	एपिडेमिक ड्रॉप्सी, ग्लूकोमा, अंधापन हृदय रोग, ट्यूमर यकृत का क्षय होना, कैंसर की संभावना आमाशय के विकार हृदय रोग एवं यकृत का क्षय
9. शुद्ध देशी घी	वनस्पति घी जानवरों की चर्बी	धन का उचित मूल्य न मिलना
मसाले 10. कालीमिर्च	पपीते के बीज	आमाशय एवं यकृत विकार
11. हींग	रेजन गेलेवेनम एवं कोलोफोनी रेजन	पेचिश
12. पिसी हलदी	पीली एनेलिन डाए मेटानिल पीला रंग टेपियोका स्टार्च	कैंसरकारक कैंसरकारक आमाशय विकार
13. पिसी लाल मिर्च	ईंट का बुरादा, लकड़ी का बुरादा लाल रंग (रोडामाइनबी	आमाशय विकार कैंसर
14. लौंग	लौंग का तेल निकाल लिया जाता है	धन का उचित मूल्य न मिलना
15. पिसी सरसों	आरजीमोन के बीज	एपिडेमिक ड्रॉप्सी
16. गुड़	कपड़े धोने का सोडा एवं चॉक पाउडर	उलटी एवं दस्त
17. शक्कर	चाक पाउडर	आमाशय विकार
18. शहद	चीनी की चाशनी	आमाशय विकार एवं धन का उचित मूल्य न मिलना
19. कॉफी पाउडर	इमली एवं खजूर के बीज का पाउडर चिकौरी का पाउडर	दस्त आमाशय विकार, दस्त, चक्कर एवं जोड़ों में दर्द आना
20. चाय पत्ती	प्रयोग में ली हुई चाय की पत्ती प्रसंस्कृत एवं रंग कर	आहारनाल एवं यकृत विकार

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चित्र 19.1 : टांगों का लकवा

टाँगों का लकवा

अरहर की दाल में केसरी दाल की मिलावट की जाती है। केसरी दाल में एक विषैला अमीनो अम्ल पाया जाता है जिसे उपभोग से पूर्व निष्कासित करना आवश्यक है। दाल को लम्बे समय तक अधिक मात्रा में बिना उपचार किए उपभोग में लेने से टाँगों को लकवा मार जाता है तथा व्यक्ति चलने-फिरने योग्य नहीं रह जाता।

एपिडेमिक ड्रॉप्सी

आरजीमोन एक जंगली घास है। इस घास के बीजों की मिलावट सरसों के बीजों तथा इनसे प्राप्त तेल की मिलावट महँगे तेलों (सरसों, मूँगफली आदि के तेल) में कर दी जाती है। 1-3 माह तक आरजीमोन तेल की मिलावट वाले तेल के उपयोग से मनुष्यों में एपिडेमिक ड्रॉप्सी नामक रोग हो जाता है। इस रोग में देह गुहाओं में पानी एकत्रित हो जाता है व संपूर्ण शरीर पर सूजन आ जाती है। यह बीमारी पाचन तंत्र की गड़बड़ियों से प्रारम्भ होती है। त्वचा में चकत्ते से बन जाते हैं तथा धीमी नाड़ी की गति के साथ बुखार रहने लगता है। सूजन पैरों से बढ़कर जाँघों, हाथ तथा चेहरे तक पहुँच जाती है। बीमारी के बढ़ने के साथ-साथ आँखों का रोग ग्लुकोमा, यकृत के आकार में वृद्धि, कैंसर एवं अल्प श्वास की स्थिति पैदा हो जाती है तथा अंत में हृदय गति रुकने से व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

खाद्य पदार्थों में मिलावट की रोकथाम

आप ने पढ़ा कि भोज्य पदार्थों में विविध प्रकार की मिलावट

चित्र 19.2 : एपिडेमिक ड्रॉप्सी

जान-बूझकर, या स्वत: ही, या लापरवाही तथा दुर्घटनावश किसी भी स्तर पर हो सकती है तथा इसके भयंकर दुष्परिणाम हो सकते हैं अत: हमें चाहिए कि हम जागरूक रहें व निम्न सावधानियाँ बरतें-

1. ताजे भोज्य पदार्थों का सेवन अधिक-से-अधिक करें।
2. आज के युग में मिलावट एक ज्वलंत समस्या है। इस समस्या के निवारण हेतु उपभोक्ता का शिक्षित एवं जागरूक होना आवश्यक है।
3. कम-से-कम परिष्कृत एवं प्रसंस्करित भोज्य पदार्थों का उपयोग करें। खाद्य पदार्थ जितना अधिक परिष्कृत एवं प्रसंस्करित होगा उसमें मिलावट की संभावनाएँ भी उतनी ही अधिक होगी। जैसे सम्पूर्ण अनाज के मुकाबले पिसे हुए अनाज में मिलावट की संभावना अधिक होगी। अत: प्रयास करें कि परिष्कृत व प्रसंस्करित खाद्यों का उपयोग कम-से-कम करें तथा भोजन की अधिक-से-अधिक तैयारी स्वयं करें। जैसे-अनाज खरीदकर आटा पिसवाना, साबुत हल्दी, धनिया, मिर्च, गरम मसाले खरीदकर पिसे मसाले तैयार करना।
4. निर्धारित मानक चिह्न देखकर खाद्य पदार्थ खरीदें। आज की मशीनीकृत उपभोक्तावादी संस्कृति में मनुष्य की बाजार में उपलब्ध तैयार पदार्थों पर निर्भरता कम नहीं की जा सकती है अत: पैकेज एवं मानक चिन्ह युक्त खाद्य पदार्थ ही खरीदें।

खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम 2016

पूर्व में प्रचलित सभी खाद्य सुरक्षा नियमों, कानूनों एवं संबंधित आदेशों को एक स्थान पर एकीकृत एवं समेकित कर वर्तमान में खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 बनाया गया है। ये खाद्य पदार्थों के नियमन हेतु प्राथमिक नियम हैं। इस अधिनियम द्वारा ही अब भारत में खाद्य

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पदार्थों की सुरक्षा हेतु मानक तैयार करने और उन्हें लागू करने का कार्य किया जाता है।

इस अधिनियम से पूर्व विभिन्न उत्पादों हेतु विभिन्न अधिनियम व आदेश खाद्य सुरक्षा हेतु पूर्व में प्रचलित थे।

- खाद्यान्न मिलावट प्रतिबंध अधिनियम 1954
- फल उत्पाद आदेश 1955 (फ्रूट प्रॉडक्ट आर्डर) 1955
- मीट फूड प्रॉडक्ट आर्डर 1973
- वेजिटेबिल आयल प्रॉडक्ट (कंट्रोल) आर्डर 1947
- खाद्य तेल पैकेजिंग (नियमन) आदेश 1988
- साल्वेंट एक्स्ट्रैक्ट्रेड ऑयल, डी. आयल्ड मील एण्ड ऐडीबिल फ्लार (कंट्रोल) आर्डर 1967
- दुग्ध एवं दुग्ध पदार्थ उत्पाद आदेश 1992

पूर्व में प्रचलित उपरोक्त सभी खाद्य सुरक्षा नियमों एवं आदेशों को वर्तमान में नवीन अधिनियम F.S.S.A. 2006 में समाविष्ट किया जा चुका है।

भारतीय खाद्य एवं मानक प्राधिकरण : (Food Safty and standard Act 2006)

Food Safty & standards Authority of India F.S.S.A.I.- खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम 2006में पूर्व के सभी कानूनों को एकीकृत किया गया तथा इस अधिनियम के तहत खाद्यान्नों के उत्पादन, वितरण, भण्डारण एवं विक्रय, आयात तथा मानव उपयोग हेतु वैज्ञानिक तथ्यानुसार नियंत्रण हेतु खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण स्थापित किया गया। भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण।

FSSAI का गठन (स्थापना) खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम 2006के तहत किया गया है। FSSAI भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के अन्तर्गत एक स्वायत्तशासी संस्था है जो भारत में जन स्वास्थ्य के संरक्षण एवं उन्नयन हेतु उत्तरदायी है। FSSAI का गठन भारत सरकार द्वारा 5 सितम्बर, 2008को भारतीय खाद्य एवं मानक अधिनियम (FSSAI) 2006 के तहत किया गया है। FSSAI का प्रमुख 'अध्यक्ष' होता है। जो गैर सरकारी व्यक्ति होता है। अध्यक्ष की नियुक्ति भारत सरकार द्वारा की जाती है और अध्यक्ष भारत सरकार के सचिव के पद से कम का नहीं होना चाहिए। अध्यक्ष के अतिरिक्त 22 सदस्य होते हैं।

FSSAI का मुख्यालय दिल्ली में स्थित है। इसके 6प्रादेशिक कार्यालय हैं जो दिल्ली, गुवाहाटी, मुम्बई, कोलकाता, कोचीन और चेन्नई में स्थित हैं। इनके अन्तर्गत 14 रेफरल प्रयोगशालाएं, 72 राज्य/यूनियन टेरीटरी प्रयोगशालाएँ हैं एवं पूरे देश में 112 प्राइवेट प्रयोगशालाओं को नोटीफाइड (सूचीबद्ध) किया गया है।

खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम 2006के अन्तर्गत FSSAI एक स्थायी संस्था है एवं इस अधिनियम द्वारा इसे प्रदत्त शक्तियां निम्नानुसार हैं–

- खाद्यान्न सुरक्षा मानकों हेतु कानून बनाना।
- खाद्य पदार्थों की सुरक्षा हेतु सुरक्षा प्रयोगशालाओं में खाद्यान्नों की जाँच हेतु मार्गदर्शन प्रदान करना।
- केन्द्र सरकार को वैज्ञानिक एवं तकनीकी जानकारी प्रदान करना।
- खाद्यान्नों (खाद्य पदार्थों) हेतु अन्तरराष्ट्रीय मानकों के विकास में सहयोग प्रदान करना।
- खाद्य पदार्थों के उपयोग एवं संदूषण तथा उत्पन्न होने वाले संभावित खतरों पर आंकड़े एकत्र करना।
- भारत में खाद्य सुरक्षा एवं पोषण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना।
- FSSAI द्वारा ही राज्य स्तर पर अधिकारियों की नियुक्ति की जाती हैं।

FSSAI के मुख्य उद्देश्य

- खाद्य पदार्थों हेतु वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर मानकों का निर्धारण करना।
- खाद्य पदार्थों के उत्पादन, भण्डारण, विक्रय एवं आयात का नियमन करना।
- खाद्य पदार्थों की सुरक्षा एवं गुणवत्ता सुनिश्चित करना।

खाद्य पदार्थों के उत्पादन, भण्डारण, वितरण, आयात एवं विक्रय की समस्त क्रियाओं पर वैज्ञानिक तथ्य आधारित अनुशासन ही खाद्य सुरक्षा है जिससे इन्हें संदूषित होने से बचाया जा सकता है। FSSAI का मानक चिह्न fssai जो खाद्य पदार्थों के उत्पादनों पर अंकित होता है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. मिलावट वह प्रक्रिया है जिस के द्वारा खाद्य पदार्थ के मौलिक गुण अथवा स्वरूप में किसी प्रकार का परिवर्तन किया जाता है।
2. मिलावट उद्देश्यपूर्ण अथवा आपातिक हो सकती है।
3. मिलावट से खाद्य पदार्थ की गुणवत्ता एवं शुद्धता में कमी आ जाती है व स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव पड़ता है।
4. खाद्य पदार्थों में मिलावट की रोकथाम हेतु उपभोक्ता को शिक्षित एवं जागरूक होना चाहिए।
5. उपभोक्ता को ताजे, कम-से-कम परिष्कृत एवं प्रसंस्करित, निर्धारित मानक चिह्न देख कर खाद्य पदार्थ खरीदना चाहिए।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) भोज्य पदार्थों में मिलाए जाने वाले बाह्य अथवा निम्न श्रेणी के पदार्थों को कहते हैं :

(अ) कंकड़ पत्थर (ब) मिलावटी अवयव

(स) बाह्य तत्त्व (द) उपरोक्त सभी

(ii) मिलावट जिसे विक्रेता स्वयं अधिक से अधिक लाभ कमाने हेतु

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

करता है :

(अ) आपातिक मिलावट (ब) उद्देश्यपूर्ण मिलावट

(स) धात्विक मिलावट (द) सूक्ष्म जैविक संदूषण

(iii) जंगली घास जिसके बीजों की मिलावट सरसों के बीजों के साथ की जाती है :

(अ) राई (ब) सरसों

(स) आरजीमोन (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iv) खाद्य पदार्थों में मिलावट की रोकथाम हेतु आवश्यक है :

(अ) ताजे व कम-से-कम प्रसंस्करित खाद्य खरीदें

(ब) शिक्षित एवं जागरूक उपभोक्ता

(स) निर्धारित मानक चिह्न देखकर खाद्य खरीदें

(द) उपरोक्त सभी

(v) खाद्य पदार्थ मिलावट निषेध अधिनियम है :

(अ) FPO (ब) FSSAI

(स) PFA (द) Agmark

2. मिलावट किसे कहते हैं?

3. मिलावट कितने प्रकार की होती है? उदाहरण देते हुए समझाइए।

4. खाद्य पदार्थों में हो रही मिलावट की रोकथाम किस प्रकार कर सकते हैं? समझाइये।

5. मिलावटी भोज्य पदार्थ खाने के क्या दुष्प्रभाव होते हैं स्पष्ट कीजिये।

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) ब (iii) स (iv) अ (v) ब

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

20. सुरक्षित पेयजल व खाद्य स्वच्छता

I- सुरक्षित पेयजल

Safe Drinking Water and Food Hygigene
I-Safe Drinking Water

स्वास्थ्य के लिये सुरक्षित पेयजल बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। सुरक्षित पेयजल जैविक व रासायनिक पदार्थों से मुक्त, मिट्टी व गंदगी रहित, स्वादिष्ट, रंगहीन व पारदर्शी तथा गंध रहित होता है। साधारण भाषा में सुरक्षित/स्वच्छ/शुद्ध जल वह है जो दूषित नहीं हो। एवं मानव उपभोग के लिये सुरक्षित हो। प्रदूषित जल में बाह्य पदार्थों के मिलने से उसके भौतिक गुण जैसे–रंग, गंध एवं स्वाद में परिवर्तन आ जाता है। जल मानव एवं पशुओं के अपशिष्ट पदार्थों से संक्रमित और रासायनिक यौगिकों के मिलने सेस ंदूषितए वं ि वषाक्तह ोज ाताहै ास ंदूषितए वंप ्रदूषितज लम ानव उपभोग के लिये अनुपयुक्त होता है। असुरक्षित यानी कि अशुद्ध, अस्वच्छ एवंद ूषितज लके स ेवनस ेप ेटस म्बन्धीक ईब ीमारियाँज ैसे–अमीबा रुग्णता, हैजा, पेचिश, टायफाइड, पीलिया आदि हो जाते हैं। कहा जाता है कि 'जीवनदाता जल मृत्युदाता भी हो सकता है' यदि वह जल जनित बीमारियों का वाहक बन जाये।

जल सभी जीव–जन्तुओं की मूलभूत आवश्यकता है। पृथ्वी पर मनुष्य को प्रतिदिन लगभग 20–50 लीटर शुद्ध जल की आवश्यकता होती है जिसका वह अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करता है, जैसे–पीने के पानी के रूप में, पेय पदार्थ के रूप में, भोजन पकाने के रूप में, अन्य दैनिक दिनचर्या की गतिविधियों हेतु। यदि यह जल असुरक्षित होता है तो मानव स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है। जल कई कारणों जैसे–मनुष्यों तथा जानवरों द्वारा निस्तारितम ल–मूत्र,क ूड़ा–करकट,म रेज ानवरों,स ड़े–गलेप ेड़–पौधों आदि के पानी में मिल जाने, पानी में खेतों से आकर मिलने वाले कीटनाशक तथा उर्वरक कारखानों द्वारा पानी में रसायनों के मिल जाने से दूषित हो जाता है। पृथ्वी पर उपलब्ध जल का 97 प्रतिशत भाग जल समुद्रों में है, 1.8प्रतिशत भाग बर्फ के रूप में है तथा सिर्फ 1.2 प्रतिशत जल ही पीने योग्य है। अर्थात् मानव उपयोग के लिए जल बहुत सीमित है। गुणवत्ता के आधार पर जल को निम्न चार भागों में बाँटा गया है–

1. **शुद्ध जल :** जिस जल में कोई अवांछनीय तत्त्व नहीं होते हैं वह जल शुद्ध है। इस जल को प्राकृतिक जल भी कहा जाता है।
2. **सुरक्षित जल :** शुद्ध जल का उपचार कर उसे पीने योग्य बनाया जाता है। इसे उपचारित जल भी कहते हैं। इस जल में किसी प्रकार के अवांछनीय पदार्थ नहीं होते हैं।
3. **संदूषितज ल:** यदिज लम ेंस ूक्ष्मज ीवाणुओंअ ौरर ोगाणुओंक ी उपस्थिति हो तो उसे संदूषित जल कहते हैं।
4. **प्रदूषित जल :** यदि जल में कार्बनिक, अकार्बनिक, विकिरण, जैविक आदि अशुद्धियाँ घुली हुई हों तो वह जल प्रदूषित जल कहलाता है।

संदूषित एवं प्रदूषित जल के मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव :

संदूषित जल के माध्यम से विभिन्न सूक्ष्म जीव शरीर में जाकर पेट व पाचन सम्बंधी अनेक रोग पैदा करते हैं। तालिका : 20.1

उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट जल में अनेक विषैले पदार्थ होते हैं। जैसे–फ्लोराइड्स, फीनोल्स, साइनाइड, अम्ल, क्षार, पारा, सीसा आदि। पेयजल के माध्यम से मानव शरीर में प्रवेश करने पर ये पदार्थ अनेक प्रकार की बीमारियाँ फैलाते हैं। सीसायुक्त जल के सेवन से मांसपेशियाँ, पाचन संस्थान केन्द्रीय नाड़ी संस्थान से संबंधित रोग हो जाते हैं। जल में फ्लोराइड की मात्रा अधिक होने से दाँतों में धब्बे पड़ जाना, हड्डियों में व जोड़ों में दर्द होना, पैरों में घुटनों का बाहर की तरफ मुड़ना आदि दुष्प्रभाव देखने में आते हैं। राजस्थान में विशेषकर अजमेर, जयपुर, अलवर, जोधपुर, बाड़मेर, उदयपुर, नागौर, पाली व बीकानेर जिलों में फ्लोराइड प्रदूषण से फ्लोरोसिस रोग की समस्या अधिक है। अत: पेयजल किसी प्रकार के अवांछनीय पदार्थों से मुक्त एवं गुणवत्ता से परिपूर्ण होना चाहिए।

संयुक्त राष्ट्र संगठन (U.N.O.) एक बुनियादी मानव अधिकार और दुनिया भर में जीवन स्तर में सुधार की दिशा में एवं महत्त्वपूर्ण कदम के रूप में शुद्ध जल के लिए सार्वभौमिक पहुँच समझता है।

ऐसे समुदाय जो कि शुद्ध जल की कमी में गुजर–बसर कर रहे हैं वह मुख्यत: गरीब हैं तथा बीमारियों से ग्रसित होने के कारण वह गरीब रह

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 20.1 संदूषित जल से उत्पन्न रोग

क्र.सं.	रोग	कारक	कारण	लक्षण
1.	अमीबा रुग्णता हाथ से मुँह तक	प्रोटोजोआ ऐन्टामीवाहिस्टोलिटिका	मक्खियां, मल-मूत्र एवं अशुद्ध जल	अपच, थकान, वजन में गिरावट, दस्त, पेट फूलना, बुखार
2.	हैजा	बेक्टीरियम विबरीयो कोलेरे	बेक्टीरियम विबरीयो कोलेरे से संदूषित जल	दस्त, उलटी, बांयटे, नाक से खून आना, रक्त का प्रवाह तेज होना
3.	पेचिश	सालमोनेला एवं शीजेला	सालमोनेला एवं शीजेला जीवाणु से संदूषित जल	खूनी पेचिश व किन्हीं को खूनी उलटी की संभावना
4.	टायफाइड	सालमोनेला टायफी	रोगी वाहक के संक्रमित मल द्वारा संदूषित जल	तेज व लगातार बुखार 140° F तक खूब पसीना आना, दस्त की संभावना, प्लीहा एवं यकृत के आकार में वृद्धि यदि समय रहते उपचार नहीं किया जाता है तो प्रलाप व मृत्यु हो जाती है। पेट व छाती पर लाल दान
5.	गंभीर तीक्ष्ण श्वसन लक्षण	कोरोना वायरस	संदूषित जल	बुखार, कफ, खाँसी, गले में खराश, शारीरिक शिथिलता, थकान पाचन सम्बन्धी विकार
6.	पीलिया	हिपेटाइटिस ए वाइरस	संदूषित जल एवं भोजन	शारीरिक थकान, बुखार, पेट दर्द, वजन कम होना, खुजली, पीलिया एवं अवसाद
7.	पोलियो	पोलियो वाइरस	रोगी वाहक के संक्रमित मल के द्वारा संदूषित जल	प्रलाप सिरदर्द, बुखार मानसिक पक्षाघात (लकवा)
8.	लेप्टोस्पाइरोसिस	बेक्टीरियम लेप्टोस्पाईरा	जानवरों के मूत्र में उपस्थित बैक्टीरिया द्वारा संदूषित जल	प्रथम चरण-फ्लू द्वितीय चरण मैनेंनजाइटिस, पीलिया, यकृत क्षय एवं वृक्क घात

जाने पर मजबूर हो जाते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) तथा विभिन्न राष्ट्रीय संगठनों ने जल के मौलिक गुणों के स्तर निर्धारित किए हैं। जिस के अन्तर्गत शुद्ध पेयजल की रासायनिक, जैवकीय एवं रेडियोलोजिकल विशेषताएँ निर्धारित की हुई हैं।

भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा दिये गये जल की भौतिक व रासायनिक गुणवत्ता के मानक तालिका-20.2 में दर्शाये गये हैं।

सुरक्षित पीने योग्य जल तैयार करने की विधियाँ :

जल जो दिखने में साफ नजर आये जरूरी नहीं कि वह मानव उपयोग के लिये सुरक्षित हो। पीने के लिए शुद्ध एवं सुरक्षित जल का होना नितान्त आवश्यक है तभी हमारा स्वास्थ्य उत्तम रह सकता है। यदि हम सुरक्षित जल का सेवन करेंगे तो संदूषित जल से उत्पन्न रोगों से निजात मिल सकती है। घर पर साधारण विधियों के प्रयोग द्वारा जल को शुद्ध पीने योग्य बनाया जा सकता है।

1. **छानना :** यह विधि साधारणत: प्रत्येक घर में काम में ली जाती है। इस विधि द्वारा जल में उपस्थित अघुलनशील पदार्थ अलग किये जा सकते हैं। लेकिन महीन मिट्टी, जीवाणु तथा रासायनिक पदार्थ जो वस्त्र में से जल के साथ निकल जाते हैं को अलग नहीं किया जा सकता है। जल छानने के लिए साफ, मोटा, सफेद वस्त्र का प्रयोग करना चाहिए। वस्त्र को एक ही तरफ से उपयोग में लेना चाहिए ताकि वस्त्र के छिद्रों में फसी गंदगी जल में न मिल जाये। पानी छानने के लिए बाजार में उपलब्ध प्लास्टिक की छलनी व फिल्टर का उपयोग उन पर लिखे निर्देशानुसार किया जा सकता है।
2. **उबालना :** यह जल को शुद्ध करने की सबसे अच्छी विधि है। इस

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका- 20.2 : जल की भौतिक व रासायनिक गुणवत्ता के मानक

क्र.सं.	पैरामीटर्स	अधिकतम सीमा
1.	गंध	अनापत्तिजनक
2.	स्वाद	सहमत अनापत्तिजनक
3.	पी.एच. मान (pH-power of Hydrogen)	6.5–8.5
4.	घुलनशील ठोस पदार्थ मि. ग्राम/लिटर	500
5.	कुल कठोरता मि. ग्राम/लिटर अधिकतम	200
6.	कैल्सियम मि. ग्राम/लिटर अधिकतम	75
7.	मैग्नीशियम मि. ग्राम/लिटर अधिकतम	30
8.	क्लोराइड मि. ग्राम/लिटर अधिकतम	250
9.	फ्लोराइड मि. ग्राम/लिटर अधिकतम	1.0
10.	लौह लवण मि. ग्राम/लिटर अधिकतम	0.3
11.	कोलोफोर्म MPN/100 मि.लि. जल (coliform) (Most probabel number)	न्यून उपस्थिति
12.	मैलापन, NTU, अधिकतम (Terlbidity) (Nephelometric turbidity unit)	1

विधि में उच्च तापमान पर (100°C–121°C) जल को किसी बड़े बर्तन में ढक कर उबालते हैं। इस तापमान पर जल में उपस्थित जीवाणु व उनके अण्डे नष्ट हो जाते हैं साथ ही जल की अस्थाई कठोरता भी दूर हो जाती है। उबला हुआ जल पीने में स्वादिष्ट नहीं लगता है लेकिन जल शुद्धि का सरल व अच्छा तरीका है। उबालने के पश्चात् पानी को उसी पात्र में ढक कर ठण्डा होने के लिए छोड़ देना चाहिए। दूसरे बर्तन में उड़ेलने से पानी के दूषित होने की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।

3. **फिटकरी द्वारा :** इस विधि में फिटकरी के डले को 4–5 बार जल में घुमाया जाता है। जल पात्र को ढक कर बिना हिलाये रख दिया जाता है। जल में उपस्थित धूल, मिट्टी के कण व अन्य गंदगी तले में बैठ जाने पर बिना हिलाये जल को दूसरे पात्र में ले लिया जाता है। फिटकरी आसानी से उपलब्ध होने वाला सस्ता पदार्थ है।

4. **क्लोरीन की गोली द्वारा :** जल में उपस्थित जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए क्लोरीन की गोली का प्रयोग किया जाता है। यह एक सस्ती, विश्वसनीय, आसानी से उपयोग में आने वाली, हानिरहित एवं शीघ्रता से काम करने वाली विधि है। इस विधि में 0.5 ग्राम क्लोरीन की गोली 20 लिटर पानी को निसंक्रमित करने के लिए उपयोग में ली जाती है।

–इनके अलावा आजकल पेयजल शुद्धीकरण हेतु विभिन्न प्रकार के उपकरण बाजार में उपलब्ध हैं। इन उपकरणों से छानने, अल्ट्रा वायलेट किरणों तथा आधुनिक झिल्ली तकनीक द्वारा सुरक्षित पेयजल तैयार किया जाता है।

5. **विपरीत परासरण विधि :** यह एक जल शुद्धीकरण की तकनीक है जिसमें उच्च दाब पर पानी को एक अर्द्ध पारगम्य झिल्ली के माध्यम से निकाला जाता है जिससे जल में मौजूद अनावश्यक आयन तथा अणुओं को जल से निष्कासित कर जल शुद्ध किया जाता है।

6. **अल्ट्रा वायलेट किरणों द्वारा जल शुद्धीकरण :** यह पानी को शुद्ध करने की तकनीक है जिसमें लघु तरंग दैर्ध्य पराबैंगनी किरणों के प्रयोग से पानी में उपस्थित जीवाणुओं को मार दिया जाता है या फिर उनके डी.एन.ए.म`प रिवर्तनक रउ न्हें नष्क्रियक र दयाज ताह` इ स तकनीक का भोजन तथा हवा शुद्धीकरण में भी प्रयोग किया जाता है।

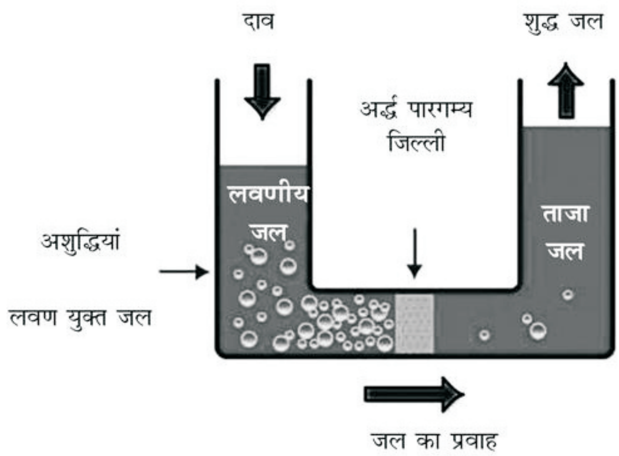

चित्र 20.1 : विपरीत परासरण

स्वच्छ करने के पश्चात् जल को सुरक्षित रखने हेतु उसके एकत्रीकरण से लेकर उपयोग तक निम्न सावधानियाँ बरतनी चाहिए–

1.ह ाथप नीक ाेअ शुद्धक रनेक ाप्र मुखस्र ाेतह` ।अ त:प`यजलके एकत्रीकरण, परिवहन एवं भण्डारण के समय उसमें हाथ नहीं डालें। पानी निकालने के लिए साफ लम्बी डण्डी वाली लुटिया का प्रयोग करें या नल वाले पात्र का प्रयोग करें।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

2. जल संग्रहण के बर्तन प्रतिदिन राख या बर्तन साफ करने के पाउडर से मांजें। बर्तन साफ करने के लिए मिट्टी का प्रयोग ना करें क्योंकि मिट्टी में हानिकारक जीवाणु होते हैं जो कि पानी को संक्रमित कर सकते हैं?
3. जल के पात्र को ढक कर ऊँचे स्थान पर रखें ताकि वह बच्चों की पहुँच से दूर रहे।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. सुरक्षित पेयजल स्वास्थ्य के लिए महत्त्वपूर्ण, जैविक व रासायनिक पदार्थों से मुक्त, मिट्टी व गंदगी रहित, स्वादिष्ट, रंगहीन व पारदर्शी व गंधरहित होता है।
2. जल कई कारणों जैसे-मनुष्यों तथा जानवरों द्वारा निस्तारित मल-मूत्र, कूड़ा-करकट, मरे जानवरों, सड़े-गले पेड़-पौधों आदि के पानी में मिल जाने, खेतों से आकर मिलने वाले कीटनाशक तथा उर्वरक कारखानों द्वारा पानी में रसायनों के मिल जाने से दूषित हो जाता है।
3. जल को मुख्यतया चार भागों में बाँटा गया है। शुद्ध जल, सुरक्षित जल, संदूषित जल एवं प्रदूषित जल।
4. संदूषित जल के माध्यम से विभिन्न सूक्ष्म जीव शरीर में जाकर पेट व पाचन संबंधी अनेक रोग उत्पन्न करते हैं।
5. जल को छानकर, उबालकर, फिटकरी द्वारा, क्लोरीन की गोली द्वारा, विपरीत परासरण विधि एवं अल्ट्रा वायलेट किरणों द्वारा शुद्ध किया जा सकता है।
6. स्वच्छ करने के पश्चात् जल को सुरक्षित रखने हेतु उसके एकत्रीकरण से लेकर उपयोग तक स्वच्छता संबंधी सावधानियाँ बरतनी चाहिए।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) असुरक्षित पेयजल के सेवन से प्रायः .... बीमारियाँ हो सकती हैं।
(अ) चर्म से सम्बन्धित
(ब) पेट से सम्बन्धित
(स) बाल से सम्बन्धित
(द) आँख, नाक व कान से सम्बन्धित

(ii) अमीबा रुग्णता किस रोगकारक रोगाणु के कारण होता है?
(अ) कोरोना वायरस
(ब) ऐन्टामीवा हिस्टोलिटिका
(स) सालमोनेला टायफी
(द) बेक्टीरियम बिबरीयों

(iii) जल का पी.एच. मान है :
(अ) 3.5-5.8
(ब) 9.00-10.00
(स) उपरोक्त में से कोई नहीं
(द) 6.5-8.5

(iv) यदि जल में सूक्ष्म जीवाणुओं और रोगाणुओं की उपस्थिति हो तो उसे किस प्रकार का जल कहते हैं :
(अ) संदूषित
(ब) प्रदूषित
(स) असुरक्षित
(द) उपरोक्त सभी

(v) जल में कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए कौन सी विधि अपनाई जाती है :
(अ) अल्ट्रा वायलेट किरणों द्वारा
(ब) क्लोरीन द्वारा
(स) उबालना
(द) उपरोक्त सभी

2. सुरक्षित पेयजल से आपका क्या तात्पर्य है? समझाइये।
3. जल के संदूषित एवं प्रदूषित होने के मुख्य कारण लिखिये।
4. घरेलू स्तर पर सुरक्षित पेयजल तैयार करने की विधियों का वर्णन कीजिये।
5. संदूषित जल के मानव शरीर पर दुष्प्रभावों की व्याख्या कीजिये।

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) ब (iii) द (iv) अ (v) अ

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

II - खाद्य स्वच्छता

II- Food Hygigene

भोजन मानव की एक महत्त्वपूर्ण मूलभूत आवश्यकता है। सन्तुलित, पौष्टिक, स्वादिष्ट एवं स्वच्छ भोजन द्वारा शरीर का पोषण होता है तथा व्यक्ति स्वस्थ, निरोगी एवं क्रियाशील रहता है। अस्वच्छ एवं संदूषित (contaminated) भोजन के सेवन से हैजा, उलटी, पेचिश, पीलिया, टायफाइड आदि कई बीमारियाँ हो जाती हैं जो न केवल स्वास्थ्य को हानि पहुँचाती है अपितु कभी-कभी व्यक्ति की जान भी ले लेती हैं।

खाद्य स्वच्छता का अभिप्राय ऐसे भोज्य पदार्थों के उत्पादन से है जो कि उपभोक्ता के लिये सुरक्षित व लम्बे समय तक संग्रहित किये जा सकते हों तथा संग्रहण के दौरान उनकी गुणवत्ता बनी रहे।

खाद्य पदार्थों को स्वच्छ रखने के लिये आवश्यक है कि उन्हें दूषित होने से बचायें। खाद्य पदार्थ व्यक्तिगत एवं वातावरण की अस्वच्छता के कारण दूषित हो सकते हैं जैसे उनमें उपस्थित धूल, मिट्टी, कीटाणु, एन्जाइम आदि। खाद्य पदार्थों को काम में लेने वाले व्यक्ति तथा खाद्य पदार्थों के संग्रहण, पकाने, परोसने के स्थान, उपकरण आदि के कारण अस्वच्छ या दूषित हो सकते हैं। अस्वच्छ खाद्य पदार्थ हमारे स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होते हैं। अतः आवश्यक है कि उन्हें अस्वच्छ होने से बचायें। भोजन संदूषण के भौतिक, जैविक एवं रासायनिक कारण व खाद्य पर प्रभाव तथा खाद्य पदार्थों को उनमें उपस्थित जल की मात्रा के आधार पर विकृत/दूषित होने में लगने वाले समय के बारे में भोजन परिरक्षण अध्याय में विस्तार से पढ़ा है। अतः इस पाठ में हम भोजन को स्वच्छ कैसे रखा जाये उसके बारे में पढ़ेंगे।

1. बाजार से ताजे, स्वच्छ, निसंक्रमित खाद्य पदार्थ खरीदें। सड़े-गले, अधिक पके हुए संक्रमित खाद्य पदार्थ ना खरीदें।
2. खाद्य पदार्थों को खाने, पकाने अथवा संग्रहण से पूर्व साफ एवं स्वच्छ कर लें। उदाहरण के लिए विकारी फल व सब्जियों को धोकर व सुखाकर उचित तापमान पर रेफ्रीजरेटर में संग्रहित करें। अर्द्धविकारी भोज्य पदार्थ जैसे-आलू, प्याज आदि की बाह्य गंदगी हटाकर हवादार टोकरी में रखें व अविकारी भोज्य पदार्थ जैसे-गेहूँ, चावल, दालें आदि छानकर व बीनकर साफ, स्वच्छ डब्बों में संग्रहित करें।
3. खाद्य पदार्थों को पकाने, परोसने, संग्रहण आदि का स्थान तथा काम में लिये जाने वाले बर्तन व अन्य उपकरण भोज्य पदार्थों को अस्वच्छ कर सकते हैं। अतः यह आवश्यक है कि :
   (अ) भोजन पकाने, परोसने व संग्रहण का स्थान साफ-सुथरा हो तथा समय-समय पर इस स्थान की सफाई की जाये।
   (ब) भोजन पकाने के बर्तन एवं उपकरण, भोजन परोसने एवं संग्रहण के लिए प्रयुक्त बर्तन एवं पात्र साफ स्वच्छ हों, गंदे उपकरण एवं बर्तन में पकाया, परोसा एवं संग्रहित किया गया खाद्य पदार्थ दूषित हो जाता है।
   (स) भोजन पकाने व परोसने के उपकरण एवं बर्तनों को काम में लेने के पश्चात् जितना जल्दी हो सके राख अथवा क्लीनिंग पाउडर से मांजकर साफ पानी से धो लें।
   (द) भोजन को सदैव ढक कर उचित तापमान पर (ठंडा भोजन ठंडा व गर्म भोजन गर्म) रखें। सदैव ताजा भोजन ग्रहण करें। भोजन के दूषित होने के तापमान की परिधि 5° से 60°C है। यदि भोजन इस तापमान की परिधि में चार से अधिक घंटे के लिये संग्रहित किया जाता है तो दूषित हो जाता है व खाने के लिए उपयुक्त नहीं रहता।
   (य) रसोई के कार्य में प्रयुक्त किये जाने वाले कपड़े, नेपकिन, झाड़न आदि को साबुन से धोकर धूप में सुखाकर प्रयोग करें।
   (र) रसोईघर के कचरे को ढक्कनदान, कूड़ेदान में डालें तथा कूड़ेदान की नियमित सफाई करें।
4. खाद्य पदार्थों को पकाने, परोसने, संग्रहण आदि करने वाले व्यक्ति की शारीरिक स्वच्छता अत्यन्त आवश्यक है अतः-
   (अ) रसोइया स्वयं साफ-स्वच्छ एवं निरोगी हो।
   (ब) रसोइये के बाल व नाखून कटे हुए, हाथ धुले हुऐ, बाल ढके हुए साफ स्वच्छ वस्त्र धारण करें।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(स) उसके हाथ-पैरों पर फोड़े-फुन्सी या कोई चर्म रोग नहीं होना चाहिए। अन्यथा स्वच्छ भोजन भी उसके द्वारा दूषित हो जाएगा।

(द) खाद्य पदार्थों का उपयोग करते समय धूम्रपान न करें।

(य) सर्दी, जुकाम, क्षय रोग एवं अन्य संक्रामक रोग से पीड़ित व्यक्ति से न तो भोज्य पकवाना चाहिए और न ही भोजन परोसवाना चाहिए क्योंकि खांसते व छींकते समय जीवाणु भोजन में प्रवेश कर सकते हैं।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. स्वच्छ खाद्य से अभिप्राय ऐसे भोज्य पदार्थों के उत्पादन से है जो कि उपभोक्ता के लिए सुरक्षित व लम्बे समय तक संग्रहित किये जा सकते हों तथा संग्रहण के दौरान भी उनकी गुणवत्ता बनी रहे।
2. बाजार से ताजे, स्वच्छ, निसंक्रमित खाद्य पदार्थ खरीदें।
3. भोजन पकाने, परोसने व संग्रहण के स्थान एवं बर्तन स्वच्छ रखें। भोजन सदैव उचित तापमान पर संग्रहित करें।
4. खाद्य पदार्थों को पकाने, परोसने, संग्रहण आदि करने वाले व्यक्ति की शारीरिक स्वच्छता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) भोज्य पदार्थों को स्वच्छ रखने के लिए आवश्यक है कि उन्हें .... होने से बचायें।

(ii) गेहूँ, चावल, दालों आदि को .... व .... साफ एवं सूखे डब्बों में संग्रहित करें।

(iii) भोजन को सदैव .... रखना चाहिये।

(iv) भोजन के दूषित होने के तापमान की परिधि .... है।

(v) रसोइया स्वयं .... व .... होना चाहिए।

2. खाद्य स्वच्छता को समझाइये।
3. खाद्य पदार्थ किन-किन कारणों से अस्वच्छ हो जाते हैं।
4. खाद्य पदार्थों को स्वच्छ कैसे रखा जा सकता है? उदाहरण सहित लिखिये।

उत्तरमाला :

1. (i) दूषित/अस्वच्छ (ii) छानकर, बीनकर (iii) ढककर
(iv) 5°C-60°C (v) स्वच्छ, निरोगी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई III – वस्त्र एवं परिधान

21. वस्त्र का व्यक्तित्व से सम्बन्ध

Clothing and Personality

वस्त्रम ानवक ीम ूलभूतअ ावश्यकताओंम ेंस े ए कह ै ।प्रत्येक व्यक्ति अपना तन ढकने और बाहरी आपदाओं से खुद को बचाने के लिये वस्त्रों का उपयोग करता है। वस्त्रों का मानव-मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है इसलिये जीवन के सामान्य विकास के लिये उचित प्रकार के वस्त्रों का होना आवश्यक है। वस्त्र व्यक्ति के व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करता है और प्रभावित भी करता है। उचित प्रकार के वस्त्रों से बालक, युवा, प्रौढ़ और बुजुर्गों सभी में आत्मविश्वास आता है, जो व्यक्तित्व के विकास के लिये अनिवार्य है। वस्त्रों की स्वच्छता, सुन्दरता, समयानुकूलता, रंग, किस्म, स्टाइल तथा फैशन की अनुकूलता का हम सभी के व्यक्तित्व पर सुन्दर प्रभाव पड़ता है। सुरुचिपूर्ण परिधान-संयोजन सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रियदर्शी एवं ग्राह्य बना देता है।

सुन्दर और उचित परिधान धारण कर व्यक्ति अपने आप में प्रसन्न हो उठता है फलस्वरूप उसका प्रभाव आचार-व्यवहार एवं उसके तौर-तरीकों पर ऐसा पड़ता है कि सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही आकर्षक हो जाता है। अत: हम कह सकते हैं कि व्यक्ति का परिधान उसके व्यक्तित्व के विकास की एक महत्त्वपूर्ण इकाई है जिसके अभाव में व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास की कल्पना सम्भव नहीं है। मानव की दैनिक आवश्यकताओं में वस्त्रों की आवश्यकता महत्त्वपूर्ण है। प्रतिदिन व्यक्ति वस्त्रों का चुनाव मौसम, उपलब्धता, अवसर, समय और आवश्यकता के आधार पर करता है।

वस्त्र-परिधानों के कार्य मुख्य रूप से दो तरह के होते हैं-

(i) प्राथमिकक ार्य: -श ारीरक ीब ाहरीव ातावरणस ेस ुरक्षाए वं आराम।

(ii) द्वितीयक कार्य :- पहचान, मानसिक सन्तोष, सामाजिक स्तर, प्रशंसा, विविधता आदि।

(i) प्राथमिक कार्य :- वस्त्रक ाअ तिमहत्त्वपूर्णक ार्यश ारीरक ो ढकना है साथ ही शरीर को बाहरी वातावरण, हवा, बरसात, धूप, सर्दी और गर्मी से सुरक्षित रखने में वस्त्र महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। शरीर को सामान्य स्थिति में रखने के लियेव स्त्रोंक ास हीच ुनावक रनाच ाहिये,ज ैसे-सर्दीके मौसम में शरीर को ठण्ड से बचाने के लिए ऊनी वस्त्र एवं गर्मी में ठण्डक हेतु सूती वस्त्र पहनने चाहिये। उचित वस्त्रों के पहनने से शरीर आरामदायक स्थिति में रहता है। व्यक्ति के दैनिक कार्यों में, जैसे-विश्राम, नहाना, ओढ़ना आदि के लिये भिन्न-भिन्न वस्त्रों का उपयोग किया जाता है।

(ii) द्वितीयक कार्य :- वस्त्रों द्वारा व्यक्ति का सर्वांगीण विकास सम्भवह ै,ज ैसे-सामाजिक,म नोवैज्ञानिकअ ौरश ारीरिक। व्यक्ति के वस्त्र व्यक्ति के बारे में ढेर सारी जानकारियां स्वत: ही दे देते हैं। जैसे-व्यवसाय कौन-सा है, यथा-वकील की पहचान उसके काले कोट के कारण हो जाती है। स्त्री-पुरुष का भेद भी परिधान आसानी से कर देते हैं-पैंट-शर्ट पुरुष एवं साड़ी-सूट स्त्री की पोशाक है। पोशाक व्यक्ति की पहचान बन गई है। उचित, सुन्दर एवं सुरुचिपूर्ण परिधान-संयोजन, व्यक्ति अपनी ओर ध्यान आकर्षित करवाने में सफल रहता है, इससे उसमें आत्मविश्वास एवं सन्तोष प्राप्त होता है। इसके विपरीत कई बार अज्ञानतावश और धनाभाव में उचित वस्त्र किशोर, युवा नहीं पहन पाते ऐसे में उनमें हीनभावना आ जाती है, जिसके कारण वे मानसिक रूप से असन्तुष्ट होकर समस्यात्मक व्यवहार करने लगते हैं। परिधान के सामाजिक महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। वस्त्रों के माध्यम से भी व्यक्तिक ास ामाजिकस् तरऊ ँचाउ ठताह ैत थास माजम ें उसकीप्र तिष्ठाभ ीव स्त्रह ीब नातेह ैं ।फै शनके अ नुरूप, व्यक्तित्व के अनुकूल, सुन्दर शैली वाले तथा स्वच्छ वस्त्र पहनने से मन को प्रसन्नता व सन्तोष प्राप्त होता है और व्यक्ति प्रशंसा का पात्र बन जाता है। समयोचित सुन्दर वस्त्र-परिधान व्यक्ति के जीवन में परिवर्तन एवं विविधताएं लाते हैं। गहरे

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

और चटक रंग के वस्त्र उदास व्यक्ति का मन भी खुश कर देते हैं।

अतः ये कहना गलत न होगा कि व्यक्तित्व को आकर्षक व प्रभावशाली बनाने में वस्त्रों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

पिछली कक्षा में हमने वस्त्रों को रंगने और रंगाई की प्रक्रिया के बारे में पढ़ा, लेकिन रंगाई के अलावा वस्त्रों पर छपाई भी की जाती है। वस्त्र की आकर्षक छपाई करने हेतु डिजाइन व नमूने की आवश्यकता होती है। वस्त्र सुन्दर लगे इसके लिये डिजाइन या नमूना कैसा हो, कितना बड़ा हो, किस आकृति का हो, रंग कौन-सा हो? आइये, हम देखते हैं कि एक नमूना या डिजाइन किन बिन्दुओं से प्रभावित होता है या कहें कि कला के तत्त्व और सिद्धान्तों का सही उपयोग किया जाये तो एक नमूना और डिजाइन आकर्षक बन जाती है।

I कला के तत्त्व :-

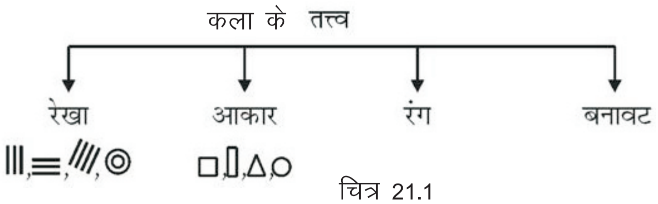

चित्र 21.1

1. **रेखा**–वस्त्र-परिधानों पर सुन्दर एवं आकर्षक डिजाइन बनाने के लिये रेखाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भिन्न-भिन्न रेखाओं को जोड़कर डिजाइन बनाये जाते हैं। वस्त्रों पर नमूनों और डिजाइन की विविधता के लिये विभिन्न रेखाओं का इस्तेमाल किया जाता है जिससे तरह-तरह के नमूने बनाये जा सकें। मुख्य रूप से चार रेखाओं का उपयोग किया जाता है :

(i) **लम्बवत रेखा :** यह रेखा लम्बाई में वृद्धि करती है। इसकी यह विशेषता है कि इनके सहारे दृष्टि ऊपर से नीचे की ओर और नीचे से ऊपर की ओर गतिमान होती है। इन रेखाओं की, परिधान में प्रधानता व अधिकता रखने से व्यक्ति की लम्बाई अधिक होने का आभास देती है और ठिगने व्यक्ति को ऐसे वस्त्र पहनने चाहिये जो उन्हें लम्बा दिखाये।

(ii)**समतल रेखा :-** यह रेखाएं चौड़ाई की दिशा में समतल या लेटी हुई होती है। यह स्थिरता व विश्राम का भाव उत्पन्न करती है। इन पर दृष्टि दाहिने छोर से बाएँ छोर की तरफ तथा बाएँ छोर से दाहिने छोरक ेिअ ेरग तिमानह ेतीह ै ।य ेर ेखाएंल म्बाईक ेक म करती-सी दिखती है साथ ही चौड़ाई में वृद्धि का आभास देती है। अतः समतल रेखा वाले वस्त्र मोटे लोगों को नहीं पहनने चाहिये जबकि दुबले-पतले व्यक्ति को इन रेखाओं के वस्त्र सामान्य दिखाते हैं।

(iii)**तिरछी रेखा :** यह रेखाएं गतिशीलता, शालीनता एवं नमनीयता का भाव उत्पन्न करती हैं। ढलुआं और तिरछी दिशा में आने-जाने वाली ये रेखाएं चौड़ाई को कुछ कम तथा लम्बाई को बढ़ाती हुई प्रतीत होती है। इन रेखाओं के प्रयोग से वस्त्रों की सुन्दरता बढ़ जाती है। यह सभी वस्त्रों व परिधानों पर शोभा देती है।

(iv)**वृत्त रेखा/वक्र रेखा :** ये रेखाएं घुमावदार होती हैं। ये रेखाएं प्रसन्नता, कोमलता, सौम्यता, सौन्दर्य एवं समृद्धि की परिचायक होती हैं। इनका प्रयोग वस्त्र सज्जा में फूल, पत्ते, अर्धवृत्त या अन्य वृत्ताकार डिजाइन बना कर इस्तेमाल किया जाता है।

2. **आकार** – आकार कला का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। विभिन्न रेखाओं के संयोजन से अलग-अलग आकार बनाये जाते हैं। वस्त्रों पर आकर्षक डिजाइन उत्पन्न करने के लिये विभिन्न आकारों का उपयोग किया जाता है। वस्त्र पर बने नमूनों में ये आकार मुख्य रूप से चार प्रकार के होते हैं-

(i) **वर्गाकार :-** इस प्रकार की आकृति बनाने के लिये लम्बवत और समतल रेखा एक ही नाप की होती है और डिजाइन आकर्षक बनते हैं।

(ii)**आयताकार :-** इस आकार के डिजाइन में आमने-सामने की लम्बवत व समतल रेखा बराबर होती है।

(iii)**त्रिभुजाकार :-** डिजाइन के इस आकार में एक भाग समतल एवं दो तिरछी रेखाओं के संयोजन से बनाते हैं।

(iv)**वृत्ताकार :-** इसमें डिजाइन का आकार गोल होता है। कई वृत्ताकार Curred डिजाइन में इसका उपयोग होता है।

3. **रंग :-** पिछली कक्षा में आप रंगों का विस्तृत अध्ययन कर चुके हैं। परन्तु कला के तत्त्वों में रंग अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है इसलिये इस रूप में भी रंग के बारे में जानना आवश्यक है। परिधान में रंग प्राण की तरह होते हैं। रंगों की वजह से ही वस्त्र जीवन्त और आकर्षक लगते हैं। वस्त्रों में नमूना बनाते समय रंग-संयोजन का अपना एक विशिष्ट एवं अनोखा स्थान है। रंगों का प्रयोग हमारी व्यक्तिगत रुचि पर भी निर्भर करता है। वस्त्रों में रंगों का आयोजन व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक रूप से प्रभावित करते हैं, क्योंकि वे उसके व्यक्तित्व को उभारने में शक्तिशाली माध्यम हैं। कितने भी सुन्दर और उचित गुण व्यक्तित्व में हो, फिर भी वस्त्र-परिधान का रंग अगर उन्हें फबने वाला न होगा तो व्यक्तित्व को हानि सहन करनी पड़ती है। वस्त्र में रंगों की गहराई, व्यक्ति की त्वचा का रंग, आयु, आकार व्यक्तित्व से प्रभावित होता है इसलिए उचित रंगों का संयोजन, पहनने वाले को एक विशेष आत्मविश्वास प्रदान करता है। फैशन के अनुसार भी रंगों का प्रयोग रुचिकर होता है। रंगों का सौन्दर्यात्मक प्रभाव के साथ संवेगात्मक प्रभाव भी होता है। व्यक्ति पर विभिन्न रंगों का विभिन्न प्रभाव होता है,

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

जैसे–

लाल रंग– उत्सुकता, जोश, उत्तेजना, खतरा, ऊर्जावान

पीला रंग– खुशी, खिला हुआ, जोश

हरा– ठंडक, शीतलता, संतोष, विश्राम, सुहावना, मित्रता

नारंगी– प्रसन्नता, उल्लास, उत्साह व जोश

नीला– शान्त, गंभीर, शीतल व विशाल

जामुनी– प्रभावी, चमकीला व सन्तोष

सफेद– स्वच्छ, शुद्ध, ठण्डा, शान्ति और मौन

काला– पुराना, शोक, अवसाद, विरोध प्रदर्शन

4. **बनावट :** बनावट कला के तत्त्वों में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। वस्त्र के बाहरी स्वरूप और स्पर्श संबंधी गुण को 'बनावट' कहते हैं। वस्त्र की सतह चिकनी, खुरदरी, रोएंदार, चमकीली, मुलायम, कड़क आदि होती है, जिसको स्पर्श करके व देखकर आसानी से पता लगाया जा सकता है। नमूना बनाते समय वस्त्र की बनावट का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिये। बनावट में हमेशा एकरूपता होनी चाहिये, जैसे– मखमल पर मखमल का पैबन्द ही अच्छा लगता है। खुरदरी सतह पर खुरदरी सतह के डिजाइन अच्छे लगते हैं, न कि खुरदरी सतह पर साटन का डिजाइन।

उपरोक्त डिजाइन/कला के तत्त्वों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वस्त्र पर डिजाइन या नमूना रेखा, आकार, रंग और बनावट के सन्तुलित संयोजन से बनते हैं। इनका अस्त–व्यस्त संयोजन नमूने को आकर्षक नहीं लगने देते।

जिस प्रकार किसी भी डिजाइन को बनाने के लिये कला के तत्त्व महत्त्वपूर्ण हैं उसी तरह से डिजाइन के सिद्धान्त भी अत्यन्त आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण हैं।

डिजाइन के सिद्धान्त :–प्रत्येक प्रकार की कला के कुछ सिद्धान्त होते हैं। वस्त्र बनाना और वस्त्र पर डिजाइन बनाना, दोनों ही अपने–आप में एक कला है। इन सिद्धान्तों का अनुकरण आधारभूत मानकर करना चाहिये। इन सिद्धान्तों को अनम्य नहीं मानना चाहिये। इनका उपयोग प्रचलित फैशन तथा विशिष्ट शरीर–आकृति के अनुरूप करना चाहिए इनका उचित संयोजन डिजाइन या नमूनों को नवीनता व वस्त्र को सुन्दरता प्रदान करते हैं। ये निम्नलिखित हैं–

1. **अनुपात :** अनुपात डिजाइन का सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत एक ही डिजाइन या नमूने में विभिन्न भागों का आपस में सम्बन्ध अनुपात में देखा जाता है, जैसे–आकार, बनावट, रंग आदि। इन सबका आधार संख्यात्मक व गुणात्मक, दोनों ही हो सकता है। वस्त्रों में आकर्षण तभी उत्पन्न होगा जब एक समूह में बना डिजाइन अनुपात में हो।

2. **सन्तुलन :** सन्तुलन से वस्त्र या परिधान में विश्रामदायक भाव आते हैं। सन्तुलन प्राय: वस्त्र की मध्य रेखा से देखा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी भी डिजाइन या वस्त्र का प्रत्येक भाग व्यवस्थित एवं समान भार का होना चाहिये ताकि वस्त्र सुन्दर, आकर्षक एवं सन्तुलित दिखाई दे। रंगों तथा आकृतियों को केन्द्र बिन्दु के चारों तरफ इस प्रकार रखा जाये कि केन्द्र के प्रत्येक ओर समान आकर्षण रहे। सन्तुलन एक आरामदायक प्रभाव है। यह दो प्रकार का होता है–

(i) **औपचारिक सन्तुलन :** जब डिजाइन के सभी भागों में आकर्षण, रचना व अलंकरण समान या बराबर होते हैं।

(ii) **अनौपचारिक सन्तुलन :** इसमें डिजाइन के सभी भाग बराबर नहीं होते, परन्तु केन्द्रीय स्थिति से परिधि की ओर सन्तुलन में होते हैं।

3. **लय :** लय डिजाइन का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। लय का अर्थ गति से होता है। जैसे लय प्रकृति और संगीत में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है ठीक वैसे ही डिजाइन में लय का अर्थ एक ऐसे मार्ग से है जो रंग, रचना, रेखा, आकार और अलंकरण पर हमारी आँखों को गति प्रदान करें। वस्त्र सज्जा में लय उत्पन्न करने के लिये रंग, रचना, रेखा, आकार, बनावट, आकृति आदि में पुनरावृत्ति, स्वरीकरण तथा विकिरण का प्रयोग करना चाहिये। सम्पूर्ण वस्त्र में डिजाइन का संयोजन इतना रोचक होना चाहिये कि उस पर दृष्टि लयबद्ध गति से फिसले। वस्त्र में लय उत्पन्न कर उनमें सुन्दरता व आकर्षण लाया जा सकता है।

4. **अनुरूपता :** वस्त्र सज्जा में एकरूपता एवं अनुरूपता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वस्त्र पर डिजाइन का निर्माण करते समय रेखा, आकार, रंग तथा बनावट के उपयोग में एकरूपकता के साथ वस्त्र सज्जा करते समय सभी भागों की शैली, आकार, रंग व बनावट एक–दूसरे से सम्बन्धित होने चाहिये।

5. **दबाव :** प्रत्येक वस्त्र सज्जा में एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र प्रसंग होनी चाहिये और इसे ही दबाव कहा जाता है। सरल शब्दों में कहें तो किसी एक बिन्दु पर विशेष बल देना ताकि आकर्षण उत्पन्न किया जा सके। वस्त्र सज्जा में यदि किसी डिजाइन के चारों तरफ रिक्त स्थान छोड़ा जाये या डिजाइन किसी विशेष स्थान जैसे–गले के चारों तरफ बनाई जाये तो उस पर दृष्टि ठहरती है और वस्त्र व डिजाइन का आकर्षण केन्द्र बढ़ जाता है। वस्त्र पर एक से अधिक डिजाइन बना दिये जाये तो आकर्षण कम और 'दबाव केन्द्र' भी नहीं होगा।

उपरोक्त कला के तत्त्वों और डिजाइन के सिद्धान्तों का अध्ययन करने के पश्चात् आप उचित डिजाइन वाले वस्त्रों का चयन कर सकेंगे। वस्त्र सज्जा करते और करवाते समय डिजाइन के सिद्धान्तों और कला के तत्त्वों का उपयोग करके वस्त्र में सुन्दरता की वृद्धि कर सकते हैं, जिससे उचित डिजाइन के वस्त्र पहनने से व्यक्तित्व एवं सौन्दर्य में अभिवृद्धि हो सके। अत: कह सकते हैं कि व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब 'वस्त्र' होते

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

हैं।

हत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब वस्त्र होते हैं।
2. वस्त्र का प्राथमिक कार्य व्यक्तिगत सुरक्षा व आराम प्रदान करना है।
3. वस्त्र का द्वितीयक कार्य पहचान, मानसिक सन्तोष, सामाजिक स्तर, प्रशंसा और विविधता प्रदान करना।
4. विभिन्न रेखाओं के प्रयोग द्वारा नमूने की लम्बाई, चौड़ाई और कोमलता को दर्शाया जाता है।
5. रंग का मुख्य स्रोत सूर्य का प्रकाश है एवं रंगों का सौन्दर्यात्मक, संवेगात्मक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है।
6. कला के चार तत्त्व हैं-रेखा, आकार, रंग एवं बनावट। इनके उचित संयोजन से डिजाइन का निर्माण होता है।
7. डिजाइन के सिद्धान्त-अनुपात, सन्तुलन, लय, अनुरूपता, दबाव है।
8. कला के तत्त्वों एवं डिजाइन के सिद्धान्तों के उचित उपयोग व आधार से आकर्षक व सही डिजाइन का निर्माण किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) वस्त्र का प्राथमिक कार्य है :

(अ) पहचान (ब) प्रशंसा

(स) सुरक्षा (द) विविधता

(ii) कला का तत्त्व है :

(अ) दबाव (ब) अनुरूपता

(स) लय (द) आकार

(iii) समतल रेखा दर्शाती है :

(अ) ऊँचाई (ब) गहराई

(स) लम्बाई (द) चौड़ाई

(iv) रंग का मुख्य स्रोत है :

(अ) प्रकाश (ब) सूर्य का प्रकाश

(स) प्रकृति (द) इनमें से कोई नहीं

(v) लय का अर्थ होता है :

(अ) आकार (ब) रंग

(स) गति (द) विश्राम

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) वस्त्र पर छपाई हेतु .... की आवश्यकता है।

(ii) वस्त्र का प्राथमिक कार्य .... एवं .... है।

(iii) रेखाओं के संयोजन से .... बनता है।

(iv) बनावट का .... के द्वारा पता लगा सकते हैं।

(v) सन्तुलन दो प्रकार का .... एवं .... होता है।

(vi) दबाव से तात्पर्य .... पर विशेष बल देना है।

(vii) वस्त्र व्यक्ति के .... का प्रतिबिम्ब होता है।

3. बनावट से तात्पर्य क्या है।
4. वस्त्र के द्वितीयक कार्यों को समझाइये।
5. सन्तुलन नमूने को किस प्रकार प्रभावी बनाता है? स्पष्ट कीजिये।
6. आकार का निर्माण किस प्रकार होता है? यह कितने प्रकार के होते हैं।
7. 'डिजाइन' निर्माण हेतु किन-किन रेखाओं का उपयोग किया जाता है? विस्तृत वर्णन कीजिये।
8. एकि ठगनीव म ोटीम हिलाके ि लयेस ड़ीह ेतु ि कसप्र कारके डिजाइन का चयन करेंगी।
9. एक लम्बी लड़की के लिये किस प्रकार के डिजाइन का वस्त्र चयन करेंगी।

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) द (iii) द (iv) ब (v) स

2. (ii) नमूने (ii) सुरक्षा एवं आराम

(iii) आकार (iv) स्पर्श

(v) औपचारिक, अनौपचारिक (vi) केन्द्र बिन्दु

(vii) व्यक्तित्व।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

22. वस्त्रों का चुनाव

Selection of Clothes

वर्तमान समय में हमारे लिये एक चुनौतीपूर्ण कार्य है, उचित वस्त्रों का चुनाव। वस्त्र उद्योग के क्षेत्र में और वस्त्र विज्ञान के क्षेत्र में नित्य नये तन्तुओं का आविष्कार हो रहा है, जिसके कारण बाजार में अनेकों-अनेक प्रकार के तन्तुओं से बने वस्त्र उपलब्ध है। इनके साथ ही व्यक्तिगत आवश्यकता, फैशन, खरीदने की क्षमता, कम्प्यूटरीकृत डिजाइन और सामाजिक स्तर के साथ वस्त्रों के प्रति जागरूकता ने बाजार में वस्त्रों के प्रकार व डिजाइन में क्रान्ति ला दी है। ऐसे में वस्त्र चयन अपने आप में एक चुनौतीपूर्ण परीक्षा बन जाता है, जिसमें अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होना होता है। वस्त्रों का चयन करते समय स्वयं, परिवार के सदस्यों तथा घरेलू उपयोगके ि लयेि वशेषध् यानर खाज ाताह ै ाव स्त्रच यनप्र् क्रियाक ो व्यक्तित्व,उ म्र,ज लवायु,अ वसर,अ ाय,प्र् योजन,घ ारके स दस्योंक ी संख्या, व्यवसाय, कार्य क्षेत्र, रुचि, फैशन आदि कारक प्रभावित भी करते हैं और इनको ध्यान में रख कर सही वस्त्र चुनाव किया जा सकता है।

वस्त्रों के चयन में प्रभावित करने वाले कारक या वस्त्र चयन में ध्यान रखने योग्य बिन्दु :

1. **व्यक्तित्व :** हमारे व्यक्तित्व को वस्त्र प्रभावित करते हैं। हम पूर्व में पढ़ चुके हैं कि वस्त्र व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब होते हैं। अत: वस्त्र चयन करते समय व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का ध्यान रखना चाहिये जैसे-त्वचा का रंग, कद, शारीरिक आकार एवं गठन और स्वभाव। वस्त्र व्यक्ति के शारीरिक आकार, कद व गठन को छिपाने एवं प्रभावशाली ढंग से उभारने का भी काम करता है। एक लम्बे कद के व्यक्ति के लिये ऐसे वस्त्रों का चयन करेंगे जिसमें खड़ी रेखाएं न हो बल्कि समतल रेखाएं हों क्योंकि खड़ी रेखाएं उसे और लम्बा कद का प्रतीत करवायेंगी जबकि समतल रेखाएं उसे सामान्य कद का दिखायेंगी, ठीक इसी प्रकार एक मोटी महिला के लिये बड़े प्रिन्ट वाले वस्त्र चयन करते हैं तो महिला का शारीरिक आकार और ज्यादा मोटा लगेगा अत: मोटापा छुपाने या कम दर्शाने के लिये छोटे व बारीक प्रिन्ट वाले वस्त्र उपयुक्त होंगे।

   व्यक्ति के स्वभाव चरित्र एवं भावनाओं का ध्यान रख कर भी वस्त्रों का चयन किया जाना चाहिये जैसे- धीर-गंभीर स्वभाव वाले व्यक्ति को सादे व कम चमकीले-भड़कीले वस्त्र पसंद आते हैं, जबकि चुलबुले स्वभाव वाले व्यक्ति को गहरा रंग और चमकदार व भड़कीले वस्त्र पसंद आते हैं।

   व्यक्ति की त्वचा का रंग भी वस्त्र चयन को प्रभावित करता है। गोरे रंग की त्वचा पर सभी प्रकार के रंगों के वस्त्र अच्छे लगते हैं, परन्तु जब त्वचा का रंग गहरा हो तो रंगों, प्रिन्ट और वस्त्रों का सावधानीपूर्वक चयन किया जाना चाहिये। वस्त्र व्यक्तित्व को उभारता है। अत: बेहद सावधानी के साथ वस्त्रों का चयन करना चाहिये।

2. **उम्र/आयु :**-व् यक्तिक ोअ ायुके अ नुसारह ीव स्त्रध ारणक रने चाहिये। हर तरह का वस्त्र हर उम्र में व्यक्ति को धारण नहीं करना चाहिये। उम्र के आधार पर धीरे-धीरे व्यक्ति की पसन्द और नजरिया वस्त्रों के प्रति बदलता रहता है। ये उपयुक्त भी है। इसलिये शिशुओं के लिये सूती, हलके एवं मुलायम व बारीक प्रिन्ट के वस्त्र उनकी कोमल त्वचा के अनुरूप होते हैं। बच्चों पर गहरे व चटकीले रंग के वस्त्र अधिक फबते हैं। किशोर एवं युवाओं पर प्रचलित फैशन के अनुसार रंग व स्टाइल के वस्त्र आकर्षक लगते हैं तथा वयस्क एवं वृद्धों पर हलके रंग, सौम्य डिजाइन और आरामदायक वस्त्र उपयुक्त लगते हैं।

3. **व्यवसाय :** प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत पहचान भी वस्त्रों से हो जाती है, उसी तरह से व्यक्ति के व्यवसाय और उसके कार्यक्षेत्र को भी उसको पोशाक से जाना जाता है। जैसे-डॉ. का सफेद कोट, वकील-काला कोट, सेना, पुलिस व यातायात पुलिस यूनीफॉर्म, एक मैनेजर, ऑफिसर की औपचारिक ड्रेस शर्ट, पैन्ट व टाई, वेटर की ड्रेस, अनेकों-अनेक व्यवसायों की अपनी ड्रेस होती हैं। और हम उनकी पोशाकों से पहचान जाते हैं कि अमुक व्यक्ति किस व्यवसाय से जुड़ा है और उसका कार्यक्षेत्र क्या है। कुछ विशिष्ट कार्यों के लिये विशिष्ट पोशाकें होती हैं, जैसे-आग अवरोधी पोशाक, अन्तरिक्ष में जाने वाले वैज्ञानिकों के 'अन्तरिक्ष सूट' और खेलकूद से सम्बन्धित पोशाकें जो

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

व्यक्ति की खेलों की रुचि के बारे में आसानी से बता देती हैं। अत: वस्त्र चयन करते समय व्यवसाय व कार्य-क्षेत्र का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिये।

4. **जलवायु :** भारत एक ऐसा देश है जहां पर दस कोस की दूरी पर भाषा बदल जाती है, ठीक वैसे ही जलवायु भी बदल जाती है। एक जैसा मौसम लम्बे समय तक एक स्थान पर नहीं रहता परन्तु स्थानविशेष की जलवायु वस्त्रों के चुनाव को प्रभावित करती है। ठण्डे इलाकों में (जहां हमेशा ठण्डा मौसम रहता है) ऊनी वस्त्रों का चयन करना उचित होता है बजाय कि अन्य प्रकार के वस्त्रों में समय और धन नष्ट किया जाये क्योंकि जलवायु के हिसाब से गर्म कपड़े ही ज्यादा इस्तेमाल होंगे। ठीक इसी प्रकार गर्मी वाले इलाकों में सूती व लिनन के वस्त्र एवं ऐसे वस्त्र जो पसीने को सोख लें, ऐसे वस्त्र ज्यादा उपयोगी सिद्ध होंगे। अत: स्थानविशेष की जलवायु के आधार पर वस्त्रों का चयन करना चाहिये। सर्दी, गर्मी व बरसात-ये तीन तरह के मौसम ज्यादा देखे जाते हैं। बरसाती इलाकों में ऐसे वस्त्रों का चयन हो जो जल्दी भीग कर जल्दी सूख जाते हैं व जिनकी देख-भाल आसान हो ऐसे स्थानों पर बरसाती व छातों की प्राथमिकता होती है।

5. **अवसर/प्रयोजन :** अवसर और स्थान के आधार पर वस्त्र चयन करने चाहिये। जब व्यक्ति अवसर/प्रयोजन व स्थान के अनुरूप वस्त्र का चुनाव नहीं करता है और वस्त्र नहीं पहनता है तो वह उपहास का कारण बन जाता है। अपनी दैनिक रोजमर्रा की क्रियाओं में और अपने शैक्षणिक स्थान व कार्य स्थल के लिये आरामदायक व सौम्य वस्त्रों का चयन किया जाना चाहिये जबकि किसी विशेष अवसर, जैसे-पार्टी, तीज-त्योहार व विवाह समारोह पर पहनने वाले वस्त्र विशेष डिजाइन एवं परिसज्जात्मक होने चाहिये। गहरे व चटक रंगों का चयन आपके सौन्दर्य और अवसर को सार्थक कर देते हैं।

   वस्त्रों में रंगों का चयन भी अवसर के अनुसार होना जरूरी है, जैसे-दु:ख या शोक एवं अस्पताल जाते समय हलके रंग और सफेद व सौम्य वस्त्रों तथा खुशी के अवसर पर चटकीले रंग, जैसे-लाल, केसरिया, हरा, नीला व गुलाबी और गोल्डन, महरुन आदि का चयन उपयुक्तम ानाज ाताह ै।अ त:अ वसरके अ नुसारव स्त्रोंक ाच यन आपके व्यक्तित्व को और अधिक निखार सकता है।

6. **फैशन :** आज के इस प्रगतिशील एवं परिवर्तनशील युग में इसके साथ न चले तो पिछड़ा हुआ माना जाता है और हम वहीं खड़े रह जाते हैं, समय जल्दी से बदल जाता है। जैसे-जैसे वस्त्र विज्ञान में क्रान्ति आई है वैसे-वैसे नित-नये फैशन का चलन तेजी से बढ़ और बदल रहा है। आज की युवा पीढ़ी प्रचलित डिजाइन व रंग के अनुसार वस्त्रों को पसन्द करती है। एक समय में जिस भी रंग और स्टाइल के परिधानों का चलन रहता है, उस समय में युवाओं की प्राथमिक पसन्द वही परिधान रहते हैं। फैशन समय-समय पर बदलते रहते हैं। अत: फैशन अपनाते समय ध्यान रखना चाहिये कि वस्त्र के डिजाइन, रंग व स्टाइल आपके व्यक्तित्व को निखारें, बिगाड़ें नहीं। फैशन के अनुसार वस्त्रों का उचित चयन व्यक्ति में आत्मविश्वास पैदा करता है। फैशन का प्रभाव किशोर-किशोरियों में सबसे ज्यादा देखने को मिलता है।

7. **लिंग :** वस्त्रों का चुनाव करते समय लिंग भी प्रभावी कारक है। लिंग के अनुसार वस्त्र चयन किये जाते हैं। स्त्री और पुरुषों के लिए वस्त्र चयन करते समय उनके शारीरिक ढांचे, रुचि, उम्र आदि का ध्यान रखा जाता है। पुरुषों के लिये पैंट, जीन्स, शर्ट, कुरता-पायजामा, शेरवानी, कोट, जैकेट आदि एवं स्त्रियों व बालिकाओं के लिये साड़ी, सूट, पैरेलल, लहंगा, फ्रॉक इत्यादि।

   स्त्रियों और बालिकाओं के लिये गहरे और चटक रंगों के वस्त्र तथा पुरुष व बालकों के लिए हलके रंगों के वस्त्र चयन किये जाते हैं। वस्त्र की डिजाइन भी स्त्री-पुरुषों के अनुसार ही लेना चाहिये।

8. **आय :** पारिवारिकअ ार्थिकक स्थितिव स्त्रोंक े च यनक ोप्र भावित करती है। वर्तमान स्थिति में देखें तो सामान्य तौर पर व्यक्तियों की खरीदारी की क्षमता बढ़ी ही है परन्तु हमें चाहिये कि जब हम वस्त्र खरीदने जायें तो अपनी आय और बजट का ध्यान रखें। बाजार में महंगे-से-महंगा वस्त्र उपलब्ध है और महंगे वस्त्र ज्यादा सुन्दर और आकर्षक होते हैं, लेकिन अगर आय को ध्यान में रख, बजट के अनुसार विवेक, बुद्धिमत्तापूर्ण और सूझ-बूझ से मूल्यों के उतार-चढ़ाव को ध्यान में रख कर वस्त्रों का चयन करके खरीदा जाये तो कम धन में भी अच्छे वस्त्र चुने और खरीदे जा सकते हैं।

वस्त्र खरीदने जाते समय अगर हम अपने पहले से खरीदे वस्त्रों को देख लें और ये सुनिश्चित कर लें कि वास्तव में किन और किस तरह के वस्त्रों की आवश्यकता है, ये अगर पहले से पता हो तो फिजूल खरीददारी और फिजूल खर्चे से बचा जा सकता है। वस्त्रों का चयन भी आसान और सुनियोजित हो जाता है।

उपरोक्त सभी बिन्दुओं का अगर वस्त्र चयन करते समय ध्यान रखा जाये तो वस्त्र चयन करना आसान हो जाता है।

वस्त्रों की खरीद : वस्त्र चयन करने के उपरान्त खरीदते समय भी कुछ बिन्दुओं का ध्यान रखना उतना ही अनिवार्य है जितना कि प्रभावित करने वाले कारक। खरीदते समय ये सुनिश्चित होना जरूरी है कि जितना पैसा खर्च करके हमने वस्त्र खरीदा है वो उतने मोल का लगभग हो और वस्त्र उचित मात्रा में प्राप्त हुआ हो। निम्नलिखित ऐसे बिन्दु हैं जिनका ध्यान रखा जाये तो वस्त्र की खरीदारी प्रभावशाली बन जाती है-

1. परिधान और पोशाक बनाने के लिये वस्त्र की मात्रा का निर्धारण पहले ही आवश्यक रूप से कर लेना चाहिये। वस्त्र को मीटर में नापा जाता है। किसी भी परिधान को बनाने के लिये कितना मीटर वस्त्र की आवश्यकता होगी ये पहले ही माप लेना चाहिये। जैसे-एक साधारण कुरते को सामान्य कद-काठी की लड़की के लिये बनाने के लिये

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सामान्य तौर पर 2 से 2.25 मीटर कपड़ा चाहिये, परन्तु कोई डिजाइन बनवाई जाये तो 25-50 से.मी. कपड़ा अतिरिक्त लेना होगा। वस्त्र की लम्बाई के साथ चौड़ाई का भी ध्यान रखना चाहिये। वस्त्र की चौड़ाई परिधान की डिजाइन और सज्जा को प्रभावित करती है।

सूती वस्त्र 36'', रेशमी वस्त्र 39'', ऊनी वस्त्र 54''-60'' और मानवकृत रेशे से बने वस्त्रों का अर्ज 35''-72'' तक होता है। इस तरह से ज्यादा अर्ज वाले वस्त्र में डिजाइन और परिसज्जा आसानी से हो जाती है।

2. वस्त्र चयन और खरीदते समय हमारी आय हमें प्रभावित करती है इसलिये वस्त्र खरीदने से पहले वस्त्र की कीमत जानना अत्यन्त आवश्यक है। कीमत के आधार पर ही हम वस्त्र चुनेंगे जो हमारे बजट में सूट करेगा वही मूल्य का वस्त्र हम ले सकेंगे।

वस्त्र की कीमत प्रति मीटर के हिसाब से लगाई जाती है और ये कीमत वस्त्र की किस्म और उसकी गुणवत्ता को परखने का मौका देते हैं। अच्छी और उच्च गुणवत्ता वाले वस्त्र की कीमत ज्यादा होगी चाहे वो किसी भी प्रकार का वस्त्र हो, जैसे-सूती, रेशमी, ऊनी व मानवकृत रेशों से बना वस्त्र। उच्च गुणवत्ता वाले रेशमी वस्त्र सूती से महंगे होते हैं। और सूती वस्त्र भी अपने व्यक्तिगत गुणों के कारण सस्ते व महंगे होते हैं। ये कीमत हम वस्त्र पर लगे लेबल से देख कर पता लगा सकते हैं। वैसे दुकानदार भी कीमत बता देते हैं।

3. जो कीमत वस्त्र की बताई जा रही है उसके आधार पर वस्त्र की गुणवत्ता है या नहीं, इस बारे में भी सचेत रहने की आवश्यकता है। वस्त्र की गुणवत्ता को जांचने के लिये कुछ सामान्य बिन्दु हैं जिनके आधार पर गुणवत्ता जांची जा सकती है :

(i) आपने विभिन्न रेशों के बारे में पढ़ा है और उनकी पहचान के बारे में भी पढ़ा है। अत: उनके आधार पर ये जांच की जा सकती है कि किस रेशे से वस्त्र बना है, और जो दुकानदार बता रहा है क्या वास्तव में वही रेशा है। क्योंकि आजकल कृत्रिम और मिश्रित रेशों से बने वस्त्रों का चलन बढ़ गया है।

(ii) वस्त्र की बनावट, बुनाई और वस्त्र के सतह की सज्जा को ध्यानपूर्वक जांचना चाहिये। कई बार वस्त्र पर डिजाइन पूरा नहीं छपता, कहीं-कहीं वस्त्र की सतह छूट जाती है। इसी तरह बुनाई सही नहीं होने के कारण बीच-बीच में धागे छूट जाते हैं और सतह रफ दिखती है।

(iii) वस्त्र के रंग के पक्केपन की जांच भी कर लेनी चाहिये कि वस्त्र का रंग पक्का है या नहीं। इसको जांचने के लिये रंगीन कपड़े को किसी भी सफेद रूमाल या सफेद कपड़े पर हलका गीला करके रगड़ने पर अगर रंग निकलता है तो रंग कच्चा है अन्यथा पक्का है।

(iv) वस्त्र की मजबूती व टिकाऊपन को जांचने के लिये वस्त्र को हाथों में लेकर हलका जोर लगाकर खींचने पर यदि वस्त्र ज्यों-का-त्यों रहता है अर्थात् वस्त्र टिकाऊ और मजबूत है। इसके विपरीत अगर छीज जाता है तो बुनाई भी सही नहीं और वस्त्र मजबूत व टिकाऊ भी नहीं।

(v) वस्त्र के ऊपर की गई परिसज्जा को जांच लें कि वस्त्र की सम्पूर्ण सतह पर एक समान परिसज्जा की गई है।

(vi) वस्त्र पर लगे लेबल को अवश्य पढ़ना चाहिये इससे हमें वस्त्र की कीमत, निर्माता, उसका पता, व्यापारिक संकेत या चिह्न, देखरेख के निर्देश, उपयोग में लिये गये तन्तु, अगर दो तन्तु हैं तो उनकी मात्रा, आदि।

वस्त्रों के चयन और खरीददारी को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन किया है। अत: वस्त्रों के चुनाव व सही और उपयुक्त खरीद हेतु निम्न बिन्दुओं का विश्लेषण अवश्य करें :

(i) क्या वास्तव में वस्त्र या परिधान की आवश्यकता है?

(ii) क्या यह आवश्यक, उपयोगी एवं उपयुक्त है मेरे लिये?

(iii) क्या यह विभिन्न अवसरों पर काम आयेगा या केवल एक ही अवसर पर उपयोग होगा?

(iv) क्या यह मेरी आय और बजट में है?

(v) कितने समय चलेगा तथा फैशन के अनुसार है या नहीं।

(vi) क्या मेरी शारीरिक संरचना के अनुसार है?

(vii) क्या इसका रखरखाव मेरे लिये सम्भव है?

(viii) कहीं ऐसा तो नहीं कि पहले से रखे परिधान से मिलता-जुलता रंग, डिजाइन है?

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. व्यक्तित्व, उम्र, जलवायु, व्यवसाय, अवसर व आय वस्त्रों के चयन को प्रभावित करने वाले कारक हैं।
2. व्यक्ति को स्थानविशेष व जलवायु के अनुसार वस्त्र पहनने चाहिये।
3. वस्त्रों से व्यक्ति के कार्य-स्थल व व्यवसाय की पहचान होती है।
4. शरीर की संरचना, प्रचलित फैशन, वस्त्र के रंग व डिजाइन के अनुसार वस्त्रों का चयन व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाते हैं।
5. कार्य के अनुसार ही व्यक्ति को वस्त्र धारण करने चाहिये।
6. वस्त्र चयन प्रक्रिया में आय और आयु का विशेष ध्यान रखना चाहिये।
7. वस्त्र की मात्रा, गुणवत्ता और कीमत, वस्त्र को खरीदते समय जानना चाहिये।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) एक लम्बे कद वाले व्यक्ति को शोभा देते हैं :

(अ) खड़ी रेखा वाले वस्त्र

(ब) समतल रेखा वाले वस्त्र

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(स) तिरछी रेखा वाले वस्त्र

(द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(ii) शिशुओं के लिये वस्त्र चयन करने चाहिये :

(अ) रेशमी व गहरे रंग के

(ब) कृत्रिम रेशे के व मोटे

(स) सूती, हलके व मुलायम

(द) ऊनी व भारी

(iii) आग बुझाने वाले व्यक्ति के लिह वस्त्र होने चाहिये :

(अ) टेरीलीन (ब) ऊनी

(स) पानी अवरोधी (द) आग अवरोधी

(iv) दु:ख एवं शोक के समय वस्त्र होने चाहिये :

(अ) गहरे रंग के (ब) सफेद एवं हलके रंग के

(स) चटकीले (द) विशेष डिजाइन वाले

(v) वस्त्रों की खरीदारी करते समय जानना आवश्यक है :

(अ) वस्त्र की मात्रा (ब) गुणवत्ता

(स) कीमत (द) उपरोक्त तीनों

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) गहरे रंग की त्वचा वाले को .... के वस्त्र पहनने चाहिये।

(ii) ठण्डे प्रदेशों में रहने वालों के लिये .... वस्त्र उपयुक्त रहते हैं।

(iii) व्यक्ति के व्यवसाय की पहचान उसके .... से होती है।

(iv) फैशन का सबसे अधिक प्रभाव .... के वस्त्रों में देखने को मिलता है।

(v) परिवार की .... वस्त्रों की चयन प्रक्रिया को प्रभावित करती है।

(vi) वस्त्र पर लगे .... को देख कर वस्त्र के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

3. वस्त्र की उपयुक्तता से क्या तात्पर्य है?

4. वस्त्र का चयन स्थानविशेष एवं जलवायु के अनुकूल होना चाहिये। क्यों?

5. प्रौढ़ एवं वृद्ध व्यक्ति के लिये किस प्रकार के वस्त्र उपयुक्त रहेंगे?

6. वस्त्र के चयन में आर्थिक स्थिति पर बल दिया जाता है। समझाइये।

7. फैशन का सबसे अधिक प्रभाव वस्त्र चयन पर पड़ता है। समझाइये।

8. विद्यालय जाने वाले बालक-बालिकाओं के वस्त्र चयन करते समय ध्यान रखने योग्य बिन्दुओं की विवेचना कीजिये।

9. वस्त्र की गुणवत्ता उसकी कीमत को प्रभावित करती है। स्पष्ट कीजिये।

10. वस्त्र खरीदते समय किन-किन प्रश्नों का विश्लेषण करेंगी।

11. वस्त्रों की खरीदारी करते समय किन-किन बिन्दुओं का ध्यान रखना चाहिये? विस्तार से समझाइये।

12. 'वस्त्रों का चुनाव' विषय पर निबन्ध लिखिये।

उत्तरमाला :

1. (i) ब (ii) स (iii) द (iv) ब (v) द

2. (i) हलके रंग (ii) गर्म व ऊनी

(iii) वस्त्रों (iv) किशोर-किशोरी

(v) आर्थिक स्थिति (vi) लेबल

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

23. वस्त्रों की सिलाई

Stitching of Garments

प्राचीन समय में आदिमानव अपने शरीर को बाहरी व प्राकृतिक आपदाओं से बचाने के लिये ढकता था। तन ढकने के लिये पशुओं की खाल, वृक्ष की छाल व पत्ते आदि का उपयोग करता था। ये सब वस्तुएं तन ढकने और आपदाओं से बचाव हेतु उपयुक्त थी। परन्तु जैसे-जैसे संस्कृति और सभ्यता का विकास होता गया, मानव भी विकसित होता गया, सोच से, संस्कारों से, सामाजिकीकरण से। उसमें भी व्यवस्थित ढंग से वस्त्र पहनने की इच्छा जागृत हुई। वह पत्तों व घास को आपस में गूंथ कर शरीर के आकार के अनुसार वस्त्र बनाने का प्रयास करने लगा। धीरे-धीरे मानव ने वस्त्र बुनना शुरू किया। रेशे से लेकर वस्त्र बनाने की प्रक्रिया मानव हाथ से सम्पन्न करने लगा। बिना काट-छांट के वस्त्रों को अपने शरीर पर लपेटने लगा। जैसे-जैसे समय बीतता गया मनुष्य विकास करता गया। इसी विकास की कड़ी में वस्त्र को अपनी शारीरिक संरचना और आकार के अनुसार काट-छांट के अपने हाथ से ही सिलने लगा और कटाई-छंटाई का जन्म हुआ। फिर मशीनी युग शुरू हुआ। सर्वप्रथम सिलाई मशीन का आविष्कार एक अंग्रेज द्वारा सन् 1790 में हुआ। इसका अनुसरण करते हुए एक फ्रांसीसी व्यक्ति ने सन् 1830 में भी मशीन बनाई। ये मशीनें सामान्य घरेलू उपयोग की वस्तु न बन पाई। इस क्षेत्र में सफलता (प्रथम सफलता) एलियास होती द्वारा निर्मित मशीन को प्राप्त हुई और सन् 1846में उन्होंने तत्सम्बन्धी एकस्व अधिकार भी प्राप्त किया। सिलाई मशीन को और ज्यादा उन्नत बनाने के क्षेत्र में अनेक व्यक्तियों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें ए.बी. विल्सन तथा आइजैक मेरिट सिंगर के नाम उल्लेखनीय हैं। सिंगर ने बाद में पैरों द्वारा संचालित सिलाई मशीन का आविष्कार करके कपड़े सिलना अधिक सरल बना दिया।

भारत में सर्वप्रथम सन् 1935 में ऊषा सिलाई मशीन का कारखाना स्थापित किया गया। बीसवीं शताब्दी में सिलाई मशीन उद्योग में अनगिनत नई तकनीकों का विकास हुआ है। बाजार में भी कई कम्पनियों की सिलाई मशीनें उपलब्ध है। कीमती से कीमती और सस्ती दरों पर भी मिलती है।

वर्तमान समय में आधुनिक सिलाई मशीनें अनेक सुविधाओं से परिपूर्ण है। इनमें सिलाई और कढ़ाई करने के साथ-साथ, काज बनाना, बटन टांकना, डोरी लगाना, रफू करना, खुले किनारों की बाइंडिंग करना, लेस लगाना आदि होता है। अब तो सिलाई मशीन बिजली द्वारा संचालित होती है। जहां पर अत्यधिक मात्रा में परिधानों को सिला जाता है, वहां मशीनें बिजली से ही संचालित होती है। इससे समय और श्रम की बचत होती है। वर्तमान समय में आज घर-घर सिलाई मशीनें आवश्यक रूप से मिल जाती है, जिनका उपयोग वस्त्रों की सिलाई व मरम्मत के लिये किया जाता है। अत: सिलाई मशीन के पुरजों के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त करें जिससे मशीन में होने वाली छोटी-छोटी खराबियों को हम स्वयं ठीक कर सकें।

सिलाई मशीन के विभिन्न पुरजे

1. **प्रैशर बार :** यह धातु की बनी छड़ है। इसके नीचे दबाव पद होता है।
2. **फीड** डॉग **:** यह दबाव पद छड़ के नीचे की ओर लगा होता है। ये एक पेच की सहायता से दबाव पद छड़ से जुड़ा होता है। यह आकार में दो छोटे जूतों के समान होता है। इसे 'पैर' भी कहते हैं। यह निडिल बार में लगा होता है। सिलाई के समय कपड़े को दबाता है।
3. **निडिल बार :** इसका भी सिरा एक ऊपर तथा एक नीचे की ओर होता है। नीचे के भाग में सूई लगाई जाती है।
4. **क्लैम्प स्क्रू/सूई कसने का पेच :** सूई को सूई छड़ में फिट करने के लिये इस पेच का प्रयोग किया जाता है। स्क्रू को ढीला करके सूई को ऊपर-नीचे कर सकते हैं। इसमें सूई लगाते समय सूई का गोल हिस्सा बाहर व चपटा अन्दर की ओर फिट करते हैं।
5. **स्पूल पिन :** यह एक या दो लम्बी गोल कीलों के समान होती है जो मशीन के ऊपरी भाग पर फिट होती है। इसमें धागे की रील लगाई जाती है।
6. **प्रैशर फुटबार लिफ्टर :** ये दबाव पद की छड़ पर एक घुमावदार रॉड लगी होती है, जिसके ऊपर-नीचे करने से दबाव पद ऊपर-नीचे होता है। सिलाई खत्म करने के बाद इसे ऊपर उठा देना

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चाहिये।

7. **थ्रेड टेंशन डिवाइस एवं डिस्कस :** यह भाग धागे के तनाव को नियंत्रित करता है। इसमें एक स्प्रिंग में दो गोल पत्तियों के बीच सामने की ओर एक पेच लगा होता है जिसे कसने व ढीला करने पर धागे का तनावक मय ाअ धिक कयाज ातह ै इ सलियेइ से' थ्रेडट ेंशन डिवाइस' कहते हैं। इनके पीछे की दो चकरियों को 'थ्रेड टेंशन डिस्कस' कहा जाता है। सामने का धागा इन्हीं चकरियों के बीच से निकाल कर टेकअप लीवर से निकाल कर सूई में पिरोया जाता है।
8. **टेकअप लीवर :** यह मशीन के मुख प्लेट पर लगा होता है। थ्रेड टेंशन डिस्कस से धागे को निकाल कर टेकअप लीवर में डालते हैं। सिलाई करते समय 'फ्लाई व्हील' के घूमने से यह लीवर ऊपर-नीचे होकर बखिया बनाने में सहायता करता है।
9. **फेस प्लेट :** यह मशीन का मुख (Face) है, जो सामने की ओर रहता है। इस पर ही टेकअप लीवर, थ्रेड टेंशन डिवाइस व डिस्कस आदि लगे होते हैं। इसी के नीचे सूई छड़ लगी होती है।
10. **स्लाइड प्लेट :** यह स्टील का बना चौकोर हिस्सा है जो निडिल प्लेट के साथ लगा होता है। इसे बाईं ओर सरकाकर आसानी से बॉबिन को निकाला और लगाया जा सकता है।
11. **निडिल प्लेट :** यह सूई और 'प्रेशर फुट' के नीचे स्टील की बनी प्लेट है जिसमें बने छेद में सूई जाकर बॉबिन से धागा ऊपर लाती है। सिलाई करते समय इसी छेद से सूई अन्दर बाहर आती-जाती है और टांके लगाती है। इसके नीचे ही कपड़े को खिसकाने वाले 'दाँते' लगे होते हैं।
12. **बॉबिन वाइन्डर :** यह फ्लाई व्हील के सहारे लगा एक छड़ के समान पिन है जिसके सहारे बॉबिन अर्थात् फिरकी में धागा भरा जाता है।
13. **टेशन रेगुलेटर :** यह मशीन के पीछे पर सामने की ओर एक लम्बा खांचा होता है। जिसके बीच एक स्क्रू लगा होता है, जिसे ऊपर-नीचे करने पर बखिया छोटा-बड़ा होता है। इस खांचे के साइड में 0 से 5 तक नम्बर अंकित होते हैं। 0 से ऊपर की ओर आने पर बखीया बारीक से मोटा होता जाता है यानी 5 नम्बर तक आने पर बखिया सबसे मोटा होता है और 3 नम्बर से नीचे जाने पर बखिया बारीक होता जाता है।
14. **फ्लाई व्हील :** यह गोल पहिया होता है, जिसको घुमाने पर ही मशीन चलती है। जब यह आगे की ओर घूमता है तभी मशीन चलती है और सिलाई कर पाना सम्भव है। इसे हत्थे (Handle) से घुमाया जाता है।
15. **बॉबिन और बॉबिन केस :** धागा लपेटने वाली फिरकी को बॉबिन और जिस डिब्बी में इसे रखा जाता है उसे बॉबिन केस कहा जाता है।

सिलाई मशीन की देख-भाल :

1. मशीन को सूखे एवं गर्म स्थान पर रखना चाहिये। नमी वाले स्थान में

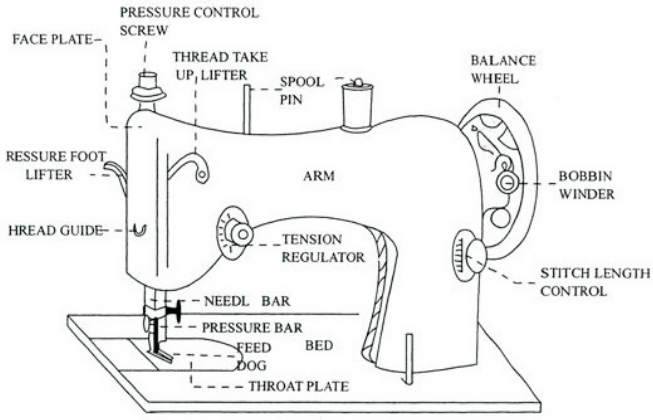

चित्र 23.1 सिलाई मशीन का चित्र

व्याप्त सीलन से मशीन के पुरजों में जंग लगने का भय रहता है।

2. समय-समय पर मशीन की साफ-सफाई करना अत्यन्त आवश्यक है। सिलाई करने से पहले और बाद में प्रत्येक बार मशीन को साफ करें, धूल-मिट्टी को हटाते रहें। अन्दर की तरफ (भीतरी पुरजों) वस्त्र के धागे फंस जाते हैं उन्हें भी निकालते रहना चाहिये। काम करने के बाद मशीन को ढक कर रखें।
3. सिलाई समाप्त करके सूई से धागा निकाल दें व दबाव पद के नीचे पुराना कपड़ा दबा दें।
4. मशीन की सफाई के बाद ही उसमें तेल डालें। तेल लगा कर मशीन को कुछ समय के लिये धूप में रखें।
5. समय-समय पर मशीन के पुरजों को खोलकर उन्हें साफ कर, तेल लगा कर धूप में रखें फिर मशीन में वापस फिट करें।
6. मशीन के तेल को मशीन में निश्चित स्थानों पर बने छिद्रों में डालना चाहिये। अनावश्यक मात्रा में तेल नहीं लगाना चाहिये। कुछ बूंदे ही पर्याप्त होती है तेल की। मशीन के सभी गतिशील पुरजों तथा जोड़ों में भी तेल लगाना चाहिये। तेल लगाकर मशीन को एक-दो मिनट तक लगातार चलाना चाहिये।

वस्त्रों को सिलने के लिये सिर्फ सिलाई मशीन की आवश्यकता नहीं होती अपितु उत्तम सिलाई के लिये और भी कई सहायक उपकरणों की भी आवश्यकता होती है। ये उपकरण उच्च गुणवत्ता वाले होने चाहिये। ये निम्न हैं :

1. नाप लेने हेतु उपकरण :

(i) मापक फीता : सिलाई क्रिया शुरू करने से पहले नाप लिया जाता है। इन्हें सामान्य बोलचाल की भाषा में इंची टेप कहा जाता है। ये लचीले व मुलायम प्रकृति के होते हैं और शारीरिक बनावट के अनुसार मुड़ने की क्षमता रखते हैं। इसके एक तरफ 1 इंच से 60 इंच और दूसरी तरफ 1 से 162 से.मी. तक के निशान लगे होते हैं। फीते के दोनों किनारों पर पीतल की पत्ती लगी होती है। फीते का प्रत्येक 1 इंच आठ भागों में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

विभक्त रहता है। इंच सूचक अंकों के मध्य एक बड़ी रेखा होती है जो आधा इंच की द्योतक होती है। प्रत्येक 1 से.मी. दस भागों में बंटा होता है। से.मी. सूचक अंकों के मध्य एक बड़ी रेखा होती है जो आधा सेंटीमीटर का नाप दर्शाती है।

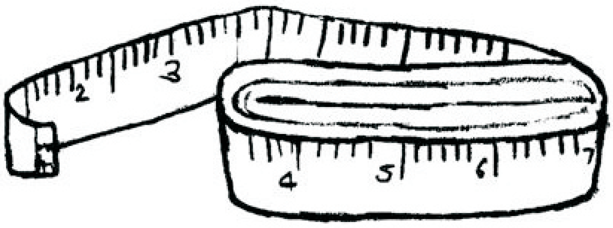

चित्र 23.2 इंच टेप

(ii) पेंसिल, रबर व नोट बुक : नाप लेने के बाद उनको लिखने के लिये एक नोट बुक, पेंसिल की आवश्यकता होती है। गलतियों को ठीक करने के लिये रबर की आवश्यकता होती है।

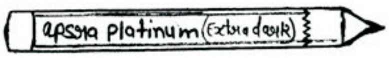

चित्र 23.3 पेंसिल

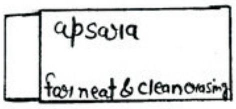

चित्र 23.4 रबर

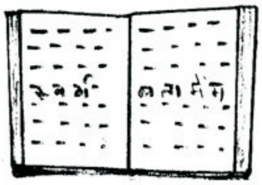

चित्र 23.5 नोट बुक

2. रेखांकन के निमित्त :

(i) कटिंग व ड्राफ्टिंग टेबल : रेखांकन तथा कटिंग टेबल की बनावट विशेष प्रकार की होती है। इसकी सतह चिकनी बिना जोड़ वाली होनी चाहिये। इस पर मिल्टन क्लॉथ खींचकर चारों तरफ कसकर लगा दिया जाता है। इसकी ऊँचाई तीन से साढ़े तीन फीट और लम्बाई पाँच फीट होनी चाहिये, जो पैंट, हाउस कोट, नाइटी जैसे लम्बे वस्त्रों के रेखांकन के लिये उचित हो। टेबल के बायीं या दायीं तरफ दराज बना होना चाहिये जिससे उसमें आवश्यक सामग्री रखी जा सके।

(ii) भूरा कागज/ड्राफ्टिंग कागज : पहले वस्त्रों के आरेखन को भूरे कागज पर बनाया जाता है। सही होने पर वस्त्र पर रेखांकित किये जाते हैं। और उसके बाद वस्त्र की कटाई की जाती है। इससे गलती होने पर वस्त्र खराब नहीं होता, कागज ही खराब होता है।

(iii) ट्रेसिंग व्हील : यह लकड़ी के हैंडल में लगा धातु की छड़ के साथ दाँतों वाला छोटा पहिया है। कपड़े पर ड्राफ्टिंग उतारने और सिलाई के निमित्त निशान लगाने के काम आता है। इससे निशान लगाना आसान होता है।

(iv) टेलर्स चॉक : कपड़ों पर निशान लगाने के लिये उपयोग में लिये जाते हैं। ये चौकोर, नुकीली व रंगीन बट्टी के रूप में मिलती है। इनसे निशान लगाना आसान होता है। इन्हें आसानी से मिटाया भी जा सकता है।

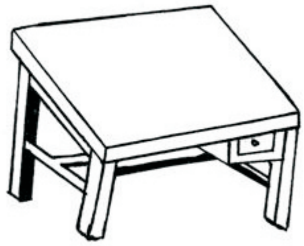

चित्र 23.6 कटिंग व ड्राफ्टिंग टेबल

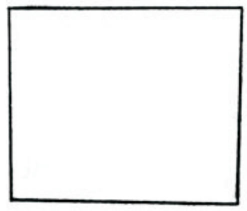

चित्र 23.7 भूरा कागज

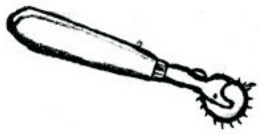

चित्र 23.8 ट्रेसिंग व्हील

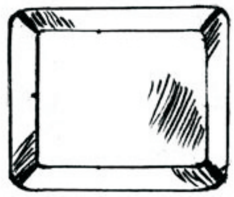

चित्र 23.9 टेलर्स चॉक

3. कटिंग हेतु :

(i) साधारण कैंची और शिअर्स : अलग-अलग प्रकार के वस्त्रों को काटने के लिये अलग-अलग तरह की कैंचियों का प्रयोग किया जाता है। साधारण कपड़ा काटने के लिये 4 इंच से 6इंच की कैंची का उपयोग सामान्यत: किया जाता है। मोटे व भारी तथा ऊनी कपड़ों को काटने के लिये 6इंच से 9 इंच तक लम्बी कैंची का उपयोग किया जाता है, इन्हें शिअर्स कहते हैं। इन शिअर्स के हैंडल विशेष प्रकार से थोड़ा झुके रहते हैं। अंगुलियों की अच्छी पकड़ के लिये इनके सिरे पर काफी बड़ा घेरा होता है। इतनी बड़ी कैंची से कपड़ा काटते वक्त उसे उठाने की आवश्यकता नहीं होती है।

(ii) छोटी कैंची : हाथ की व मशीन की सिलाई करते समय छोटी कैंची की आवश्यकता होती है। इनसे धागा काटा जाता है और कपड़े की हलकी-फुलकी काट-छांट भी कर सकते हैं। इसके अलावा तुरपाई करते समय, कढ़ाई करते समय, काज-बटन टांकते समय छोटी कैंची उपयोग में लायी जाती है।

(iii) पिंकिंग शिअर्स : यह एक विशेष प्रकार की कैंची है, जो वस्त्र के किनारों को परिसज्जित करने के काम आती है। इसके दोनों किनारे दाँतेदार, आरी के समान होते हैं। कपड़े के खुले किनारों को पिंकिंग शिअर्स से काटने के बाद किनारों की लॉकिंग या इंटर लॉकिंग नहीं करनी पड़ती और किनारों से धागे भी नहीं निकलते हैं।

चित्र 23.10 - कैंची

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4. सिलाई के निमित्त :

(i) सिलाई मशीन : वस्त्र को सिलने के लिये सिलाई मशीन की आवश्यकता होती है। आजकल बाजार में हाथ से चलने वाली, पैर से चलने वाली और बिजली से चलने वाली मशीनों के अलावा अतिरिक्त और विशेष कार्य करने वाली मशीनें भी उपलब्ध हैं। जैसे-काज बनाना, बटन टांकना, कढ़ाई व रफू करना आदि।

(ii) सूइयां : कपड़े की बनावट के अनुसार सूइयों का चुनाव करना चाहिये। हाथ से तुरपाई व सिलाई करने के लिये अलग-अलग सूइयां होती है। हलके व पतले कपड़ों के लिये बारीक व मोटे कपड़ों के लिये मोटी सूई का उपयोग करना चाहिये। सूई ऐसी हो जिनकी नोक तेज हो और जंग न लगा हो।

चित्र 23.11
सूइयां

(iii) धागे : सिलाई करते समय विभिन्न प्रकार के धागों की आवश्यकता होती है। धागों का रंग कपड़े के रंग जैसा ही होना चाहिये। कच्ची-पक्की सिलाई, कढ़ाई करने के लिये अलग-अलग धागों का प्रयोग करना चाहिये। धागे मजबूत होने चाहिये। धागों का रंग भी न निकले वस्त्र धोने पर।

(iv) अंगुश्तान : हाथ से सिलाई करते समय अक्सर सूई अंगुली में चुभ जाती है और बार-बार चुभने से अंगुली की त्वचा खुरदरी व दर्द युक्त हो जाती है। इससे बचने के लिये अंगुली में अंगुश्तान पहन लेना चाहिये। ये प्लास्टिक, धातु, चमड़े, रबड़ आदि के बने होते हैं। अंगुली के आकार का ही अंग[illegible]।

चित्र 23.12
अंगुश्तान

(1) सूई कुशन : सिलाई करते समय ढेर सारी सूइयां हमारे आस-पास होती है, उनको सहेज कर रखना आवश्यक होता है। इसका सबसे अच्छा तरीका है सूई कुशन। इसमें सूइयां सुरक्षित रहती हैं जंग नहीं लगता व खोती भी नहीं है।

5. इस्तिरी के निमित्त :

(i) इस्तिरी : कपड़े की सिलावटों को दूर करने और सीधा करने के लिये प्रैस करने की आवश्यकता होती है। इस्तिरी की निचली सतह चिकनी होती है। इसे गर्म करके कपड़े पर फेरा जाता है। प्रेस को प्रत्यक्ष आग, कोयला एवं बिजली से गर्म किया जाता है। ये कई प्रकार की होती हैं-साधारण, स्वचालित, वाष्प युक्त होती है। ये दो प्रकार की होती है- कोयले से गर्म होने वाली और बिजली से गर्म होने वाली।

(ii) इस्तिरी टेबल : इस्तिरी करने के लिये टेबल की आवश्यकता होती है जिस पर कपड़ा फैला कर इस्तिरी की जा सके। टेबल गद्दीदार भी होती है और बिना गद्दी वाली भी होती है। बिना गद्दी वाली टेबल पर मोटा कपड़ा बिछाना आवश्यक होता है।

इनके अलावा स्पंज, ब्रश और पानी की कटोरी आदि की भी आवश्यकता होती है। प्रेस करने से पहले वस्त्रों को ब्रश से झाड़ा जाता है और वस्त्र को स्पंज से हलका नम किया जाता है।

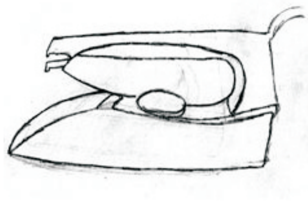

चित्र 23.13 प्रेस

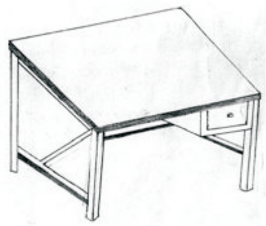

चित्र 23.14 इस्तिरी टेबल

सिलाई के चरण :

सिलाई सम्बन्धित उपकरणों एवं सिलाई मशीन के बारे में आधारीय जानकारी के पश्चात् वस्त्रों की उत्तम सिलाई के लिये महत्त्वपूर्ण चरणों के बारे में जानना आवश्यक है। क्रमबद्ध चरणों को ध्यान में रखते हुए अच्छी सिलाई कर पायेंगे और समय व शक्ति के अपव्यय से भी बचाव होगा। ये चरण निम्नलिखित हैं :

सिलाई के चरण
- **नाप लेना**
- **ड्राफ्टिंग व पेपर पैटर्न तैयार करना**
- **कपड़ा तैयार करना**
- **ले-आउट व कटिंग करना**
- **सिलाई करना**

(i) नाप लेना : सिलाई से पूर्व और सर्वप्रथम जिस भी व्यक्ति की पोशाक बनानी है उसके नाप होने आवश्यक है। वस्त्र की सही फिटिंग शरीर के सही नाप पर आधारित होती है। अत: सिलाई से पहले व्यक्ति के शरीर का नाप सावधानीपूर्वक सही विधि से लिया जाना चाहिये। वस्त्र की फिटिंग अधिकांशत: पहनने वाले की इच्छा पर निर्भर करती है कि वह तंग फिटिंग चाहता है या ढीली। प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक रचना में अन्तर होता है अत: व्यक्तिविशेष का नाप लेना आवश्यक है। किसी भी व्यक्ति की पोशाक बनाने हेतु नाप लेते समय निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखना आवश्यक है-

* नाप लेते समय व्यक्ति को सीधा खड़ा रहना चाहिये झुक कर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

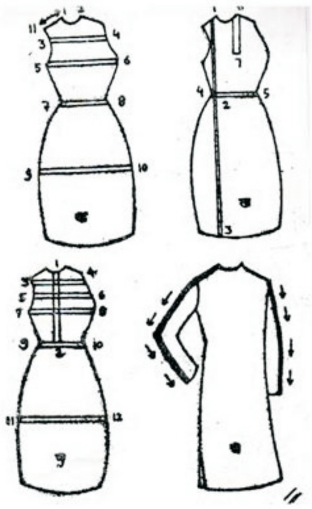

चित्र 23.14 शरीर के आड़े व सीधे नाप

नहीं।

* व्यक्ति को नार्मल स्थिति में खड़े रहना चाहिये, न ज्यादा तन कर, न झुक कर, न सांस रोक कर और न ही ज्यादा शरीर ढीला छोड़ कर।
* नाप एक ओर से लेवें जैसे–ऊपर से नीचे, दायें से बायें। व्यक्ति को बार–बार नहीं घुमाना चाहिये।

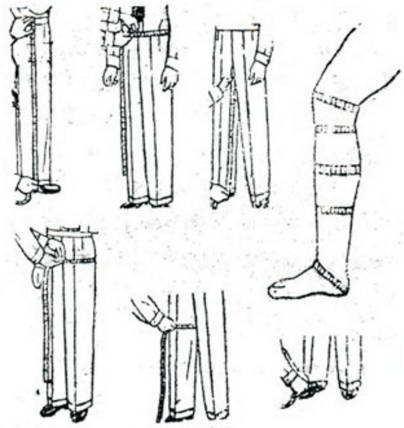

चित्र 23.15 कमर से नीचे के लम्बवत् व गोलाई के नाप

* नाप लेने के लिये मुलायम इंची टेप का प्रयोग करें। ये भी ध्यान रखें कि इंची टेप उलट न जाये अन्यथा नाप में फर्क आ जाता है।
* पोशाक के अनुसार नाप क्रमबद्ध तरीके से लेने चाहिये।
* पोशाक बनाने हेतु सभी आवश्यक नाप, जैसे–लम्बाई, चौड़ाई, तीरा, कमर, बाँहों की लम्बाई, मोहरी की चौड़ाई, गले की गहराई आदि सही लेवें, जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये।

(ii) ड्राफ्टिंग व पेपर पैटर्न तैयार करना : ड्राफ्टिंग पुराने अखबार और ब्राउन पेपर पर बनानी चाहिये जिससे किसी भी प्रकार की गलती होने पर ठीक किया जा सके। नाप के पश्चात् लिये गये नाप के आधार पर ब्राउन पेपर या पुराने अखबार पर पोशाक की आकृति बना ली जाती है, जिसे आरेखन या ड्राफ्टिंग कहा जाता है। आरेखन बनाते समय पेंसिल, रबर, इंची टेप व स्केल की आवश्यकता होती है। सारे कर्व, गोलाई व गहराई को अच्छे से बना लेना चाहिये। अगर आरेखन सही है तो तैयार पोशाक भी सही बनेगी। अत: पूर्ण तसल्ली के बाद आरेखन को काट लेना चाहिये। कटिंग के बाद जो पैटर्न या आकृति हमारे हाथ आती है उसे 'पेपर पैटर्न' कहा जाता है। इसी पेपर पैटर्न को वस्त्र पर रख कर ड्रा करते हैं तत्पश्चात् वस्त्र की कटिंग करते हैं। ड्राफ्टिंग निम्न तरीकों से की जाती है।

a. छोटे स्केल की ड्राफ्टिंग : इस प्रकार की ड्राफ्टिंग नोट बुक या फाइल पर बनाई जाती है। यह छोटा स्केल जैसे– 1 इंच=1 से.मी. मानकर की जाती है।

b. पूरे स्केल की ड्राफ्टिंग : यह ड्राफ्टिंग इंच व सेंटीमीटर के नापों में ब्राउन पेपर या अखबार पर तैयार की जाती है।

(iii) कपड़ा तैयार करना : कपड़े की कटिंग और सिलाई से पूर्व कपड़े को तैयार करना आवश्यक है। अधिकांश सूती वस्त्र धुलाई के पश्चात् सिकुड़ जाते हैं। ऐसे में अगर बिना सिकुड़न निकाले वस्त्र की कटिंग करके सिल दिया जाता है और तत्पश्चात् धोया जाये तो जिस नाप से पोशाक को सिला है वो नाप कपड़े के सिकुड़ने के कारण कम हो जाते हैं, जैसे–लम्बाई कम हो जाती है, चौड़ाई से सिकुड़ कर वस्त्र तंग हो सकता है। इसलिये वस्त्र को सर्वप्रथम बालटी में इतने पानी में डुबो कर रखें कि वस्त्र डूबा रहे कम से कम 2 घण्टे। उसके बाद वस्त्र को पानी से निकालें और अच्छे से निचोड़ कर सुखा दें। सूखने पर और हलकी नमी रहते वस्त्र को प्रेस करें। वस्त्र ले–आउट के लिये तैयार।

(iv) ले–आउट व कटिंग करना : कपड़े को कटिंग टेबल या समतल फर्श पर सही तरीके से तहों और बिना तहों के (आवश्यकतानुसार) फैला लें। कपड़े को लम्बवत रखना चाहिये फिर तैयार सभी पेपर पैटर्न के हिस्सों को कपड़े पर सेट करें। जब सारे हिस्से सेट हो जायें तब प्रत्येक हिस्से को चॉक की सहायता से निशान लगायें। वस्त्र पर पेपर पैटर्न बिछाते समय वस्त्र की लाइन, चैक व प्रिन्ट का ध्यान रखना चाहिये। रेखाओं व प्रिन्ट की दिशा आदि का ध्यान रखना आवश्यक है। कटिंग से पूर्व देख लें कि पैटर्न के सभी भाग सही ढंग से रखे गये हैं तथा कोई छूट तो नहीं गया। इसके बाद ही लगाये गये निशान पर कैंची से काटे। जब पैटर्न को कपड़े पर बिछाते हैं तब दो तरह के निशान वस्त्र पर लगाये जाते हैं एक वो रेखाएं जिन पर हमें सिलाई करनी है और दूसरी वे रेखाएं जिन्हें हमें काटना है। सिलाई रेखा के बाद दबाव या हेम (तुरपाई) के निमित्त 1/2 इंच से लेकर 2 इंच तक के अतिरिक्त निशान लगाये जाते हैं जिन्हें ही कटिंग रेखाएं कहते हैं।

परिधान की सही कटाई और आकर्षक फिटिंग का रहस्य पैटर्न या ड्राफ्टिंग होता है।

(1) सिलाई : सही कटिंग के बाद कपड़े के सभी चिह्नित भागों को

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सिलाई रेखाओं पर मशीन चलाते हुए आपस में जोड़ कर सफाई के साथ सिलें।अ ावश्यकतानुसारट ंकोंक ाप्रयोगक रतेह ुएप रिधानक ापूर्ण करें

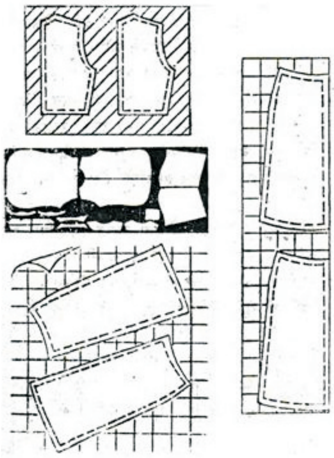

चित्र 23.6

विभिन्न वस्त्रों पर पैटर्न बिछाना

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. घरेलू उपयोगी एवं पहनने योग्य वस्त्रों की सिलाई व मरम्मत करने के लिये सिलाई मशीन का उपयोग किया जाता है।
2. निडिल प्लेट, स्लाइड प्लेट, प्रैशर फुट, टेकअप लीवर, थ्रेड टेंशन डिवाइस, स्पूल पिन, बॉबिन, बॉबिन बाइंडर, बॉबिन केस, फ्लाई व्हील एवं हैंडल- ये उपरोक्त सभी सिलाई मशीन के मुख्य पुरजे हैं।
3. समय-समय पर सिलाई मशीन की सफाई करनी चाहिये।
4. सिलाई मशीन में समय-समय पर तेल देना चाहिये।
5. काम करने के पश्चात् मशीन को ढक कर रखना चाहिये।
6. पोशाक बनाने के लिये सिलाई मशीन, कटिंग, नाप व प्रेस हेतु अन्य सामग्री की भी आवश्यकता होती है।
7. सही और उत्तम सिलाई के लिये आवश्यक चरण- नाप लेना, ड्राफ्टिंग बनाना, कपड़ा तैयार करना, ले-आउट, कटिंग व सिलाई करना।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) सिंगर मशीन का आविष्कार कब किया गया था :

(अ) सन् 1830 में (ब) सन् 1848में

(स) सन् 1891 में (द) सन् 1935 में

(ii) सन् 1935 में किस मशीन का कारखाना भारत में स्थापित किया गया था :

(अ) साधारण मशीन (ब) सिंगर मशीन

(स) उषा मशीन (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iii) धागा लपेटने वाली फिरकी को कहते हैं :

(अ) बॉबिन (ब) बॉबिन केस

(स) स्पूल पिन (द) बॉबिन बाइंडर

(iv) वस्त्र की उत्तम सिलाई के आवश्यक चरण है :

(अ) नाप लेना (ब) ड्राफ्टिंग करना

(स) ले-आउट करना (द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) हाथ की सिलाई करते समय दाएं हाथ की बड़ी अंगुली में .... पहना जाता है।

(ii) सूई को मशीन में फिट करने की चुटकी को .... कहते हैं।

(iii) वस्त्र पर पेपर पैटर्न के सभी हिस्सों को सही ढंग से बिछाना .... कहलाता है।

(iv) नाप लेने हेतु .... का प्रयोग करते हैं।

(v) मशीन में समय-समय पर .... देना आवश्यक है।

3. स्पूल पिन किसे कहते हैं?

4. सिलाई मशीन के निम्नलिखित अंगों का क्या महत्त्व है : प्रेशर फुटबार लिफ्टर, टेकअप लीवर, बॉबिन बाइंडर।

5. कैंचियां तथा शिअर्स से आप क्या समझती हैं।

6. सिलाई मशीन के विभिन्न पुरजों तथा उनकी उपयोगिता का वर्णन कीजिये।

7. आरेखन या ड्राफ्टिंग किसे कहते हैं?

8. नाप लेना क्यों महत्त्वपूर्ण है और नाप लेते समय किन बातों का ध्यान रखेंगी?

9. कटाई के निमित्त वस्त्र को तैयार करने से आप क्या समझती हैं?

10. ले-आउट से आप क्या समझती हैं? इसके महत्त्व की चर्चा कीजिये।

11. सही व उत्तम सिलाई के आवश्यक चरणों का विस्तृत वर्णन कीजिये।

उत्तरमाला :

1, (i) अ, (ii) स, (iii) अ, (iv) द

2. (i) अंगुस्तान, (ii) क्लैम्प स्क्रू, (iii) ले-आउट,

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

24. तैयार परिधान

Readymade Garments

वर्तमान समय में वस्त्र उद्योग में जितना अधिक विकास तेजी के साथ हुआ है उतना अन्य किसी उद्योग में देखने को नहीं मिलता। वस्त्र विज्ञान के क्षेत्र में जितना अधिक वस्त्रों के चयन एवं खरीदारी का महत्त्व है उससे कहीं अधिक महत्त्व वस्त्रों की सिलाई का है। आज का मानव शरीर को ढकने के साथ-साथ आराम भी परिधानों में ढूंढ़ता है। प्राचीन समय में वस्त्रों से परिधान सिलने व बनाने का प्रचलन घर में ही था, आवश्यक और आधारभूत परिधान गृहिणी घर पर ही सिल लिया करती थी। धीरे-धीरे ये प्रचलन सिलाई मशीन के आविष्कार के साथ बढ़ता गया। कुछ परिधान, जैसे-जांघिया, पायजामा, शमीज, पेटीकोट, साधारण फ्रॉक और कुरते घर पर ही सिले जाने लगे परन्तु कुछ परिधान जो पुरुषों के द्वारा विशेष पहने जाते थे, जैसे शर्ट, पैन्ट, जैकेट और कोट और स्त्रियों के विशेष वस्त्र, जैसे-ब्लाउज, फैन्सी फ्रॉक, डिजाइनदार सलवार सूट आदि परिधान दर्जी द्वारा सिले जाते थे। इस प्रकार परिवार की पोशाक सम्बन्धी आवश्यकताएं पूरी होने लगी परन्तु उपरोक्त पोशाक बनाने की प्रक्रिया में समय और शक्ति का अतिरिक्त व्यय व अपव्यय होता था।

जैसे-जैसे समय बदलता गया बाजार में सिले-सिलाये परिधान उपलब्ध होने लगे। वस्त्र तकनीकी विकास एवं औद्योगिकीकरण के कारण तैयार पोशाक या सिले-सिलाये वस्त्रों की मांग एवं उपलब्धता में वृद्धि होने लगी। वर्तमान समय में मानव ज्यादातर तैयार पोशाक ही पहनना पसन्द करता है। इन तैयार पोशाकों का प्रचलन इतना ज्यादा बढ़ गया है अनेकों-अनेक कम्पनी और ब्रॉन्ड्स के परिधान बाजार में उपलब्ध हैं। यह परिवर्तन कई कारणों से आया। जैसे-दर्जी के द्वारा समय पर पोशाक तैयार करके न देना, स्त्री और पुरुष दोनों का कामकाजी होना, प्रचलित फैशन, डिजाइन और स्टाइल की पोशाकों की उपलब्धता, कीमत, समय एवं श्रम की बचत। इसके अलावा सबसे बड़ा कारण कि बाजार में प्रत्येक नाप और लगभग सारी शारीरिक संरचनाओं के आधार पर तैयार पोशाकों की उपलब्धता। उपरोक्त सभी कारणों ने तैयार पोशाक उद्योग को एक बड़े पैमाने पर व्यवसाय का रूप दे दिया।

सामान्य और सरल भाषा में सिले-सिलाये परिधान या तैयार पोशाक वह है जो हमें कम समय में, उपलब्ध धन में, उचित व उपयुक्त नाप वाली, जिसकी देख-भाल आसान हो, हमारी आवश्यकता की तत्काल पूर्ति करती हो, व्यक्ति के व्यक्तित्व के अनुकूल हो और पहनने पर आरामदायक हो।

तैयार पोशाक के चयन एवं खरीदने के आधार

(i) उम्र : सिले-सिलाये वस्त्र बाजार में शारीरिक नाप के साथ-साथ उम्र के अनुसार भी उपलब्ध होते हैं। अत: जब तैयार पोशाक खरीदने जाये तो विशेष तौर से बच्चों की एकदम सही उम्र का पता होना आवश्यक है अन्यथा बच्चे की पोशाक छोटी या बड़ी आ सकती है जिसे बदलवाने या लौटाने का श्रम करना पड़ सकता है। इससे समय और शक्ति, दोनों का अपव्यय होता है।

(ii) शरीर नाप : सही उम्र के साथ जिस व्यक्ति, बच्चे के लिये पोशाक खरीदी जा रही है उसके शारीरिक माप भी अत्यन्त आवश्यक होते हैं क्योंकि एक ही उम्र के होने के बावजूद दो बच्चों के शारीरिक नाप अलग-अलग हो सकते हैं जैसे-लम्बाई, सीना, कमर, कंधे आदि इसलिये तैयार पोशाक खरीदते समय उम्र और शरीर का सही माप होना जरूरी है। इसके लिये बाजार जाते समय बच्चे के शरीर के विभिन्न नाप ले लेने चाहिये जैसे-बालक शर्ट और पैंट के लिये, शर्ट के नाप, सीना, लम्बाई, बाजू की लम्बाई, कंधे आदि (तीरे का नाप) पैंट की नाप- कमर एवं लम्बाई। इस तरह से सही नाप के साथ जाने पर बच्चे के लिये उचित नाप और फिटिंग की पोशाक चयन करना और खरीदना आसान होगा।

तैयार परिधान जांचने के बिन्दु

उपरोक्त दो अतिमहत्त्वपूर्ण आधार के अलावा भी ऐसे कई बिन्दु हैं, जिनको जांचने के बाद ही पोशाक खरीदनी चाहिये :

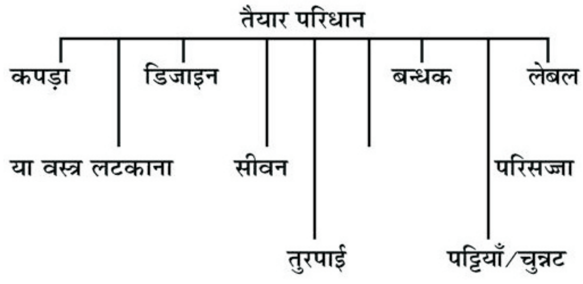

चित्र 24.1

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(i) वस्त्र : आपने रेशों व उनसे बने वस्त्रों की विशेषताओं, बुनाई, रंगाई-छपाई आदि की विधियों के बारे में जाना है और रेशों की पहचान करने में सक्षम हैं। अतः इन सबके आधार पर कपड़े में निम्न-गुणों की जांच करें :

(i) वस्त्र का रेशा

(ii) वस्त्र की डिजाइन

(iii) वस्त्र के रंग के पक्केपन की जांच

(iv) वस्त्र की परिसज्जा, मजबूती व टिकाऊपन

(v) वस्त्र की लम्बवत् कटाई

(vi) प्रचलित फैशन के अनुसार वस्त्र, प्रिन्ट व रंग

(ii) लटकाना : ऐसी दुकान या शोरूम से पोशाक लेने जायें जहां ट्रायल कक्ष हो जहाँ आप पोशाक पहन कर देख सकें तथा खरीदें, जिससे ये पता चल जाता है कि आप पर वो पोशाक, रंग, फिटिंग, स्टाइल के आधार पर जंचती है या नहीं। पोशाक पहनने से उसके सन्तुलन का भी पता चलता है। आप अपने अलावा, अपने साथ मां या अपनी दोस्त को साथ लेकर जायें और राय करके पोशाक का चयन करें। अगर ट्रायल कक्ष न हो तो अपने ऊपर लगा कर देखें।

(iii) पोशाक की डिजाइन एवं स्टाइल : बाजार में एक ही पोशाक कई रंग, प्रिन्ट, डिजाइन व स्टाइल में उपलब्ध होती है। ऐसे में पोशाक चयन करना मुश्किल हो जाता है। हमें अपनी रुचि एवं प्रचलित फैशन के साथ-साथ अपनी शारीरिक संरचना का भी विशेष ध्यान रखते हुए पोशाक की डिजाइन व स्टाइल का चयन करना चाहिये ताकि हमें सन्तुष्टि अनुभव हो अन्यथा पोशाक आकर्षक लगने के स्थान पर भद्दी लगने लगेगी।

(iv) सीवन : तैयार पोशाक में सीवन की जांच पोशाक को उलटा करके कर लेनी चाहिये, जैसे-

(i) धागे का रंग पोशाक के रंग के अनुसार हो।

(ii) धागे का रंग पक्का व मजबूत है।

(iii) सीवन इकसार, मजबूती व सफाई से लगी हो।

(iv) उचित प्रकार की सीवन का प्रयोग किया गया है और सीवन पास-पास लगी है।

(v) जिन वस्त्रों के धागे निकलते हैं किनारों से उन पर इन्टरलॉक की हुई है।

(vi) पोशाक में सीवन हेतु छोड़ा गया कपड़ा पर्याप्त है ताकि आवश्यकता पड़ने पर पोशाक की चौड़ाई-लम्बाई बढ़ाई जा सके।

(vii) सज्जा हेतु लगाई गई सीवन सफाई से लगी है क्योंकि ऐसी सीवन पोशाक में साफ दिखाई देती है।

(v) तुरपाई : तैयार पोशाक में तुरपाई एक महत्त्वपूर्ण टांका है। पोशाक में ये जांच लेना चाहिये कि तुरपाई के टांके एक समान तथा बराबर दूरी, स्वच्छ व सुन्दर, व पोशाक के सीधी तरफ ये टांके दिखे नहीं। बारीक टांके लगे हों। तुरपाई का धागा मजबूत व टिकाऊ हो ताकि वस्त्र की तुरपाई शीघ्र न खुले। पोशाक पर कम से कम 2''-3'' तक की तुरपाई की गयी हो जिससे आवश्यकता पड़ने पर उसे खोला जा सके।

(vi) पट्टियां एवं चुन्नट : तैयार पोशाक की पट्टियां व बटन पट्टियां बेहद महत्त्वपूर्ण होती है। ये पट्टियां गले, बांह, कमर और शर्ट में सामने की लगी बटन पट्टी का निरीक्षण सावधानीपूर्वक कर लेना चाहिये। पट्टियां पर्याप्त मात्रा में सफाई से लगी हुई है, उन पर लगी सीवन सफाई के साथ बिल्कुल सीधी है, टांके बराबर व समान दूरी पर लगे हैं। ऊपर व नीचे की दोनों पट्टियों की लम्बाई समान हो।

पोशाक में घेराव लाने के लिये चुन्नटों का उपयोग किया जाता है। फ्रॉक, स्कर्ट, लहंगे आदि में सुन्दरता लाने के लिये चुन्नट डाली जाती है इनकी भी जांच करना जरूरी है। चुन्नट एक समान व समान दूरी पर सावधानीपूर्वक लगाये गये हो। चुन्नट डालते वक्त सीवन की तरफ पर्याप्त कपड़ा हो। ऐसा न हो कि पोशाक के घेरे में कहीं चुन्नट ज्यादा और कहीं कम डले हो। समान दूरी व सफाई के साथ सावधानीपूर्वक डाली गई चुन्नटें पोशाक को प्रभावी बनाती है।

(vii) बंधक : पोशाक पर लगी बटन पट्टियों की जांच के साथ-साथ इस बात की भी जांच कर लेनी चाहिये कि उपयुक्त व उचित बंधकों का उपयोग किया गया है क्योंकि ये बंधक पोशाक के दो हिस्सों को जोड़ने का कार्य करते हैं।

* पोशाक पर लगे बटन और काज की अच्छे से जांच कर लेनी चाहिये, जैसे-बटन का रंग पोशाक के अनुरूप है, काज का नाप ज्यादा छोटा या बड़ा न हो, बटन व काज सफाई और मजबूती से लगाये व बनाये गये हों। पोशाक पर कुछ अतिरिक्त बटन लगे हैं कि नहीं। जिससे आवश्यकता पड़ने पर वैसे ही बटन लगाये जा सके।

* हुक व आई बनाने वाले धागे का रंग पोशाक के रंग से मेल खाता हो, हुक व आई सफाई के साथ मजबूत टांकों से समान दूरी पर लगे हों तथा ऊपर-नीचे न हों।

* जींस, पैंट, जैकेट, विशेष कुरते आदि पोशाकों में चेन लगी होती है। चेन को एक-दो बार खोल व बन्द करके देखना चाहिये। चेन की चौड़ाई, पोशाक के रंग से मेल खाती व मजबूती के साथ सफाई से लगी होनी चाहिये।

(viii) परिसज्जाएँ : पोशाक को आकर्षक और सुन्दर बनाने के लिये कुछ परिसज्जाएँ की जाती है, जैसे-लेस लगाना, कशीदा, डोरियाँ व झल्लर आदि। इनकी भी जांच आवश्यक है :-

* पाइपिंग, लेस व डोरियों के रंग पक्के हो।

* यह पोशाक पर सफाई और अनुपात में लगी हो।

* जिस किस्म की पोशाक है उस पर उसी किस्म की परिसज्जा हो अर्थात् सूती वस्त्र पर सूती लेस, नायलोन के वस्त्र पर नायलोन की लेस लगी हो।

* पोशाक पर पाइपिंग सफाई से उरेब कपड़े पर कटी हुई हो और सीवन मजबूत हो।

* पोशाक पर कशीदा आकर्षक व सफाई के साथ किया हुआ परन्तु कशीदा के धागों का रंग पक्का हो।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(ix) लेबल : तैयार पोशाक पर लेबल लगा होता है। जिस पर पोशाक से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण जानकारियां दी होती है जिनके आधार पर हम पोशाक की देख-भाल कर सकते हैं जैसे-नाप, नम्बर, कीमत व देख-भाल हेतु निर्देश दिए होते हैं जिन्हें पोशाक खरीदने से पहले सावधानीपूर्वक पढ़ लेना चाहिये।

इसप्रकारउ परोक्तम हत्त्वपूर्णा बन्दुओंके अ ाधारप रत ैयार पोशाक का चुनाव व उत्तम गुणवत्ता की पोशाक खरीदी जा सकती है।

अभी तक आपने वस्त्र का व्यक्तित्व से सम्बन्ध, वस्त्रों का चुनाव, सिलाई एवं तैयार पोशाक की खरीददारी से सम्बन्धित जानकारियां प्राप्त की है।

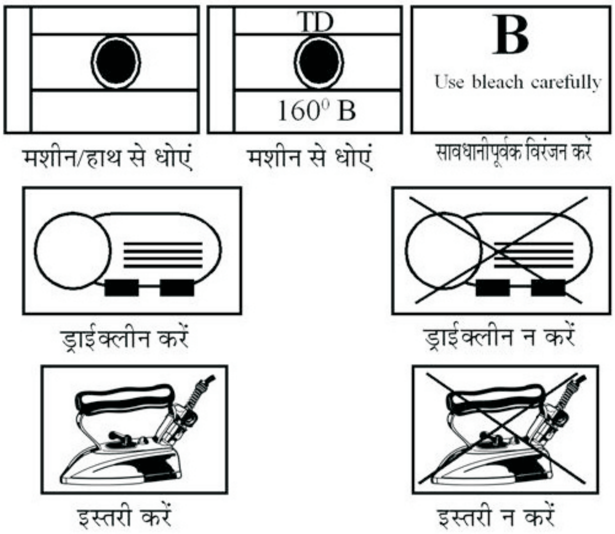

चित्र 24.2 वस्त्रों पर इंगित निर्देश

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. तैयार पोशाक खरीदने से समय व श्रम की बचत होती है।
2. तैयार पोशाक उचित नाप, आसान देख-भाल, आवश्यकता की पूर्ति, व्यक्तित्व के अनुकूल व साथ-साथ आरामदायक होनी चाहिये।
3. व्यक्ति की उम्र व शरीर के नाप को आधार मानकर पोशाक का चयन करें।
4. तैयार पोशाक खरीदते समय इन गुणों की जांच आवश्यक है, जैसे-कपड़ा, डिजाइन/स्टाइल, सीवन, तुरपाई, बटन पट्टियां, बंधक, परिसज्जाएँ व लेबल।
5. पोशाक पर लगे लेबल पर नाप/नम्बर, रेशे का प्रकार, कीमत एवं देख-भाल करने हेतु निर्देश लिखे होते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) तैयार पोशाक के कपड़े में निम्न गुणों की जांच करें :

(अ) रेशा (ब) डिजाइन

(स) पक्का रंग (द) उपरोक्त सभी

(ii) एक ही उम्र के दो बच्चों के नाप हो सकते हैं :

(अ) समान (ब) अलग-अलग

(स) मिलते-जुलते (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iii) सीवन जांचने हेतु पोशाक को करें :

(अ) उलटा (ब) तिरछा

(स) सीधा (द) उपरोक्त सभी

(iv) तैयार पोशाक होनी चाहिये :

(अ) आरामदायक (ब) आकर्षक

(स) कठिन देख-भाल (द) व्यक्तित्व के प्रतिकूल

(v) तैयार पोशाक खरीदने से बचत होती है :

(अ) आय (ब) समय

(स) श्रम (द) समय एवं श्रम दोनों की

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) पोशाक खरीदने से पूर्व व्यक्ति की .... एवं ....जान लेना आवश्यक है।

(ii) तैयार पोशाक पर सामान्य जानकारी हेतु .... लगा होता है।

(iii) .... को ध्यान में रखकर पोशाक की डिजाइन का चयन करें।

(iv) तैयार पोशाक उद्योग को एक .... का रूप दे दिया।

3. 'तैयार पोशाक' का क्या अभिप्राय है?

4. कारण सहित स्पष्ट करें कि तैयार पोशाक का प्रचलन क्यों बढ़ता जा रहा है?

5. पोशाक की फिटिंग की जांच किस प्रकार करेंगे?

6. पोशाक का चुनाव किन बिन्दुओं के आधार पर करना चाहिये।

7. पिता/भाई के लिये शर्ट खरीदते समय किन-किन गुणों की जांच करेंगी और कैसे?

8. एक उपयुक्त व उत्तम पोशाक के गुणों की व्याख्या कीजिये।

9. बच्चों की पोशाक खरीदते समय किन-किन बातों का ध्यान रखेंगी।

उत्तरमाला :

1. (i) द, (ii) ब, (iii) अ, (iv) अ, (v) द

2. (i) उम्र एवं शरीर नाप, (ii) लेबल, (iii) प्रचलित फैशन, (iv) व्यवसाय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

25. धब्बे छुड़ाना

Stain Removal

वस्त्रों में अचानक, अनदेखे, अनजाने कोई भी दाग या धब्बा लग जाना स्वाभाविक है। दाग-धब्बे पड़ते ही उन्हें तुरन्त छुड़ाने का प्रयास करना चाहिये क्योंकि तुरन्त पड़े दाग के बारे में हम जानते हैं कि ये किसका है। दाग छुड़ाना सरल होता है, किन्तु यदि दाग पुराना हो जाता है तो वो पक्के हो जाते हैं। दूसरे हमें याद भी नहीं रहता कि दाग किस चीज का है। ऐसे में दाग छुड़ाना कठिन हो जाता है और दाग छुड़ाने के लिये अगर गलती से गलत रसायन का प्रयोग हो जाये तो वस्त्र व रेशे क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

दाग छुड़ाने की प्रक्रिया में निम्न बिन्दु महत्त्वपूर्ण है कि दाग को पहचानना, उसे छुड़ाने के लिये उपयुक्त माध्यम का चुनाव, तत्पश्चात् विधि का प्रयोग कर उसे छुड़ाना।

‘धब्बाय ाद ाग’व हअ नचाहा चह्नह ैज ोव स्त्रोंप र िकसी कारणवश व माध्यम से लग जाता है।

दाग की पहचान : किसी भी तरह के दाग-धब्बों को निम्न तीन विधियों द्वारा पहचाना जा सकता है-

1. देखकर : अनजान दाग जो हमारे सामने न लगे हों उन्हें उसके रंग और आकार व बाह्य स्वरूप देखकर पहचाना जा सकता है। जैसे-नीली स्याही का रंग, चाय-काफी का रंग, तरकारी में हल्दी का रंग एवं नेल पॉलिश का रंग। इसी प्रकार जब दाग लगता है, जैसे-तेल, घी या स्याही का दाग वस्त्र पर फैल जाता है जबकि पेंट या नेलपेंट मोटी परत के रूप में एक ही स्थान पर जम जाता है।

2. गंध द्वारा : दागों को सूंघ कर भी पहचाना जा सकता है। विशेषकर तीव्र व स्पष्ट गंध वाले दाग-पसीने के, इत्र के, पेंट, अचार, जूता-पॉलिश व नेलपेंट आदि।

3. स्पर्श द्वारा : कुछ दाग-धब्बों को छूकर भी पहचाना जा

दाग-धब्बे छुड़ाने की सामग्री एवं विधि के चयन में सुविधा की दृष्टि से विभिन्न प्रकार के दागों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत और बांटा गया है। प्राय: एक वर्ग के दागों को छुड़ाने की विधि एवं रसायन करीब-करीब समान ही होते हैं।

दाग-धब्बों के प्रकार

या

धब्बों का वर्गीकरण

प्राणिज	वनस्पतिक	चिकनाई युक्त	खनिज	रंग	घास	अन्य
दूध	चाय	तेल	स्याही	वार्निश	घास	पसीना,
दही	कॉफी	घी	औषधि	कपड़े रंगने	पत्तियां	झुलसने
अण्डा	शहद	मक्खन	जंग	व छापने		आदि का
रक्त	फल	क्रीम		के रंग,		
मांस	सब्जी	ग्रीस		चित्र बनाने		
				का रंग		

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सकता है। जैसे–अण्डा, कस्टर्ड दूध आदि के दाग सूखकर कड़ा कर देते हैं। पेंट व नेलपेंट दाग को कड़ा कर मोटी परत बना देते हैं। च्यूंगम, चॉकलेट के दाग चिपचिपे होते हैं।

1. प्राणिज धब्बे : प्राणिज भोज्य पदार्थ, जैसे–दूध, दही, अण्डा, मांस व रक्त के प्रोटीनयुक्त दाग इस वर्ग में आते हैं। गर्म साधन के सम्पर्क में आते ही इनका प्रोटीन कोएग्यूलेट हो वस्त्र की सतह पर जम कर वस्त्र को कड़ा बना देता है। अतः इन्हें छुड़ाने के लिये ठण्डे पानी का इस्तेमाल करना चाहिये।

2. वनस्पतिज दाग : इनमें चाय, कॉफी, फल, ज्यूस, शहद, सब्जी, कोको इत्यादि के दाग आते हैं। ये प्रायः अम्लयुक्त होते हैं, जिन्हें छुड़ाने के लिये क्षारीय पदार्थों का उपयोग किया जाता है।

3. चिकनाई युक्त दाग : घी, तेल, मक्खन, हेयर ऑयल आदि तैलीय पदार्थ इस वर्ग में आते हैं। इन्हें अवशोषकों अथवा घोलकों के द्वारा वस्त्र से छुड़ाना चाहिये।

4. खनिज दाग : इस प्रकार के धब्बों में खनिज तत्त्व के यौगिक पाये जाते हैं। ये औषधियां, जंग और स्याही के दाग होते हैं। इन दागों को पहले अम्ल युक्त घोलों से छुड़ाया जाता है, तत्पश्चात् क्षारीय घोल का प्रयोग कर वस्त्र को उक्त अम्ल के प्रभाव से मुक्त किया जाता है।

5. रंग के धब्बे : रंग के दाग भिन्न–भिन्न प्रकृति के होते हैं, कुछ अम्लीय, क्षारीय एवं कुछ उदासीन भी होते हैं। अतः इनको छुड़ाने से पहले दाग की प्रकृति ज्ञात कर लेने के पश्चात् दाग छुड़ाने वाले विशिष्ट प्रतिकर्मक का प्रयोग करना चाहिये।

6. घास के दाग : इनकी विशेषता ये होती है कि ये पर्णहरित युक्त होते हैं। यही कारण है कि इन्हें वनस्पतिज दागों से पृथक् वर्गीकृत किया गया है। ये साबुन पानी से भी छुड़ाया जा सकता है और न छूटने की स्थिति में मिथिलेटेड स्प्रिट का प्रयोग किया जा सकता है।

7. एनामेल पेंट अथवा वार्निश के दाग : एनामेल पेंट तथा वार्निश के दागों की प्रकृति अन्य दागों से भिन्न होती है। इसी से इनको सर्वथा अलग वर्ग में रखा गया है।

8. अन्य धब्बे और अज्ञात धब्बे : पसीने के दाग को प्राणिज दाग में वर्गीकृत नहीं किया गया क्योंकि इसमें प्रोटीन उपस्थित नहीं होता। यह अम्ल युक्त दाग है। इसे ठंडे पानी और अमोनिया के तनु घोल से साफ किया जा सकता है। इसी प्रकार झुलसने का दाग किसी विशेष वर्ग में नहीं आता है। इसलिये इसे अन्य में वर्गीकृत किया गया अत्यधिक गर्म इस्तिरी के सम्पर्क में आने से सूती वस्त्रों की सतह पर कालिमायुक्त धब्बा पड़ जाता है। इसे धो कर विरंजित किया जा सकता है।

कुछ दाग–धब्बे पहचाने नहीं जाते क्योंकि वे पुराने हो जाते हैं

तालिका 25.1 : दाग छुड़ाने की सामान्य विधियां :

क्र.	प्रक्रिया	प्रयोग	विधि	उपयोगी पदार्थ/प्रतिकर्मक
1.	घोलक	वसा में घुलन-शील धब्बों को छुड़ाने हेतु	1. वस्त्र के ऊपर लगे धूल–मिट्टी को हटाना। 2. दाग वाले हिस्से को टेबल पर बिछे तौलिया या ब्लॉटिंग पेपर पर रखें। 3. स्पंज या रुई पर घोलक लगा कर दाग पर अन्दर से बाहर की ओर गोला कार में स्पंज या रुई को मलें। 4. इस प्रक्रिया से धब्बा ब्लॉटिंग पेपर पर आ जायेगा और साफ हो जायेगा। 5. इस प्रक्रिया या विधि को स्पंज–विधि कहते हैं।	पेट्रोल, मिथिलेटेड स्प्रिट, एसिटोन, तारपीन का तेल, मिट्टी का तेल, बेन्जीन, कार्बन टेट्राक्लोराइड।
2.	अशोषक	चिकनाईयुक्त धब्बों को छुड़ाने के लिये	1. दाग–धब्बों पर अवशोषक पदार्थ को डाल दिया जाता है, ये चिकनाई को सोख लेते हैं। 2. इसके अलावा अवशोषक पदार्थों	आटा, मैदा, पावरोटी का चूरा, टेलकम पाउडर, चॉक का चूर्ण, नमक, भीगी पावरोटी आदि।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

			को गीला करके धब्बे के दोनों ओर लगाकर सूखने के लिये छोड़ देते हैं फिर सूखने पर दाग की सारी चिकनाई अवशोषक पदार्थ सोख चुके होते। फिर ब्रश से रगड़ कर साफ कर लें। 3. झुलसने के दाग को छुड़ाने के लिये उस पर भीगी पावरोटी रगड़ें तो दाग दूर हो जाता है।	
3.	रसायनिक	आसानी से न छूटने वाले तथा अन्य विधियों से भी न छूटने वाले धब्बों हेतु	1. दाग को स्पंज विधि से और रासायनिक प्रतिकर्मक के तनु घोल की सहायता से दाग छुड़ायें। 2. रसायन में वस्त्र के दागदार भाग डुबोकर, दाग पर रसायन की बूंदें डालकर दाग छुड़ाये जा सकते हैं। रसायनों का उपयोग वस्त्र पर सावधानी-पूर्वक करें। दाग छुड़ाने के पश्चात् तत्काल वस्त्र को बार-बार साफ पानी से धोकर रसायन मुक्त करें।	रासायनिक प्रतिकर्मक, सुहागा, जैवेल वाटर, सोडियम परबोरेट, बोरेक्स, नीबू का रस, ऑक्जेलिक अम्ल

और सूख कर अपना रंग, रूप, गन्ध, स्वरूप सब बदल लेते हैं, जिससे इन्हें पहचाना नहीं जा सकता। ऐसे अज्ञात धब्बों को विशेष रसायनों से छुड़ाया जाता है।

धब्बे छुड़ाने हेतु प्रतिकर्मक : विभिन्न प्रकार के धब्बों को छुड़ाने के लिये निम्न प्रकार के प्रतिकर्मकों का इस्तेमाल किया जाता है :

1. ऑक्सीडाइजिंग/ऑक्सीकारक विरंजक : ऑक्सीकारक विरंजक में ऑक्सीजन मुख्य रूप से रहता है, जो स्वतन्त्र होकर, धब्बे के सम्पर्क में आकर उसे रंग-विहीन यौगिक बनाता है। यह विरंजक सफेद वस्त्रों के लिये सर्वश्रेष्ठ है, परन्तु रंगीन वस्त्रों के लिये उपयुक्त नहीं। अगर रंगीन वस्त्रों पर इसका इस्तेमाल किया जाये तो वस्त्रों का रंग निकलने लग जाये। ऑक्सीकारक विरंजक निम्न है-

(क) सूर्य का प्रकाश, वायु एवं घास : आसानी से उपलब्ध प्राकृतिक विरंजक है। जिससे सूती व लिनन के वस्त्रों को उज्ज्वल तथा दाग-धब्बों रहित बना दिया जाता है। दाग लगे वस्त्रों को धो कर घास पर सूर्य के प्रकाश में फैलाया जाता है। घास क्लोरोफिल, हवा से नमी और ऑक्सीजन की उपस्थिति में विरंजन क्रिया शीघ्रता से होती है। वस्त्र के दाग हट जाते हैं और वस्त्र उज्ज्वल, साफ हो जाता है।

(ख) सोडियम हाइपोक्लोराइट : यह एक शक्तिशाली विरंजक है। इसे जैवेल वाटर के नाम से भी जाना जाता है। इसे घर पर भी तैयार किया जा सकता है। वॉशिंग सोडा-250 ग्राम, उबलता पानी-500 मि.लि., चूना-250 ग्राम तथा ठण्डा पानी-2 लिटर से तैयार कर काँच की रंगीन बोतलों में भर कर रख सकते हैं। बराबर भाग गर्म पानी में मिला कर सूती व लिनन के वस्त्रों पर इस्तेमाल करना चाहिये।

(ग) सोडियम परबोरेट : इस प्रतिकर्मक का इस्तेमाल दाग-धब्बे छुड़ाने के लिये किया जाता है। यह भी एक शक्तिशाली विरंजक है। इसे गर्म पानी में मिलाने से ऑक्सीजन निकलती है। वस्त्र से धब्बा छुड़ाने के लिये गर्म पानी में (उबलते हुए) सोडियम परबोरेट को मिलाकर धब्बे पर स्पंज करना चाहिये। धब्बा बिलकुल शीघ्रता से निकल जाता है।

(घ) पोटेशियम परमैंगनेट : इसके इस्तेमाल से फफूंदी, रंग और पसीने के धब्बे छुड़ाये जाते हैं। आधा लिटर पानी में आधा छोटा चम्मच पोटेशियम परमैंगनेट मिला कर इस घोल से धब्बे छुड़ाये जाते हैं परन्तु धब्बे छूटने के बाद वस्त्र पर पोटेशियम परमैंगनेट के कारण वस्त्र पर भूरा रंग आ जाता है, जिसे ऑक्जेलिक अम्ल अथवा हाइड्रोजन पेरोक्साइड से छुड़ाया जा सकता है।

(ड़) हाइड्रोजन पेरोक्साइड : यह विरंजक जांतव रेशों से बने

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

वस्त्रों के लिये सर्वोत्तम है। यह मृदु प्रकार का विरंजक है अत: सभी प्रकार के वस्त्रों में उपयोग किया जा सकता है। इस विरंजक का एक भाग और पानी के छ: भाग (ठण्डे पानी) के अनुपात से प्रयोग करना चाहिये। प्रयोग के बाद वस्त्र को साफ पानी से धो कर विरंजक का प्रभाव खत्म कर देना चाहिये।

(ii) अवकारक/अपचयन विरंजक : इन विरंजकों का उपयोग जब करते हैं तो ये धब्बों से ऑक्सीजन हटा देते हैं और विघटित होकर धब्बा साफ हो जाता है। इनका उपयोग प्राणिज रेशों से बने वस्त्रों पर किया जाता है। ये निम्न प्रकार के हैं–

(i) सोडियम बाईसल्फाइट : यह जान्तव रेशों से बने वस्त्रों पर से धब्बे हटाने के लिये सर्वोत्तम है। यह एक प्रभावशाली विरंजक है। यह वस्त्र के सम्पर्क में आकर सल्फर-डाई-ऑक्साइड उत्पन्न करता है, जिससे ऑक्सीजन विघटित होकर धब्बे को हटा देती है। इसके प्रयोग के पश्चात् तत्काल वस्त्र को पानी से साफ कर वस्त्र को हानि से बचा लेना चाहिये।

(ii) सोडियम हाइड्रोसल्फाइट : यह विरंजक बाजार में पाउडर रूप में मिलता है। सभी प्रकार के वस्त्रों पर इसका उपयोग किया जा सकता है। पानी में इसे घोल कर दाग वाले वस्त्र को धोया जाये तो यह धब्बे से ऑक्सीजन हटा लेता है और धब्बा साफ हो जाता है। इसके प्रयोग के बाद वस्त्र को साफ पानी से धो लेना चाहिये।

2. अम्लीय प्रतिकर्मक : नाम से प्रतीत होता है कि ये अम्लीय स्वभाव के होते हैं। क्षारीय स्वभाव वाले धब्बों को छुड़ाने में इनका उपयोग किया जाता है। ये निम्न हैं–

(i) **ऑक्जेलिक अम्ल :** जंग और फलों के रस के पक्के दागों को छुड़ाने के लिये इस विरंजक का उपयोग किया जाता है। यह दानेदार, विषैला, रासायनिक पदार्थ है। अत: इसका इस्तेमाल सावधानीपूर्वक करना चाहिये। दाग-धब्बे छुड़ाने के बाद वस्त्र को अमोनिया से उदासीकरण कर देना चाहिये अन्यथा वस्त्र गल जाता है। इसे जान्तव रेशे से बने वस्त्रों पर उपयोग नहीं करना चाहिये।

(ii) **नीबू का नमक :** इसे सोरेल का नमक भी कहते हैं। इसका उपयोग ऑक्जेलिक अम्ल की तरह किया जाता है।

(iii) **एसिटिक अम्ल :** इसके तनु घोल से धब्बे छुड़ाये जाते हैं। एक पिण्ट पानी में 1 छोटा चम्मच एसिटिक अम्ल पर्याप्त है। इसके स्थान पर सिरके का प्रयोग किया जा सकता है।

(iv) **ओलिक एसिड :** इसका उपयोग सूती वस्त्रों से चिकनाई के दाग हटाने में किया जाता है। इसे ऊन, सिल्क और रंगीन वस्त्रों के प्रयोग में नहीं लाना चाहिये।

3. क्षारीय प्रतिकर्मक : इनका स्वभाव क्षारीय होता है। इनका प्रयोग केवल सूती व लिनन वस्त्रों पर ही करना चाहिये। जांतव रेशों को क्षारीय प्रतिकर्मक हानि पहुंचाते हैं। परन्तु इसका मृदु एवं हलका तनु घोल जांतव रेशों से निर्मित वस्त्रों पर किया जा सकता है। ये निम्न है–

(i) **धोने का सोडा :** यह गर्म पानी में आसानी से घुल जाता है। इसका प्रयोग चिकनाईयुक्त दाग एवं अम्लीय धब्बों को हटाने में किया जाता है।

(ii) **बोरेक्स :** यह एक हलका क्षारीय प्रतिकर्मक है और पाउडर रूप में पानी में आसानी से घुलनशील है। सभी प्रकार के वस्त्रों पर इसका उपयोग किया जा सकता है। अम्ल को धब्बे छुड़ाने के बाद उदासीन करने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है।

(iii) **अमोनिया :** इसका प्रयोग जांतव रेशों से बने वस्त्रों पर चिकनाई आदि के दाग छुड़ाने में किया जाता है। यह तीव्र प्रकृति का क्षार है। अमोनिया की गंध तीव्र एवं तीखी होती है। इसके तनु घोल का ही इस्तेमाल करना चाहिये।

4. चिकनाई अवशोषक प्रतिकर्मक : ये पाउडर के रूप में होते हैं। जैसे-टेलकम पाउडर, आटे का चोकर, ब्रेड का चूरा, मैदा, आटा व नमक। ये वस्त्रों पर लगे चिकनाई के धब्बों को अवशोषित कर उन्हें साफ कर देते हैं।

5. चिकनाई घोलक प्रतिकर्मक : चिकनाई के धब्बों को इनकी सहायता से हटाया जाता है। ये महंगे और ज्वलनशील होते हैं। इनका शुष्क धुलाई में प्रयोग किया जाता है। प्रयोग करते समय सावधानी बरतनी चाहिये। ये घोलक हैं-पेट्रोल, बेन्जीन, एसिटोन, मिथाइलेटेड स्प्रिट, तारपीन का तेल, केरोसिन और कार्बन टेट्राक्लोराइड आदि।

धब्बे छुड़ाने के सामान्य निर्देश व सावधानियाँ :

1. दाग को देख कर, स्पर्श करके व सूंघ कर पहचानना चाहिये।
2. वस्त्र की किस्म को जान लेना।
3. वस्त्र की प्रकृति व रचना के साथ-साथ धब्बे की प्रकृति का ध्यान रखते हुए धब्बे छुड़ाने वाले पदार्थ और विधि का चयन करें।
4. रंगीन लिनन, ऊन, रेशम व रेयान पर प्रतिकर्मकों के केवल हलके घोल का प्रयोग करें।
5. प्रतिकर्मक के प्रयोग के तुरन्त बाद वस्त्र को उसके प्रभाव से मुक्त करने के लिये साफ पानी से धोना चाहिये।
6. रंगीन वस्त्रों से दाग हटाने से पहले जांच लें रंग पक्का है या कच्चा।
7. ज्वलनशील रासायनिक पदार्थों का प्रयोग करते समय आग से बचने के लिये सावधानी रखनी चाहिये।
8. दाग-धब्बे छुड़ाने के लिये घोलक, अवशोषक व रासायनिक विधियों में उचित विधि का चयन करना चाहिये।
9. सर्वप्रथम घरेलू सामग्री जैसे-साबुन, ठण्डा-गर्म पानी, दही, नमक, नीबू, कच्चा दूध आदि से धब्बा छुड़ाने की कोशिश करें। जब इनसे धब्बा न छूटे तो विरंजक का प्रयोग करें।
10. रासायनिक पदार्थों का धब्बा छुड़ाते समय उपयोग खुली हवादार स्थान पर करना चाहिये।
11. प्रतिकर्मकों के तनु घोल का ही इस्तेमाल करना चाहिये।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. वस्त्र पर दाग अनजाने और अनायास ही लग जाते हैं।
2. देखकर, सूंघकर व स्पर्श करके दाग को पहचाना जाता है।
3. ताजे धब्बे आसानी से व शीघ्रता से छूट जाते हैं।
4. घोलक, अवशोषक एवं विरंजकों का प्रयोग विभिन्न धब्बों को छुड़ाने में किया जाता है।
5. वस्त्रों की प्रकृति और रचना के साथ धब्बे की प्रकृति व प्रकार के आधार पर धब्बे छुड़ाने वाले पदार्थ व विधि का चयन करना चाहिये।
6. धब्बे प्राणिज, वनस्पतिज, चिकनाईयुक्त, खनिज, रंग आदि प्रकार के होते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) वनस्पतिज धब्बे हैं :

(अ) रक्त (ब) पसीना

(स) दूध (द) हल्दी

(ii) औषधि वर्ग का धब्बा है :

(अ) जान्तव वर्ग (ब) वनस्पतिज वर्ग

(स) खनिज वर्ग (द) उपरोक्त सभी

(iii) अण्डा का दाग छूट जाता है :

(अ) गर्म पानी व साबुन (ब) ठण्डे पानी व साबुन

(स) नमक व साबुन (द) उपरोक्त सभी

(iv) घास वर्ग का धब्बा है :

(अ) वनस्पतिज वर्ग (ब) खनिज

(स) जान्तव वर्ग (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(v) वसा में घुलनशील धब्बों को छुड़ाने हेतु प्रयोग करते हैं :

(अ) घोलक (ब) रसायन

(स) अवशोषक (द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) चिकनाईयुक्त धब्बों को .... एवं .... से छुड़ाया जाता है।

(ii) जान्तव धब्बे की पहचान .... की जा सकती है।

(iii) आटा .... पदार्थ है।

(iv) .... क्षारीय प्रतिकर्मक है।

3. अवशोषक पदार्थों के नाम लिखिये।
4. वस्त्र पर लगे धब्बे हटाना अनिवार्य है, क्यों?
5. अम्लीय एवं क्षारीय प्रतिकर्मक में अन्तर स्पष्ट कीजिये।
6. धब्बों का वर्गीकरण लिखिये।
7. धब्बों को छुड़ाने की मुख्य विधियां कौन-सी है?
8. विरंजक प्रतिकर्मक से क्या अभिप्राय है? ये कितने प्रकार के हैं?
9. क्षारीय व अम्लीय प्रतिकर्मक धब्बे छुड़ाने के लिये किन-किन वस्त्रों पर और कैसे इस्तेमाल किये जाते हैं।
10. धब्बे छुड़ाने के सामान्य नियम कौन-कौन से है?

उत्तरमाला :

1. (i) द, (ii) स, (iii) ब, (iv) द, (v) स
2. (i) घोलक व अवशोषक, (ii) स्पर्श से, (iii) अवशोषक, (iv) अमोनिया।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

26. शोधक पदार्थ

Cleansing Material

मैले वस्त्रों की सफाई और धुलाई के लिये पानी के साथ-साथ किसी-न-किसी प्रकार के शोधक पदार्थों की आवश्यकता होती है। वस्त्रों की सतह पर मैल, गन्दगी, धूल कण, दाग एवं चिकनाई जमा हो जाती है। इन सबको उपयुक्त शोधक पदार्थ और जल की सहायता से वस्त्र से पृथक् करके फिर से साफ-सुथरा, उजले व दाग रहित कर पहनने योग्य बनाया जाता है। वस्त्रों के अनुसार और वस्त्रों पर लगी गन्दगी के अनुसार उपयुक्त शोधक पदार्थ का चयन करना भी आवश्यक है। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाये कि शोधक पदार्थ ऐसा हो जो अधिक सफाई तो दे परन्तु रेशों व वस्त्रों को हानि न पहुंचाये। ये शोधक पदार्थ कई तरह के होते हैं, जैसे- रीठा, चोकर, समुद्री झाग, साबुन और डिटरजेण्ट आदि। सामान्य तौर पर साबुन और डिटरजेण्ट व तरल साबुन का ही इस्तेमाल ज्यादा होता है।

सामान्य शब्दों में शोधक पदार्थ वे पदार्थ हैं जो जल के साथ मिल कर वस्त्रों की गन्दगी को दूर कर वस्त्र को स्वच्छ, उजला, साफ व चमकदार बनाते हैं। शोधक पदार्थों को परिभाषित करते हुए श्रीमती एस.पी. सुखिया का कथन है-'वस्त्रों को केवल जल से ही धोने से उनकी गन्दगी नहीं छूटती, विशेष करके चिकनाई और पसीने के धब्बे।' यदि धुलाई में साबुन आदि का प्रयोग किया जाता है तो वस्त्र पूर्णत: साफ हो जाते हैं। शोधकों के प्रयोग से मैल वस्त्रों से हट कर जल में तैरने लगता है या वह पायस के रूप में कपड़े का साथ छोड़ कर पानी में मिल जाता है। शोधक पदार्थ अनेक प्रकार के होते हैं। इसी प्रकार अलग-अलग तन्तुओं से भिन्न-भिन्न प्रकार के वस्त्र बनाये जाते हैं और सभी तन्तुओं और उनसे बने वस्त्रों की शोधक सम्बन्धी विशेषताओं में अन्तर होता है। कपड़ों की सफाई के लिये शोधक पदार्थ ऐसे होने चाहिये जो-

(1) वस्त्रों की सफाई अच्छी तरह से कर सके।

(2) किसी भी प्रकार की हानि तन्तुओं व वस्त्रों को न पहुंचाये।

(3) वस्त्रों की गन्दगी को इस प्रकार दूर करें कि वस्त्रों को खंगालने में या निचोड़ने में वह जल के साथ निकल जाये।

साबुन : वस्त्रों की धुलाई के लिये सर्वाधिक प्रचलित शोधक पदार्थ साबुन ही है। यह वस्त्रों की सतह से आसानी से गन्दगी हटाने में सक्षम है। साबुन वसा अम्लों एवं क्षारों का यौगिक है। वसीय अम्लों के लवण को साबुन कहते हैं।

प्राचीन समय में लकड़ी की राख को गर्म पानी में घोल कर वस्त्र धोये जाते थे। लकड़ी की इस राख में सोडियम, पोटेशियम के हाइड्राक्साइड एवं नाइट्रेट की उपस्थिति उसे क्षारीय बनाकर शोधक के रूप में सक्षम करती है। इस प्रकार वर्षों पहले अनजाने में, लकड़ी की राख एवं पकाने वाली वसा के मिलने से शोधक पदार्थ का निर्माण हुआ।

उपयोग के आधार पर साबुन के प्रकार :

1. कपड़े धोने का साबुन
2. नहाने का साबुन
3. विसंक्रामक साबुन
4. दाढ़ी बनाने का साबुन
5. पारदर्शी साबुन

उपरोक्त सभी साबुनों को आकर्षक बनाने के लिये विभिन्न सुगंधों व रंगों का प्रयोग किया जाता है।

रूप अथवा वयन के आधार पर साबुन के प्रकार :

1. **साबुन की बट्टी या बार :** ये ठोस रूप में चौकोर और आयताकार आकार में मिलती है। ये बट्टियां साँचे में ढली और निश्चित वजन व आकार की कागज में लिपटी हुई आती है। जिस पर कम्पनी का नाम, साबुन का नाम, दाम आदि छपे होते हैं।
2. **साबुन की जैली :** बचे हुए साबुन के टुकड़ों को गर्म पानी में घोल कर, गाढ़ा घोल बना कर बोतलों में भर लिया जाता है। आवश्यकतानुसार उपयोग किया जा सकता है। इससे साबुन के बचे हुए टुकड़े खराब समझ फेंके नहीं जाते।
3. **साबुन की चिप्पियाँ :** कम क्षार युक्त साबुन की पतली-पतली फिल्म को छोटे-छोटे फ्लेक्स के रूप में तोड़ कर डिब्बों में पैक की जाती है। नामी कम्पनियां इनका निर्माण करती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

4. साबुन का घोल : बाजार में कई ब्रांड का साबुन तरल अवस्था में मिलता है। ये कम क्षारयुक्त होते हैं।

5. साबुन का चूर्ण : साबुन के कई प्रकार के चूर्ण बाजार में उपलब्ध हैं। ये क्षारयुक्त होते हैं। इनमें सोडियम कार्बोनेट, सोडियम परबोरेट जैसे क्षार व साबुन मिले होते हैं। इनसे वस्त्र शीघ्र साफ हो जाते हैं परन्तु तन्तु व वस्त्रों को नुकसान भी पहुंचाते हैं।

साबुन का निर्माण :

साबुन के निर्माण में निम्नलिखित सामग्रियों का इस्तेमाल किया जाता है।

1. वसा : वसा का प्रमुख भाग वसीय अम्ल तथा ग्लिसरीन होता है। साबुन बनाने में दो तरह की वसा का प्रयोग किया जाता है।

(i) प्राणिज वसा (चर्बी) : इसे ठोस वसा कहते हैं। इसका साबुन बनाने के लिये उपयोग किया जाता है। इसमें सभी वसीय अम्ल होते हैं। बनावट एकरूपता लिये होती है। यह साबुन झाग कम देता है परन्तु वस्त्र अच्छे से साफ करते हैं। लार्ड एक महंगी चर्बी है जिसका उपयोग केवल नहाने के साबुन में किया जाता है।

(ii) वनस्पति वसा : नारियल तेल, अलसी का तेल, बिनौले का तेल, सोयाबीन, जैतून, महुआ, रतनजोत और अरण्डी का तेल-उपरोक्त सभी तेलों के उपयोग से साबुन बनाये जाते हैं। प्राणिज व वनस्पति वसा मिलाकर साबुन बनाने में कम खर्च होता है। तेलों की गुणवत्ता और गुणों के आधार पर साबुन बनाने की प्रक्रिया पर कीमत का प्रभाव पड़ता है।

2. क्षार : साबुन-निर्माण प्रक्रिया में कास्टिक सोडा अथवा कास्टिक पोटाश (KOH) का उपयोग किया जाता है। कास्टिक सोडा से साबुन का निर्माण होता है, जबकि मृदु साबुन निर्माण के लिये कास्टिक पोटाश प्रयुक्त किया जाता है। साधारणत: घरेलू साबुन बनाने में इसका अधिक उपयोग किया जाता है।

3. सोडियम सिलिकेट : यह एक क्षारीय पदार्थ है। ये चमकीला दानेदार होता है। यह ठोस व तरल रूप में उपलब्ध होता है। सोडियम सिलिकेट उत्तम स्वच्छक एवं शोधक गुणों से युक्त होता है। परन्तु साबुन बनाते समय निर्धारित मात्रा में ही इसका उपयोग करना चाहिये।

4. स्टार्च पाउडर : स्टार्च पाउडर पानी के साथ मिलकर जैली जैसा लसलसा हो जाता है। साबुन-निर्माण प्रक्रिया में मैदा, आरारोट या बेसन का प्रयोग स्टार्च के लिये किया जाता है।

5. फ्रेंच चॉक/सोप स्टोन : 15-20 प्रतिशत की मात्रा में फ्रेंच चॉक/नरम प्रकार के संगमरमर के चूर्ण का उपयोग साबुन की मात्रा एवं वजन में ही वृद्धि करने के लिये किया जाता है। इसमें शोधक व स्वच्छक गुण नहीं होते हैं।

6. नमक : साबुन-निर्माण प्रक्रिया में जितनी मात्रा में तेल का उपयोग होता है उसके 12.5 प्रतिशत के हिसाब से नमक उसमें मिलाया जाता है।

7. रेज़िन : रेज़िन में स्वच्छक गुण ज्यादा नहीं होता है फिर भी साबुन का मूल्य करने की दृष्टि से साबुन बनाते समय रेज़िन मिलाया जाता है। रेज़िन की अधिक मात्रा कपड़े में पीलापन लाती है।

साबुन का संगठन : मुख्यत: वसा व क्षार के भाग होते हैं परन्तु सोडियम सिलिकेट, फ्रेंच चॉक/शॉप स्टोन, स्टार्च, नमक व रेज़िन आदि का उपयोग भी साबुन की मात्रा बढ़ाने, ठोस करने व भराव करने के लिये किया जाता है।

धुलाई में साबुन की प्रक्रिया : वस्त्रों को गीला करके जब साबुन लगाया जाता है तो वस्त्र के ऊपरी सतह की प्रतिरोध शक्ति समाप्त हो जाती है। जिससे साबुन वस्त्र पर जमी चिकनाई, मैल एवं गन्दगी को छोटे-छोटे कणों में तोड़ देते हैं। ये कण पानी में तैरने लगते हैं या पायस के रूप में कपड़े का साथ छोड़ कर पानी में मिल जाते हैं। अब इनको साफ पानी में

मृदु साबुन	कठोर साबुन
1. ठण्डी विधि से बने साबुन मृदु होते हैं।	1. गर्म विधि से बने साबुन कठोर होते हैं।
2. जल में शीघ्रता से घुलते हैं।	2. देर से घुलते हैं।
3. अधिक झाग उत्पन्न करते हैं।	3. कम झाग व ज्यादा रगड़ने पर उत्पन्न करते हैं।
4. इनमें कास्टिक पोटाश, हलके क्षार व हल्की वसा (जैतून व लिनसीड तेल) के प्रयोग से बने होते हैं।	4. इनमें कास्टिक सोडा, कठोर वसा व तीव्र क्षार (स्टेरिन, पामेटिन वसा) मिले होते हैं।
5. इस तरह के साबुन के उपयोग से कम साबुन, समय व श्रम का व्यय होता है।	5. इनसे ज्यादा साबुन, समय व श्रम व्यय होता है।
6. मुलायम और विशेष देख-भाल वाले वस्त्र, पतले, ऊनी व रेशमी वस्त्रों की धुलाई के	6. मोटे एवं खुरदरे वस्त्रों की धुलाई के लिये उपयुक्त व उत्तम होते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

खंगाल दिया जाता है और वस्त्र साफ हो जाते हैं।

उपयुक्त और उत्तम साबुन के गुण : अच्छी व उत्तम किस्म के साबुन में निम्नलिखित गुण होते हैं :

1. उत्तम गुण वाले साबुन जल में शीघ्रता से घुल कर अधिक झाग उत्पन्न करते हैं।
2. अधिक क्षार वाले साबुन के उपयोग से वस्त्र पीले पड़ जाते हैं। अत: उत्तम गुण वाले साबुन में क्षार व रेज़िन ज्यादा मात्रा में नहीं होने चाहिये।
3. उत्तम साबुन में 30 प्रतिशत जल और 61-65 प्रतिशत वसीय अम्ल होते हैं।
4. उत्तम गुणों वाला साबुन त्वचा पर व वस्त्रों पर मुलायम और चिकना होना चाहिये।

अपमार्जक : सर्वप्रथम 1907 में अपमार्जक का निर्माण किया गया। कच्चे पेट्रोलियम से प्राप्त हाइड्रोकार्बन के द्वारा इनका निर्माण किया जाता है। अपमार्जक संश्लिष्ट कार्बनिक यौगिक है, जो कुछ विशिष्ट प्रकार के रासायनिक पदार्थों को मिलाकर विशेष विधि से बनाये जाते हैं। इनमें आर्द्रता गुण, परिक्षेपण गुण तथा पायसीकरण का गुण सबसे ज्यादा विद्यमान रहता है।

डिटरजेण्ट की गुणवत्ता के आधार पर इन्हें तीन श्रेणी में बाँटा गया है :

* प्रथम श्रेणी के डिटरजेण्ट (अपमार्जक) वो होते हैं जिनमें शोधक क्षमता व स्वच्छक गुण उत्तम होते हैं परन्तु ये महंगे होते हैं।
* द्वितीय श्रेणी के अपमार्जक वो होते हैं जिनमें मिलावट तो नहीं की जाती लेकिन इनकी शोधक क्षमता अच्छी होती है और ये प्रथम श्रेणी वाले अपमार्जकों से सस्ते होते हैं।
* तृतीय श्रेणी के अपमार्जकों में कुछ रासायनिक पदार्थ मिला दिये जाते हैं जिससे उनकी शोधक क्षमता बढ़ जाती है। ये गहरे रंग के रंगीन और सस्ते अपमार्जक होते हैं।

डिटरजेण्ट (अपमार्जक) का संगठन : अपमार्जक के प्रमुख छ: संघटक हैं-

1. क्रियाशील उपादन : अपमार्जक में कुछ तत्त्वों की उपस्थिति झाग उत्पन्न करने एवं कुछ की गन्दगी दूर करने के लिये रहती है। साधारण हलकी घरेलू धुलाई को सफलतापूर्वक करने के लिये पर्याप्त शक्तिशाली हैं, परन्तु भारी धुलाई के लिये पर्याप्त नहीं होते हैं।

2. निर्माणक तत्त्व : अपमार्जकों में अतिरिक्त शोधक क्षमता बढ़ाने के लिये कुछ निर्माणक तत्त्व भी रहते हैं। ये निर्माणक तत्त्व कार्बनिक और अकार्बनिक, दोनों प्रकार के होते हैं। अकार्बनिक वर्ग के निर्माणक तत्त्व मुख्यत: फॉस्फेट होते हैं जो झाग उत्पन्न नहीं करते हैं। ये केवल शोधक क्षमता बढ़ाते हैं। कार्बनिक-बिल्डर क्रियाशील उपादान के फेन को स्थिरता प्रदान करते हैं।

3. निक्षेपण प्रतिकारक तत्त्व : अपमार्जकों में निक्षेपण प्रतिकारक तत्त्व भी होते हैं जिनका कार्य है कि गन्दगी के कण जो वस्त्र या वस्तु से पृथक हो चुके हैं, वे पुन: उनसे न चिपक जाएं। इसके लिये अपमार्जकों में प्रति-निक्षेपण प्रतिकर्मक भी रहते हैं। वस्त्र से अलग हुए गंदगी के कण इसके प्रतिरोध का सामना नहीं कर पाते और तरल में निलम्बित ही रहते हैं और जल के साथ ही बह जाते हैं।

4. सोडियम सिलिकेट : प्राय: धुलाई के कार्य से सम्बन्धित पात्र मशीन तथा उसके पार्ट-पुरजे ऐल्यूमीनियम के बने होते हैं। ऐल्यूमीनियम धातु से वाशिंग मशीन के 'एजीटेटर' फेन तथा वाशबेसिन बने होते हैं। इन पर किसी प्रकार का भी क्षतिकारी प्रभाव न पड़े, इसके लिये अपमार्जक में सोडियम सिलिकेट को भी बनाते समय मिलाया जाता है। इसलिये अपमार्जकों में सोडियम सिलिकेट महत्तवपूर्ण है।

5. उज्ज्वलकारी अथवा प्रकाशीय विरंजक : धोने के बाद वस्त्रों में उज्ज्वलता लाने के लिये अपमार्जक में व्यवस्था रहती है। अपमार्जक के प्रयोग के बाद अलग से किसी अन्य विरंजक के प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती है।

6. जंग विरोधी तत्त्व : धातु की और हाथों की त्वचा की सुरक्षा के लिए अपमार्जक में संक्षारक या जंग विरोधी तत्त्व मिलाये जाते हैं।

7. सुगन्ध : कई बार अपमार्जक को खुशबूदार बनाने के लिये सुगन्धित तत्त्व मिलाये जाते हैं।

डिटरजेण्ट की प्रक्रिया : अपमार्जक को ठण्डे-गर्म तथा कठोर-मृदु सभी प्रकार के जल में घोला जा सकता है। अत्यधिक आर्द्रक क्षमता होने के कारण जल में शीघ्र ही घुल भी जाते हैं। ये जल के सतही दबाव अथवा वस्त्र की प्रतिरोधकता को कम करते हैं, जिससे ये जल के साथ मिलकर वस्त्रों के रेशों के भीतर तक पहुंच जाते हैं और पूर्णत: वस्त्र की गन्दगी को साफ कर उज्ज्वलता प्रदान करते हैं।

उत्तम डिटरजेण्ट के गुण :

1. उच्च गुणवत्ता वाले अपमार्जक क्षार रहित होते हैं।
2. ठण्डे-गर्म, कठोर-मृदु जल में समान क्रियाशील होते हैं।
3. अधिक आर्द्रक क्षमता वाले होते हैं।
4. मशीन के पुरजे व हाथों को सुरक्षा प्रदान करते हैं।
5. ये वस्त्रों को हानि नहीं पहुंचाते हैं।
6. जल के सतही तनाव को और वस्त्र की प्रतिरोधक क्षमता को कम कर धुलाई शीघ्रता से करते हैं।
7. वसा के उत्तम पायसीकरण होते हैं।
8. सफेद व रंगीन कपड़ों की सफाई प्रभावशाली ढंग से करते हैं।
9. श्रम, समय व धन की बचत होती है।
10. अपमार्जक से वस्त्रों पर गन्दगी दुबारा नहीं सटती। कण जल में विलम्बित हो जाते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 26.2 : साबुन एवं डिटरजेण्ट में अन्तर :

साबुन	डिटरजेण्ट/अपमार्जक
1. साबुन का निर्माण प्राकृतिक वसा व क्षार से होता है।	1. डिटरजेण्ट का निर्माण रसायनों से व पेट्रोलियम उत्पाद से होता है।
2. ये कम प्रभावशाली होते हैं।	2. ये कई गुणों में साबुन से ज्यादा प्रभावशाली होते हैं।
3. कठोर जल में कम क्रियाशील व मृदु जल में ज्यादा क्रियाशील होते हैं।	3. कठोर व मृदु जल में एक समान क्रियाशील होते हैं।
4. साबुन के प्रयोग से श्रम व शक्ति दोनों का अपव्यय होता है।	4. इनसे समय एवं शक्ति की बचत होती है।
5. साबुन में विरंजक पदार्थों का समावेश नहीं होता है। अत: सफेद वस्त्रों में चमक लाने के लिये अन्य साधनों का उपयोग किया जाता है।	5. डिटरजेण्ट में विरंजक पदार्थ मिले होते हैं। अत: वस्त्र पर अतिरिक्त चमक के लिये अन्य साधनों का उपयोग नहीं किया जाता।
6. सूक्ष्म जीव साबुन से पूर्णतया नष्ट नहीं होते हैं।	6. डिटरजेण्ट से सूक्ष्म जीव पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं।
7. वस्त्रों की सतह पर साबुन रगड़ने से, बार-बार होने वाले घर्षण के कारण वस्त्र व रेशों को नुकसान पहुंचता है।	7. डिटरजेण्ट से वस्त्रों को धोना सरल है। इनके प्रयोग से वस्त्रों को नुकसान नहीं पहुंचता है।
8. दाग आसानी से नहीं छूटते हैं।	8. आसानी से और शीघ्रता से छूट जाते हैं।
9. साबुन हाथों को नुकसान पहुंचाते हैं।	9. डिटरजेण्ट ऐसा नहीं करते।
10. वस्त्रों का रंग निकलने का भय ज्यादा।	10. डिटरजेण्ट से धोने पर रंग निकलने का भय कम।

11.अ पमार्जकस`व स्त्रोंक ेध ेनाअ ासानह`क योंकिव स्त्रोंक े खंगालना (Rinsing) सरल है।

12. आवश्यकतानुसार ही इसका उपयोग, इसके अपव्यय को बचाता है।

13. सूक्ष्म जीवों को पूर्णत: नष्ट कर देता है।

उपरोक्त सभी गुणों के आधार पर अपमार्जकों की मांग दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इनके प्रयोग से उत्तम धुलाई, समय, श्रम व धन की बचत होती है। परन्तु ये प्रदूषण को बढ़ावा देते हैं क्योंकि ये सूक्ष्म जीवों को पूर्णत: नष्ट कर देते हैं। ये जैविक निष्पादित नहीं होते इसलिये इनका अत्यधिक प्रयोग प्रदूषण को बढ़ाता है।

उपरोक्त जानकारियां प्राप्त करने के बाद एक जागरूक उपभोक्ता को वस्त्र के अनुरूप अपमार्जक व साबुन खरीदने चाहिये। बाजार में कुछ शोधक पदार्थ ज्यादा प्रभावशाली होते हैं, तो कुछ वस्त्रों व रेशों की प्रकृति के अनुसार होते हैं कुछ सस्ते व कुछ महंगे। भ्रामक विज्ञापनों के प्रभाव में आये बिना शोधक पदार्थों का चयन करना चाहिये।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. वस्त्रों की धुलाई प्रक्रिया के लिये शोधक पदार्थों का इस्तेमाल किया जाता है।

. साबुन, रीठा, अपमार्जक, चोकर व समुद्री झाग आदि शोधक पदार्थ है।

3. साबुन वसीय अम्लों का लवण है।

4. कठोर और मृदु दो प्रकार के साबुन निर्माण प्रक्रिया के आधार पर होते हैं।

5. अपमार्जक संश्लिष्ट कार्बनिक यौगिक है।

6. साबुन व डिटरजेण्ट के संगठन में अन्तर होता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) गंदे वस्त्रों की धुलाई के लिये इस्तेमाल होते हैं :

(अ) नील (ब) कलफ (स) विरंजक (द) शोधक पदार्थ

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(ii) कठोर व मृदु जल में क्रियाशीलता कम हो जाती है वो :

(अ) अपमार्जक (ब) साबुन

(स) शोधक पदार्थ (द) उपरोक्त सभी

(iii) टेलो व लार्ड है :

(अ) वनस्पति वसा (ब) रसायन

(स) प्राणिज वसा (द) उपरोक्त सभी

(iv) अधिक आर्द्रक क्षमता वाले शोधक हैं :

(अ) साबुन (ब) नील (स) विरंजक (द) अपमार्जक

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) अपमार्जक .... एवं .... जल में समान रूप से क्रियाशील होते हैं।

(ii) वसा व क्षार .... निर्माण के मुख्य अंग हैं।

(iii) डिटरजेण्ट जल के सतही दबाव को .... करते हैं।

(iv) अपमार्जकों के प्रमुख .... संघटक है।

3. 'शोधक पदार्थ' किसे कहते हैं? स्पष्ट कीजिये।

4. अपमार्जक और साबुन की तुलना कीजिये।

5. उत्तम साबुन व डिटरजेण्ट के गुण बताइये।

6. साबुन की विशेषता बताते हुए इनका वर्गीकरण कीजिये।

7. अपमार्जक एवं साबुन की कार्यप्रणाली बताइये।

8. अपमार्जक का संगठन बताइये।

उत्तरमाला :

1. (i) द, (ii) ब, (iii) स, (iv) द

2. (i) कठोर एवं मृदु, (ii) साबुन, (iii) कम, (iv) छः

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

27. वस्त्रों का संग्रहण

Storage of Clothes

वस्त्रों की उचित सुरक्षा एवं विधिवत संग्रहण का सामान्य ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति के लिये आवश्यक है। वस्त्र ही एक ऐसी चीज है जिसका हर एक व्यक्ति से हर समय नाता रहता है। ऐसे में वस्त्रों के सही चयन, कुशलतापूर्वक खरीदारी, सिलाई, धुलाई व इस्तरीकरण से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक चरण है उनका उचित संग्रहण व देख-भाल। थोड़ी-सी असावधानी और उचित संग्रहण व देख-भाल के अभाव में कीमती से कीमती और सस्ते-से-सस्ता वस्त्र खराब हो जाता है, पहनने के लायक नहीं रहता है। अच्छी तरह से रखे हुए वस्त्र ही समय पर उचित परिधान योजना के लिये प्राप्त किये जा सकते हैं। परन्तु कई बार समय के अभाव या सही आदत न होने के कारण वस्त्रों को लापरवाही के साथ इधर-उधर डाल देते हैं, वस्त्रों को न समेटा जाता है, न सलीके से हैंगर पर टांगा जाता है, न तह लगाकर अलमारी या संदूक में रखा जाता है और न ही सही समय पर धोया जाता है। इस प्रकार से रखे गये वस्त्रों को फिर से नहीं पहना जा सकता और न ही पहनने के लायक वो वस्त्र रहते हैं। ऐसे में अगर अचानक हमें किसी पार्टी में जाना है तो तैयार होने के लिये जो पोशाक हमें पहननी है वो या तो गंदी है या प्रेस नहीं है, हुक या बटन व चेन खराब व टूटे हुए हैं, मैचिंग रूमाल गंदा है, टाई प्रेस नहीं है, मोजे यथा स्थान पर नहीं है। यह सब कारण से पार्टी में जाने का मजा और मूड, दोनों खराब हो जाते हैं। साथ ही पार्टी में समय से भी नहीं पहुंचा जाता है। अत: यह अत्यन्त आवश्यक है कि वस्त्रों की देख-भाल और संग्रहण उचित तरीके से किया जाये।

संग्रहण के चरण

1. स्थान : उपयुक्त और उचित संग्रहण के लिये स्थान का चयन करना अनिवार्य है। घर के जिस हिस्से में वस्त्रों को रखना है वह स्थान नमी व पानी से दूर होना चाहिये। सभी वस्त्रों को उनकी प्रकृति व किस्म के हिसाब से अल्प व अधिक समय के लिये सहेज कर रखना पड़ता है। वस्त्रों को रखने के लिये बॉक्स-अलमारी का प्रयोग किया जाता है। ये लकड़ी, लोहे व स्टील के हो सकते हैं। इनके अलावा घरों में जो दीवार में खुली अलमारी बनी होती है उसमें भी वस्त्रों को सहेजा जाता है। अटैची व बैग में भी वस्त्रों को रखा जा सकता है। परन्तु अलमारी एक ऐसा स्थान है जो वस्त्रों के लिये उपयुक्त माना जाता है परन्तु मौसम के अनुसार संग्रहण के लिये तो बॉक्स या संदूक ही उपयुक्त होता है। जहां वस्त्रों का संग्रहण करना है वो जगह, संदूक, बॉक्स, अलमारी आदि सभी साफ-सुथरे व नमी रहित होने चाहिये।

2. वस्त्रों की छँटाई : संग्रहण करने में वस्त्रों की छँटाई आवश्यक है। सबसे पहले ये सुनिश्चित कर लेना आवश्यक है कि कौन से वस्त्र कब-कब काम आते हैं, किन वस्त्रों की आवश्यकता जल्दी-जल्दी अवसरों के अनुसार पड़ती है। जो लम्बे समय के लिये संग्रहित किये जाते हैं, जैसे-मौसम के अनुसार, सर्दी-गर्मी के, उन्हें अलग करना, अवसरों के अनुसार अलग करना, विशेष अवसरों के अनुसार और दैनिक/रोजमर्रा प्रयोग में आने वाले वस्त्रों को अलग करना।

छँटाई करते समय जो वस्त्र घर में धोये जाने वाले हैं और जो शुष्क धुलाई वाले हैं उन्हें अलग-अलग करना। दाग-धब्बों का भी ध्यान रखना। अगर लगे हैं तो वस्त्र अलग करना। वस्त्रों की छँटाई करते समय उनमें लगे हुक, आई, काज-बटन, चेन आदि चैक करना। वस्त्र कहीं से फटा हुआ या उधड़ा हुआ न हो। वस्त्र पर लगी सभी परिसज्जाओं को जाँचना जैसे-लेस, फॉल, डिजाइनर बटन उधेड़ना आदि ।

3. स्वच्छ संग्रहण और तत्क्षण मरम्मत : वस्त्रों की छँटाई के बाद उचित और उपयुक्त तरीके से वस्त्रों को धुलवाना अति आवश्यक है और इससे भी ज्यादा आवश्यक है वस्त्रों की मरम्मत करना, जिस भी वस्त्र का बटन, हुक, चेन आदि खराब है, उन सब को ठीक करना, अगर वस्त्र कट-फट गया है तो रफू करना या करवाना आवश्यक है। किसी भी हाल में दाग-धब्बों वाले वस्त्र संग्रहित न करें। पहले दाग-धब्बों को छुड़ा लें। संग्रहण से पहले वस्त्रों को धोना, सुखाना, प्रेस करना आदि क्रियाओं को सम्पूर्ण करना जरूरी होता है।

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर हम वस्त्रों का संग्रहण उचित तरीके से कर पायेंगे और वस्त्रों को नुकसान से भी बचा पायेंगे। अन्तिम प्रक्रिया वस्त्रों की संग्रहण में वो ये कि वस्त्रों का इस्तेमाल और प्रयोग एवं

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

उपयोगिता के अनुसार बांट लेना उपयुक्त होता है। जैसे-नियमित रूप से वर्षभर पहने जाने वाले वस्त्र, अवसर के अनुसार, मौसम के अनुसार इन सबके अलावा घर के सदस्यों के अनुसार वस्त्रों का संग्रहण किया जाता चाहिये।

1. नियमित रूप से वर्षभर पहने जाने वाले वस्त्रों का संग्रहण : वस्त्र हमारे जीवन के अभिन्न अंग हैं। बिना वस्त्रों के जीवन की और दैनिक क्रियाकलापों की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वस्त्रों के संग्रहण में सबसे कठिन कार्य नियमित और दैनिक प्रयोग में आने वाले वस्त्रों का संग्रहण और उनकी व्यवस्था को बनाये रखना है। चूंकि ये वस्त्र नियमित रूप से इस्तेमाल होते हैं अत: इनका संग्रहण ऐसी जगह पर होना चाहिये कि जहां से जरूरत के मुताबिक हम वस्त्रों को बिना परेशानी के निकाल कर इस्तेमाल कर सकें।

प्रतिदिन उपयोग होने वाले वस्त्र, जैसे-घर में पहनने वाले, रात्रि में पहनने वाले, स्कूल गणवेश, नैपकिन, मौजे आदि ऐसे वस्त्र हैं जिनको लगभग रोजाना धोना आवश्यक होता है। उचित तरीके से सुखाये, तह लगाये और प्रेस करके रखे वस्त्र ही व्यवस्थित होते हैं।

इन दैनिक प्रयोग में आने वाले वस्त्रों का संग्रहण स्थल अलमारी से ज्यादा उपयुक्त कोई स्थल नहीं हो सकता। क्योंकि इसमें कई साइज की रैक व सेल्फ लगी रहती है। वस्त्रों की साइज के हिसाब से अलमारी के रैक व सेल्फ में वस्त्र रखे जा सकते हैं। जिन वस्त्रों को तह लगा कर नहीं रख सकते उनको टांगने की जगह भी अलमारी में होती है। साड़ी, कोट-पैंट, शर्ट आदि टांगने के लिये इनके अनुसार ही हैंगर का प्रयोग करना चाहिये। इस तरह से रखे व टंगे वस्त्रों की तह खराब नहीं होती और समय पर सही व अच्छी अवस्था में पहनने के लिये सुलभ हो जाते हैं।

अलमारी में छोटे-छोटे रैक भी होते हैं जिनमें छोटे वस्त्रों को रखा जा सकता है, जैसे-रूमाल, मौजे, बनियान एवं अण्डरवियर आदि। इससे आवश्यकता पड़ने पर ये सभी छोटे वस्त्र एक ही स्थान पर मिल जाते हैं।

परिधान-अलंकरण को रखने के लिये भी अलमारी में छोटे रैक बने होते हैं, जिनमें-टाई, टाई-पिन, कप-लिंग, कुरते में लगने वाले बटन आदि। ऐसा करने से समय पर ये छोटी-छोटी और महत्त्वपूर्ण चीजें आसानी से उपलब्ध हो जाती है। कई बार कुछ परिधान ऐसे होते हैं जिनको एक बार पहनने के बाद दुबारा पहनना चाहते हैं, ऐसे में उन वस्त्रों का पसीना हवा में अच्छे से सुखा कर हैंगर में टांग कर अलग से उचित स्थान पर रख देना चाहिये। संग्रहण करते समय कभी भी गन्दे वस्त्रों को साफ वस्त्रों के साथ नहीं रखना चाहिये।

2. अवसर के अनुसार वस्त्रों का संग्रहण : भारतीय संस्कृति में अवसरों के अनुसार परिधान/वस्त्र धारण करने की परम्परा है। विवाह, त्योहार, उत्सव एवं विभिन्न अलग-अलग समारोह में कीमती वस्त्रों को धारण किया जाता है। बनारसी, ब्रोकेड, असली जरी-गोटे और कीमती रत्नों से जड़ित वस्त्र इत्यादि को विशेष देख-भाल और संग्रहण की आवश्यकता होती है। क्योंकि इनको लम्बे समय के लिए सहेज कर रखना होता है। इसके लिये संदूक, अटैची और बन्द अलमारी का उपयोग किया जा सकता है। इनको ऊनी और गर्म कपड़ों के साथ नहीं रखना चाहिये। असली सोने-चाँदी से जड़े वस्त्र, बनारसी साड़ियाँ, ब्रोकेड, जरी-गोटे के वस्त्रों को साफ-सुथरे मलमल के कपड़े में लपेट कर रखना चाहिये। इससे जरी व गोटा और कीमती रत्न काले नहीं पड़ते और खराब नहीं होते। जिस जगह पर वस्त्रों को सहेज रहे हैं, जैसे-संदूक, अलमारी उनको साफ कर, नीम की सूखी पत्तियां बिछाकर, साफ कपड़ा बिछाकर कीमती कपड़ों को रखना चाहिये। समय-समय पर इन जरी वाले वस्त्रों को हवा में फैलाकर तह बदलकर रखते रहना चाहिये। इससे वस्त्र की गुणवत्ता बनी रहती है। रेशमी वस्त्रों को भी उपरोक्त कीमती वस्त्रों की ही तरह से सहेज कर रखना चाहिये। इन्हें भी समय-समय पर खुली हवा में फैला कर इनकी भी तह बदल देनी चाहिये। चूंकि रेशमी वस्त्र कीमती होने के साथ नाजुक भी होते हैं अत: विशेष देख-भाल की आवश्यकता होती है।

3. मौसम के अनुसार वस्त्रों का संग्रहण : मौसम के अनुसार वस्त्रों को एक लम्बे समय के लिये सहेजा जाता है। संग्रहण से पहले सभी गर्म कपड़ों को धुलाई या शुष्क धुलाई करवा या कर लेनी चाहिये। ऊनी वस्त्रों के लिए बॉक्स, संदूक या आजकल लकड़ी का बॉक्स वाला दीवान, उपयुक्त स्थान है। संदूक को साफ-सुथरा करके, नीचे अखबार बिछा देने चाहिये। नीम की सूखी पत्तियां या नेप्थलीन की गोलियां डाल देनी चाहिये। अब वस्त्रों को अच्छे से तह लगा कर एक के ऊपर एक परत बनाते हुए रखे इन कपड़ों के बीच-बीच में भी नेफ्थलीन की गोलियां डाल देनी चाहिये। शुष्क धुलाई किये वस्त्रों को अखबार में लपेट कर रखना चाहिये जबकि कोट, जैकेट, चमड़े की जैकेट, फर के कोट इत्यादि को कवर में रखकर अलमारी में टांग देना चाहिये जिससे उनकी प्रेस व क्रीज खराब न हो पर अलमारी में बंद रहे।

कम्बल, रजाई आदि का संग्रहण शीत ऋतु के जाने के बाद कर देते हैं। संग्रहण करने से पहले रजाई व कम्बल के कवर उतार लेने चाहिये। उसके बाद रजाइयों को अच्छे से धूप दिखा कर और कम्बल को धुलवा कर या शुष्क धुलाई करवा कर, बड़े बिस्तर रखने वाले संदूक में नेफ्थलीन की गोलियां डाल कर, सहेजकर रखने चाहिये। रजाइयों और कम्बलों के कवर को डिटॉलयुक्त पानी से धो कर अच्छे से सुखा कर रखना चाहिये। इन कपड़ों की तहों के बीच-बीच में नेफ्थलीन की गोलियां रखनी चाहिये।

वस्त्रों का संग्रहण करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिये :

1. संग्रहण करने से पहले वस्त्रों की छँटाई कर लेनी चाहिये।
2. संग्रहण से पहले वस्त्रों की मरम्मत एवं सफाई कर लेनी चाहिये।
3. वस्त्रों पर लगी अलंकरण सामग्री जो हटाई जा सके, उतार लेनी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

चाहिये।

4. जिस स्थान पर संग्रहण कर रहे हैं वह स्थान साफ–सुथरा नमी रहित होना चाहिये।

5. वस्त्रों को भी अच्छे से धूप में सुखाकर ही सहेजना चाहिये।

6. ये सुनिश्चित करें कि वस्त्र पर किसी भी प्रकार की धूल व गन्दगी न लगी हो।

7. साफ वस्त्रों के साथ गन्दे वस्त्रों का संग्रहण नहीं करना चाहिये।

8. रेशमी व महंगे जरी–गोटे, ब्रोकेड व बनारसी वस्त्रों को समय–समय पर खुली हवा में फैलाकर और तह बदल कर रखना चाहिये।

9. ऊनी वस्त्रों को कीड़ों से बचाने के लिये उन्हें अखबार में लपेट कर रखना चाहिये।

10.ए कब ारउ पयोगक रनेके ब ादप रिधानक ोख ुलीह वाम ें सुखाकर अलग रखना चाहिये।

वस्त्र संग्रहण से लाभ :

1. वस्त्रों की कार्यक्षमता के साथ उनकी उम्र भी बढ़ती है।
2. वस्त्र सुरक्षित रहते हैं और समय पर सही अवस्था में उपलब्ध होते हैं।
3. कीमती और दुर्लभ वस्त्रों को नवीन, जीवन्त और नष्ट होने से बचाया जा सकता है।
4. वस्त्रों के संग्रहण से समय, धन व श्रम की बचत होती है।
5. संग्रहण से वस्त्रों का दुरुपयोग नहीं होता है।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. वस्त्रों का संग्रहण एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है।
2. नियमित पहने जाने वाले वस्त्रों की साफ–सफाई करना आवश्यक है।
3. वस्त्रों का संग्रहण उनकी जरूरत और उपयोगिता के आधार पर किया जाता है।
4. संग्रहण करते समय वस्त्र साफ हो, धूल–मिट्टी, नमी व गन्दगी से रहित हो।
5.स ंदूकय ाअ लमारीक ोव स्त्रस ंग्रहणके ब ादब न्दक रद ेना चाहिये।
6. संग्रहण के प्रथम चरण प्रमुख–उचित स्थान, वस्त्रों की छँटाई, स्वच्छ संग्रहण और तत्क्षण मरम्मत आदि।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) वस्त्रों के संग्रहण से बचत होती है :

(अ) समय (ब) धन (स) श्रम (द) उपरोक्त सभी

(ii) किन वस्त्रों को समय–समय पर खुली हवा में फैलाकर तह बदलनी चाहिये।

(अ) ऊनी वस्त्रों की (ब) सूती वस्त्रों की
(स) रेशमी वस्त्रों की (द) उपरोक्त सभी

(iii) मौसम के अनुसार वस्त्रों का संग्रहण करते हैं :

(अ) अल्प काल के लिये (ब) दीर्घकाल के लिये
(स) एक महीने के लिये (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iv) अखबार कपड़ों को बचाता है :

(अ) कीड़ों से (ब) नमी से
(स) फफूंद से (द) सड़ने से

(v) वस्त्र रखने की संदूक और अलमारी होनी चाहिये।

(अ) साफ व नम (ब) बड़ी व खुली
(स) स्वच्छ व सूखी (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) संग्रहण से वस्त्रों को .... होने से बचाया जा सकता है।

(ii) संग्रहण से वस्त्रों की .... एवं .... बढ़ जाती है।

(iii) .... कपड़ों के साथ .... कपड़ों का संग्रहण नहीं करना चाहिये।

(iv) संग्रहण करते समय .... की गोलियों का इस्तेमाल करना चाहिये।

(v) सर्वप्रथम वस्त्रों की .... करनी चाहिये, तत्पश्चात् संग्रहण।

3. वस्त्रों का संग्रहण क्यों अनिवार्य है?

4. स्वच्छता से संग्रहित वस्त्रों का महत्त्व बताइये।

5. वस्त्रों का उचित संग्रहण करते समय किन बिन्दुओं को ध्यान में रखेंगे?

6. वस्त्रों को समय–समय पर धूप–हवा दिखाना क्यों अनिवार्य है? स्पष्ट कीजिये।

7. संग्रहण से पूर्व वस्त्रों की छँटाई व मरम्मत आवश्यक है। क्यों? स्पष्ट कीजिये।

8. दैनिक प्रयोग में आने वाले वस्त्रों की सफाई अनिवार्य है। विवेचना करें।

9. महंगे व कीमती वस्त्रों की संग्रहण प्रक्रिया का वर्णन कीजिये।

उत्तरमाला :

1. (i) द, (ii) स, (iii) ब, (iv) अ, (v) स

2. (i) नष्ट, (ii) कार्यक्षमता एवं आयु, (iii) साफ, गन्दे/ऊनी, रेशमी, (iv) नेफ्थलीन, (v) छँटाई

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई IV – पारिवारिक संसाधन प्रबंध

28. पारिवारिक आय

Family Income

परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। धन के अभाव में जीवन बहुत ही कष्टदायी, दयनीय एवं तनावग्रस्त हो जाता है। इसके अभाव में व्यक्ति अपनी आवश्यक आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं कर पाता है जिससे उसकी कार्यक्षमता प्रभावित होती है। इसके विपरीत पर्याप्त धन से परिवार सुखी, समृद्ध एवं सम्पन्न होता है तथा जिस परिवार की आय अधिक होगी तो उसका रहन-सहन का स्तर भी ऊँचा होगा। परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हर परिवार को कुछ-न-कुछ आर्थिक कार्य करना पड़ता है जिससे धनोपार्जन किया जा सके।

अत: आय एक निश्चित अवधि में अर्जित की गई वह धन राशि है जो आर्थिक प्रयत्नों के फलस्वरूप प्राप्त होती है तथा जिसमें अन्य सुविधाएं जैसे नि:शुल्क मकान, मुफ्त चिकित्सा, मुफ्त शिक्षा, यात्रा व्यय आदि सम्मिलित होते हैं।

परिभाषा–

निकेल एवं डांर्सी के अनुसार 'पारिवारिक आय मुद्रा, वस्तुओं, सेवाओं के संतोष का प्रवाह है जो परिवार के अधिकार में उसकी आवश्यकताओं के निर्वाह हेतु आता है।

वर्तमान समय में मुद्रा ही क्रय शक्ति एवं विनियम का माध्यम है। विनियम के द्वारा ही हम वस्तु या सेवा को प्राप्त कर सकते हैं और आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं। आय में उन सभी लाभ एवं सेवाओं को शामिल किया गया है जो एक निश्चित समय में प्राप्त होती है। प्रत्येक परिवार की आय समान नहीं होती है।

पारिवारिक आय से तात्पर्य सिर्फ मुद्रा या नकद रूप से नहीं है, अपितु यह तो कुल आय का एक अंश है। यदि कोई वस्तु या सेवा जैसे- मकान, शिक्षा, चिकित्सा सेवा आदि मुफ्त में प्राप्त होती है तो वह भी पारिवारिक आय का हिस्सा होती है। अत: पारिवारिक आय एक निश्चित अवधि में अर्जित धन राशि, वस्तुएँ व सुविधाएँ हैं जिन्हें परिवार अपनी आवश्यकताओं व इच्छाओं की पूर्ति हेतु उपयोग में लेकर संतोष प्राप्त करता है।

व्यक्ति सुखी एवं सम्पन्न अधिकाधिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करके बनता है या अन्य शब्दों में जिस परिवार की आय अधिक होती है, उसका रहन-सहन का स्तर भी उत्तम होता है।

ग्रास एण्ड कैण्डल के अनुसार, 'पारिवारिक आय मुद्रा, वस्तुओं, सेवाओं तथा संतोष का वह प्रवाह है, जो परिवार की आवश्यकताओं तथा इच्छाओं को पूर्ण करने एवं उत्तरदायित्वों के निर्वाह हेतु उसके अधिकार में आता है।'

मुद्रा ही क्रय शक्ति एवं विनिमय का माध्यम है। विनिमय के द्वारा ही हम वस्तु या सेवा को प्राप्त कर सकते हैं और तब ही परिवार की आवश्यकताओंक ापि ूर्तिक रस कतेह ैं ।अ ायम ें उ नस भील ाभए वं सेवाओं को शामिल किया गया है जो एक निश्चित समय में प्राप्त होता है। अधिक आय अर्जित करने वाले धनाढ्य व कम आय अर्जित करने वाले निम्न आय वर्ग की श्रेणी में आते हैं।

पारिवारिक आय के प्रकार

परिवार की आय को तीन वर्गों में विभाजन किया जा सकता है-

चित्र 28.1 पारिवारिक आय का वर्गीकरण

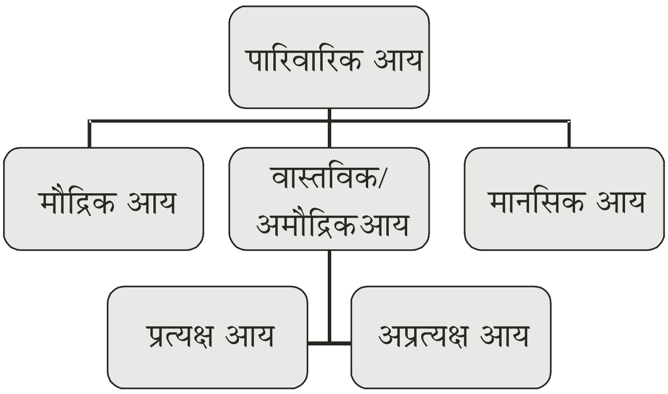

1. मौद्रिक आय: परिवार को निश्चित समय में मुद्रा अथवा धन के रूप में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्राप्त होने वाली आय मौद्रिक आय कहलाती है। मौद्रिक आय विभिन्न प्रकार के आर्थिक प्रयासों से प्राप्त होती है अर्थात् वे कार्य जिनके द्वारा हम धनार्जन करते हैं या जिन कार्यों के बदले हमें आय प्राप्त होती है। मौद्रिक आय परिवार को विभिन्न स्रोतों से प्राप्त हो सकती है। जैसे-पैतृक सम्पत्ति, किराया, वेतन, मजदूरी, उपहार, लॉटरी आदि। यह दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, वार्षिक हो सकती है। यह कार्य विशेष पर निर्भर करता है। मौद्रिक आय एक व्यय शक्ति है जिसके खर्च से व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है। इससे हम दुनिया की अनेक वस्तु व सेवाएँ प्राप्त कर सकते हैं।

ग्रॉस एवं क्रेन्डल के अनुसार, 'मौद्रिक आय से तात्पर्य उस क्रय शक्ति से है जो मुद्रा के रूप में किसी निश्चित समय में एक परिवार को प्राप्त होती है।

2. वास्तविक अमौद्रिक आय :- विशेषअ वधिमें प्राप्तह ोनेव ाली वस्तुओं एवं सेवाओं को वास्तविक आय कहते हैं। इन वस्तुओं एवं सेवाओं को परिवार या तो अपने पारिवारिक व्यक्तियों, मित्रों आदि से प्राप्त करता है या फिर बिना मुद्रा खर्च किये सुविधा प्राप्त करता है। जैसे-मुफ्त चिकित्सा सुविधा, उपहार, मकान आदि।

ग्रॉस एवं क्रेण्डल के शब्दों में 'वास्तविक आय वस्तुओं एवं सेवाओं के उस प्रवाह को कहते हैं जो एक परिवार को निश्चित समय में उपयोग के लिए प्राप्त होता है।' वास्तविक आय दो प्रकार की होती है-

(i) **प्रत्यक्ष आय :** प्रत्यक्ष आय के अन्तर्गत वे वस्तुएं एवं सेवाएँ आती हैं जो एक परिवार बिना मुद्रा को व्यय किए प्राप्त करता है। जैसे-घर के बगीचे से फल, सब्जी, नौकरी के साथ मुफ्त मकान, चिकित्सा सुविधा, पैतृक सम्पत्ति, उपहार आदि। सार्वजनिक सेवाओं के उपयोग से लाभ भी प्रत्यक्ष आय है जैसे-पुस्तकालय, पार्क, पुलिस व्यवस्था आदि।

(ii) **अप्रत्यक्ष आय :** यह वह आय है जिसके अन्तर्गत वस्तु अथवा सेवाओं को मुद्रा के बदले प्राप्त किया जाता है। साधारणत: धन के बदले उपलब्ध वस्तु या सेवा अथवा वस्तु के बदले वस्तु देने पर प्राप्त की जाने वाली अप्रत्यक्ष आय होती है जैसे-किराया देने पर मकान उपलब्ध होना। ग्रॉस एवं क्रेण्डल के शब्दों में 'अप्रत्यक्ष आय के अन्तर्गत वे वस्तुएं या सेवाएँ आती हैं जो कि परिवार को किसी चीज के बदले में साधारणत: मुद्रा के बदले में ही प्राप्त होती है।

3. मानसिक आय : मुद्रा का व्यय करके मनुष्य किसी वस्तु को प्राप्त करता है। वस्तु का उपभोग करने पर उसे संतोष प्राप्त होता है यही संतुष्टि मानसिक आय कहलाती है। मानसिक आय का केवल अनुभव किया जा सकता है, इसे मापना असंभव है। निकल एवं डॉर्सीके अ नुसार' मानसिकअ ायव हस ंतुष्टिहै ज ोह मद ैनिक अनुभवों, धन के उपयोग या वास्तविक आय से प्राप्त होती है।'

पारिवारिक आय से अधिकतम संतोष विवेकपूर्ण व्यय से होता है, जब आय का उपयोग बहुत सोच-विचार कर परिवार की आवश्यकताओं की प्राथमिकता के अनुसार किया जाता है। मानसिक आय व्यक्तिगत होती है। यह एक आंतरिक भावना है जिसका संबंध मुख्यतया आत्मा के संतोष से होता है। परिवार में सभी सदस्यों की आवश्यकताएँ, रुचि, लक्ष्य अलग-अलग होते हैं तथा संतोष का स्तर भी भिन्न-भिन्न होता है, यही कारण है कि एक ही समय में समान वस्तुओं के उपभोग से प्राप्त होने वाला संतोष अलग-अलग व्यक्तियों के लिए अलग-अलग होता है।

पारिवारिक आय के विभिन्न स्रोत

1. मजदूरी : जीवनयापन हेतु शारीरिक श्रम करने के बदले व्यक्ति को

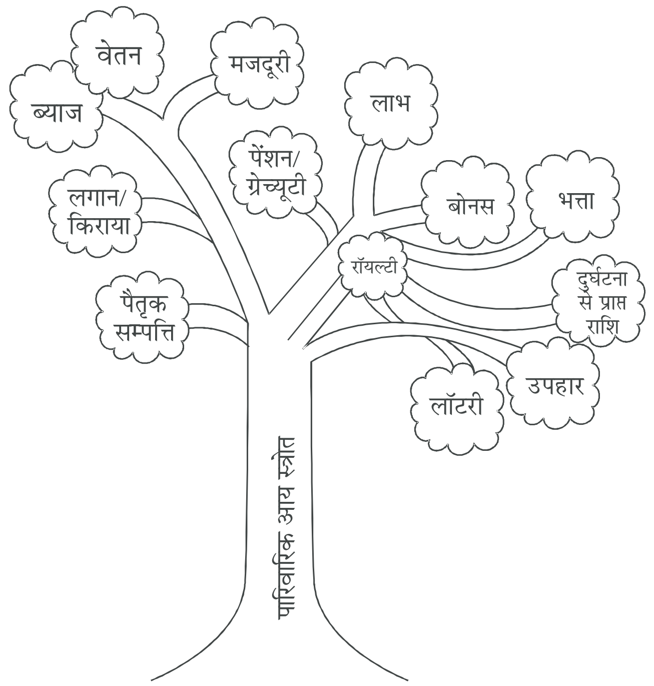

चित्र 28.2 : आय के स्रोत

प्राप्त होने वाली आय मजदूरी कहलाती है। मजदूरी ज्यादातर मुद्रा रूप में तथा कभी-कभी वस्तु या सेवा के रूप में भी दी जाती है। जैसे काम के बदले अनाज आदि। मजदूरी की दर श्रमानुसार व देश की आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है। मजदूरी की अवधि प्रतिदिन, प्रति सप्ताह, अर्द्धमासिक एवं मासिक होती है।

2. वेतन : कई कार्यों को पूरा करने के लिए शारीरिक श्रम के साथ मानसिक श्रम भी करना पड़ता है। उसके प्रतिफल में प्राप्त होने वाली आय को वेतन कहते हैं। यह व्यक्ति की कुशलता, शिक्षा, कार्य की प्रवृत्ति, अनुभव, परिश्रम एवं पद के अनुसार मिलता है। मानसिक कुशलता का होना, अधिक वेतन पाने के लिए आवश्यक है। वेतन अधिकतर मासिक तौर पर दिया जाता है। वेतन वृद्धि वार्षिक होती है। वेतन में महंगाई भत्ता, मकान किराया, यात्रा भत्ता, वाहन सुविधाएँ आदि शामिल होते हैं।

3. ब्याज : व्यक्ति कई बार अपनी जमा पूँजी को किसी बैंक या पोस्ट ऑफिसय ाउ द्योगमें िवनियोगक रताहै इ सकेब दलेमें उ से मूलधन के अतिरिक्त जो कुछ प्रतिदिन के रूप में मिलता है उसे ब्याज कहते हैं। ब्याज के रूप में प्राप्त धन राशि सामान्यत: वेतन एवं

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

मजदूरी से कम होती है। ब्याज एक ऐसी आय है जो हमेशा बदलती रहती है और यह धन राशि वेतन से अधिक हो जाती है। ब्याज की दर ऋण की प्रकृति पर निर्भर करती है तथा समय-समय पर घटती व बढ़ती रहती है।

4. लगान या किराया : धनार्जन के कार्य के लिए भूमि की सेवाएँ प्रदान करने के फलस्वरूप जो आय प्राप्त होती है, उसे लगान कहा जाता है। यदि भूमि किसी दूसरे को उपयोग के लिए दी जाती है तो अपनी भूमि का उपयोग करने वाले से प्रतिफल के रूप में लगान वसूल किया जाता है। इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति अपना मकान अन्य व्यक्ति को रहने के लिए देता है तो वह व्यक्ति रहने के बदले मकान मालिक को एक निश्चित राशि देता है, जो किराया कहलाता है। लगान व किराया आय के साधन होते हैं।

5. लाभ : कई व्यक्ति पूँजी का विनियोग कर उद्योग या व्यापार करते हैं, किसी वस्तु का उत्पादन कर उसे बेचते हैं। उत्पादन के साधनों की लागत का वितरण करने के बाद जो पैसा व्यापारी के पास बचता है वह लाभ कहलाता है। लाभ उद्योग की प्रवृत्ति, साहस व प्रबन्ध कुशलता पर निर्भर करता है। लाभ कम या ज्यादा हो सकता है।

6. पेंशन एवं ग्रेच्यूटी : एक निश्चित उम्र के पश्चात् व्यक्ति नौकरी से सेवानिवृत्त हो जाता है। सेवानिवृत्ति के बाद मिलने वाली निरन्तर मासिक आय को पेंशन कहते हैं। पेंशन की राशि सेवानिवृत्ति के समय मिलने वाले वेतन पर निर्भर करती है। वेतन का 50 प्रतिशत पेंशन के रूप में प्रतिमाह सेवानिवृत्त व्यक्ति को मिलता रहता है। इसी प्रकार सेवानिवृत्ति के समय कर्मचारी को एक निश्चित राशि संस्थान द्वारा जहाँ वह कार्य कर रहा था प्रदान की जाती है जिसे ग्रेच्यूटी कहते हैं। यह एकमुश्त राशि दी जाती है, पेंशन के समान नियमित रूप में लगातार नहीं दी जाती। वृद्धावस्था में पेंशन एवं ग्रेच्यूटी आय के उत्तम साधन हैं।

7. बोनस : कई व्यावसायिक संस्थाओं एवं उद्योगों में कार्यरत कर्मचारियों को वर्ष मेंएक बार वेतन के अतिरिक्त कुछ अंश कम्पनी अपने लाभ में से देती है जिसे बोनस कहा जाता है। यह व्यक्ति की अतिरिक्त आय होती है जो संस्था के लाभ पर निर्भर करती है। यह विशेषकर त्यौहारों पर दी जाती है जैसे-दीपावली पर कर्मचारियों को एक मास का अतिरिक्त वेतन दिया जाता है।

8. भत्ता : वेतन के अलावा कर्मचारियों को कई प्रकार के भत्ते दिये जाते हैं, जैसे-महंगाई भत्ता, यात्रा भत्ता आदि।

9. बीमारी और दुर्घटना में प्राप्त राशि : कई संस्थान अपने कर्मचारियों को बीमार होने या दुर्घटना होने या दुर्घटना हो जाने पर सुरक्षा और आर्थिक सहायता के रूप में औषधियों का व्यय या चिकित्सा खर्च वहन करने के लिए आर्थिक सहायता देते हैं। ऐसे लाभों को मेडिकल या उपचार सहायता कहा जाता है।

10. रॉयल्टी : लेखक को पुस्तक की बिक्री के अनुपात में प्रकाशक द्वारा दी गई धन राशि रॉयल्टी कहलाती है। यह बिक्री से प्राप्त राशि के निश्चित प्रतिशत के रूप में पहले से ही लेखक एवं प्रकाशक के बीच समझौते के अनुसार दी जाती है।

11. उपहार : जन्म दिवस, त्यौहार आदि पर मित्रों एवं रिश्तेदारों द्वारा दी गई धनराशि एवं वस्तुएँ जो व्यक्ति को उपहार स्वरूप दी जाती है, उसे उपहार कहते हैं। इससे परिवार की आय में वृद्धि होती है परन्तु यह नियमित आय नहीं होती है। उपहार की राशि निजी सम्बन्धों, अवसरानुकूल तथा आर्थिक क्षमता के अनुसार भिन्न हो सकती है।

12. लॉटरी : इससे प्राप्त धनराशि एवं वस्तुएँ भी पारिवारिक आय का साधन है। लॉटरी टिकिट बेचने में हजारों लोगों को कमीशन रूप में आय होती है व पुरस्कार रूप में टिकट खरीदने वालों को आय प्राप्त होती है।

13. पैतृक सम्पत्ति : किसी व्यक्ति के मृत्यु के पश्चात् जब उसके उत्तराधिकारियों को उसकी सम्पत्ति प्राप्त होती है तो यह भी उसकी आय का स्त्रोत है।

पारिवारिक आय वृद्धि के साधन :

मानव की आवश्यकताएँ असीमित हैं जिन्हें वह अपनी सीमित आयद्व ाराप ूरान हींक रस कताहै ।प्रत्येकव यक्तिअ पनेप रिवारके सदस्यों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु आर्थिक प्रयास करता है। व्यक्ति अपने अतिरिक्त समय में अपने परिवार के सदस्यों के सहयोग से अपने परिवार की आय में वृद्धि कर सकता है। आजकल महिलाएँ घरेलू कार्यों तक ही सीमित न रहकर हर क्षेत्र में पुरुष के कन्धे से कन्धा मिलाकर आर्थिक सहयोग कर रही है, जिससे परिवार की आर्थिक स्थिति काफी सुदृढ़ बनाने व रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठाने में भागीदार बन रही है।

परिवार के जीवन को स्तर को हम ऊँचा उठा सकते हैं-

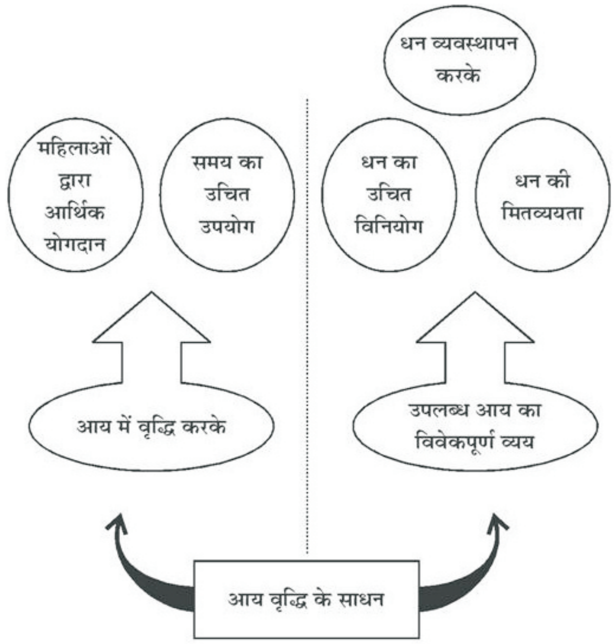

चित्र 28.3 : आय वृद्धि के साधन

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1. परिवार की आय में वृद्धि करके।

2. उपलब्ध आय को विवेकपूर्ण व्यय करके।

1. परिवार की आय में वृद्धि करके-

(i) **महिलाओं द्वारा आर्थिक योगदान करना :** आज महिला की स्थिति में काफी परिवर्तन आया है। वे घरेलू जिम्मेदारियाँ निभाने के साथ-साथ धनोपार्जन हेतु घर के बाहर या घर के अन्दर ही विभिन्न कार्यों द्वारा परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाने में सहायक है। गृहिणी को धनोपार्जन करने में गृह उद्योग विभाग सहायता, प्रशिक्षण, ऋण सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। दूध से बनी वस्तुएँ उत्पादित करना, मुर्गीपालन, रेशम के कीड़े का पालन आदि प्रमुख है। फल व सब्जियों का संरक्षण, साबुन बनाना, बड़ी, मंगौड़ी, ट्यूशन, सिलाई आदि कर बड़ी कुशलता से आय अर्जित कर सकती है।

(ii) **समय का उचित उपयोग :** घर व बाहर के कार्यों में सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है। पारिवारिक आय की कमी को समय पर कार्य सम्पादित कर रिक्त समय का सदुपयोग किया जा सकता है। दैनिक घरेलू कार्यों को यथा समय सम्पन्न करके जो अतिरिक्त समय बचता है उसका उपयोग धनोपार्जन के लिए किया जा सकता है। समय को अनावश्यक व्यर्थ न करें। समय का उचित उपयोग करने के लिए उचित प्रबंध प्रक्रिया अपनानी चाहिए।

(2) उपलब्ध आय का विवेकपूर्ण व्यय :

(i) **धन की मितव्ययता :** प्रत्येक वस्तु खरीदने हेतु धन की आवश्यकता होती है लेकिन धन का उपयोग योजनाबद्ध तरीके से किया जाए तो पारिवारिक आय में वृद्धि हो सकती है। आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए जितना महत्त्व आय में वृद्धि का है उससे भी कहीं अधिक महत्त्व आय को मितव्ययतापूर्वक व्यय करने का है।

(ii) **धनव्यवस्थापन करके :** धन एक सीमित साधन है, जिस पर परिवार की सम्पूर्ण व्यवस्था का संचालन आश्रित है। सीमित आय में अधिकाधिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने से मितव्ययता रहती है। बिना सोचे-विचारे व्यय करने की अपेक्षा योजनानुसार व्यय करने से अधिक समृद्धि एवं संतुष्टि मिलती है।

(iii) **धन का उचित विनियोग :** प्रत्येक व्यक्ति को अपने भविष्य की सुरक्षा हेतु अपनी आय में से कुछ हिस्सा बचा कर रखना चाहिए तथा इसे इस तरह निवेश करना चाहिए ताकि मूलधन की सुरक्षा के साथ-साथ कुछ धनराशि ब्याज अथवा लाभांश के रूप में प्राप्त होती रहे। भविष्य के लिए की गई बचत को उचित ढंग से बैंक, पोस्ट ऑफिस आदि में रखकर लाभ उठाना चाहिए।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. मनुष्य को अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन की जरूरत होती है।
2. धन को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति कोई-न-कोई आर्थिक कार्य करता है, उसके काम के बदले में उसे जो मुद्रा प्राप्त होती है वह आय कहलाती है।
3. पारिवारिक आय तीन प्रकार की होती है- मौद्रिक , वास्तविक तथा मानसिक।
4. पारिवारिक आय को कई साधनों से प्राप्त किया जा सकता है। जैसे- वेतन, कृषि, मजदूरी, लाभांश, पेंशन इत्यादि।
5. परिवार आय परिवार के सदस्यों की शिक्षा, पद, परिवार में सदस्यों की संख्या, योग्यता इत्यादि पर निर्भर करती है।
6. वर्तमान युग के असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पारिवारिक आय में वृद्धि की आवश्यकता होती है जो कि धन की मितव्ययतापूर्ण खर्च करके एवं महिलाओं द्वारा लघु उद्योग स्थापित करके की जा सकती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न में से सही उत्तर चुनें :

(i) पारिवारिक आय के .... प्रकार हैं।

(अ) दो (ब) एक

(स) तीन (द) पाँच

(ii) पारिवारिक आय के स्रोत हैं-

(अ) लगान (ब) ग्रेच्यूटी

(स) मजदूरी (द) सभी

(iii) वस्तुओं एवं सेवाओं का प्रवाह जो कि एक परिवार को निश्चित समय में उपयोग के लिए प्राप्त होते हैं-

(अ) वास्तविक आय (ब) मौद्रिक आय

(स) पारिवारिक आय (द) दैनिक आय

(iv) मानसिक आय का सम्बन्ध मुख्य रूप से होता है-

(अ) सेवाओं से (ब) आत्मा के संतोष से

(स) मुद्रा से (द) वस्तुओं से

(v) आय वृद्धि के साधन हैं-

(अ) धन का उचित उपयोग (ब) समय का सही उपयोग

(स) घरेलू उद्योग धन्धे (द) उपरोक्त सभी

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

(i) विशेष अवधि में प्राप्त होने वाली वस्तुओं एवं सेवाओं का .... आय कहते हैं।

(ii) पुस्तक की बिक्री के अनुपात में प्रकाशक द्वारा दी गई धनराशि .... कहलाती है।

(iii) मानव की .... आवश्यकताएँ हैं जिन्हें वह अपनी .... आय द्वारा पूरा करता है।

(iv) .... ही क्रय शक्ति एवं विनिमय का माध्यम है।

(v) .... आय के अन्तर्गत वस्तु अथवा सेवाओं को मुद्रा के बदले प्राप्त किया जाता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

3. पारिवारिक आय के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिये?
संक्षेप में टिप्पणी लिखिये।

4. पारिवारिक आय के मुख्य चार स्त्रोतों के बारे में संक्षेप में लिखिये।

5. आय वृद्धि के साधनों को समझाइये।

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) द (iii) अ (iv) ब (v) द

2. (i) वास्तविक/मौद्रिक आय (ii) रायल्टी (iii) असीमित, सीमित (iv) मुद्रा (v) अप्रत्यक्ष

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

29. घरेलू हिसाब-किताब

Household Account

पारिवारिक आय के द्वारा व्यक्ति अपनी जरूरतों, आवश्यकताओं को पूरा करता है, जिसके लिए उसे अपनी आय को खर्च करना पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी अलग आय होती है तथा दैनिक जरूरतें भी विभिन्न होती हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आय के अनुरूप ही अपनी आवश्यकताओं पर होने वाले व्यय को तय करता है वह अपनी आय को किस प्रकार, कैसे और कहाँ व्यय करता है, पारिवारिक आय कहलाता है। अर्थात् पारिवारिक व्यय व्यक्ति द्वारा अर्जित आय का वह अंश होता है जो पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निश्चित समय में वस्तुओं एवं सेवाओं पर व्यय किया जाता है।

कान्ति पाण्डेय के अनुसार 'परिवार विभिन्न आर्थिक प्रयत्नों से जो भी धन उपार्जित करता है उसे कैसे, कितनी तथा किस प्रकार खर्च करता है इसे ही व्यय कहते हैं।'

पारिवार व्यय को मुख्यतया दो भागों में विभक्त किया जाता है-

(1) उपभोग व्यय- आय का वह भाग जो उपभोग हेतु विभिन्न आवश्यक सामग्री पर खर्च किया जाता है, वह उपभोग व्यय कहलाता है। प्रत्येक परिवार को प्रतिमाह अपनी आय में से एक निश्चित राशि भोजन, वस्त्र, घर आदि पर अनिवार्य रूप से खर्च करनी पड़ती है। प्रत्येक परिवार की अधिकांश आय उपभोग की वस्तुओं पर ही व्यय होती है।

(2) बचत- उपभोग के बाद जो धनराशि शेष रह जाती है उसे बचत कहते हैं। बचत का उपयोग भविष्य की आवश्यकताओं हेतु किया जाता है, अत: इसे सुरक्षित रखा जाता है या फिर धन को उत्पादक के रूप में विनियोग किया जाता है।

उपभोग व्यय के रूप

(1) निश्चित व्यय- निश्चित अवधि पर जो व्यय दोहराए जाते हैं जैसे-राशन का बिल, मकान किराया, स्कूल फीस इत्यादि निश्चित व्यय के अन्तर्गत आते हैं। इस व्यय की मदें प्रतिमाह एक समान होती है।

(2) अर्द्ध-निश्चित व्यय- आय तथा परिस्थिति के अनुसार यह व्यय परिवर्तित होते रहते हैं। आय अधिक हो तो उच्च कोटि के भोजन एवं वस्त्र पर खर्च किया जा सकता है। इसी प्रकार कम आय होने पर व्यय कम किया जा सकता है। आराम एवं विलासिता की वस्तुएँ इस व्यय के अन्तर्गत आती हैं। त्यौहारों एवं विशेष पर्वों पर किया गया व्यय भी इसी श्रेणी में आता है।

(3) अन्य व्यय- ये व्यय अनिर्धारित होते हैं। यह व्यय व्यक्ति की आय एवं इच्छा पर निर्भर करते हैं। जैसे-मनोरंजन, आभूषण, वस्त्र इत्यादि, व्यक्ति अपनी आय के अनुसार इन पर व्यय करता है।

पारिवारिक आय एवं व्यय की आवश्यकता :

परिवार अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न वस्तुओं पर सेवाओं का उपभोग कर संतोष प्राप्त करते हैं। आय और व्यय एक अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता एवं कार्य क्षमता के अनुरूप आय अर्जित करता है और अपनी इच्छानुसार व्यय निर्धारित भी करता है। मनुष्य आर्थिक क्रियाओं की मूल इकाई है तथा उपभोग व्यय आर्थिक क्रियाओं का संचालक है।

आवश्यकताएँ अनंत होती हैं, जिसके लिए परिवार उपभोग व्यय करता है। उपभोग वस्तुओं की माँग में वृद्धि होने पर उत्पादन की गति और मात्रा भी बढ़ती है। उत्पादित वस्तुओं के विनिमय से व्यक्ति अपनी इच्छित वस्तुएँ प्राप्त कर सकता है। उत्पादित माल के वितरण से मनुष्य अपनी आय प्राप्त करता है तथा आय का विनिमय कर ही वह आवश्यक वस्तुओं को प्राप्त कर उपभोग कर सकता है। इस प्रकार आय एवं व्यय की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। इसी आधार पर विश्व में विभिन्न आर्थिक गतिविधियों का संचालन होता है।

आय एवं व्यय का ब्यौरा (बजट)-

प्रत्येक व्यक्ति अपनी आय का उचित उपयोग कर अधिकतम संतोष प्राप्त करना चाहता है। आय के सदुपयोग हेतु योजनाबद्ध प्रबन्ध करना जरूरी है, इसके लिए उसे आय को व्यय करने से पहले अपना पारिवारिक बजट बनाना चाहिए। पारिवारिक बजट में परिवार की आय एवं व्यय का विस्तृत ब्यौरा दिया जाता है और उसका सम्बन्ध किसी विशेष अवधि (एक माह/एक वर्ष) से होता है।

परिभाषा :-

कान्ति पाण्डे के शब्दों में 'बजट किसी निश्चित अवधि के पूर्व

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अनुमानित आय-व्यय के विस्तृत ब्यौरे को कहते हैं।' आय से अधिकतम संतोष प्राप्त करने के लिए व्यय करने से पूर्व आय के अनुसार विभिन्न मदों में पूर्व अनुमानित ब्यौरा तैयार कर लेना चाहिए।

सरल शब्दों में 'किसी परिवार की विशेष अवधि में होने वाली आय और व्यय के विस्तृत ब्यौरे को पारिवारिक बजट कहते हैं।'

बजट का महत्त्व :-

प्रत्येक परिवार में सुख, संतोष, समृद्धि हेतु जरूरी है कि आय एवं व्यय में संतुलन बना रहे। पारिवारिक बजट की सहायता से गृहिणी आसानी से आय-व्यय में सामंजस्य बैठा कर आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है। इसलिए बजट विभिन्न कारणों से महत्त्वपूर्ण है-

* बजट आवश्यकताओं की प्राथमिकता निर्धारण में अत्यन्त सहायक सिद्ध होता है। जरूरी आवश्यकताओं एवं गैर जरूरी आवश्यकताओं को पूरा करने में बजट बनाना उपयोगी रहता है।

* परिवार के आर्थिक लक्ष्य स्पष्ट करने में बजट की भूमिका रहती है। चाहे वह अल्पकालीन लक्ष्य हो या दीर्घकालीन लक्ष्य। बजट की सहायता से वर्तमान एवं भविष्य की आवश्यकताओं का वितरण सुनिश्चित किया जा सकता है।

* बजट व्यक्ति को अपनी सीमाओं का ज्ञान कराते हुए आय-व्यय का वितरण सिखाता है।

* बजट के द्वारा पारिवारिक व्यय के तरीकों का ज्ञान होता है। आय बढ़ाने में सहायता मिलती है। परिवार के सदस्यों में त्याग, मितव्ययता, सहकारिता की भावना आती है।

* एक परिवार को अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए पारिवारिक बजट का निर्माण करना चाहिए।

बजट के मुख्य बिन्दु :-

प्रत्येक परिवार को पारिवारिक बजट बनाते समय निम्नलिखित बिन्दुओं का ध्यान रखना चाहिए-

1. बजट बनाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को परिवार की आय का सम्पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। किसी भी सदस्य को अपनी आय को छुपाना या बढ़-चढ़ कर नहीं बताना चाहिये।
2. जितनी आय प्राप्त हो उससे ज्यादा खर्च नहीं करना चाहिये।
3. अत्यन्त आवश्यक वस्तुओं पर सबसे पहले व्यय करना चाहिये।
4. आय का वितरण इस प्रकार से होना चाहिये कि परिवार के सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके।
5. बजट में लचीलापन होना चाहिये ताकि आवश्यकता पड़ने पर उसमें परिवर्तन किये जा सके।

पारिवारिक बजट के प्रकार :-

1. संतुलित बजट : इसमें पारिवारिक आय एवं व्यय में सदैव संतुलन रहता है। यह एक साधारण बजट कहलाता है। इसमें अनुमानित आय एवं प्रस्तावित व्यय समान होता है।

2. बचत का बजट : इस प्रकार के बजट में पारिवारिक व्यय, आय से कम होता है। अत: यह आदर्श बजट माना जाता है। इससे परिवार को भविष्य में आर्थिक सुरक्षा मिलती है।

3. घाटे का बजट : इस बजट में व्यय, पारिवारिक आय की तुलना में अधिक होता है। घाटे की पूर्ति उधार या ऋण लेकर पूरी की जाती है।

बजट के विभिन्न मद :-

- भोजन : अनाज, मसाले, घी, तेल आदि।
- वस्त्र : पहनने, ओढ़ने के वस्त्र, घरेलू कपड़े, चादर आदि।
- आवास : मकान किराया, मकान निर्माण, धुलाई, पुताई आदि।
- शिक्षा : स्कूल फीस, हॉस्टल खर्च, कॉपी-किताब खर्च आदि।
- स्वास्थ्य : डॉक्टर की फीस, दवाई, हॉस्पीटल शुल्क आदि।
- यातायात : वाहन, पेट्रोल, बस किराया आदि।
- मनोरंजन : घूमना, खेल सामग्री, टी.वी., पिकनिक आदि।
- अन्य व्यय : अन्य खर्चे- नौकर का वेतन, बिजली खर्च आदि।
- बचत : भविष्य के लिए सुरक्षित रखा जाने वाला आय का अंश।

बजट बनाने की विधि :-

पारिवारिक बजट एक माह के लिए बनाया जाता है। बजट बनाने में व्यक्ति को आय के सभी स्रोतों से प्राप्त आय को मासिक आय में जोड़ना चाहिए। फिर पारिवारिक सदस्यों की आवश्यकतानुसार विभिन्न मदों का निर्धारण कर लेना चाहिए। किस मद पर कितना खर्च करना है यह परिस्थिति व आवश्यकता के प्रकार के अनुसार तय करना चाहिए। बजट बनाने का मूल सिद्धान्त है कि जितनी आय कम होगी, जीवन की अनिवार्य जरूरतों पर उतना ही अधिक प्रतिशत व्यय होगा। इसी सिद्धान्त पर अर्थशास्त्री अर्नेस्ट एंजिल ने जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं पर जीवन स्तर के अनुकूल व्यय का प्रतिशत निर्धारित किया है जिसे हम तालिका द्वारा आसानी से समझ सकते हैं।

तालिका 29.1 : आय के अनुरूप विभिन्न मदों पर प्रतिशत व्यय-

क्र.सं.	व्यय की मदें	व्यय का प्रतिशत		
		निम्न वर्ग	मध्यम वर्ग	उच्च वर्ग
1.	भोजन	60	55	50
2.	वस्त्र	18	18	18
3.	आवास	12	12	12
4.	ईंधन व प्रकाश	5	5	5
5.	शिक्षा, स्वास्थ्य व मनोरंजन	5	10	15

उपरोक्त सारणी के अनुसार, आय में वृद्धि के साथ भोजन पर होने वाला व्यय प्रतिशत घटता है, लेकिन शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पर व्यय प्रतिशत बढ़ता है।

आदर्श बजट :-

पारिवारिक व्यय जब आय से कम होती है तथा आय का कुछ हिस्सा बचा कर भविष्य के लिए रख लिया जाता है, आदर्श बजट कहलाता है। आय व बचत दोनों में वृद्धि होती है। एंजिल के सिद्धान्त में बचत का प्रावधान नहीं है, जबकि आज के युग में बचत आवश्यक मद है।

एंजिल के सिद्धान्त में परिवर्तन करके बचत को शामिल कर नीचे उदाहरण के तौर पर तीन वर्गों का अनुमानित बजट दिया गया है, जिसमें सदस्यों की संख्या एवं उम्र समान है।

बजट का सिद्धान्त घरेलू आय-व्यय का विभिन्न मदों पर प्रतिशत निर्धारण कर एक सफल आदर्श बजट बनाने में मदद करता है। प्रस्तुत बजट एक अनुमानित बजट है, यह पारिवारिक आवश्यकताओं, परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित कर लेना चाहिए।

घरेलू हिसाब-किताब-

पारिवारिक आय सीमित होती है, जिसे ध्यान में रखकर पारिवारिक सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिये। आय का हिसाब-किताब रखकर, गृहस्थी को सुचारु रूप से चलाने की व्यवस्था करनी पड़ती है। गृहिणी के पास लिखित रूप में लेखा-जोखा रखने से खर्च बजट के अनुसार हो रहा है या नहीं, इसका ज्ञान हो जाता है। आय-व्यय का उचित सन्तुलन बनाए रखना आसान हो जाता है। साथ ही अनावश्यक व्यय पर नियंत्रण रहता है। यदि खर्च में वृद्धि हो जाए तो उसे हिसाब रखकर कम किया जा सकता है। इस प्रकार महीने के अंत में बजट के अनुसार बचत भी संभव हो जाती है। घरेलू खर्च में मितव्ययता आती है तथा अनावश्यक व्यय पर प्रतिबन्ध लगता है। हिसाब की आदत डालना उचित व भविष्य के लिए भी लाभदायक रहता है।

हिसाब-किताब की आवश्यकता :-

1. धन व्यवस्थापन के लिए।
2. प्रत्येक वस्तु की कीमत व निश्चित समय में किए गए व्यय की जानकारी के लिए।
3. अनावश्यक खर्चों पर रोक लगाने के लिए।
4. सोच-समझकर खर्च करने के लिए।
5. पारिवारिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए।

हिसाब-किताब के प्रकार :-

1. प्रतिदिन का हिसाब-किताब- प्रतिदिन किए जाने वाले हिसाब का ब्यौरा रखा जाता है।

तालिका 29.3 : प्रतिदिन का हिसाब-किताब

दिनांक	वस्तु	मात्रा	खर्च
01.09.2016			
02.09.2016			
03.09.2016			
04.09.2016			

2. साप्ताहिक, मासिक हिसाब-किताब- सप्ताह के अंत में प्रतिदिन के

तालिका 29.2 परिवारों का अनुमानित बजट

क्र.सं.	व्यय के मद	विभिन्न आय वर्ग (आय प्रतिमाह (रुपये में)					
		निम्न (5000)		मध्य (20,000)		उच्च (60,000)	
		व्यय	%	व्यय	%	व्यय	%
1.	भोजन	300	60	10,000	50	270000	45
2.	वस्त्र	750	15	3000	15	9000	15
3.	आवास	550	11	2200	11	6600	11
4.	ईंधन, प्रकाश एवं पानी	250	5	1000	5	3000	5
5.	शिक्षा	100	2	800	4	3000	5
6.	स्वास्थ्य	100	2	800	4	3000	5
7.	मनोरंजन	50	1	800	4	3000	5
8.	बचत	200	4	1400	7	5400	9
	कुल	**5000**	**100**	**20000**	**100**	**60000**	**100**

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

खर्च ब्यौरे को जोड़कर हिसाब का ब्यौरा रखा जाता है। इसी तरह सप्ताहों का खर्च जोड़कर मास का खर्च ब्यौरा रखा जाता है।

तालिका 29.4 : साप्ताहिक व मासिक हिसाब-किताब

माह जनवरी, 2016

सप्ताह/वार	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	रवि
प्रथम सप्ताह							
द्वितीय सप्ताह							
तृतीय सप्ताह							
चतुर्थ सप्ताह							
कुल							

3. वार्षिक हिसाब-किताब- वर्षभर का हिसाब-किताब का ब्यौरा रखा जाता है।

तालिका 29.5 : वार्षिक हिसाब-किताब

माह	आय	व्यय	आय से कम/अधिक खर्च
जनवरी			
फरवरी			
मार्च			
अप्रैल			

हिसाब-किताब के प्रकार-

1. बाजार खर्च :- बाजार का हिसाब रखना गृहिणी के लिए बहुत जरूरी है क्योंकि आय का मुख्य भाग बाजार से घरेलू वस्तुएँ, खाद्य सामग्री, फल, सब्जी, कपड़ा आदि लाने में व्यय होता है। इन वस्तुओं पर होने वाले व्यय का प्रतिदिन रिकार्ड रखना चाहिए। बाजार खर्च हिसाब-किताब हेतु डायरी बनानी चाहिये जिसमें रोज शाम को हिसाब लिखना चाहिये।

2. दूध का हिसाब- दूध का हिसाब महीने के अंत होने पर किया जाता है। प्रतिदिन दूध पर होने वाले खर्च का ब्यौरा गृहिणी को रखना चाहिए, जब दूध खर्च का ब्यौरा व्यवस्थित एवं विस्तृत लिखा हुआ हो तो हिसाब करने में असुविधा नहीं होती है।

3. धोबी का हिसाब- धोबी से धुलाये जाने वाले वस्त्रों का ब्यौरा रखा जाता है। इस खाते में गृहिणी प्रतिदिन धोबी को दिए जाने वाले कपड़ों का तारीखवार, दिए गए कपड़ों की संख्या का हिसाब-किताब रखती है। इसके अलावा इस्त्री के लिए दिए गए कपड़ों का हिसाब भी रखा जाता है और यदि शुष्क धुलाई करवाई गई हो तो उसका भी लेखा रखा जाता है ताकि महीने के अंत में कोई कठिनाई नहीं आए। धोबी के हिसाब की कॉपी या डायरी का निर्धारित स्थान होना चाहिए ताकि धोबी के साथ हिसाब-किताब करने पर सुविधा रहती है।

4. सम्पत्ति का हिसाब- इस तरह के हिसाब के अन्तर्गत मकान, कार, स्कूटर आदि के खरीद कर जमा कराने की रसीद, गाड़ी का बीमा आदि का ब्यौरा रखा जाता है। अलग फाइल बनाकर बिल जमा कराने की रसीदें लगाई जाती हैं।

5. बीमा या अन्य बचत साधन का हिसाब- जब धनराशि का विनियोग बीमा, बैंक या पोस्ट ऑफिस या अन्य किसी भी बचत खाते में किया जाता है, तब उससे संबंधित रसीदें, सभी कागज एक जगह व्यवस्थित फाइल किए जाते हैं। शेयर, ऋण पत्र, मियादी जमा आदि का विवरण भी इसी खाते में लिखा जाता है।

हिसाब-किताब की विधियाँ-

1. पृष्ठ विधि- यह अत्यन्त सरल, लचीली विधि है। खर्च की राशि का हिसाब एक पृष्ठ पर लिखकर उसे दरवाजे या किसी बोर्ड पर लगाकर टाँग देते हैं, जैसे-जैसे खर्चा होता है, नोट कर लिया जाता है। सप्ताह या माह के अंत में खर्च जोड़कर अनुमान लगाया जा सकता है कि खर्च किस अनुरूप हो रहा है।

2. लिफाफा विधि- इसमें एक लिफाफे में निश्चित खर्च किए जाने वाले मदों के हिसाब से राशि रखकर कुल राशि लिख दी जाती है, खर्च के लिए निकालने पर उस पर लिख दिया जाता है इसके अलावा प्रत्येक मद के लिए अलग लिफाफा भी रखा जा सकता है।

3. नोट बुक विधि- एक कॉपी में दिनांक या वार या क्रमानुसार खर्चों का हिसाब-किताब लिखा जाता है। इस प्रकार लम्बे समय तक खर्चों का हिसाब रखा जा सकता है तथा मूल्यांकन भी किया जा सकता है।

4. कार्ड भरना विधि- परिवार के प्रत्येक सदस्य को अलग-अलग खर्च के हिसाब से धनराशि दे दी जाती है। वे एक कार्ड पर महीने भर खर्च का हिसाब लिखते रहते हैं। माह अंत में सभी सदस्यों के कार्ड से महीने भर के खर्चों का हिसाब-किताब रख सकते हैं।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. परिवार में जो भी धन अर्जित होता है उसे कैसे, कितना, किस प्रकार खर्च करना है, इसे व्यय कहते हैं।
2. प्रत्येक परिवार में कुछ व्यय निश्चित होते हैं जैसे-खाना, शिक्षा, कपड़े, मकान इत्यादि और कुछ अर्द्धनिश्चित होते हैं जैसे-शादी, पार्टी, मनोरंजन इत्यादि।
3. आय एवं व्यय के विस्तृत ब्यौरे को बजट कहते हैं जो कि प्रत्येक परिवार के लिए आवश्यक है।
4. बजट बनाने से भविष्य के लिए बचत की जा सकती है।
5. बजट मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं। लेकिन बचत के बजट को आदर्श बजट कहा जाता है।
6. परिवार के आय एवं व्यय परिवर्तन भी होते रहते हैं।
7. परिवार में आय को व्यवस्थित रूप से खर्च करने के लिए जो प्रतिदिन, साप्ताहिक या मासिक ब्यौरा लिखा जाता है उसे घरेलू हिसाब-किताब कहते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

8. प्रत्येक परिवार आय को विभिन्न मदों पर खर्च करता है, एंजिल के नियम के अनुसार आय में वृद्धि के साथ भोजन पर किए जाने वाला व्यय कम एवं विलासिता सम्बन्धी आवश्यकताओं पर बढ़ जाता है।
9. हिसाब-किताब रखने की मुख्य चार विधियाँ हैं। पृष्ठ, लिफाफा, नोट बुक एवं कार्ड भरना।
10. घरेलू हिसाब-किताब रखने से आय-व्यय का पता चलता है, बचत की जा सकती है, अनावश्यक खर्चों को कम किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के उत्तर चुनें :

(i) निश्चित अवधि पर जो व्यय दोहराये जाते हैं, वे हैं-

(अ) उपभोग व्यय　　(ब) निश्चित व्यय

(स) अर्द्ध-निश्चित व्यय　　(द) पारिवारिक व्यय

(ii) उपभोग वस्तुओं की माँग में वृद्धि होने पर बढ़ती है-

(अ) उत्पादन की गति　　(ब) उत्पादन की गति व मात्रा

(स) उत्पादन की मात्रा　　(द) इनमें से कोई नहीं

(iii) बजट का तात्पर्य है-

(अ) पारिवारिक आय का ब्यौरा

(ब) पारिवारिक खर्चों का ब्यौरा

(स) आय-व्यय का विस्तृत ब्यौरा

(द) विभिन्न मदों पर किया जाने वाला व्यय

(iv) घरेलू हिसाब-किताब का प्रकार है-

(अ) बाजार खर्च　　(ब) धोबी का हिसाब

(स) सम्पत्ति का हिसाब　　(द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) .... आर्थिक क्रियाओं का संचालक है।

(ii) उपभोग के बाद बचने वाली धनराशि .... कहलाती है।

(iii) .... व्यय, आय एवं परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं।

(iv) आय को व्यय करने से पहले .... बजट बनाना चाहिये। (पारिवारिक)

(v) घरेलू हिसाब से .... का उचित संतुलन बनाए रखना आसान हो जाता है।

3. पारिवारिक व्यय किसे कहते हैं, इसे कितने भागों में विभाजित किया जा सकता है, समझाइये?

4. उपभोग व्यय पर प्रकाश डालते हुए इसके प्रकारों के बारे में बताएं।

5. आय एवं व्यय एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। कैसे?

6. बजट की परिभाषा एवं प्रकार को लिखिये।

7. घरेलू हिसाब-किताब की आवश्यकता लिखिये।

8. घरेलू हिसाब-किताब लिखने की मुख्य विधियों के नाम लिखिये एवं किसी एक को समझाइये।

उत्तरमाला :

1.(i) ब (ii) ब (iii) स (iv) द

2. (i) उपभोग व्यय (ii) बचत (iii) अर्द्ध निश्चित (iv) पारिवारिक (v) आय व्यय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

30. बचत एवं विनियोग-I

Savings and Investment-I

भविष्य की आवश्यकताओं एवं दीर्घकालीन लक्ष्यों की पूर्ति, आकस्मिक दुर्घटनाओं के समय व आर्थिक संकटों से निपटने के लिये बचत आवश्यक है। भविष्य अनिश्चित होता है। कब क्या हो जाए, इसके बारे में कहना कठिन है। इन परिस्थितियों से निपटने के लिये बचाया धन ही काम आता है। खराब समय में धन ही हमें सम्बल देता है इसलिये हमें अपनी आय में से कुछ भाग भविष्य के लिये बचाकर रखना चाहिये।

अतः भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जो भी अपनी आय में से बचाते हैं वह बचत कहलाता है अर्थात् आय एवं व्यय के अन्तर को बचत कहते हैं।

आय- उपभोग व्यय= बचत

किसी भी राष्ट्र की समृद्धि, उन्नति एवं विकास वहाँ के नागरिकों के बचत पर निर्भर करती है। बचत का मुख्य उद्देश्य परिवार को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करना होता है।

परिभाषा- जे.एम. केन्ज के अनुसार- 'वर्तमान आय का वर्तमान (उपभोग) व्यय पर आधिक्य को बचत कहते हैं।' बचत सदैव सोच-समझकर की जानी चाहिये। बचत की योजना बनाते समय ध्यान रखना चाहिये कि वर्तमान की आवश्यकताओं की पूर्ति पर प्रभाव नहीं पड़े वरना सदस्यों में तनाव व कुण्ठा उत्पन्न हो जाती है।

बचत एवं संचय में अन्तर- बचत सदैव उत्पादक रूप में रखी जाती है, बचे पैसे को कहीं निवेश करके आय में वृद्धि की जा सकती है।

संचय का अर्थ भी धन को बचाकर रखना है मगर यह अनुत्पादक रूप में रखा जाता है, इससे कोई लाभ नहीं होता है।

बचत की आवश्यकता एवं महत्त्व-

(1) आय में वृद्धि- बचत की गई राशि का उचित विनियोग द्वारा लाभांश या ब्याज कमाया जा सकता है, जिससे आय में वृद्धि होती है। बैंक, पोस्ट ऑफिस, बीमा आदि में बचत का धन जमा करके धन को सुरक्षित रखा जा सकता है व ब्याज का लाभ प्राप्त कर परिवार की आय को बढ़ा सकते हैं।

(2) अनावश्यक खर्चों में कमी- बचत करने से परिवार में अनावश्यक खर्चों पर प्रतिबन्ध लग जाता है। व्यक्ति सोच-समझकर धन व्यय करता है। बचत करने हेतु बजट तैयार करना पड़ता है तथा उसी के अनुसार खर्च करने में अनावश्यक खर्चों में कटौती की जाती है।

(3) आकस्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति- परिवार में किसी भी प्रकार की आकस्मिक दुर्घटनाएँ कभी भी हो सकती हैं जैसे अचानक बीमार पड़ जाना, अपंगता, परिवार के सदस्य की मृत्यु, चोरी, डकैती इत्यादि इससे परिवार विचलित हो जाता और परिवार के सदस्य अपना मानसिक नियंत्रण खो सकते हैं। इस समय बचत की हुई राशि ही काम आती है। आकस्मिकता हेतु कम-से-कम एक महीने का वेतन बचाकर सुरक्षित रखना चाहिए। जो परिवार नियमित रूप से बचत करते हैं वे भविष्य की आकस्मिक आवश्यकताओं के प्रति निश्चिंत रहते हैं व विपरीत स्थिति का सफलतापूर्वक सामना करने में समर्थ होते हैं।

(4) मानसिक सन्तुष्टि- बचत करने से परिवार मानसिक रूप से सन्तुष्ट रहता है, उसे भविष्य की चिंता नहीं होती है उससे आत्मबल व साहस में वृद्धि होती है। अगर बचत नहीं हो तो आकस्मिक दुर्घटनाओं के समय व्यक्ति घबरा जाता है व भयभीत रहता है।

(5) वृद्धावस्था में आर्थिक संरक्षण- समय चक्र के साथ व्यक्ति बालक से वृद्ध बनता है। वृद्धावस्था में व्यक्ति शारीरिक व मानसिक रूप से कमजोर हो जाता है उसे अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए परिवार के सदस्यों पर आश्रित रहना पड़ता है। परिवार वाले भी तभी सेवा करते हैं जब उन्हें पता चलता है कि वृद्ध व्यक्ति के पास धन है अतः बचत करने से वृद्धावस्था का समय आराम से व्यतीत हो सकता है।

(6) धनोपार्जन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु- भविष्य अनिश्चित होता है, कब किसकी मृत्यु हो जाए यह भी निश्चित नहीं होता है। परिवार में अचानक कमाने वाले व्यक्ति की मृत्यु होने पर पूरे परिवार को आर्थिक संकट का सामना करना पड़ सकता है, मानसिक पीड़ा होती है, लेकिन यदि भविष्य के लिए बचत करके रखी गई हो तो इस संकट की घड़ी का सामना सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

(7) दीर्घकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति- हर परिवार के कुछ दीर्घकालीन लक्ष्य होते हैं जैसे-बच्चों की शिक्षा, विवाह, मकान इत्यादि।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए काफी धन की आवश्यकता होती है, जो कि बचत करके ही संभव हो सकता है।

(8) रहन-सहन के स्तर में वृद्धि- बचत करने से आय में वृद्धि व अनावश्यक खर्चों में कमी होती है तथा व्यक्ति के पास एकमुश्त अधिक धन इकट्ठा रहता है, जिससे वह जमीन, जायदाद, मकान, कार, बच्चों को उच्च शिक्षा प्रदान कर सकता है। जिससे परिवार के रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठता है। बचत के द्वारा परिवार का जीवन सुखद, आनन्दमयी व संतोषप्रद बनाया जा सकता है।

(9) सामाजिक प्रतिष्ठा- बचत से रहन-सहन का स्तर उच्च होता है, इससे व्यक्ति को समाज में मान-सम्मान, प्रतिष्ठा मिलती है। बचत का कुछ भाग सामाजिक कार्यों में दान देकर भी समाज में आदर पाया जा सकता है।

(10) स्थायी सम्पत्ति की खरीद- मकान, दुकान, जमीन आदि स्थायी सम्पत्ति खरीदने के लिए अधिक धन की आवश्यकता होती है। इसके लिए प्रारम्भ से ही थोड़ा-थोड़ा पैसा बचाकर रखना पड़ता है, जिससे स्थायी सम्पत्ति खरीदी जा सके। इससे अचल सम्पत्ति व आय में वृद्धि होती है।

(11) सेवानिवृत्ति होने पर आर्थिक सुरक्षा- सेवानिवृत्ति के बाद परिवार की आय आधी रह जाती है। कई बार आय बन्द भी हो जाती है तथा सेवानिवृत्ति के पश्चात् स्वास्थ्य भी खराब रहने लगता है। स्वास्थ्य अच्छा रहे इसके लिए दवाई, फल, भोजन पर अधिक व्यय होने लगता है। इसलिए व्यक्ति को वृद्धावस्था के लिए धन बचाकर रखना चाहिए।

(12) राष्ट्रीय योजनाओं के संचालन में मदद- व्यक्ति अपना बचाया पैसा विभिन्न योजनाओं में निवेश करके लाभांश प्राप्त करता है। उस पैसे से सरकार विभिन्न राष्ट्रीय योजनाएँ संचालित करती है, जिससे राष्ट्र का विकास हो सके।

विनियोग

सामान्य अर्थों में विनियोग का अर्थ 'उन वस्तुओं' को क्रय करना, जिससे व्यक्ति को लाभ हो।' या 'व्यापार में पूँजी लगाना' ही विनियोग कहलाता है।

प्रत्येक व्यक्ति अपनी आय में से कुछ-न-कुछ धनराशि अवश्य बचाता है जिसे या तो वह अपने घर में तिजोरी में रखता है या किसी भी आर्थिक संस्था जैसे डाकघर, बैंक, जीवन बीमा इत्यादि में निवेश करता है उससे ब्याज प्राप्त कर आय में वृद्धि कर सकता है। तिजोरी में रखे पैसे चोरी भी हो सकते हैं व उस पर ब्याज भी नहीं मिलता है, परन्तु प्रतिष्ठित कम्पनी में पैसे निवेश करने से पैसा सुरक्षित तो रहता ही है, साथ में आय में भी वृद्धि होती है। अत: लाभ हेतु धन को उचित स्थान पर लगाना ही विनियोग कहलाता है।

विनियोग-बचत+ब्याज

वर्तमान में पैसा विनियोग के बहुत साधन उपलब्ध हैं, परन्तु धन को सरकारी संस्थाओं में लगाने से धन सुरक्षित रहता है। हमेशा उन्हीं संस्थाओं में पैसा निवेश करना चाहिये जहाँ ब्याज दर अच्छी हो, पैसा सुरक्षित रहे तथा जिसमें अधिक तरलता हो।

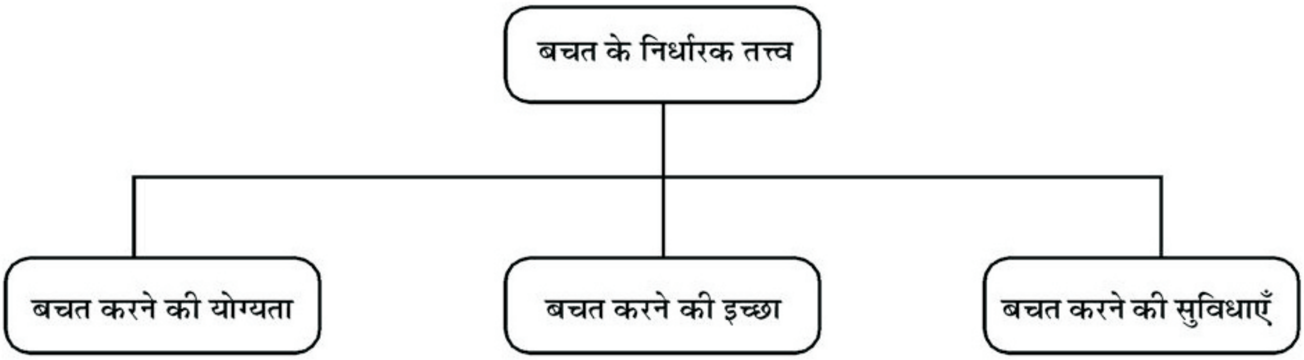

चित्र 30.1 बचत के निर्धारक तत्त्व

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. वर्तमान की परिस्थितियों में जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए तथा परिवार की आर्थिक एवं सामाजिक सुरक्षा के लिए बचत आवश्यक है।
2. कुल आय में से उपभोग व्यय करने के बाद जो कुछ बचता है वह बचत कहलाती है।
3. बचत परिवार की आय, सदस्यों की संख्या, रहन-सहन का स्तर, निवेश के साधन इत्यादि पर निर्भर करती है।
4. बचत को सही जगह विनियोग करने से पैसा सुरक्षित तथा मूलधन में वृद्धि होती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के उत्तर चुनें :

(i) आय का वह भाग जो भविष्य के लिए बचाकर रखा जाता है .... कहलाता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(अ) धन (ब) व्यय

(स) बचत (द) विनियोग

(ii) बचत की आवश्यकता क्यों है?

(अ) घूमने के लिए (ब) वृद्धावस्था के लिए

(स) कपड़े खरीदने के लिए (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iii) धन को लाभ हेतु उचित स्थान पर लगाना ही ...... कहलाता है।

(अ) बचत (ब) ऋण

(स) विनियोग (द) व्यय

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(i) कु लअ ायम ेंस े० ययक ेि ाटाद ेनेप रज ेश ेषब चताह ै .... कहलाता है।

(ii) वह बचत जिस पर व्यक्ति को ब्याज मिलता है .... कहलाता है।

(iii) बचत से समाज में व्यक्ति की .... बढ़ती है।

(iv) बचत से सेवानिवृत्ति के समय .... संरक्षण प्राप्त होता है।

(v) धनराशि का अनुत्पादक रूप .... कहलाता है।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये-

(1) विनियोग

(2) बचत

(3) बचत से आय में वृद्धि

(4) संचय

(4) बचत की आवश्यकता को विस्तार से समझाइये।

(5) विनियोग से क्या-क्या लाभ होते हैं?

(6) बचत की राष्ट्र निर्माण में भूमिका को समझाइये?

उत्तरमाला :

(i) स (ii) ब (iii) स

2. (i) बचत (ii) विनियोग (iii) प्रतिष्ठा (iv) आर्थिक (v) संचय

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

31. बचत एवं विनियोग-II

Savings and Investment-II

प्रत्येक परिवार अपनी बचत की राशि को ऐसे उत्पादक कार्यों में लगाना चाहता है जिससे अधिकतम लाभ हो और आवश्यकता पड़ने पर वह धन उसे तुरन्त मिल जाए।

वर्तमान युग में धन को निवेश करने के कई साधन उपलब्ध हैं जिसमें निवेशक अपनी इच्छानुसार बचत को निवेश कर लाभ प्राप्त कर सकता है।

विनियोग मुख्य रूप से तीन प्रारूपों में किया जा सकता है।

(1) अल्पकालीन विनियोग– जब व्यक्ति अपनी बचत को थोड़े समय के लिए उत्पादक कार्यों में लगाकर धन प्राप्त करना चाहता है तथा आवश्यकता पड़ने पर उस धनराशि को वापस प्राप्त कर सके तब वह अल्पकाली विनियोग कहलाता है, बैंक, डाकखाना, बचत बैंक इसके उत्तम साधन हैं। इसमें ब्याज बहुत कम प्राप्त होता है परन्तु पैसा सुरक्षित रहता है।

(2) दीर्घकालीन विनियोग– यह लम्बे समय के लिए किया जाता है। इसमें ब्याज दर अधिक होती है परन्तु इसका लाभ निश्चित अवधि पूरा होने पर ही मिलता है। इसके प्रमुख साधन-जीवन बीमा, राष्ट्रीय बचत पत्र, किसान विकास पत्र, जनरल प्रोविडेन्ट फण्ड, राज्य बीमा इत्यादि।

(3) जीवनभर के लिए विनियोग– इसमें व्यक्ति जीवनभर के लिए अपनी बचत का विनियोग करता है इसका लाभ परिवार वालों को मिलता है जिससे उन्हें आर्थिक सुरक्षा मिलती है, इसमें धन का विनियोजन करके व्यक्ति भविष्य के प्रति निश्चिन्त रहता है। उदाहरण– जीवन बीमा।

बचत एवं विनियोग के साधन– आय एवं सुरक्षा की दृष्टि से निम्नलिखित साधन प्रमुख हैं।

1. बैंक– बचत एवं विनियोग का सबसे प्रचलित एवं सुरक्षित साधन है बैंक, यह एक ऐसी आर्थिक संस्थान है जो रुपये का लेन-देन करता है। व्यक्ति अपनी बचत को बैंक में जमा करके ब्याज प्राप्त कर सकता है तथा आवश्यकता पड़ने पर निकाल भी सकता है। व्यक्ति चाहे तो बैंक से मकान, जमीन, गहने, शिक्षा आदि के लिए लोन भी प्राप्त कर सकता है।

परिभाषा– प्रो. किनले के अनुसार 'बैंक एक ऐसी संस्था है जो सुरक्षा का ध्यान रखते हुए ऐसे व्यक्तियों को ऋण देती है जिन्हें धन की आवश्यकता होती है तथा ऐसे व्यक्ति जिनके पास अतिरिक्त धन है वे इसमें जमा करा सकते हैं।'

बैंक के मुख्य कार्य–

1. धन जमा करना।
2. ऋण देना।

चित्र 31.1 : **विनियोग के प्रारूप**

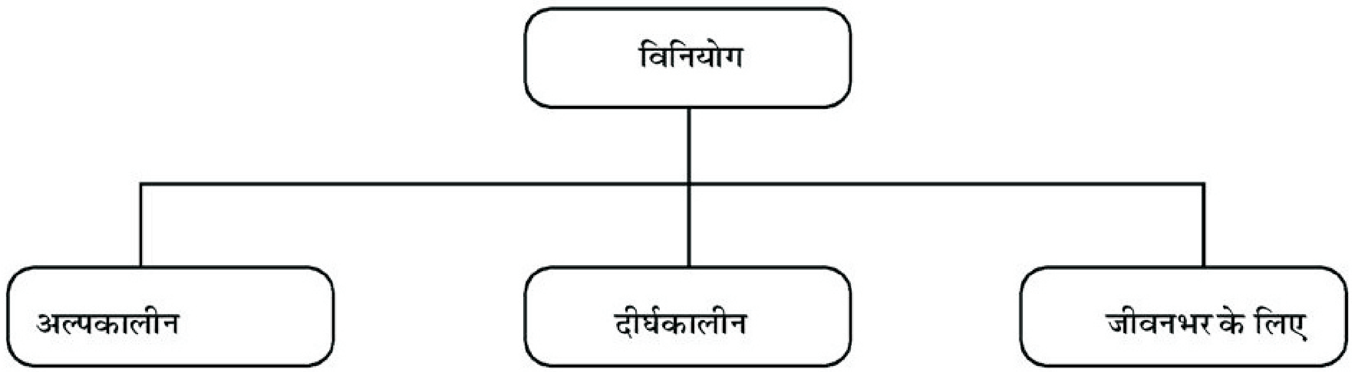

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इसके अतिरिक्त बैंक निम्न सुविधाएँ भी उपलब्ध कराता है।

1. चैक एवं डिमाण्ड ड्राफ्ट की सुविधा होती है, जिससे धन का भुगतान सुरक्षित रूप से हो सके।
2. लॉकर की सुविधा होती है जिसमें बहुमूल्य वस्तुएँ जैसे-गहने, जमीन-जायदाद के कागज आदि सुरक्षित रखे जा सकते हैं।
3. यात्री चैक की सुविधा उपलब्ध रहती है ताकि यात्रा में नकदी का जोखिम नहीं उठाना पड़े।
4. क्रेडिट व डेबिट कार्ड की सुविधा होती है जिससे कहीं भी कभी भी 24 घण्टे खरीददारी की जा सकती है एवं पैसा भी निकलवाया जा सकता है।

बैंक के खातों के प्रकार-

(i) **बचत खाता-** यह खाता अल्पकालीन बचत को प्रोत्साहित करता है। इसमें व्यक्ति जितना चाहे पैसा जमा करता है। इस खाते को खुलवाने के लिए व्यक्ति को न्यूनतम राशि जो हर बैंक की अलग-अलग है जमा कर खाता खुलवाया जा सकता है। खाता खुलवाने के बाद खाताधारक को चैक बुक व पास बुक दी जाती है। पास बुक में लेन-देन का ब्यौरा रहता है व चैक बुक से वह आसानी से पैसा निकाल सकता है। बचत खाते में जमा राशि पर बैंक ब्याज देता है। ब्याज की दर समय-समय पर परिवर्तित होती रहती है। वर्तमान में ब्याज दर 4 प्रतिशत है।

(ii) **चालू खाता-** यह खाता व्यापारियों के लिए अच्छा है। इस खाते का मुख्य उद्देश्य धन के लेन-देन में सुविधा प्रदान करना है। इस प्रकार के खाते में ब्याज नहीं दिया जाता है। इस खाते में खाताधारक चाहे जितनी बार पैसा जमा करा व निकाल सकता है।

(iii) **निश्चित अवधि खाता-** इस प्रकार के खातों में धन एक एक निश्चित अवधि के लिए जमा किया जाता है तथा जमाकर्ता धन को अवधि पूरी होने पर ही निकाल सकता है। इसमें अन्य खातों से ब्याज दर अधिक मिलती है। आवश्यकता पड़ने पर जमा राशि पर बैंक ऋण भी देता है। इसमें अवधि के अनुसार ब्याज दर भिन्न-भिन्न होती है।

(iv) **आवर्ती जमा योजना-**इ सय ोजनाक म ुख्यउ द्देश्यल ोगोंक ो मितव्ययी बनाकर अल्प बचत के लिए प्रोत्साहित करना है। इस खाते में एक निश्चित धनराशि एक निश्चित समय तक लगातार प्रतिमाह आवश्यक रूप से जमा करानी पड़ती है। निश्चित अवधि के बाद इकट्ठी रकम ब्याज समेत मिल जाती है। जिसे दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लगाया जा सकता है। इसमें जमा राशि पर 7.25 प्रतिशत ब्याज मिलता है।

(v) **गृह बचत खाता-** यह खाता घर बैठे ही कोई भी खुलवा सकता है। बैंक के कर्मचारी घर आकर पैसे लेकर जाते हैं व रसीद दे देते हैं। यह खाता लोगों को बचत करना सिखाता है, इसमें पैसा प्रतिदिन, साप्ताहिक, मासिक कभी भी कितना भी डाला जा सकता है। यह खाता गृहिणियों के लिए ज्यादा लाभदायक है।

बैंक में खाता खोलना- बैंक में खाता खोलना अत्यन्त आसान है। खाता खोलने के लिए एक फॉर्म भरकर देना पड़ता है तथा खाते के प्रकार का चुनाव करना पड़ता है। साथ ही दो फोटो व निवास प्रमाण पत्र देना पड़ता है। खाता खुलने की स्वीकृति मिलने के बाद बैंक खाते का क्रमांक, पास बुक व चैक बुक देता है जिससे खाते में लेन-देन किया जा सके। खाते में जमा राशि पर बैंक ब्याज देती है जो समय-समय पर बदलती रहती है। वरिष्ठ नागरिकों को प्रत्येक बैंक 0.5 प्रतिशत ब्याज अतिरिक्त देता है।

(2) डाकघर बचत बैंक- अल्प बचत को प्रोत्साहन देने के लिए भारत सरकार द्वारा डाकघर बचत बैंक की स्थापना की गई जिसका मुख्य उद्देश्य जनता को अल्प बचत के लिए प्रोत्साहित करना है, जिन गाँवों में बैंक नहीं हैं वहां अल्प बचत का एकमात्र साधन डाकघर है। पूरे देश में डाकघर की सुविधा सभी जगह उपलब्ध है। इसमें अशिक्षित व्यक्ति भी जाकर आसानी से खाता खुलवा सकता है।

डाकघर में खाते के प्रकार

(i) **डाकघर बचत खाता-** कोई भी व्यक्ति डाकघर में अपने नाम या संयुक्त नाम से कम पैसे से खाता खुलवा सकता है। बचत खाते में सप्ताह में कभी भी पैसे जमा करा सकते हैं लेकिन दो बार ही निकाल सकते हैं। खाते में जमा पैसे पर डाकघर बैंक से अधिक ब्याज देता है।

(ii) **डाकघर मासिक आय योजना-** इस योजना में व्यक्ति को प्रतिमाह निश्चित धनराशि जमा करानी पड़ती है। ब्याज की दर प्रतिवर्ष बदलती रहती है।

(iii) **डाकघर सावधि जमा योजना-** इस योजना के तहत व्यक्ति 1 वर्ष से 5 वर्ष के लिए खाता खुलवा सकता है। इस खाते में ब्याज का भुगतान प्रतिवर्ष किया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर अगर खाता जल्दी बंद करवाना चाहे तो ब्याज की दर 1-2 प्रतिशत कम मिलती है और जमा राशि खाताधारक को मिल जाती है।

(iv) **डाकघर आवर्ती जमा योजना-** इस खाते को खोलने के लिए एक निश्चित राशि नियमित अंतराल पर जमा करानी पड़ती है तथा 5 वर्ष पूर्ण होने पर 7-8प्रतिशत ब्याज के साथ पूरा पैसा वापस मिल जाता है।

(v) **राष्ट्रीय बचत पत्र-** यह योजना अल्पबचत को प्रोत्साहन देने के लिए चलाई गई। यह डाकघर की महत्त्वपूर्ण योजना है। व्यक्ति अपनी इच्छानुसारर ाशिक ा निवेशक रकेब चतप त्रख रीदस कताह ै इ समें डाकघर द्वारा एक सर्टिफिकेट दिया जाता है। 6वर्ष बाद वह सर्टिफिकेट दिखाकर व्यक्ति डाकघर से ब्याज सहित पैसा वापस प्राप्त कर सकता है। राष्ट्रीय बचत पत्र पर विस्तृत जानकारी दी जाती है। इसमें व्यक्ति उसी डाकघर से वापस ले सकता है, जिससे उसने सर्टिफिकेट खरीदा।

(vi) **किसान विकास पत्र-** यह भी राष्ट्रीय बचत पत्र जैसी ही योजना है। इसमें पोस्ट मास्टर को एक फॉर्म भरकर देना पड़ता है, जाँच के बाद विकास पत्र जारी हो जाता है। इसमें 8½ वर्ष बाद जमा धन दुगुना हो जाता है। इसका भुगतान भी निश्चित अवधि के बाद होता है।

3. जीवन बीमा

जीवन बीमा बचत एवं विनियोग का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं साधन प्रचलित है। इसका उद्देश्य 'आपका कल्याण ही मेरा उत्तरदायित्व है।'

आज की जिन्दगी बहुत तनावपूर्ण, कष्टदायी एवं भागदौड़ वाली

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

है। कब किसके साथ क्या दुर्घटना घट जाए कहना मुश्किल है, परन्तु संकट के समय जीवन बीमा व्यक्ति के जीवन में उजाला लाता है व परिवार को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करता है।

जीवन बीमा भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीयकृत है। इसकी स्थापना 1956में हुई। जीवन बीमा कम्पनी आज हर वर्ग के लिए कई योजनाएँ चला रही है। यह अनिश्चित भविष्य को सुरक्षित करने की योजना है।

यह एक सुनिश्चित योजना है। यह एक मात्र ऐसी संस्था है जो सुरक्षा देकर जोखित कम करता है। जीवन बीमा में आकस्मिक दुर्घटना होने या बीमाधारक की असमय मृत्यु होने पर उसके द्वारा बीमित धन की राशि उसके उत्तराधिकारी को दे दी जाती है। बीमा धारक की मृत्यु हो जाने पर आगामी किश्त चुकाये बिना पूरा धन, बोनस के सहित आश्रित परिवारजनों को दे दिया जाता है।

जीवन बीमा से व्यक्ति आर्थिक रूप से सुरक्षित रहता है। आवश्यकता पड़ने पर जमा राशि का 75 प्रतिशत ऋण भी ले सकता है। इसमें आयकर में छूट मिलती है। अल्प बचत को प्रोत्साहन मिलता है।

जीवन बीमा कराते समय कुछ शर्तें होती हैं। जैसे-व्यक्ति शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ होना चाहिए, वंशानुगत रोग नहीं होने चाहिए। बीमा कम्पनी द्वारा बीमा योजना की समयावधि एवं राशि निश्चित रहती है।

इसमें व्यक्ति 3 महीन, 6महीने या 1 वर्ष में प्रीमियम का भुगतान एक निश्चित अवधि तक करता है, उसके बदले में एक पत्र मिलता है, उसे पॉलिसी कहते हैं। जिस पर योजना की विस्तृत जानकारी एवं बीमा धारक की जानकारी भी होती है। समय अवधि पूर्ण होने पर मूल राशि बोनस सहित वापस मिल जाती है।

जीवन बीमा के प्रकार-

(i) आजीवन बीमा- इस योजना में व्यक्ति जीवनभर प्रीमियम भरता है व उसके मरने पर उत्तराधिकारी को सारा पैसा मिलता है। बीमा धारक स्वयं इस योजना का लाभ नहीं उठा सकता है।

(ii) बन्दोबस्ती बीमा- यह योजना निश्चित समय के लिए होती है। समय पूर्ण होने पर पैसा वापस मिल जाता है और अगर बीच में बीमाधारक की मृत्यु हो जाए तो पूरा पैसा समय पूर्व ही उत्तराधिकारी को मिल जाता है।

जीवन बीमा की योजनाओं में समय के अनुसार फेरबदल होता रहता है। आजकल योजनाएँ जैसे- जीवन आनन्द, पेंशन योजना, जीवन सुरभी, बच्चों एवं प्रौढ़ों के लिए पॉलिसी, गृहलक्ष्मी इत्यादि चल रही है। आजकल चिकित्सा बीमा भी बहुत प्रचलित है, जिसमें व्यक्ति के बीमार पड़ने पर सारा खर्चा बीमा कम्पनी द्वारा दिया जाता है।

(4) यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया- इसकी स्थापना भारत सरकार द्वारा 1964 में की गई। इसमें लोगों की बचत को उद्योगों में निवेश किया जाता है और प्राप्त लाभांश का 90 प्रतिशत भाग विनियोग कर्ताओं में बाँट दिया जाता है। इस योजना में एक यूनिट 10 रुपये का होता है और एक व्यक्ति को कम-से-कम 10 यूनिट खरीदने आवश्यक हैं। इन्हें पोस्ट ऑफिस, बैंक, एजेन्ट कहीं से भी खरीदे जा सकते हैं। इसकी आय, आयकर से मुक्त रहती है।

(5) भविष्य निधि योजना- यह बचत योजना सरकारी व गैर सरकारी क्षेत्र में नौकरी करने वाले के लिए अनिवार्य है। इसमें हर महीने एक निश्चित राशि व्यक्ति के वेतन से कटौती होकर भविष्य निधि कोष में जमा की जाती है, जो कि सेवानिवृत्ति के समय राशि 8प्रतिशत ब्याज की दर लगाकर वापस मिलती है। अगर व्यक्ति को बीच में पैसों की जरूरत है तो वह खाते से पैसे निकलवा भी सकता है, इसमें जमा पैसों पर आयकर में छूट मिलती है।

विनियोग के साधनों का चुनाव- आजकल विनियोग के बहुत साधन उपलब्धहैं। परन्तु साधन का चुनाव सोच-समझकर करना चाहिए। हमेशा सरकारी संस्थाओं में पैसा लगाना चाहिए, जो सुरक्षित रहता है।

विनियोजन करते समय आय के अनुसार निवेश करना चाहिए। जो आसानी से प्रतिमाह दिया जा सके। साथ ही ऐसी योजना में पैसा निवेश करना चाहिए जिसमें ब्याज दर अच्छी और आवश्यकता पड़ने पर धन आसानी से निकाला जा सके।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. व्यक्ति भविष्य की आकस्मिक आवश्यकताओं के लिए बचत करता है।
2. बचत की गई राशि को घर में न रखकर आर्थिक संस्था में लगाना चाहिये जिससे आय में वृद्धि हो। यह प्रोसेस विनियोजन कहलाता है।
3. विनियोजन के प्रमुख तीन साधन बैंक, पोस्ट ऑफिस, जीवन बीमा।
4. विनियोजन करने से व्यक्ति को बचत राशि पर ब्याज मिलता है, जिससे आय में वृद्धि के साथ-साथ व्यक्ति का भविष्य आर्थिक रूप से सुरक्षित रहता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) विनियोग के प्रमुख साधन हैं?

(अ) बैंक (ब) डाकघर

(स) जीवन बीमा (द) उपरोक्त सभी

(ii) वह बचत जो नौकरी करने वालों के लिए अनिवार्य है।

(अ) यूनिट ट्रस्ट (ब) लॉटरी

(स) जीवन बीमा (द) भविष्य निधि योजना

(iii) वह खाता जिसमें व्यापारियों का लेन-देन होता है, कहलाता है?

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(अ) बचत खाता (ब) आवर्तित जमा खाता

(स) चालू खाता (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

(iv) सरकार में छोटी-छोटी बचत को प्रोत्साहित करने के लिए संस्था की स्थापना की है।

(अ) बैंक (ब) जीन बीमा

(स) डाकघर (द) उपरोक्त सभी

(v) बीमा जिसमें व्यक्ति स्वयं उसका लाभ नहीं उता सकता है, कहलाता है?

(अ) आजीवन बीमा (ब) बन्दोबस्ती बीमा

(स) जीवन आनन्द (द) कोई नहीं

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

1. .... जमा योजना के अन्तर्गत व्यक्ति एक निश्चित राशि .... निश्चित समय के लिए बैंक में जमा करवाता है।

2. बैंक द्वारा .... खाता खुलवाने पर दी जाती है जिसमें लेन-देन का ब्यौरा रहता है।

3. सेवानिवृत्ति के समय एकमुश्त राशि .... योजना में मिलती है।

4. जीवन बीमा की स्थापना सन् .... में हुई।

5. बीमित राशि का .... ऋण लिया जा सकता है।

3. विनियोजन की परिभाषा लिखिये।

4. व्यक्ति के जीवन में जीवन बीमा के महत्त्व को लिखिये।

5. किसी भी संस्था में विनियोजन करते समय क्या-क्या ध्यान रखना चाहिए, समझाइये।

6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

(अ) बैंक बचत खाता (ब) यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया

(स) आजीवन बीमा (द) डाकघर

उत्तरमाला :

(i) (द) (ii) (द) (iii) (स) (iv) (स) (v) (अ)

(1) आवर्ती, प्रतिमाह (2) पासबुक (3) भविष्य निधि

(4) 1956 (5) 75%

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

32. उपभोक्ता की समस्याएं

Consumer Problems

किसी भी प्रकार की वस्तुओं को खरीद कर उसका उपभोग करने वाले को उपभोक्ता कहते हैं। उपभोक्ता को सभी वस्तुएं एवं सेवाएं बाजार में उपलब्ध होती है। बाजार में यह वस्तुएं विविध प्रकारों, अलग-अलग दामों तथा गुणवत्ता में उपलब्ध होने के कारण उनका चयन करना और भी ज्यादा कठिन कार्य हो जाता है। उत्पादकों द्वारा अधिक धन कमाने काल ालचत थाब ढ़तीस् पर्धाके क ारण,व स्तुओंके ग ुणम ें ि भन्नता, मिलावट, बढ़ती महंगाई, कम नाप-तौल, विज्ञापनों का बढ़ता चलन, गलत प्रस्तुतीकरण, मिथ्या छाप आदि दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। निर्माताओं द्वारा आजकल वस्तुओं की उत्कृष्टता पर ध्यान न देकर, उनके प्रचार-प्रसारए वं ि वज्ञापनोंप रअ धिकज ोर ि दयाज ा र हाहै ,ि जससे उपभोक्ताओं में अपनी वस्तु के प्रति रुचि जागृत कर सकें और अधिक लाभ कमाएं।

खाद्य पदार्थों में भी मिलावट की जाने लगी है, जिससे लोगों के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है। कुछ लोग तो भयंकर बीमारियों, जैसे-ड्राप्सी, लकवा, अन्धता आदि के शिकार हो रहे हैं। उपभोक्ता अज्ञानतावश झूठे विज्ञापनों और मुफ्त उपहारों के चक्कर में फंसकर, कभी-कभी घटिया वस्तुएं खरीद लेते हैं, जिससे उत्पादकों का लक्ष्य तो पूरा हो जाता है, परन्तु उपभोक्ता को वस्तुओं का उपयोग कर पूर्ण सन्तोष नहीं प्राप्त होता है। यही कारण है कि आज उपभोक्ता को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उपभोक्ता की निम्न समस्याएं हैं :

(1) निरक्षरता – भारत में अधिकांश जनता निरक्षर है। पुरुषों मेंत ोि फरभ ी5 0-60प्रतिशतत कस ाक्षरताहै ,प रन्तुम हिलाओंम ें साक्षरता की दर अत्यन्त ही निम्न है। निरक्षर जनता को धोखा देना, छलना और भ्रमित करना विक्रेता के लिये बहुत सरल होता है। उन्हें वस्तु पर लगे लेबल पढ़ने नहीं आते हैं जिसका फायदा विक्रेता उठाता है और अधिक

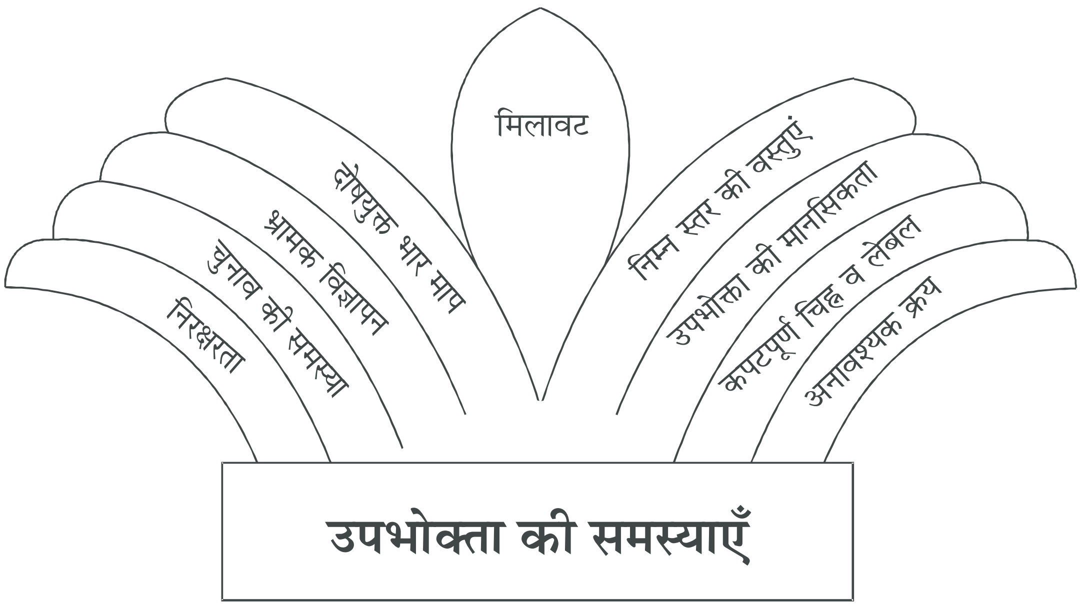

चित्र 32.1 :

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

मूल्य में घटिया वस्तु बेच देता है। कभी-कभी तो विक्रेता की वस्तुएं भी उपभोक्ता को दे देता है। निरक्षर उपभोक्ता उसे पढ़ नहीं पाता है और वह वस्तु खरीद लेता है।

(2) चुनाव की समस्या – आजकल बाजार में एक ही वस्तु की बहुत सारी किस्में उपलब्ध हैं, जिसके कारण चुनाव करना बहुत मुश्किल हो गया है। एक ही वस्तु के विभिन्न ब्राण्ड देखकर उपभोक्ता असमंजस में पड़ जाता है। एक ही वस्तु अलग-अलग ब्राण्ड की अलग-अलग मूल्य में बाजार में उपलब्ध है। उदाहरणार्थ-शैम्पू चाहिये तो कई ब्राण्ड के बाजार में उपलब्ध है, कौन सा चुनें यह उपभोक्ता के लिये समस्या है।

(3) भ्रामक विज्ञापन – विज्ञापन वस्तुओं को बेचने की कला है जो कि उपभोक्ताओं की भावनाओं को प्रभावित करते हैं। भ्रामक विज्ञापन उपभोक्ताओं को गलत जानकारी देते हैं। एक जैसी उपभोग में आने वाली वस्तुओं के अनेक विज्ञापनों के कारण वह अपने आपको भ्रामक स्थिति से घिरा हुआ पाता है। इन विज्ञापनों का व्यय उपभोक्ताओं से ही वसूला जाता है। इनकी कीमत वस्तु के मूल्य में ही जोड़ दी जाती है।

विज्ञापन कई माध्यमों से प्रस्तुत किये जाते हैं, जैसे-रेडियो, सिनेमाघरों, पोस्टर्स, मेले, प्रदर्शनियों, वाहनों पर एवं टी.वी. आदि द्वारा। विज्ञापनों को बहुत ही आकर्षक तरीके से उपभोक्ता के सामने प्रस्तुत किया जाता है, जिससे उपभोक्ता वस्तु के गुण-दोषों को न देखकर विज्ञापन से प्रभावित होकर वस्तु खरीद लेते हैं। विशेषकर कम उम्र के व्यक्ति, बच्चे, अशिक्षित व्यक्ति एवं महिलाएं इस तरह के विज्ञापनों से जल्दी प्रभावित होकर कम मूल्य की वस्तु भी अधिक मूल्य में खरीद लेते हैं।

(4) दोषयुक्त भार और माप – स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व भारत के विभिन्न राज्यों में भार और माप-तौल की अलग-अलग प्रणालियां व प्रथाएं थीं। कुछ स्थानों में किलो और ग्राम में तोला जाता था, कहीं रत्री, तोला और मासा में। इसी प्रकार कुछ स्थानों पर मण, सेर, छटांक आदि का उपयोग किया जाता था। ऐसी स्थिति में उपभोक्ता अज्ञान होने के कारण भ्रमित हो जाता था। व्यापारी उसकी इस स्थिति का फायदा उठाकर कम तौलते थे इसलिये यह जरूरी हो गया था कि पूरे देश में माप-तौल की एक ही प्रणाली का उपयोग किया जाये। इसलिये केन्द्रीय सरकार ने **28 मार्च, 1939** में स्टेण्डर्ड ऑफ वेट एक्ट पारित किया परन्तु द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ हो जाने से यह लागू नहीं हो पाया। फिर 8जुलाई, 1942 में इसे पहली बार प्रभावपूर्ण तरीके से पारित कर क्रियान्वित किया गया। पूरे देश में एक-सी भार एवं माप प्रणाली का उपयोग होने के बाद भी व्यापारी वर्ग ने उपभोक्ता को ठगने के लिए ऐसे-ऐसे तरीके ढूंढ़ निकाले जिस पर विश्वास ही नहीं होता। जैसे-कुछ विक्रेता व दुकानदार अपने हाथ के कौशल से उपभोक्ता को ठग लेते हैं। वजन तौलते समय डंडी मारना, कपड़ा काटते समय 1-2 सेमी. कम काटना, तराजू के नीचे चुम्बक आदि लगाना आदि इसी प्रकार उपभोक्ता कई तरीकों से ठगा जाता है। उसे पूरा मूल्य देने पर भी सही वजन में वस्तु नहीं मिल पाती है। तराजू की डंडी चपटी होनी चाहिये तथा वस्तु को डिब्बे के साथ भी तौलना अपराध है।

(5) मिलावट – खाद्य सामग्रियों में मिलावट रोजमर्रा की बात है। यह एक बहुत बड़ी समस्या बनती जा रही है, जो कि स्वास्थ्य के लिये भी बहुत हानिकारक है। जैसे-लाल मिर्च में ईंट का चूरा, दालों में मिट्टी-कंकड़, काली मिर्च में सूखे पपीते के बीज, मैदे में चौक पाउडर। इसी प्रकार दूध में पानी मिलाना व क्रीम निकाल कर बेचना, सरसों के तेल में अलसी व पीले धतूरे के तेल की मिलावट, दालचीनी के नाम पर अन्य वृक्षों की छाल बेचना। इसी प्रकार पेट्रोल में मिट्टी का तेल तथा सीसा मिलाया जाता है जिससे वाहनों की मशीनों में स्थायी खराबी आ जाती है।

(6) निम्न स्तर की वस्तुएं – बाजार में एक ही उपयोग की अनेक वस्तुएं उपलब्ध होती है। इनमें से कुछ वस्तुएं उच्च स्तर या गुणवत्ता वाली होती है, जबकि कुछ वस्तुएं निम्न स्तर की होती है। सामान्य उपभोक्ता के लिये यह पहचानना मुश्किल होता है कि कौन सी वस्तु उच्च किस्म की है या कौन सी वस्तु निम्न किस्म की। जबकि भारत सरकार द्वारा वस्तुओं के श्रेणीकरण की व्यवस्था की गई है जिसमें वस्तुओं को उनके स्तर के अनुरूप उत्तम, साधारण, निम्न श्रेणी प्रदान की जाती है, किन्तु ज्यादातर वस्तुएं श्रेणीकृत नहीं होती है। सामान्य उपभोक्ता बाजार में उपलब्ध अनेकों निर्माताओं की एक सी उपयोग वाली वस्तुओं को देखकर भ्रमित हो जाता है। अधिकांश वस्तुओं की गुणवत्ता उसे उपयोग में लाने के बाद ही ज्ञात होती है। ऐसी स्थिति में उनका धन व्यर्थ होता है और असन्तोष प्राप्त होता है।

(7) उपभोक्ता की मानसिकता – ज्यादातर उपभोक्ताओं का यह मानना होता है कि महंगी वस्तुएं ज्यादा अच्छी होती हैं और इसी भ्रम में महंगी से महंगी वस्तुओं को क्रय कर लेते हैं। भले ही यह वस्तु उनके लिये ज्यादा लाभकारी एवं उपयोगी नहीं होती है। हमारे बुजुर्गों द्वारा भी एक कहावत है- 'सस्ता रोए बार-बार, महंगा रोए एक बार।' परन्तु यह बात हमेशा सही नहीं। कई बार सस्ते मूल्य पर भी अच्छी वस्तुएं उपलब्ध हो जाती है।

(8) कपटपूर्ण चिह्न व लेबल का उपयोग – कई विक्रेता या उत्पादक नकली चिह्नों व लेबल का उपयोग कर गुमराह करते हैं। वे प्रतिष्ठित कम्पनियों के नाम में थोड़ा-सा परिवर्तन कर उसका उपयोग कर लेते हैं। प्रतिष्ठित कम्पनियों के पैकिंग के अन्दर नकली चीज रख देते हैं। इस प्रकार अशिक्षित व नासमझ उपभोक्ता विक्रेताओं के इस जाल में फंसकर ठगे जाते हैं।

(9) अनावश्यक क्रय – आजकल अनावश्यक क्रय की समस्या भी बहुत बढ़ती जा रही है। उपभोक्ता जब वस्तु को क्रय करने के लिये जाता है तो अनावश्यक क्रय भी कर लेते हैं। चाहे वह उन वस्तुओं का प्रयोग करे या नहीं। यह सब मॉल में सभी वस्तुओं के प्रदर्शनी के कारण होता है। यह उत्पादक व विक्रेता की बाजारीकरण की नई प्रणाली है, जिसमें उपभोक्ता फंसकर अनावश्यक वस्तुएं क्रय कर लेता है क्योंकि वह वस्तुएं उपभोक्ता को आकर्षित करती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(10) बाजार की स्थिति पर निर्भर रहना – उपभोक्ता की सबसे बड़ी एवं प्रमुख समस्या है कि उसे स्थानीय बाजार में उपलब्ध वस्तुओं को ही क्रय करना पड़ता है, चाहे वह वस्तु घटिया किस्म की हो अथवा उच्च कोटि की, यह समस्या अधिकतर ग्रामीण उपभोक्ता के साथ होती है, क्योंकि शहर से दूर जाकर वस्तुओं को खरीदने में काफी समय, शक्ति एवं धन व्यय होता है क्योंकि शहर तक जाना उनको महंगा पड़ता है। अत: वह निकट के बाजार में जैसी भी वस्तु उपलब्ध रहती है, वह उन्हीं को क्रय करके सन्तोष कर लेता है।

इस प्रकार यह अनेक समस्याएं हैं जिनका दिन-प्रतिदिन सामना उपभोक्ता को करना पड़ता है। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की है कि वे एकजुट होकर प्रयास करें व इन समस्याओं का डटकर मुकाबला करें। यद्यपि सरकार भी इस दिशा में प्रयासरत है, फिर भी जब तक उपभोक्ता स्वयं जागृत नहीं होगा तब तक उसकी समस्याओं का निराकरण व निवारण नहीं होगा।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

(1) उ पभोक्ताव ह० यक्तिह ैज ोव स्तुओंक ोख रीदक रउ नका उपभोग करता है।

(2) उपभोक्ता को सभी वस्तुएं बाजार में आसानी से उपलब्ध होती है।

(3) उपरोक्ता को बाजार में वस्तु खरीदते समय कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) वस्तुओं के उपभोग करने वाले व्यक्ति को कहते हैं :

(अ) उत्पादक (ब) विक्रेता

(स) उपभोक्ता (द) उपरोक्त सभी

(ii) काली मिर्च में मिलावट की जाती है :

(अ) पपीते के बीज की (ब) कोयले के चूरे की

(स) कंकड़ (द) उपरोक्त सभी

(iii) तराजू की डण्डी होनी चाहिये :

(अ) चपटी (ब) गोल

(स) तिरछी (द) लम्बी

(iv) वस्तु का मूल्य अधिक हो जाता है?

(अ) जब वस्तु सहकारी भण्डार से खरीदी गई हो

(ब) वस्तु राशन की दुकान से खरीदी गई हो

(स) जान-पहचान वाला नहीं हो

(द) जब वस्तु प्रतिष्ठित दुकान से खरीदी गई हो

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) निर्माता प्रसिद्ध ब्राण्ड की .... वस्तु बनाकर बाजार में सस्ते मूल्यों पर बेचते हैं।

(ii) एक ही वस्तु कई ब्राण्ड की होने पर वस्तु के .... समस्या आती है

(iii) उपभोक्ता स्वयं .... है, उसे अच्छा लगे वही खरीदना चाहिये।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें :

(अ) भ्रामक विज्ञापन

(ब) वस्तु के चुनाव की समस्या

(स) मिलावट

(द) कपटपूर्ण चिह्न व लेबल

4. उपभोक्ता की परिभाषा लिखिये।

5. एक उपभोक्ता को बाजार में वस्तु के चुनाव की समस्या क्यों आती है? लिखिये।

6. उपभोक्ता को इन समस्याओं से बचने के लिये क्या करना चाहिये?

7. झूठे व भ्रामक विज्ञापन किस प्रकार उपभोक्ता को ठगते हैं।

8. अशिक्षा उपभोक्ता की एक समस्या है क्यों? समझाइये।

उत्तरमाला :

(i) स (ii) अ (iii) अ (iv) द

(i) नकली (ii) चुनाव की (iii) सम्राट

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

33. उपभोक्ता संरक्षण एवं सहायता

Consumer Protection and Aid
I- Consumer Protection

I- उपभोक्ता संरक्षण

उपभोक्ता शिक्षा- उपभोक्ताओं को आजकल बहुत सारी परेशानियों का सामना करना पड़ता है, विक्रेता, व्यापारी, निर्माता, उत्पादक उसेें विभिन्नत रीकोंस`ठ गतेह`ं ाउ सेज्ञ यादाक ामतम`ें ाटियाव स्तुएं उपलब्ध करायी जाती है। उपभोक्ता के साथ अशिष्ट व्यवहार होता है। उपभोक्ता समस्याओं/शोषण का मुख्य कारण है- उपभोक्ता का संगठित नहीं होना, अशिक्षा, कानून की जानकारी नहीं होना इत्यादि। उपभोक्ता अपनी समस्याओं से तभी निबट सकता है जब वह सचेत एवं जागरूक होगा। अत: उपभोक्ता अपने हितों की रक्षा जिन तरीकों से कर सकता है, उसे ही 'उपभोक्ता संरक्षण' कहते हैं। उपभोक्ता संरक्षण के लिये अनेक कानून एवं अधिनियम बनाये गये हैं। उपभोक्ता को संरक्षण प्रदान करने से पहले उपभोक्ता शिक्षा का ज्ञान होना आवश्यक है।

उपभोक्ता शिक्षा से अभिप्राय है किसी भी वस्तु या सेवा के बारे में सम्पूर्ण जानकारी होना ताकि वस्तु का सही चयन कर उसका उपभोग कर सके। उपभोक्ता शिक्षा का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ता को संरक्षण प्रदान करना है, उपभोक्ता को जागरूक बनाना है। अर्थात् जनता का रहन-सहन का स्तर ऊंचा उठाना है। यह तभी सम्भव होगा जब वह सावधानीपूर्वक, सोच-समझकर, विवेकपूर्ण निर्णय लेकर खरीदारी करे। उसे बाजार में उपलब्ध वस्तुओं की जानकारी होनी चाहिये, मूल्य, माप-तौल, गुणवत्ता आदि के बारे में पर्याप्त जानकारी होनी चाहिये। तभी वह निर्माता की धोखाधड़ी से बचकर उच्च गुणवत्ता की वस्तुएं खरीद सकेगा। सारांश में उपभोक्ता शिक्षा से उपभोक्ता बुद्धिमान क्रेता बन सकता है।

उपभोक्ता शिक्षा द्वारा उपभोक्ता को निम्न जानकारी मिलती है :-

(1) क्या खरीदें - उपभोक्ता को अपनी समस्त आवश्यकताओं की सूची बना लेनी चाहिये। उनमें से आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति पहले करनी चाहिये। उसे पारिवारिक बजट, मूल्य, स्तर के अनुरूप निश्चय करना चाहिये कि कौन-सी वस्तु खरीदे। यदि सम्भव हो तो उच्च गुणवत्ता वाली वस्तु ही खरीदे। इसके लिये विभिन्न दुकानों पर जाकर वस्तु का मूल्य, गुणवत्ता, मात्रा, उपयोगिता, टिकाऊपन इत्यादि का तुलनात्मक अध्ययन करने के पश्चात् ही निर्णय करना चाहिये कि वस्तु कहां से खरीदे। उपभोक्ता को बाजार से प्रमाणीकृत वस्तुएं ही खरीदनी चाहिये जो कि सुरक्षित रहती है। वस्तु को खरीदने से पहले उपभोक्ता के मस्तिष्क में यह स्पष्ट होना चाहिये कि वह क्यों खरीद रहा है, उसकी क्या उपयोगिता है?

(2) कहाँ से खरीदें- किसी भी वस्तु को खरीदने का निश्चय करने के बाद उपभोक्ता यह निश्चित करता है कि उसे कहाँ से खरीदे? एक सावधान एवं जागरूक उपभोक्ता को यह पता होता है कि किस बाजार में, किस दुकान पर वस्तु उचित दाम में मिलेगी, जिससे समय, शक्ति व्यर्थ नहीं होती है।

अत: उपभोक्ता को बाजार का पूरा ज्ञान होना चाहिये। बाजार का चयन करने के बाद उसे दुकान का चयन करना चाहिये जहां से वस्तु खरीदनी है। प्राय: उपभोक्ता को उसी दुकान से सामान खरीदना चाहिये जो पंजीकृत हो एवं लाइसेंसधारी हो। सम्भव हो तो थोक व्यापारी या सहकारी उपभोक्ता भण्डार से वस्तुएं खरीदनी चाहिये। साथ में यह भी देख लेना चाहिये कि क्या विक्रेता वस्तु देने के बाद आवश्यकता पड़ने पर उस वस्तु को बदल देगा। सर्विस देगा या नहीं। कई शहरों में एक वस्तु का एक पूरा बाजार होता है, जैसे-बर्तन बाजार, कपडा बाजार आदि, अगर हो सके तो विशिष्ट बाजार से ही सामान खरीदना चाहिये, इससे चुनाव आसानी से हो सकता है।

(3) कब खरीदें- वैसे तो वस्तुएं आवश्यकतानुसार खरीदी जाती है, परन्तु हर वस्तु खरीदने का एक उत्तम समय, मौसम अथवा वर्ष होता है। परन्तु कब खरीदी जाये यह इस पर निर्भर करता है कि वस्तु की प्रकृति कैसी है? कुछ वस्तुएं ऐसी होती है जो विशेष मौसम में ही उपलब्ध होती है। साथ ही यह उत्तम किस्म की व सस्ती मिलती है। जैसे-अप्रेल में गेहूँ, दिसम्बर में मूँगफली का तेल, आदि। कुछ वस्तुएं मौसम के अनुसार महंगी व सस्ती भी हो जाती है, जैसे-गर्मी में एसी., कूलर, फ्रीज, पंखे महंगे व गीजर, हीटर सस्ते हो जाते हैं। कभी-कभी त्योहार व विभिन्न अवसरों पर भी व्यापारी अधिक बिक्री के लिये माल सस्ता बेचते हैं। अत:

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

उपभोक्ता को समय, मौसम, पर्व इत्यादि को देखकर वस्तुएं खरीदनी चाहिये, जिससे अच्छी गुणवत्ता वाली वस्तु सस्ते दामों में मिल जाये।

(4) कितना खरीदें- वस्तु कितनी मात्रा में खरीदे यह बहुत तत्त्वों पर निर्भर करता है- परिवार में सदस्यों की संख्या, आवश्यकता, बजट, संग्रह करने की क्षमता, वस्तु की प्रकृति इत्यादि। कुछ वस्तुएं वर्ष भर के लिये इकट्ठी खरीदी जा सकती है, जैसे-दालें, गेहूँ, चावल, शक्कर इत्यादि। ये मौसम में सस्ती भी मिल जाती हैं। साथ ही खराब भी नहीं होती है। परन्तु कुछ वस्तुएं ऐसी होती है जो जल्दी खराब हो जाती है। इन्हें लम्बे समय के लिये नहीं खरीदना चाहिये। जैसे-फल, सब्जियाँ, चीज, क्रीम इत्यादि। इन्हें आवश्यकतानुसार उसी समय खरीदना चाहिये। आवश्यकता से अधिक खरीदने से वस्तु खराब हो जाती है व धन का अपव्यय होता है।

(5) कितना खर्च करे- किस वस्तु पर कितना खर्च करना चाहिये यह पारिवारिक आय, आदत, जीवन स्तर तथा मानसिकता पर निर्भर होता है। उसे योजना बनाकर ही क्रय करना चाहिये। उपभोक्ता को धन की बचत के साथ-साथ समय एवं शक्ति की बचत भी करनी चाहिये। आजकल उपभोक्तावाद को बढ़ाने के लिये व्यापारियों ने कई विक्रय प्रणालियां अपनाई है जहां धन के अभाव में भी उपभोक्ता को आसानी से किश्तों पर वस्तुएं उपलब्ध कराई जाती है।

संक्षेप में उपभोक्ता को वस्तु क्रय करने से पहले सभी जानकारी होनी चाहिये जिससे व्यापारी उसे ठग न सके। उपभोक्ता शिक्षा के लिये कोई औपचारिक संस्था नहीं है, बल्कि स्वयं के ज्ञान, बुद्धि, पत्र-पत्रिकाएं, दूसरों के अनुभव, प्रचार माध्यम का उपयोग कर हम उत्तम वस्तुएं क्रय कर सकते हैं। एक शिक्षित उपभोक्ता उन्हीं चीजों को क्रय करता है जिससे उसे अधिकतमस ुख,अ ानन्दव स न्तुष्टि मलतीह ैा उ पभोक्ताि शक्षाद्व ारा उपभोक्ता को अपने अधिकारों व दायित्वों का बोध होता है, जिससे अगर वह कभी ठगी का शिकार भी बनता है तो वह उपभोक्ता मंच में जाकर विक्रेता से क्षतिपूर्ति ले सकता है।

उपभोक्ता शिक्षा का महत्त्व समझते हुए आजकल कई निजी, सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा उपभोक्ता शिक्षा पर कार्यशाला, संगोष्ठीअ ायोजितक ीज ातीह ै,ि जससेउ पभोक्ताउ सकाल ाभल ेकर जागरूक बन सके व अपने उत्तरदायित्वों एवं अधिकारों का प्रयोग करने में सक्षम बने।

शिक्षित उपभोक्ता के गुण :

(i) वस्तु का दाम, उसके गुण, आवश्यकतानुसार ही सामान को क्रय करेगा ।ि कसीभ ीव स्तुक ेख रीदनेस ेप ूर्वव स्तुक ीस म्पूर्ण जानकारी प्राप्त करके वस्तु को खरीदेगा।

(ii) वस्तु को खरीदते समय भ्रामक विज्ञापन, वस्तु की आकर्षक पैकिंग व दुकान वाले का प्रोत्साहन आदि से वह प्रभावित नहीं होगा। अपनी बुद्धि का उपयोग करके वस्तु खरीदने का निर्णय करेगा।

(iii) वस्तु को क्रय करते समय लेबल, ब्राण्ड, वजन, मूल्य, उपयोग तिथि आदि पर विशेष ध्यान देगा।

(iv) वस्तु खरीदते समय गारंटी वाली वस्तुओं को प्राथमिकता देते हुए गारंटी-वारंटी कार्ड को विक्रेता से भरवाकर अपने पास संभालकर रखेगा।

(v) वस्तु खरीदने के बाद प्रत्येक वस्तु का दुकानदार से बिल अवश्य लेगा, जिससे जरूरत पड़ने पर बिल का प्रयोग दस्तावेज के रूप में कर सके।

(vi) वह अपने अधिकार एवं उत्तरदायित्वों के प्रति सजग रहेगा। नुकसान होने पर क्षतिपूर्ति के लिये उपभोक्ता मंच की मदद लेगा।

उपभोक्ता के अधिकार

विक्रेता, व्यापारी, निर्माता उपभोक्ता का शोषण इसलिये करते हैं कि उनको अपने अधिकारों की जानकारी नहीं रहती है। कभी-कभी उपभोक्ता समय के अभाव में भी उपभोक्ता मंच तक नहीं जाता है। इन सबका लाभ विक्रेता उठाता है तथा उपभोक्ता का शोषण करता है।

यदि उपभोक्ता जागरूक होगा तो अपना संरक्षण वह खुद कर सकेगा। इसके लिये उपभोक्ता को अपने अधिकारों की सम्पूर्ण जानकारी होनी चाहिये।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986के तहत उपभोक्ताओं को निम्न अधिकार दिये गये हैं-

(1) चयन का अधिकार - उपभोक्ता को सही मूल्य पर सही वस्तु चयन करने का अधिकार है। निम्न स्तर की होने पर वह लौटा सकता है या शिकायत कर सकता है।

(2) सुरक्षा का अधिकार - खाद्य पदार्थों में मिलावट आम बात है। इससे उपभोक्ता को कई स्वास्थ्य सम्बन्धी गम्भीर समस्याएं उत्पन्न हो जाती है। अत: जीवन एवं सम्पत्ति के लिये हानिकारक वस्तुओं के क्रय-विक्रय के विरुद्ध संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार है।

(3) सूचित किये जाने का अधिकार - किसी भी वस्तु की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना उसका अधिकार है। सन्देह होने पर इसकी सूचना रसद अधिकारी को दे सकता है।

(4) क्षतिपूर्ति का अधिकार - यदि विक्रेता उपभोक्ता को किसी भी प्रकार से धोखा देता है। जैसे-अधिक मूल्य लेकर कम तोलना, मिलावटी सामान देना, असली मूल्य लेकर नकली माल देना, तो उपभोक्ता को यह अधिकार होता है कि वह निर्माता/विक्रेता से उपभोक्ता मंच द्वारा क्षतिपूर्ति प्राप्त करे।

(5) सुनवाई का अधिकार- उपभोक्ता को यह अधिकार है कि अपनी समस्याओं को वह न्यायालय या उपभोक्ता मंच में पहुंचाए और वहां उसकी सुनवाई हो।

(6) स्वस्थ एवं सुरक्षित वातावरण का अधिकार - प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह स्वच्छ वातावरण में रहे जिससे उसकी कार्यक्षमता

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

बढ़े व सुखी एवं आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सके। यदि किसी व्यक्ति के पास कोई ऐसा व्यवसाय/धंधा चल रहा है जिससे वातावरण दूषित होता हो, स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता हो तो उसे पूरा अधिकार है कि उस व्यक्ति के विरुद्ध उपभोक्ता मंच में शिकायत कर सके।

(7) उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार- उपभोक्ता को उपभोक्ता शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। उसे उपभोक्ता बने रहने के लिये वस्तु के बारे में पूरा ज्ञान एवं क्षमता प्राप्त करने का अधिकार है।

इन सब अधिकारों की जानकारी प्राप्त करके उपभोक्ता स्वयं अपना संरक्षण कर सकता है तथा धोखा देने वाले विक्रेता को सबक भी सिखा सकता है। परन्तु उपभोक्ता न ही इतना सजग है और न ही अपने अधिकारों का प्रयोग करना चाहता है। इसी कारण विक्रेता उन्हें बेवकूफ बना कर घटिया किस्म की वस्तुएं एवं सेवाएं देकर अच्छा-खासा मुनाफा वसूलते हैं।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

(1) उपभोक्ता द्वारा विभिन्न वस्तुओं की जानकारी प्राप्त करना उपभोक्ता शिक्षा कहलाता है।

(2) उपभोक्ता शिक्षा से उपभोक्ता को यह पता चलता है कि कौन सी वस्तु कब, कहाँ, कैसे और कितनी खरीदनी चाहिये।

(3) शिक्षित उपभोक्ता सोच-समझ कर उत्तम गुणवत्ता वाली वस्तु उचित दाम की दुकान से खरीदेगा।

(4) शिक्षित उपभोक्ता वस्तु खरीदने के बाद रसीद अवश्य लेगा।

(5) शिक्षित उपभोक्ता का शोषण अशिक्षित की अपेक्षाकृत कम होता है।

(6) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के तहत उपभोक्ताओं को कई अधिकार प्राप्त हैं। जिसके तहत वह उपभोक्ता मंच, न्यायालय में जाकर आवश्यकता पड़ने पर क्षतिपूर्ति प्राप्त कर सकता है।

(7) उपभोक्ताओं को संगठित एवं जागरूक होना चाहिये साथ ही क्रय करने से पूर्व सम्पूर्ण जानकारी होनी चाहिये जिससे विक्रेता व निर्माता उन्हें धोखा न द सके।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

(1) निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) उपभोक्ता शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है :

(अ) सस्ती वस्तु उपलब्ध कराना
(ब) बाजार में वस्तु उपलब्ध कराना
(स) उपभोक्ता को संरक्षण देना
(द) कोई नहीं

(ii) उपभोक्ता को वस्तु कहाँ से खरीदनी चाहिये :

(अ) राशन की दुकान से (ब) सुपर मार्केट से
(स) पंजीकृत व अधिकृत दुकान से (द) उपरोक्त सभी

(iii) उपभोक्ता शिक्षा अर्जित की जा सकती है :

(अ) पड़ोसी से (ब) पत्र-पत्रिकाओं से
(स) टीवी. से (द) उपरोक्त सभी

(iv) निम्न में से कौन सा उपभोक्ता अधिकार नहीं है :

(अ) सुनवाई का (ब) सजा का
(स) चयन का (द) सूचना का

(v) ग्राहक के साथ धोखाधड़ी का मुख्य कारण है :

(अ) औद्योगिकीकरण (ब) आय में कमी
(स) वस्तुओं में कमी (द) अज्ञानता

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(I) उपभोक्ता अपने हितों की रक्षा करता है उसे .... कहते हैं।

(ii) त्योहारों और पर्वों पर व्यापारी अधिक बिक्री हेतु .... लगाते हैं।

(iii) बाजार का चयन करने के पश्चात् उपभोक्ता को .... चयन करनी चाहिये।

(iv) खाद्य पदार्थों में मिलावट जानने का अधिकार का नाम .... है।

(v) .... की कमी से उपभोक्ता का शोषण होता आ रहा है।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो :

(अ) उपभोक्ता शिक्षा का महत्त्व
(ब) चयन का अधिकार
(स) कब खरीदें
(द) उपभोक्ता संरक्षण का अर्थ

4. कोई भी दो उपभोक्ता के अधिकारों के बारे में संक्षेप में लिखिये।

5. उपभोक्ता को वस्तु खरीदते समय क्या-क्या बातें ध्यान में रखनी चाहिये?

6. उपभोक्ता को जागरूक व संगठित कैसे बनाना चाहिये?

उत्तरमाला :

(i) स (ii) द (iii) द (iv) ब (v) द

(i) उपभोक्ता संरक्षण (ii) सेल (iii) दुकान (iv) सुरक्षा का अधिकार (v) उपभोक्ता शिक्षा

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

II– उपभोक्ता सहायता

वे सभी स्त्रोत जो उपभोक्ताओं को वस्तुओं एवं सेवाओं के बुद्धिमत्तापूर्ण क्रय करने में तथा साथ ही उन्हें निर्माताओं, दुकानदारों द्वारा शोषण से बचाते हैं **उपभोक्ता सहायता** कहलाते हैं। मुख्य उपभोक्ता सहायताएँ निम्नलिखित हैं :

1. लेबल (Label)
2. मानक (Standards)
3. विज्ञापन (Advertisement)
6. प्रतिस्पर्धा (Competition) एवं
7. उपभोक्ता संरक्षण कानून एवं अधिनियम (Comsumer protection law and Act)

1. **लेबल** : आधुनिकता के साथ–साथ मनुष्यों के रहन सहन में आए परिवर्तनों के फलस्वरूप व्यक्तियों ने बाजार में तैयार बिकने वाले खाद्य एवं अन्य पदार्थों का ज्यादा उपयोग करना आरंभ कर दिया। इन तैयार पदार्थों के अन्दर किन वस्तुओं का उपयोग किया गया तथा किसकी कितनी मात्रा मिलाई गई इसका उपभोक्ता को कोई ज्ञान नहीं होता है। बढ़ती हुई जनसंख्या, खाद्य पदार्थों की उपलब्धि में कमी तथा महिलाओं की दोहरी भूमिका के फलस्वरूप इन पदार्थों की माँग बढ़ती गई। विक्रेता अधिक लाभ कमाने की दृष्टि से इन पदार्थों में मिलावट करने के लिये प्रेरित हुए अथवा घटिया किस्म का माल उच्च दाम पर बेचने लगे। खराब माल से लोगों के स्वास्थ पर बुरा असर पड़ने लगा। परिणाम स्वरूप सरकार ने बाजार में बेची जाने वाली वे सब वस्तुएँ जिन्हें पैकेट में बन्द किया जाता है पर **लेबल** लगाना अनिवार्य कर दिया, जिस पर उस वस्तु का पूरा विवरण जैसे : मूल्य, मात्रा, कम्पनी का नाम, पता आदि साफ–साफ लिखा जाने लगा। साथ ही उपभोक्ताओं को यह सूचित कर दिया गया कि वे लेबल लगी हुई वस्तुएँ ही खरीदें, जिससे वे घटिया किस्म की वस्तुओं से बच सकें। इस प्रकार लेबल उपभोक्ता को एक सहायता साधन के रूप में संरक्षण प्रदान करता है।

किसी भी पदार्थ के बारे में उसके डिब्बे, शीशी, टिन, थैली, ट्यूब अथवा पैकेट आदि पर अंकित विवरण को **लेबल** कहते हैं। लेबल अधिकतर छपे हुए, होते हैं परन्तु कई बार ये लिखे हुए, मोहर लगे हुए या खुदे हुए भी हो सकते हैं। लेबल पर दिये गये विवरण ऐसे होने चाहिये कि वे मिटे नहीं। लेबल लगाने से प्रमुख लाभ यह है कि उपभोक्ता को पैकेट में रखे गये पदार्थों के बारे में विभिन्न जानकारी रहती है तथा वस्तुओं को पहचानने में सरलता रहती है। एक अच्छे लेबल में निम्नलिखित गुण होने चाहिये :

(i) वस्तु का नाम

(ii) पदार्थ को बनाने में प्रयोग की गई सामग्री का विवरण

(iii) प्रयोग में लाये प्रमुख पदार्थों का चित्र

(iv) पदार्थ को तैयार करते समय उपयोग में लिये गये रासायनिक पदार्थ, कृत्रिम रंग एवं सुगन्ध आदि का विवरण

(v) ब्राण्ड का नाम

(vi) व्यापार चिन्ह

(vii) तैयार पदार्थ का कुल भार सही इकाई में उदाहरणार्थ : वनस्पति तेल, एल.पी.जी. गैस, गुलाब जामुन/रसगुल्ले के लिए बाट तथा वार्निश, औद्योगिक डीजल ईंधन के लिए आयतन की इकाई उपयोग में ली जाय। खाद्य तेल का भाव लीटर में बताकर ग्राहक को भ्रमित किया जा सकता है जबकि यह वजन ग्राम/कि.ग्रा. पर आधारित होना चाहिये।

(viii) निर्माता का नाम व पता

(ix) प्रमाणीकरण की मुहर (आई.एस.आई/एगमार्क/एफ.पी.ओ.) तथा रजिस्ट्रेशन नम्बर

(x) निर्माण एवं उपयोग की अन्तिम तिथि

(xi) पदार्थ का लाइसेंस नम्बर, बैच नम्बर तथा कोड नम्बर

(xii) प्रयोग में लेने एवं सुरक्षित रखने के निर्देश

(xiii) दवाईयों के संबंध में उसकी खुराक, मात्रा एवं उपयोग हेतु निर्देश।

(xiv) अधिकतम खुदरा मूल्य, सभी करों सहित।

(xv) चेतावनी यदि कोई है (बच्चों से दूर रखें, आँख से दूर, जहर इत्यादि)।

(xvi) मांसाहारी उत्पाद या उसे किसी और उत्पाद में मिलाने पर लाल रंग का प्रतीक चिन्ह प्रकाशित होना चाहिये। ठीक इसी प्रकार शाकाहारी उपभोक्ताओं के लिये सभी शाकाहारी वस्तुओं पर प्रमुख रूप से हरे रंग का प्रतीक चिन्ह का प्रकाशन अनिवार्य कर दिया गया है।

लेबल सम्बन्धी सुरक्षा निश्चित करने हेतु सरकार ने "डिब्बा बन्द वस्तु" (Package commodity act, 1977) अधिनियम जारी किया जिसके बारे में हम अगले अध्याय में पढ़ेंगें।

2. **मानक** : उपभोक्ता वस्तुओं में बढ़ती हुई मिलावट के कारण जनता पर होने वाले कुप्रभावों से बचने के लिये यह जरूरी हो गया कि बाजार में बिकने वाले पदार्थों का प्रमाणीकरण

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

किया जाए ताकि उनकी किस्म को नियन्त्रित किया जा सके। प्रमाणीकरण की योजना स्वैच्छिक है, जो भी उत्पादक अपने उत्पाद को प्रमाणीकृत करवाना चाहे वह मानक संस्था द्वारा अपने उत्पाद प्रमाणीकृत करवा सकता है। लेकिन कई उत्पादों को जो कि आम जनता हेतु उपयोग में लाये जाते हैं तथा स्वास्थ्य एवं सुरक्षा से सम्बन्ध रखते हैं प्रमाणीकृत करवाना अनिवार्य है। उपभोक्ता के हितों की सुरक्षा के लिये भारतीय मानक ब्यूरो ने 17000 से अधिक मानक बनाये हैं और 134 वस्तुएँ अनिवार्य मानकीकरण के दायरे में आती हैं जो बिना आई. एस. आई मार्का के नहीं बेची जा सकती। आम तौर पर यह कहा जाता है कि **''मानक उत्पाद द्वारा ही उपभोक्ता की रक्षा होती है''।** वर्तमान में हमारे देश में निम्नलिखित मानक प्रचलित है :

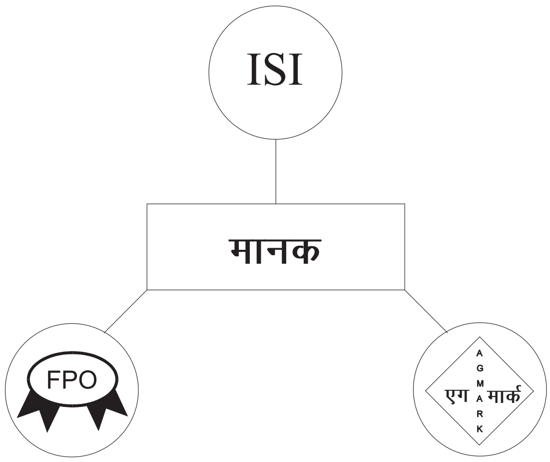

चित्र 33.1 :

(i) **आई.एस.आई.** : यह मार्क भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा शुरू किया गया है। यह संस्थान एक राष्ट्रीय स्तर का संगठन है जो विभिन्न पदार्थों की किस्म को बनाये रखने के लिये विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों के सहयोग से इन पदार्थों के लिये समय–समय पर अपने मापदण्ड बनाता रहता है। यह ब्यूरो इन मापदण्डों को निर्धारित करते समय पदार्थों के बाह्य रंग, रूप एवं संरचना आदि के साथ–साथ उनमें उपस्थित घटकों अथवा तत्त्वों का एक निश्चित स्तर भी निर्धारित करता है।

इस प्रचलित मार्क को प्रयोग में लाने हेतु संस्थान उत्पादकों को लाइसेंस देता है। इस योजना के अन्तर्गत वस्तु के पूरे उत्पाद की प्रक्रिया पर नियत्रंण रखा जाता है। वस्तु की गुणवत्ता, उसमें उपयोग आने वाले कच्चे माल से लेकर तैयार माल तक बरकरार रखी जाती है जो कि विशेषज्ञों द्वारा तैयार किये गये मापों के आधार पर होती है। यह संस्थान किसी भी फर्म को लाइसेंस तब देता है जब कि उसे यह विश्वास हो जाता है कि फर्म उसके द्वारा निर्धारित मापदण्डों अनुरूप के उत्पाद को बनाने में योग्य है। साथ ही इन मापदण्डों का सदैव पालन करेगी तथा अपनी वस्तु की किस्म हमेशा निर्धारित स्तर के अनुरूप रखेगी तथा ऐसा करने के लिये उसमें आवश्यक सामर्थ्य भी है। भारतीय मानक ब्यूरो, आई. एस.आई. मार्क वाली वस्तुओं का समय–समय पर परीक्षण भी करता है। यह परीक्षण वस्तु के निर्माण के समय तथा बाजार में बेचते समय नमूने लेकर किये जाते हैं। यदि कोई उत्पादक मापदण्डों का पालन करता न पाया गया तो उसका लाइसेंस रद्द कर दिया जाता है।

इस मार्क के प्रचलन के साथ यह भी पाया गया है कि कई उत्पादक अपने उत्पादों पर इस चिन्ह को गलत ढंग से उपयोग कर बाजार में वस्तुओं को बेच रहें हैं तथा उपभोक्ताओं को ठग रहे हैं। अतः उपभोक्ताओं को इस चिन्ह के प्रति जागरूक एवं सजग रहने की आवश्यकता है। कई व्यापारी इस चिन्ह का गलत उपयोग करते हैं :

- चिन्ह का उपयोग ऐसी वस्तुओं पर करते हैं जो निर्धारित मापदण्डों के अनुकूल नहीं हैं।
- चिन्ह का बिना लाइसेंस के प्रयोग में लेते हैं। इस चिन्ह पर एक लाइसेंस नम्बर का प्रयोग होता है जो व्यापारी नहीं लिखते।
- इस चिन्ह की हू–ब–हू नकल करते हैं।
- भारतीय मानक ब्यूरो के अनुरूप होने का दावा करते हैं।
- आई.एस.आई. के नाम पर भ्रम फैलाते हैं।
- उपभोक्ता को झूठ बोलते हैं कि वे भारतीय मानक ब्यूरो के तहत् लाइसेंस धारक हैं।

आई.एस.आई. का चिन्ह आप खाद्य पदार्थों (आटा, नमक, बिस्कुट), बिजली के उपकरणों (पानी गर्म करने के उपकरण, बल्ब, ट्यूब लाईट), पाठ्य सामग्री (पेन, पेन्सिल, स्याही) आदि पर प्रायः देख सकते हैं।

(ii) **एग–मार्क** : भारत सरकार द्वारा प्रारंभ किया गया यह मार्क मुख्यतः कृषि उपज खाद्य पदार्थों जैसे घी, तेल, मसाले, मक्खन, अण्डे, शहद आदि पर लगाया जाता है। एग–मार्क के मापदण्ड बनाते समय खाद्य पदार्थों के रंग–रूप, संरचना, वर्णन एवं किस्म आदि के आधार पर इनका वर्गीकरण किया जाता है – अति उत्तम, उत्तम, अच्छा एवं सामान्य किस्म। जिस प्रकार प्रत्येक उत्पादक को आई.एस.आई. जैसी मोहर लगवाना अनिवार्य नहीं है उसी प्रकार एग–मार्क का चिन्ह लगवाना भी ऐच्छिक होता है। प्राकृतिक एवं निर्मित वस्तुओं कि भौतिक तथा रासायनिक विशेषताओं के आधार पर व्यापारियों को लाइसेंस दिया जाता है। समय–समय पर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

वस्तुओं का निरीक्षण किया जाता है तथा दोषी व्यापारियों का लाइसेंस रद्द कर दिया जाता है। इस प्रकार एग–मार्क वाले खाद्य पदार्थ अपनी अच्छी किस्म के प्रतीक हैं।

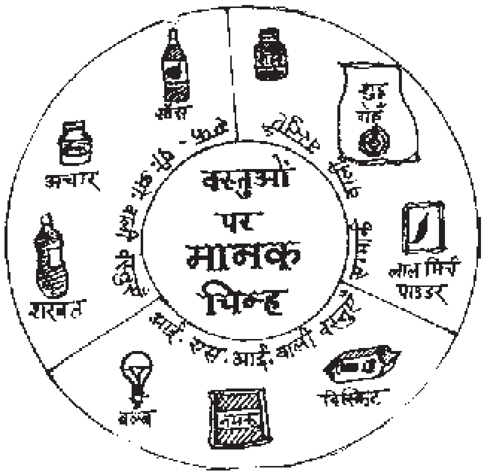

चित्र 33.2 : मानक चिन्ह

(iii) **एफ.पी.ओ.** : यह फूड प्रोडक्ट आर्डर के नाम से जाना जाता है। इस चिन्ह के अन्तर्गत वे सभी पदार्थ आते हैं जो फल एवं सब्जियों से निर्मित हैं तथा उच्च गुणवत्ता के द्योतक हैं, एफ. पी.ओ. वस्तुओं की पैदावार से लेकर बिक्री होने तक न्यूनतम मापदण्डों को निर्धारित करता है। यह चिन्ह आपको अचार, मुरब्बे, सॉस, चटनी, शरबत, जैम, जैली तथा डिब्बा बन्द खाद्य पदार्थों (Canned foods) पर दिखाई देगा।

इस प्रकार हमने तीन मानकों के बारे में ज्ञान अर्जित किया। मानकों से उपभोक्ता के हितों की रक्षा होती है। उपभोक्ताओं में विश्वास पैदा होता है और उन्हें अपने धन का पूरा लाभ मिलता है। हमे गुणवत्ता के प्रतीक उपरोक्त मुहर लगे उत्पाद ही खरीदने चाहिये।

3. **विज्ञापन** : बढ़ता उत्पादन, विस्तृत बाजार एवं तीव्र प्रतियोगिता के कारण ही विज्ञापनों का जन्म हुआ है। कोई भी औद्योगिक संस्थान आज के युग में बिना विज्ञापन का सहारा लिये अपना अस्तित्व बनाये रखने में समर्थ नहीं है। यही कारण है कि आज अखबारों में समाचार कम तथा विज्ञापन भरपूर दिखाई देते हैं। टी.वी. पर कोई भी प्रोग्राम देखते समय, हर थोड़ी देर में विज्ञापनों की श्रृंखला शुरू हो जाती है। शहर की किसी भी सड़क, चौराहे, पार्क तथा बाजार में निकल जाएगें तो चारों और विज्ञापनों का ढ़ेर दिखाई देगा।

विज्ञापन वह माध्यम है जिसके द्वारा निर्माता अपने उत्पादों के बारे में उपभोक्ताओं को विभिन्न जानकारी प्रदान करता है। उत्पादक उपभोक्ता से मीलों दूर होता है तथा उसके साथ प्रत्यक्ष संपर्क रखने में असमर्थ होता है। वस्तुओं के मध्य बढ़ती स्पर्धा के कारण प्रतिदिन वह उत्पाद की कोई न कोई नई किस्म तैयार करता है तथा उसके बारे में अधिक से अधिक उपभोक्ताओं को सूचित करना चाहता है। ऐसी स्थिति में सबसे सरल माध्यम विज्ञापन ही है जिसकी वजह से वह अपने उपभोक्ताओं के बीच संपर्क रख सकता है। अतः विज्ञापन बिक्री बढ़ाने हेतु एक औजार के रूप में कार्य करता है। जो उत्पादक के काम को आसान करने में मदद करता है। साथ ही उपभोक्ता को संरक्षण हेतु सहायता भी प्रदान करता है।

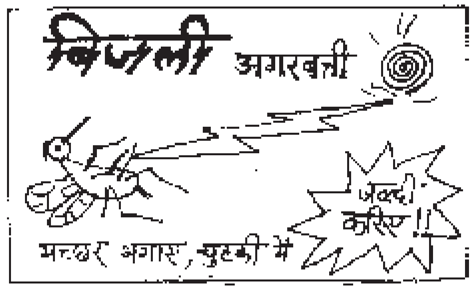

चित्र 33.3 : विज्ञापन

विज्ञापन कैसा हो?

- वस्तु के मूल्य, गुण, सेवा, निर्माण विधि आदि दर्शाने वाला हो।
- उत्पादों का विशिष्ट नाम व प्रमाणीकरण हेतु ट्रेड मार्क दर्शाया गया हो।
- विज्ञापन हेतु उपयोग में लायी गयी सामग्री अर्थात् माध्यम, भाषा, चित्र, मौसम समय आदि वस्तु के अनुकूल हो।
- उद्देश्य को पूरा करने में समर्थ हो।
- विज्ञापनों के संदेश उपभोक्ताओं को आकर्षित करने वाले, आसानी से समझे जाने योग्य व विश्वसनीय हों।

विज्ञापन के माध्यम :

वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के साथ–साथ विज्ञापन माध्यमों में भी बड़ा परिवर्तन आया है। शायद इसीलिए आज की दुनिया को विज्ञापन की दुनिया कहा जाता है। इन माध्यमों के द्वारा ही विज्ञापनों ने समाज के हर वर्ग के लोगों पर अपनी धाक जमा रखी है। बच्चे से लेकर वृद्ध, स्त्री, पुरूष कोई भी इनसे वंचित नहीं है। प्रत्येक विज्ञापन माध्यम के लाभ एवं हानियाँ होती है। उदाहरण के लिए टी.वी. पर दिखाये जाने वाले विज्ञापन अधिक लुभावने होते हैं तो समाचार पत्रों में विज्ञापन उतने प्रभावित नहीं करते तथा टी. वी. पर विज्ञापन क्षणिक होते है तो पत्र–पत्रिकाएँ वाले लम्बे समय तक रहते हैं आदि। कुछ प्रचलित विज्ञापन के माध्यम निम्न हैं :

- समाचार पत्र–पत्रिकाएँ

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

- प्रतिपर्ण
- पोस्टर, चार्ट, होर्डिंग
- रेडियो, लाउड स्पीकर
- दूरदर्शन, सिनेमाघर एवं
- प्रदर्शनियाँ, सेल, मेले।

एक अच्छा विज्ञापन उपभोक्ता को सही–सही जानकारी देता है तो भ्रामक विज्ञापन हानिकारक होता है। उपभोक्ता बाह्य दबावों में आकर अपनी रुचि व पसंद खो बैठता है। एक ही उत्पाद की कई ब्राण्ड होने से व उनको लुभावने ढंग से प्रस्तुत कर विक्रेता, उपभोक्ताओं को भ्रमित भी कर देता है। वह यह नहीं सोच पाता कि कौनसी वस्तु सही है व कौनसी वस्तु गलत है? विज्ञापनों की वजह से किया गया खर्च भी वस्तु के मूल्य में जोड़ा जाता है। जिससे वस्तु अपेक्षाकृत महंगी हो जाती है। यह आवश्यक नहीं कि वस्तु का विज्ञापन जितना आकर्षक एवं सुन्दर होगा वस्तु भी उतनी ही अच्छी होगी। सुन्दर पैकिंग में वस्तु खराब भी हो सकती है और साधारण पैकिंग में वस्तु अच्छी भी हो सकती है। निर्माता बार–बार एक ही वस्तु का विज्ञापन दिखा कर उपभोक्ताओं की मानसिकता पर इतना प्रभाव एवं दबाव डाल देते हैं कि एक उपभोक्ता आसानी से भ्रमित हो जाता है तथा उसे अपनी सोच एवं पसंद का तो ध्यान ही नहीं रह पाता और वह उस वस्तु का क्रय कर लेता है। आप कैसे पहचानेंगें कि विज्ञापन भ्रमित करने वाला है या नहीं?

(i) जब विज्ञापन उपभोक्ताओं की मनोवैज्ञानिक भावनाओं के साथ खिलवाड़ करता है जैसे इस टूथ पेस्ट से आपके दाँत मोती जैसे चमकने लगेंगे, इस शैम्पू से आप के बाल काले रेश्मी तथा चमकीले हो जाएगे, इस टॉनिक को पीने से आप में शेर जैसी ताकत आ जाएगी तथा इस साबुन से एक सप्ताह में आपका रंग गोरा हो जाएगा और आप सुन्दरी का खिताब जीतने में सक्षम हो जायेंगी आदि। इस प्रकार यदि विक्रेता, मनोवैाानिक दबाव द्वारा उपभोक्ताओं को उत्पाद खरीदने के लिए विवश कर देता है तब भी विज्ञापन भ्रामक कहलाएगा।

(ii) आपने आमतौर पर यह पाया होगा कि आजकल विक्रेता अपनी बिक्री बढ़ाने हेतु ज्यादातर उत्पादों के विज्ञापन में यह दर्शाते है कि इस उत्पाद के साथ एक अन्य उत्पाद मुफ्त, तो कभी चाय के साथ हीरा, साबुन के साथ सोना तो अन्य कम्पनी ने कौन बनेगा लखपति में भागीदारी की आशा जगाई है। क्या आपने सोचा कि ये मुफ्त योजनाएँ वास्तव में आपको उत्पाद मुफ्त में दे रही हैं?असल में तो निर्माता पहले अपनी वस्तु के मूल्य को बढ़ाता है तथा उसके बाद इस प्रकार की योजनाओं को बाजार में लाता है लेकिन अन्ततः फायदा उसी को होता है। यह एक आम तरीका है जो आजकल अधिकतम कम्पनियों ने अपनाया है। आपने यह भी पाया होगा कि यह योजना सिर्फ दस दिन के लिये है या सिर्फ 31 मार्च तक है ताकि उपभोक्ता शीघ्र खरीददारी कर इस योजना का लाभ उठाये। वास्तव में यह सब तरकीबें उपभोक्ता को भ्रमित करने वाली हैं।

(iii) कभी–कभी आपने देखा होगा कि व्यापारी अपने विज्ञापन में इस बात को कहता है कि वह अपने उत्पादों पर कुछ विशेष प्रकार की छूट (Discount) दे रहा है। उपभोक्ता इस बात को सुनकर वस्तु खरीदने का मानस बना लेता है। जब वह दुकान पर अपनी पसंद से चीज लेने लगता है तब वह कहता है छूट सिर्फ कुछ गिने–चुने उत्पादों पर ही है सब पर नहीं। जो चीज आपने पसंद की है वो छूट के अन्तर्गत नहीं आती है। ऐसी स्थिति में कई बार उपभोक्ता सोचता है कि जब इतना समय, शक्ति व्यर्थ हो ही गई है तो ''क्यू न मैं जो पसंद आया है वह खरीद ही लूँ''। अतः यह अनावश्यक क्रय को बढ़ावा देता है। इस तरह का विज्ञापन भी भ्रमित करने वाला माना जाएगा।

(iv) जब आप कोई वस्तु क्रय करें और व्यापारी आपको विज्ञापन में बताये अनुसार वस्तु की गारंटी दे लेकिन यदि उपभोग करते समय उस वस्तु में कोई दोष या कमी पाई जाए और आप उसके पास अपनी समस्या लेकर जाए तो वह कोई सही जवाब न देकर सारा दोष आप पर लगाने लगे तो विज्ञापन भ्रमित करने वाला है।

कई विक्रेता अपने लुभावने विज्ञापनों के साथ उत्पाद को बाजार में प्रस्तुत करते हैं तथा ऐसे शब्दों का प्रयोग जैसे अब और शक्तिशाली, एक्स्ट्रा रिच, पोषक तत्वों से भरपूर, अत्यधिक पोषण वाला, सुपर पावर, अधिक सुरक्षा के साथ दुनिया का नम्बर वन, भारत में सबसे अधिक बिकने वाला आदि उपभोक्ताओं को भ्रमित करते हैं। यदि हम विज्ञापन के हिसाब से वस्तु खरीदें और उपभोग में लें तो पायेंगे कि निर्माता ने अपने उत्पाद का कुछ ज्यादा ही ऊँचा आँकलन कर उपभोक्ताओं को बेवकूफ बनाया है।

यदि आप उपरोक्त किसी भी प्रकार की नीति से ग्रसित हो जाएं तो आप इसकी शिकायत भारतीय विज्ञापन मानक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

परिषद्, मुंबई (Advertisement standard council of India -ASCI, Mumbai) में कर सकते हो।

4. **प्रतिस्पर्धा** : प्रतिस्पर्धा ऐसी गतिविधि है जिसके ज़रिये व्यक्ति अपनी सर्वोच्चता या सर्वश्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रयास करता है। अपने प्रतिद्वन्दी से मुकाबला करता है तथा वह उपभोक्ता को सबसे सुरक्षित, उत्तम गुणवत्ता वाली वस्तु देना चाहता है ताकि उपभोक्ता को उसके उत्पाद से किसी भी प्रकार की हानि न पहुँचे और वह हमेशा उसी के द्वारा निर्मित उत्पाद का ही सेवन करे। ऐसा करने के लिये वह हर संभव प्रयत्न करता है तथा अपने ग्राहक को उच्च कोटि की वस्तु देकर हमेशा के लिये एक नाता जोड़ लेता है। यही कारण है कि बाजार में हम किसी एक ही दुकान से किसी विशेष ब्राण्ड की वस्तु का ही चयन करते हैं क्योंकि उसके उपयोग से हमें सुरक्षा का अहसास होता है। यदि प्रतिस्पर्धा न होगी तो उत्पादक उपभोक्ताओं के संरक्षण का ध्यान न रखकर अपने लाभ का अधिकतम ध्यान रखेगा क्योंकि उसे यह अच्छी तरह मालूम है कि यह उत्पाद सिर्फ वो ही बनाता है तथा इस क्षेत्र में कोई और उत्पादक है ही नहीं। अतः वह घटिया माल दे या कम तौले या मिलावट करे उपभोक्ता को उसके पास तो जाना ही पड़ेगा।

   यही नहीं यदि प्रतिस्पर्धा स्वस्थ होती है तो यह उपभोक्ता की क्रय शक्ति को बढ़ाने में भी मदद करती है। उदाहरण के तौर पर कोई व्यक्ति यदि अपने लिये साइकिल खरीदना चाहता है और उसकी कीमत 600 रु. है, मगर अत्यधिक प्रतिस्पर्धा के कारण उसे यह 400 रु. में ही सुलभ हो जाती है तो स्वाभाविक तौर पर उसे 200 रु. की बचत होगी जिसका इस्तेमाल वह दूसरी चीजों को खरीदने में कर सकता है। इसी प्रकार आपने सुना होगा कई वस्तुओं एंव सेवाओं के दाम आपस की प्रतिस्पर्धाओं के रहते काफी गिरे हैं अर्थात् कहने का तात्पर्य यह है कि प्रतिस्पर्धा का लाभ उपभोक्ता को ही मिलता है।

इस प्रकार हमने इस अध्याय में पढ़ा कि किस प्रकार विभिन्न मानक, लेबल, विज्ञापन एवं प्रतिस्पर्धा उपभोक्ताओं को बुद्धिमतापूर्ण क्रय करने में सहायक है। उपभोक्ता सहायता हेतु सरकार द्वारा पारित विभिन्न उपभोक्ता संरक्षण कानूनों के बारे में हम अगले अध्याय में चर्चा करेंगें।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. इस युग में उपभोक्ता को बुद्धिमता पूर्ण खरीददारी के लिये कई साधनों की आवश्यकता होती है। ये प्रमुख साधन–लेबल, मानक, विज्ञापन, प्रतिस्पर्धा एंव उपभोक्ता संरक्षण कानून हैं।
2. किसी भी पदार्थ के बारे में उसके डिब्बे, शीशी, टिन, थैली, ट्यूब अथवा पैकेट आदि पर अंकित विवरण को लेबल कहते हैं।
3. एक लेबल पर प्रायः उसका नाम, सामग्री, मूल्य, भार, उपयोग विधि, निर्माण एवं अंतिम उपयोग की तारीख, निर्माता का नाम, पता तथा सावधानियाँ आदि अंकित की जाती हैं।
4. उपभोक्ता को वस्तु खरीदने से पहले लेबल को अच्छी तरह से पढ़ लेना चाहिये।
5. वस्तुओं में उनकी गुणवत्ता को बनाये रखने हेतु प्रमाणीकरण की नीति को अपनाया जाता है।
6. हमारे देश में मुख्य रूप से तीन मानक – आई.एस.आई., एगमार्क तथा एफ.पी.ओ. का प्रयोग किया जाता है।
7. मानक के उपयोग हेतु निर्माताओं को लाइसेंस दिये जाते हैं तथा वस्तु में दोष पाये जाने पर लाइसेंस रद्द कर दिये जाते हैं।
8. विज्ञापन उपभोक्ता सहायता का एक प्रभावी साधन है जिसके द्वारा उन्हें उत्पादों के बारे में कई जानकारियाँ प्राप्त होती हैं।
9. आजकल विज्ञापन जानकारी कम देते हैं एवं भ्रमित ज्यादा करते हैं अतः उपभोक्ता को अपनी बुद्धि एवं विवेक का उपयोग कर वस्तु की खरीददारी करनी चाहिये।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) वस्तु के पैकेट पर उपभोक्ता सहायता हेतु निम्न में से किस का प्रयोग किया जाता है :

(अ) विज्ञापन (ब) प्रतिस्पर्धा
(स) लेबल (द) उपरोक्त सभी

(ii) निम्न में से किस पर लेबल लगा होना चाहिये :

(अ) हरी सब्जियों पर (ब) एक ग्लास पानी पर
(स) ताजा गाय के दूध पर (द) आचार की बोतल पर

(iii) एक लेबल पर निम्न में से क्या अंकित नहीं होता :

(अ) अधिकतम खुदरा मूल्य (ब) थोक मूल्य
(स) सभी प्रकार के कर सहित (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(iv) पैकेट पर घोषणाएँ अंकित न होने पर दोषी कौन होगा :
(अ) निर्माता जो इसे बनाता है
(ब) थोक व्यापारी जो एक साथ कई मात्रा में खरीदता है
(स) खुदरा व्यापारी जो इसे ग्राहकों को बेचता है
(द) उपरोक्त सभी

(v) मांसाहारी खाद्य पदार्थों पर किस रंग का प्रतीक चिन्ह लगाना अनिवार्य है :
अ) लाल (ब) पीला
स) काला (द) हरा

(vi) मानक द्वारा किसी वस्तु के किस बिन्दु पर सर्वाधिक ध्यान रखा जाता है :
(अ) सुन्दरता (ब) मात्रा
(स) गुणवत्ता (द) उपरोक्त सभी

(vii) अचार या मुरब्बे पर कौनसा मानक चिन्ह लगाया जाता है:
(अ) आई.एस.आई. (ब) एग मार्क
(स) एफ.पी.ओ (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

viii) बिस्कुट के पैकेट पर कौनसा मानक चिन्ह लगाया जाता है:
(अ) एग मार्क (ब) आई.एस.आई
(स) एफ.पी.ओ. (द) कोई भी एक

(ix) विज्ञापनों से किसको लाभ होता है :
(अ) व्यापारी (ब) उपभोक्ता
(स) निर्माता (द) उपरोक्त सभी

(x) यदि आपको विज्ञापन भ्रमित लगे तो आप कहाँ शिकायत करेंगें :
(अ) भारतीय मानक संस्थान
(ब) उपभोक्ता संरक्षण मंच
(स) भारतीय विज्ञापन मानक संस्थान
(द) उपरोक्त सभी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) लुभावने .... के साथ उपभोक्ताओं को भ्रमित किया जाता है।

(ii) कई वस्तुएँ घरेलू स्तर पर तैयार की जाती हैं। इन पर .... लगाना अनिवार्य है।

;iii) 134 वस्तुएँ अनिवार्य मानकीकरण के दायरे में आती हैं जिन्हें बिना .... मार्क नहीं बेच सकते।

(iv) मसालों पर .... मार्क का मानक चिन्ह लगाया जाता है।

(v) फल व सब्जियों से निर्मित खाद्य पदार्थों पर .... मार्क लगाया जाता है।

(vi) विक्रेता के व्यक्तित्व के अभाव की पूर्ति .... द्वारा की जाती है।

(vii) विज्ञापन ऐसा होना चाहिये कि आम उपभोक्ता आसानी से उस पर .... कर सके।

(viii) विज्ञापनों में गलत शब्दों का उपयोग जैसे सुपर पावर, एक्स्ट्रा रिच आदि का प्रयोग उपभोक्ता को .... करते हैं।

(ix) वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्यों में .... के कारण भारी कमी आई है।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये :
(i) उपभोक्ता सहायता (ii) भ्रामक विज्ञापन
(iii) प्रतिस्पर्धा (iv) मानक

4. उपभोक्ता को उपभोक्ता सहायता की आवश्यकता क्यों पड़ती है?

5. एक आदर्श लेबल में किस प्रकार का विवरण होना चाहिये?

6. उपभोक्ता को संरक्षण प्रदान करने हेतु मानक किस प्रकार सहयोगी हैं ? उचित उदाहरण देकर समझाइये।

7. ''विज्ञापन उपभोक्ताओं को जानकारी देने का एक सशक्त माध्यम है।'' कथन की पुष्टि कीजिए।

8. आप भ्रामक विज्ञापनों से अपने आपको किस प्रकार सुरक्षित रखेंगें ?

9. प्रतिस्पर्धा का लाभ किस प्रकार उपभोक्ताओं को मिलता है? समझाइये।

10. बुद्धिमता पूर्ण खरीददारी से आपका क्या तात्पर्य है?

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) द (iii) ब (iv) द (v) अ (vi) स (vii) स (viii) ब (ix) द (x) स
2. (i) विज्ञापन (ii) लेबल (iii) आई.एस.आई. (iv) एग (v) एफ.पी.ओ.
(vi) विज्ञापन (vii) विश्वास (viii) भ्रमित (ix) प्रतिस्पर्धा

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

34. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम
Consumer Protection Act

आज उपभोक्ता संरक्षण द्वारा उपभोक्ता काफी सजग एवं जागरूक हो गया है। लेकिन विक्रेता, व्यापारी, निर्माता, उत्पादक आदि उपभोक्ता को विभिन्न तरीकों से ठगते हैं। उत्पादक विभिन्न तरकीबें अपनाकर बाजार में मिलावटी खाद्य पदार्थ, दोषपूर्ण उपकरण, गलत माप-तोल का प्रयोग, नकली मानक चिह्न का प्रयोग आदि द्वारा उपभोक्ता को आसानी से धोखा देता है। इन सभी गलत-गलत प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रखने के लिए सरकार ने अनेक कानून और अधिनियम बनाये हैं। सरकार हर सम्भव प्रयास करती है कि उपभोक्ता का विक्रेता या व्यवसायी के हाथों शोषण नहीं हो। जो प्रत्यक्ष रूप से उपभोक्ताओं को संरक्षण प्रदान करते हैं।

उपरोक्त के हित में सरकार द्वारा बनाये गये विभिन्न कानून व अधिनियम निम्नानुसार हैं :-

चित्र 34.1 उपभोक्ता संरक्षण

1. खाद्यान्न मिलावट प्रतिबन्ध अधिनियम 1954 :- भारत सरकार ने 1954 में खाद्य पदार्थों में मिलावट की रोक होतु कानून बनाया 'खाद्य पदार्थ निषेध अधिनियम 1954' कहते हैं। यह अधिनियम 1 जून, 1955 से लागू किया गया। इस अधिनियम के अनुसार सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों का न्यूनतम स्तर निर्धारित किया गया है। बाद में इस नियम का संशोधन वर्ष 1968एवं 1973 में किया गया है। कोई भी भोज्य पदार्थ जो खाद्य पदार्थ निषेध अधिनियम (P.F.A.) द्वारा बनाये गये न्यूनतम स्तर के अन्तर्गत नहीं आता, उसे मिलावट माना जाता है।

इस अधिनियम के द्वारा सरकार निम्न कार्यवाही करती है :-

(i) मिलावट और गलत प्रस्तुतीकरण पर प्रतिबन्ध लगाना।

(ii) उपभोक्ता को वस्तु के उपभोग सम्बन्धी पूर्ण जानकारी दिलाना।

(iii) उपभोक्ता के लिए शुद्ध खाद्य-पदार्थों की व्यवस्था करवाना।

(iv) मिलावट करने वाले व्यापारियों को दण्ड देना।

(v) उपभोक्ता को मिलावटी वस्तुओं के उपभोग से बचाना।

(vi) खाद्य पदार्थों का न्यूनतम स्तर बनाये रखना।

केन्द्रीय सरकार ने खाद्यान्नों के स्तर को प्रमाणित करने के लिए समितियों, केन्द्रीय खाद्यान्नों, प्रयोगशाला एवं अखिल भारतीय स्वच्छता एवं स्वास्थ्य संस्थाओं की स्थापना की है। इनका मुख्य कार्य खाद्यान्नों के नमूनों का विश्लेषण करना तथा उन्हें प्रमाणित करना है। प्रत्येक जिला स्तर पर खाद्य सामग्री के नमूने को खाद्यान्न प्रयोगशाला स्थापित है जहाँ पर विश्लेषणकर्त्ता नियुक्त हैं ताकि कोई भी व्यक्ति खाद्यान्न नमूनों की जाँच करवा सके। यदि जाँच रिपोर्ट में खाद्य पदार्थ में मिलावट सिद्ध होती है, तो उस विक्रेता/व्यापारी के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती है।

2. औषधि एवं मादक पदार्थ अधिनियम 1940 :- इस अधिनियम के अन्तर्गत औषधियों एवं मादक पदार्थों के गुणों की जाँच की जाती है। इसके अन्तर्गत वे सभी औषधियों एवं मादक पदार्थ आते हैं जो अपने देश में बनाये गये होते हैं अथवा आयात किये हुए होते हैं। उन पर सम्पूर्ण

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

सूचना सहित लेबल लगाना अनिवार्य है। लेबल पर औषधि में काम आने वाली सामग्री, मात्रा, उपभोग विधि, निर्माण तिथि, उपयोग की अन्तिम तिथि, उत्पादन का नाम व पता आदि सूचनाएँ अंकित करना अनिवार्य है। यह सब जानकारी उपभोक्ता के मार्गदर्शन के लिये दी जाती है। नियमों में समय-समय पर संशोधन किये जाते हैं। यदि औषधियां एवं मादक पदार्थ प्रमाणित स्तर से निम्न स्तर की पायी जाती है तो निर्माता से लाइसेन्स छीन लिया जाता है तथा एक वर्ष का कठोर कारावास एवं नियमानुसार जुर्माना भी लिया जा सकता है।

3. भार एवं माप अधिनियम 1956व 1976:- माप-तोल अधिनियम सर्वप्रथम भारत सरकार द्वारा 1956में पारित किया गया। इसके अन्तर्गत मैट्रिक प्रणाली को अपनाया गया तथा मापने के लिए लीटर, मिलीलीटर, मीटर एवं सेन्टीमीटर का उपयोग किया गया। इसी तरह तोलने के लिए किलोग्राम, ग्राम क्विण्टल का उपयोग किया जाने लगा। व्यापारी को प्रमाणित वजन को ही काम में लेना चाहिए।

इसअ धिनियमम ेंप त्थरके ब ाट,ि सक्कोंअ ादिक ाप्रयोग अपराध है। प्रत्येक उत्पादक पर सही नाप-तोल अंकित करना आवश्यक है।

* बाट तथा माप अधिनियम-1976
* बाट तथा माप मानक (पैकेज वस्तुएँ नियम) 1977
* बाट तथा मानक (प्रवर्तन) अधिनियम-1985

उपरोक्त अधिनियमों के अनुसार ऐसे बाट-माप का प्रयोग करना जो मानक के अनुरूप नहीं है, बाट-माप के मानक में परिवर्तन करना, पैकेज पर पूरी जानकारी नहीं देना तथा बाट-माप कार्यालय अधिकिारियों के कार्य में बाधा डालना अपराध है।

4. बाजार एवं श्रेणीकरण अधिनियम 1937 :- यह अधिनियम भारत सरकार ने 1937 में पारित किया। यह अधिनियम विशेष रूप से फल, फल से निर्मित पदार्थ, आलू, चावल, कॉफी, मक्खन, गेहूँ, गेहूँ का आटा, गुड़, वनस्पति तेल, कपास, जूट, लाख, तम्बाकू, ऊन, चन्दन की लकड़ी, कच्चा चमड़ा आदि पदार्थों पर यह नियम लागू होता है। इस अधिनियम में उपभोग वस्तुओं की शुद्धता गुणवत्ता उनके गुणों के अनुसाार श्रेणी तथा अंक प्रदान किये जाते हैं। वस्तु के पैकेट पर A, B, C या 1, 2, 3 या एक्सपोर्ट क्वालिटी अंकित किया जाता है।

5. कृषि उत्पादों के ग्रेडिंग एवं मार्केटिंग अधिनियम 1937 :- इस अधिनियम के अनुसार सभी भोज्य पदार्थों की गुणवत्ता एवं पौष्टिकता को बनाये रखने के लिए एक निश्चित मानक तैयार किया गया है, जो इस बात की गारण्टी देता है कि इस चिह्न के बने उत्पाद के सेवन से स्वास्थ्य पर किसी भी तरह का कोई प्रतिकूल, हानिकारक या घातक परिणाम नहीं पड़ेगा। वस्तुओं की शुद्धता एवं गुणवत्ता के आधार पर उन्हें श्रेणीबद्ध किया जाता है। जिन व्यापारियों को इस स्तर को उपभोग में लाने की अनुमति दी जाती है वे अपनी वस्तुओं पर तथा पैकिंग पर एगमार्क (AGMARK) का प्रयोग कर सकते हैं। परन्तु यह चिह्न तभी दिया जाता है जब भोज्य पदार्थ एगमार्क द्वारा निर्धारित मानक से सम्बन्धी सभी शर्तों को पूरा करता है, अथवा यह चिह्न नहीं दिया जाता है।

6. भारतीय मानक संस्थान अधिनियम 1952, भारतीय मानक ब्यूरो 1986:- यह देश की एक अति महत्त्वपूर्ण संस्थान है जिसका मुख्य उद्देश्य गुणवत्ता नियंत्रण एवं पदार्थ के मानक को बनाये रखना है। इसके अन्तर्गत कई वस्तुएँ जैसे-खाद्य पदार्थ, पीने का पानी, विद्युत सामग्री, इलेक्ट्रॉनिक्स वस्तुएँ, बर्तन, साइकिल आदि सम्मिलित हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का स्तर क्या होना चाहिए तथा वस्तु अमुख स्तर की है या नहीं की जाँच की जाती है। संस्थान निर्धारित स्तर की वस्तुओं के लिए प्रमाणित चिह्न आई.एस.आई. (ISI) प्रदान करता है। संस्था सिर्फ उन्हीं निर्माताओं को इस चिह्न को अंकित करने का लाइसेंस देती है, जो सामान्य उपभोक्ता के हितों की रक्षा करते हैं। मादक पदार्थ व नशीली दवाओं पर इसका प्रयोग नहीं किया जाता है।

प्रमाणीकरण का मुख्य उद्देश्य वस्तुओं का माप, आकार, क्षमता आदि इस प्रकार की हो जो उपभोग में सुविधा प्रदान करे। वस्तु के गुण विशेषताएँ, उपभोगकर्ता की सुरक्षा, परीक्षण की विधि आदि का विशेष ध्यान रखा जाता है। भारतीय मानक संस्थान ने आई.एस.आई. (ISI) मार्क लगाने हेतु लाइसेंस दे रखा है, उसके लिए यह अति आवश्यक है कि वस्तु के निर्माण में कच्चे पदार्थों से लेकर अन्तिम तैयार पदार्थों तक तथा उसके बाद संग्रहण करते समय भी गुणवत्ता नियंत्रण पर प्रतिदिन नियमित रूप से ध्यान दें। प्रमाणीकरण के लिए समय-समय पर निरीक्षकों द्वारा जाँच की जाती है। किसी भी प्रकार की लापरवाही या असावधानी से वस्तु की गुणवत्ता में अन्तर आ जाता है, शिकायत या दोष पाये जाने पर लाइसेंस रद्द कर दिया जाता है। यह अधिनियम इस बात की गारंटी देता है कि यदि आई.एस.आई. प्रमाणित वस्तु में कोई शिकायत या दोष पाया गया हो तो उपभोक्ता को वह वस्तु व्यापारी द्वारा बदल कर दी जाएगी। परन्तु यदि कोई निर्माता उपभोक्ता को ठगने के लिए नकली ISI चिह्न का उपयोग करता है तो उसे कानून द्वारा कठोर दण्ड दिये जाने का प्रावधान है।

7. एकाधिकार और नियंत्रित व्यापार अधिनियम 1969 (संशोधन वर्ष 1984) **:-** बाजार में विक्रेता, उत्पादक या निर्माता के एकाधिकार को रोकने के लिए यह अधिनियम भारत सरकार द्वारा सन् 1969 में लागू हो गया है। यदि निर्माता किसी वस्तु पर एकाधिकार रखता है तो वह जनता से मनमाना धन वसूलता है। अत: उपभोक्ता के हितों को ध्यान में रखते हुए इस अधिनियम को बनाया गया ताकि कोई भी विक्रेता/निर्माता उत्पादक मनमाने तरीके से उपभोक्ता से पैसे नहीं ऐंठ सके। साथ ही स्वस्थ प्रतियोगिताव ालीब ाजारस् थापितक रनाए कह ेव स्तुओंक ेवि विध निर्माता/विक्रेता/उत्पादक हो तथा उपभोक्ता को वस्तु के चयन में सुविधा हो।

8. आवश्यक वस्तुएँ अधिनियम 1955 :- इस अधिनियम में सरकार

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

द्वारा उन सभी आवश्यक सामग्री जैसे–नमक, शक्कर, अनाज, तेल, कपड़ा, माचिस इत्यादि के उत्पादन एवं वितरण पर नियंत्रण का प्रावधान है ताकि वे वस्तुएँ जिनकी कमी हो उपभोग के लिए निम्न आय वाले समूह को आसानी से उचित मूल्य पर मिल सके। इसके अन्तर्गत प्रत्येक वार्ड में राशन की दुकान खोली जाती है। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि समस्त देश में जनता को सभी आवश्यक उपभोग की वस्तुएँ गुणों में अच्छी और कम कीमत में मिल सके। इसमें व्यापारियों को उन वस्तुओं की सूची तथा मूल्य सूची लगाना अनिवार्य कर दिया गया है जो सरकार द्वारा आवश्यक वस्तु अधिनियम में निर्धारित की गई है।

9. विद्युतीय उपकरण (गुणवत्ता नियंत्रण) अधिनियम 1976(संशोधित वर्ष 1981) :– निम्न स्तरीय विद्युत घरेलू उपकरणों से दुर्घटना में वृद्धि को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने उपभोक्ता संरक्षण हेतु यह नियम लागू किया। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि बाजार में सिर्फ उन्हीं उपकरणों की बिक्री हो जो सुरक्षित है। इस नियम के अन्तर्गत व्यापारी ऐसे घरेलू विद्युतीय उपकरणों का निर्माण, विक्रय अथवा वितरण हेतु संग्रह नहीं कर सकते जो आई.एस.आई. स्तर के न हों।

आपने पढ़ा है कि सरकार ने उपभोक्ताओं को संरक्षण प्रदान करने हेतु विभिन्न कानूनों एवं नियमों की स्थापना की तथा समय की माँग के साथ उनमें परिवर्तन किये। इन कानूनों के रहते यह सोचा था कि उपभोक्ता का शोषण नहीं होगा और उत्पादक एवं उपभोक्ता के मध्य एक

चित्र 34.2 ग्राहक जागरूकता

अच्छा सामंजस्य रहेगा। हालांकि इन कानूनों के अन्तर्गत व्यापारियों द्वारा गलत नीतियाँ अपनाने पर कारावास, जुर्माना या लाइसेंस रद्द करने का प्रावधान तो है, परन्तु उपभोक्ता को किसी प्रकार की राहत नहीं मिलती। उसके द्वारा व्यय किया गया धन तो व्यर्थ हो ही जाता है तथा कई बार दोषपूर्ण वस्तु या सेवा से उन्हें शारीरिक आघात भी पहुँचता है। ऐसी स्थिति से छुटकारा पाने हेतु सरकार ने इन सभी कानूनों के अलावा एक और कानून उपभोक्ताओंके स ंरक्षणके ि लएब नायाज ोस र्वाधिकप्र गतिशीलए वं व्यापकक ानूनह ै–'**उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम–1986** 'क ानूनके अन्तर्गत उपभोक्ता के अधिकार, उद्देश्य तथा क्षतिपूर्ति के बारे में अगले अध्याय में विस्तार से पढ़ेंगे।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. जब कभी उपभोक्ता के साथ धोखा हो जाता है तो उसे उपभोक्ता संरक्षण कानून की सहायता लेनी पड़ती है।
2. उपभोक्ता संरक्षण हेतु सरकार ने कई कानून बनाये हैं जो प्रत्यक्ष रूप से उपभोक्ताओं को संरक्षण प्रदान करते हैं।
3. सार्वजनिक उपभोग की आवश्यक वस्तुओं को समान रूप से कम कीमत पर उपलब्ध करवाना सरकार की जिम्मेदारी है।
4. वस्तुओं पर सूचक लेबल लगवाना, मात्रा तथा गुणों का गलत प्रस्तुतीकरण न हो, राशन की दुकानें खोलना, प्रमाणीकरण करवाना आदि सभी कार्य सरकार करवाती है ताकि उपभोक्ताओं की समस्याओं का निवारण किया जा सके।
5. सरकार ने उपभोक्ता के संरक्षण हेतु कई अधिनियम/कानून बनाये हैं। ये इस प्रकार हैं :–

(i) खाद्यान्न मिलावट प्रतिबन्ध अधिनियम, 1954
(ii) औषधि एवं मादक पदार्थ अधिनियम, 1940
(iii) भार एवं माप अधिनियम 1956, 1976
(iv) बाजार एवं श्रेणीकरण अधिनियम, 1937
(v) कृषि उत्पाद के ग्रेडिंग व मार्केटिंग अधिनियम, 1937
(vi) भारतीय मानक संस्थान अधिनियम, 1952, भारतीय मानक ब्यूरो, 1986
(vii) एकाधिकार एवं नियंत्रित व्यापार अधिनियम, 1969
(viii) आवश्यक वस्तुएँ अधिनियम, 1955
(ix) विद्युतीय उपकरण (गुणवत्ता नियंत्रण) अधिनियम, 1976, 1981
(x) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) औषधियों में निर्धारित स्तर से नीचे गुण पाये जाने पर :

(अ) औषधि बाजार में बिकना बंद हो जाएगी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

(ब) उपभोक्ता सतर्क हो जाएगा

(स) निर्माता से निर्माण अधिकार छीन लिया जाएगा

(द) उपरोक्त सभी

(ii) भार एवं माप अधिनियम में कितने कानून हैं :

(अ) दो (ब) पाँच

(स) तीन (द) सात

(iii) यह अधिनियम सभी प्रकार के भोज्य पदार्थों हेतु न्यूनतम स्तर निर्धारित करता है :

(अ) भारतीय मानक ब्यूरो, 1986

(ब) कृषि उत्पाद के ग्रेडिंग व मार्केटिंग अधिनियम, 1937

(स) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1954

(द) खाद्यान्न मिलावट प्रतिबन्ध अधिनियम, 1954

(iv) वस्तुओं को उनके गुणों के आधार पर :

(अ) श्रेणी तथा अंक प्रदान किये जाते हैं

(ब) मानक एवं प्रमाणीकृत किया जाता है

(स) चिह्न अंकित किये जाते हैं

(द) उपरोक्त सभी

(v) वस्तुओं का माप, आकार, क्षमता आदि इस प्रकार हो कि वह उपभोग में सुविधा प्रदान करे, यह उद्देश्य है :

(अ) श्रेणीकरण का

(ब) मिलावट नियंत्रण का

(स) नियंत्रित व्यापार का

(द) प्रमाणीकरण का

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) .... अधिनियम व्यापारियों के मध्य स्पर्धा को बढ़ावा देता है।

(ii) .... प्रमाणित वस्तु में यदि कोई शिकायत या दोष पाया गया तो उसे वह वस्तु व्यापारी द्वारा बदल कर दी जाएगी।

(iii) वस्तुएँ उपभोग के लिए निम्न आय वाले समूह को आसानी से उचित मूल्य पर मिल सके, इसके लिए सरकार ने .... की दुकानें खोली हैं।

(iv) कृषि उत्पाद के ग्रेडिंग व मार्केटिंग अधिनियम, 1937 के अन्तर्गत .... चिह्न के प्रयोग की अनुमति दी जाती है।

(v) बाट-माप के मानक में .... करना अपराध है।

(vi) कोई भी भोज्य पदार्थ अधिनियम के अन्तर्गत दिये गये स्तर के अनुरूप नहीं होता तो उसे .... माना जाता है।

3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये :

(1) उपभोक्ता संरक्षण हेतु कानून

(2) आवश्यक वस्तुओं का वितरण एवं नियंत्रण

(3) वस्तुओं का श्रेणीकरण

(4) उच्च स्तरीय वस्तुएँ

4. उपभोक्ताओं को कानून का सहारा क्यों लेना पड़ता है?

5. किसी एक अधिनियम के बारे में विस्तार से लिखिये?

6. यदि किसी भोज्य पदार्थ में मिलावट है तो उसका पता कैसे लगाया जाए?

7. एक पैकेट पर कौन-कौन सी सूचनाएँ आवश्यक हैं?

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) स (iii) द (iv) अ (v) द

2. (i) एकाधिकार एवं नियंत्रित व्यापार अधिनियम, 1969

(ii) आई.एस.आई. (iii) राशन (iv) एगमार्क

(v) परिवर्तन (vi) मिलावटी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

35. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम-1986
Consumer Protection Act-1986

उपभोक्ता को संरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से भारत सरकार ने 24 दिसम्बर, 1986को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम पारित किया। इसलिए सरकार ने **24 दिसम्बर** को **राष्ट्रीय उपभोक्ता दिवस** घोषित किया है। इस अधिनियम में उपभोक्ताओं की शिकायतों को शीघ्र, सरल तरीकों से तथा कम खर्चों में दूर करने का प्रावधान है। यह एक प्रकार का सरकारी नियंत्रण है, जो उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करता है।

चित्र 35.1 डाक टिकट

अधिनियम के मुख्य उद्देश्य :

1. उपभोक्ता को बेहतर संरक्षण प्रदान करना है।
2. यह कानून वर्तमान कानूनों की तरह दण्डात्मक व निरोधक नहीं है, इसके उपबंधों में क्षतिपूर्ति की व्यवस्था है।
3. इस अधिनियम में उपभोक्ताओं की शिकायतों को शीघ्र, सरल तरीके से तथा कम खर्च में दूर करने की व्यवस्था है।
4. इस अधिनियम में राष्ट्रीय, राज्य तथा जिला स्तरों पर एक तीन स्तरीय अर्द्धन्यायिक तंत्र की स्थापना करने की व्यवस्था है।
5. इस अधिनियम में उपभोक्ताओं के अधिकारों को महत्त्व दिया गया है।
6. इसमें केन्द्र तथा राज्यों में उपभोक्ताओं के अधिकारों को बढ़ावा देना तथा उनकी रक्षा करना है।

अधिनियम के क्षेत्र :

* यह अधिनियम सभी वस्तुओं एवं सेवाओं पर लागू होता है, केवल वही वस्तुएँ इसके अन्तर्गत नहीं आती जो उपभोक्ताओं को नि:शुल्क प्राप्त होती है।
* यह निजी, सार्वजनिक या सरकारी सभी क्षेत्रों पर लागू होता है।
* यदि कोई व्यक्ति-वस्तु या सेवा, व्यापार की दृष्टि से खरीदता है तो उस पर यह अधिनियम लागू नहीं होगा जैसे किसी ने एक कार खरीदी और वह उसे टैक्सी के रूप में इस्तेमाल करता है और कार में कोई त्रुटि या दोष है तो वह इस कानून के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति का हकदार नहीं होगा। यदि वही कार गृहस्थी के लिए या व्यक्तिगत रूप से काम में आती है, तो यह कानून उसे संरक्षण प्रदान करेगा।

इस अधिनियम द्वारा उपभोक्ताओं को निम्न अधिकार प्रदत्त है :

1. सुरक्षा का अधिकार : प्रत्येक उपभोक्ता को ऐसे माल के क्रय-विक्रय के विरुद्ध सुरक्षा पाने का अधिकार है जो जीवन के लिए हानिकारक हो, जैसे-दवाइयाँ, खाने का रंग, बिजली के उपकरण, सौन्दर्य प्रसाधन, साबुन इत्यादि। हर हानिकारक वस्तु से आपको सुरक्षा पाने का अधिकार है।

2. बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति का अधिकार : उपभोक्ताओं की वे मूलभूत आवश्यकताएँ जो जीने के लिए आवश्यक है, यही नहीं जिनकी मदद से वे एक सामान्य जिन्दगी जी सके अनिवार्य रूप से संतुष्ट होनी चाहिए, जैसे-भोजन, वस्त्र, आवास, ऊर्जा, विद्युत सेवा, सुरक्षित पानी, शिक्षा, दवाएँ और स्वच्छ वातावरण आदि। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उचित अवसर मिलने चाहिए ताकि बिना शोषण के उपभोक्ता इन वस्तुओं का उपभोग कर सुखी रह सके।

3. सूचित किये जाने का अधिकार : जो वस्तु हम खरीदते हैं, उसके बारे

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

में सारी जानकारी प्राप्त करने का अधिकार उपभोक्ता को मिला है ताकि वह एक अच्छी व बुद्धिमत्तापूर्ण खरीददारी कर सके। इसके अन्तर्गत वस्तु की गुणवत्ता, मात्रा, क्षमता, शुद्धता, मानक और मूल्यों के बारे में सूचित किया जाने का अधिकार है। वस्तु किसने बनाई, कैसी बनाई, माल की गारंटी उपयोग लेने की विधि आदि की जानकारी प्राप्त करने का अधिकार प्रत्येक उपभोक्ता को है।

4. चयन का अधिकार : यह आपका अधिकार है कि आप उचित मूल्य पर तरह-तरह की व अच्छी किस्म की वस्तुएँ जो विभिन्न गुणवत्ता, मात्रा तथा सुविधाओं सहित उपलब्ध है, उनमें से मन पसन्द वस्तु खरीदें। यदि व्यापारी आपको कुछ सीमित वस्तुएँ जिन पर उसे अधिक लाभ मिलता है, वही दिखाता है तो ऐसे व्यापारी से क्रय न करें।

चित्र 35.2 चयन करना

5. सुनवाई का अधिकार : यदि आपके द्वारा किसी वस्तु या सेवा का उपभोग करने पर उसमें कोई दोष या त्रुटि है और आपकी शिकायत सही है तो उपभोक्ता को यह अधिकार है कि वह सही मंच पर अपनी शिकायत दायर करे। दुकानदार, सम्बन्धित अधिकारी, निर्माता या शासन द्वारा उसकी शिकायत को सुना जाएगा तथा उसके लिए उचित कार्यवाही की जाएगी। इस प्रकार की शिकायत से कई बार निर्माता को अपनी वस्तुओं के स्तर को ऊँचा उठाने में मदद भी मिलती है, कई निर्माता अपनी आने वाली वस्तुओं में उस दोष को हटाते भी हैं।

चित्र 35.3 सुनवाई का अधिकार

6. क्षतिपूर्ति का अधिकार : वस्तु के दोष की सिर्फ सुनवाई करने से तो उपभोक्ता को राहत नहीं मिलेगी उसे तो वस्तु द्वारा जो भी क्षति हुई है उसका मुआवजा मिले तभी सही रूप से उपभोक्ता का संरक्षण हो पाएगा। अत: इस अधिकार के अन्तर्गत दोषी वस्तुओं तथा सेवाओं के उपयोग से उपभोक्ता को जो भी क्षति हुई है उसका उचित फैसला या हर्जाना पाने का अधिकार है। उदाहरण के तौर पर यदि आपने कोई डिब्बा बंद खाने की वस्तु खरीदी और खाने पर इसकी गुणवत्ता में कमी एवं दोष पाया गया तथा उससे आपकी तबीयत खराब हो गई। ऐसी स्थिति में आपको व्यापारी या तो दूसरा डिब्बा देगा जिसकी गुणवत्ता सही हो, या फिर उसकी कीमत+आपने यदि चिकित्सक को फीस दी उसका मूल्य तथा दवाइयों का मूल्य+मानसिक तनाव का मुआवजा आदि सभी हर्जाने के रूप में देगा। कोई भी उपभोक्ता जिसकी समस्या सही है और उसे ऐसा लगे कि व्यापारी उसके साथ धोखा कर रहा है तो वह अपनी बात संबंधित अधिकारी के सम्मुख रख सकता है और उसका उचित समाधान या मुआवजा प्राप्त करने की आशा रख सकता है।

7. स्वस्थ एवं सुरक्षित वातावरण का अधिकार : प्रत्येक उपभोक्ता को ऐसे वातावरण में रहने का पूरा अधिकार है जहाँ प्रकृति एवं मानव जीवन के बीच एक अच्छा संतुलन बन सके तथा उपभोक्ता के जीवन की गुणवत्ता कायम रह सके। वातावरण ऐसा हो जो मनुष्य जीवन के अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ावा दे सके। यदि आपके निवास स्थान के पास कोई उद्योग धंधा चलता है जिससे धुआँ निकलता है तथा काफी शोर होता है या किसी गैस निकलने की बदबू आती है तो आपको यह अधिकार है कि आप उसकी शिकायत उपभोक्ता न्यायालय में कर सकते हैं तथा इससे छुटकारा पा सकते हैं।

8. उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार : यह तो हम पिछले अध्यायों में पढ़ चुके हैं कि उपभोक्ता शिक्षा का उपभोक्ता संरक्षण में कितना महत्त्व है। अत: प्रत्येक उपभोक्ता को यह सभी ज्ञान एवं योग्यताएँ हासिल करने का अधिकारहै िजससेव हअ च्छीव ब ुद्धिमत्तापूर्णख रीददारीक रस के। उपभोक्ता को वस्तु की दरों, गुणवत्ता, मात्रा, मूल्य आदि के बारे में सही जानकारी प्राप्त करने का अधिकार है। समय-समय पर उपभोक्ता परिषदों, स्वयंसेवी संगठनों तथा भारत सरकार द्वारा उपभोक्ता शिक्षा के कई कार्यक्रम चलाये जाते हैं जिनसे उपभोक्ता शिक्षा ग्रहण कर सकता है। अत: शिक्षित एवं जागरूक उपभोक्ता ठगा नहीं जा सकता है।

> **उपभोक्ता कौन है :-** उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986के अनुसार कोई व्यक्ति जो अपने उपयोग के लिए सामान अथवा सेवाएँ खरीदता है वह उपभोक्ता है। प्रत्येक व्यक्ति किसी-न-किसी रूप में उपभोक्ता है।

अधिनियम की विशेषताएँ :

(i) उपभोक्ताओं की शिकायतों को दूर करने के लिए इस अधिनियम में तीन स्तरीय अर्द्धन्यायिक तंत्र की स्थापना की है। ये तीनों स्तर मुआवजे की वित्तीय सीमाओं पर निर्भर करते हैं। ये तीनों स्तर तालिका 35.1 में प्रस्तुत किये गये हैं :-

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 35.1

क्र.सं.	स्तर	न्यायिक तंत्र	वित्तीय सीमा (रुपयों में)
1.	जिला	जिला मंच	20,00,000
2.	राज्य	राज्य आयोग	20,00,000 से 1 करोड़
3.	राष्ट्रीय	राष्ट्रीय आयोग	1 करोड़ से अधिक

(ii) जिला मंच और राज्य आयोग स्थापित करना राज्य सरकार की जिम्मेदारी है।

(iii) इस अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ता की शिकायतों को जल्द-से-जल्द निस्तारित (Disposal) किया जाता है ताकि उपभोक्ता को बहुत लम्बे समय तक संतोषजनक मुआवजे के लिए प्रतीक्षा न करनी पड़े तथा समय पर न्याय मिल सके। अधिनियम में शिकायत प्राप्त करने के 90 दिनों के अन्दर-अन्दर विवाद का निस्तारण कर दिए जाने का प्रावधान है।

(iv) इस अधिनियम के अन्तर्गत संरक्षण हेतु दायर की गई शिकायत नि:शुल्क होती है। अत: कम आय वर्ग के उपभोक्ता भी बिना किसी अतिरिक्त व्यय के क्षतिपूर्ति कर सकते हैं।

अधिनियम के उपयोग के विभिन्न चरण :

(i) शिकायत कौन कर सकता है

* उपभोक्ता स्वयं, किसी मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संगठन के सदस्य, केन्द्र या राज्य सरकार द्वारा शिकायत की जा सकती है।

* यदि शिकायत कई उपभोक्ताओं द्वारा समान रूप से दायर की गई है तो उपभोक्ता संगठन सभी की शिकायत एक साथ दायर कर सकता है। जैसे-एक दुकानदार से 10 लोगों ने एक जैसी वस्तु खरीदी तथा सभी को एक जैसी शिकायत है तो एक साथ सब की शिकायत दायर करवाई जा सकती है।

(ii) शिकायत कब दायर करें?

* जब किसी वस्तु या सेवा में दोष पाया जाए।

* जब व्यापारी द्वारा गलत एवं नियंत्रित व्यापार द्वारा आपके किसी प्रकार का घाटा हो जाए।

* जब व्यापारी आपसे अधिकतम खुदरा मूल्य से ज्यादा कीमत माँगे।

* वस्तु के खरीदने की दिनांक के ठीक दो साल के भीतर आप शिकायत दर्ज करवा सकते हैं।

(iii) शिकायत कहाँ दर्ज करें?

उपभोक्ता संरक्षण कानून के अन्तर्गत त्रिस्तरीय अर्द्धन्यायिक तंत्र की व्यवस्था है। उपभोक्ता मुआवजे की कुल राशि के अनुसार विभिन्न स्तर पर अपनी शिकायत दर्ज करवा सकता है।

अ. यदि मुआवजा 20,00,000 रु. से कम है तो जिला मंच में।

ब. यदि मुआवजा 20,00,000 रु. से लेकर 1 करोड़ रु. से कम है तो राज्य आयोग में और

स. यदि मुआवजा 1 करोड़ रु. से अधिक है तो राष्ट्रीय आयोग में।

वस्तु खरीदे गये स्थान पर ही उपभोक्ता अपनी शिकायत दर्ज करवा सकता है।

(iv) शिकायत कैसे दर्ज करावें?

अ.ि शकायतद र्जक रनेस`प हलेउ पभोक्ताक ेस भीस म्बन्धित दस्तावेज (दुकान का बिल, गारंटी कार्ड, वारंटी कार्ड, व्यापार

जिला मंच में शिकायत दर्ज कराने का प्रारूप

श्रीमान अध्यक्ष महोदय,

जिला मंच, उपभोक्ता संरक्षण,

उदयपुर (राज.)

- शिकायतकर्त्ता का नाम व पता।
- विरोधी पक्षकारों का नाम व पता।
- शिकायत के सम्बन्ध में तथ्य (सभी वर्णित तथ्य क्रमवार-विस्तार से लिखे जाने चाहिए)
- शिकायत के सम्बन्ध में उपलब्ध दस्तावेज एवं किये गये पत्र व्यवहार की प्रतियाँ।
- शिकायतकर्त्ता राहत जो चाहता है।

दिनांक   ह. प्रार्थी

शिकायत में जितने विरोधी पक्षकार हैं उतनी ही शिकायत की प्रतियाँ अलग से संलग्न करें। शिकायत के समर्थन में प्रार्थी को एक शपथ-पत्र सादे कागज पर प्रस्तुत करना चाहिए जिसमें शिकायत में वर्णित सभी तथ्यों को पुन: शपथपूर्वक दोहराना होता है। शपथ-पत्र को शपथ आयुक्त अथवा नोटेरी से सत्यापित कराना आवश्यक है। शपथ-पत्र का प्रारूप निम्न प्रकार से है :

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

शपथ-पत्र का प्रारूप

श्रीमान अध्यक्ष महोदय,

जिला मंच, उपभोक्ता संरक्षण,

उदयपुर (राज.)।

प्रकरण संख्या :

प्रार्थी/विरोधी पक्षकार

शपथ-पत्र

मैं..................... पुत्र/पत्नी...................... उम्र .... निवासी .... शपथपूर्वक निवेदन करता हूँ कि ....

(शपथ-पत्र में प्रार्थी द्वारा अपनी शिकायत में वर्णित सभी तथ्यों को क्रमानुसार लिखना है यदि प्रार्थी के द्वारा दर्ज कराई गई शिकायत का विरोधी पक्षकार ने कोई जवाब दिया हो एवं उस जवाब को पढ़ने के पश्चात् प्रार्थी कुछ स्पष्टीकरण देना चाहता हो तो वह भी शपथ-पत्र में लिखा जाना चाहिए)

दिनांक — ह. प्रार्थी

सत्यापन

मैं .... पुत्र/पत्नी .... उम्र .... निवासी .... शपथपूर्वक घोषणा करता हूँ कि उपरोक्त शपथ-पत्र में वर्णित कॉलम संख्या एक से अंत तक मेरी जानकारी के अनुसार सत्य व सही है।

दिनांक : ह. प्रार्थी

(शपथ-पत्रस ादेक ागजप रद`नाह ोताह`ैए वंइ सेश ापथअ ायुक्तअ थवान ोटेरीस`स त्यापितक राना आवश्यक है।)

द्वारा पत्र व्यवहार के दौरान दिया गया जवाब इत्यादि) एकत्रित कर लेने चाहिए जिससे उपभोक्ता द्वारा की जाने वाली शिकायत की पुष्टि की जा सके।

ब.उ पभोक्ता- यायालयम`ें ाि शकायतद ायरक रनेस`प हलेय ह उचित रहेगा कि उपभोक्ता एक पत्र पंजीकृत ए.डी. द्वारा विरोधी पार्टी को भेजे जिसमें वह अपनी शिकायत का वर्णन करते हुए उसका निवारण करने हेतु लिखे। इसके लिए उसे कम-से-कम 15 दिन का समय दें, क्योंकि एक अच्छा व्यापारी उपभोक्ता द्वारा की गई शिकायत का निवारण अवश्य कर देगा और उसको उपभोक्ता न्यायालय तक जाने की जरूरत ही महसूस नहीं होगी। यदि वह ऐसा करने से मना करें, तब विवाद का निष्कर्ष उपभोक्ता न्यायालय द्वारा ही दिया जाएगा।

(शपथ-पत्र सादे कागज पर देना होता है एवं इसे शपथ आयुक्त अथवा नोटेरी से सत्यापित कराना आवश्यक है।)

(v) शिकायत प्राप्त होने पर प्रक्रिया :

1. जिला मंच द्वारा शिकायत की एक प्रति विरोधी पक्ष को देते हुए यह निर्देश दिया जाता है कि वह एक निश्चित अवधि में मामले के बारे में अपना कथन देवे।
2. यदि विरोधी उन आरोपों का खण्डन करता है तो ऐसी स्थिति में जिला मंच द्वारा इस विवाद को निपटाने हेतु कार्यवाही की जाती है।
3. यदि वस्तु में खराबी है और जाँच की आवश्यकता है तो इस वस्तु का नमूना सीलबन्द करके प्रयोगशाला को जिला मंच द्वारा भेजा जाता है, साथ ही प्रयोगशाला अधिकारी को यह निर्देश दिया जाता है कि वस्तु की परीक्षण रिपोर्ट 45 दिन के अन्दर जिला मंच को भेज दी जाए।
4. इस परीक्षण का शुल्क शिकायतकर्त्ता द्वारा जो कि वह वहन कर सके, जिला मंच में जमा किया जाता है। जमा रकम जिला मंच द्वारा प्रयोगशाला में परीक्षण हेतु जाती है। वहाँ से प्राप्त रिपोर्ट विरोधी पक्ष को भेजी जाती है। जमा की गई राशि, उपभोक्ता विपक्षी पार्टी से वसूल कर लेता है।
5. यदि अब भी विरोधी पक्ष विरोध करता है, तो उसे अपना पक्ष रखने

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

के लिए एक मौका और दिया जाता है।

(vi) जिला मंच के निष्कर्ष :

1. माल में प्रयोगशाला द्वारा प्रकट की गई त्रुटि को दूर या पूरा करना।
2. माल को उसी स्तर के नये माल से बदलना जो त्रुटि रहित हो।
3. शिकायतकर्त्ता को मूल्य वापस करना।
4. ऐसी रकम भी अदा करना जो विरोधी पक्ष की उपेक्षा के कारण उपभोक्ता द्वारा वहन की गई हो।
5. जिला मंच के निष्कर्ष को न मानने पर विरोधी पक्ष को न्यायालय द्वारा सजा मिल सकती है या जुर्माना देना पड़ सकता है।

यदि उपभोक्ता जिला मंच के निष्कर्ष से सहमत नहीं है तो वह नर्णय के विरुद्ध राज्य आयोग में, राज्य आयोग के निर्णय के विरुद्ध राष्ट्रीय आयोग में तथा राष्ट्रीय आयोग के निर्णय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अपील कर सकता है। अपील नि:शुल्क होती है। अपील दायर करने की प्रक्रिया वही है जो शिकायत दर्ज कराने की है, सिर्फ आवेदन पत्र के साथ जिला मंच, राज्य आयोग तथा राष्ट्रीय आयोग जो भी स्थिति हो उनका आदेश (निर्णय) लगाना पड़ता है।

इस अधिनियम के उपयोग की पूर्ण प्रक्रिया हम निम्न उदाहरण जो कि एक घटना है द्वारा सरलता से समझ सकते हैं।

उत्तर प्रदेश राज्य आयोग ने अपने निर्णय में एक कम्पनी, जो साबुन की निर्माता है, को आदेश दिया कि वह प्रार्थिया (उपभोक्ता) 'सरस्वती नारायण' को उसके द्वारा बनाया गया साबुन 'उत्तम' के उपयोग से हुए नुकसान के लिए हर्जाना अदा करे।

श्रीमती सरस्वती नारायण ने 'उत्तम' कपड़े धोने का साबुन रु. 22.50/- में खरीद कर उपयोग किया। उपयोग करने पर उसके हाथ पर अल्सर के निशान बन गये एवं जलन होने लगी। इस सम्बन्ध में परिवादिया द्वारा जिला मंच इटावा में परिवाद प्रस्तुत किया गया। विपक्षी को नोटिस जारी होने पर भी उनकी तरफ से कोई उपस्थित नहीं हुआ। जिला मंच ने प्रार्थिया के पक्ष में निर्णय देते हुए विपक्षी को 100/- रुपये हर्जाने के अदा करने के आदेश दिये।

जिला मंच द्वारा दिये गये निर्णय से असंतुष्ट होकर प्रार्थिया ने राज्य आयोग उत्तर प्रदेश में अपील की। अपील की सुनवाई करते हुए माननीय राज्य आयोग ने माना कि जिला मंच द्वारा उत्तम साबुन के उपयोग से प्रार्थिया को हुए नुकसान से सहमत होने के पश्चात् उसे हर्जाने के मात्र 100/- रुपये दिलाना कम है। प्रार्थिया ने अपने परिवार में पाँच मदों में 110/- रुपये का खर्चा बताया। जिसमें 22.50 साुबन का मूल्य, विपक्षी पक्षकारों को भेजे गये पंजीकृत पत्र के 24 रुपये, शपथ-पत्र के 12 रुपये, टाइपिंग के 50 रुपये तथा स्टाम्प के 1.50 रुपये व्यय किये गये। आयोग ने माना कि परिवादिया को 500 रुपये नुकसान के एवं 500 रुपये परिवाद व्यय के अदा किये जाने चाहिए। आयोग ने अपील खर्चे के 1000/- रुपये भी अदा करने के आदेश दिये।

इस प्रकार आपने देखा कि श्रीमती सरस्वती नारायण एक जागरूक उपभोक्ता है तथा उन्हें उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम का पूर्ण ज्ञान है। अत: उन्हें निर्माता धोखा नहीं दे सकता।

आज उपभोक्ता संरक्षण कानून को बने लगभग 16वर्ष बीत जाने के बाद भी आम उपभोक्ताओं को इसका लाभ नहीं मिल पा रहा है। ग्रामीण क्षेत्र के उपभोक्ताओं को इसकी अधिकाधिक जानकारी देने की आवश्यकता है क्योंकि ग्रामीण उपभोक्ता शिक्षा के अभाव में सबसे ज्यादा शोषितह ोताह ै ।उ पभोक्ताक ानूनक ीज ानकारीअ ामउ पभोक्तात क पहुँचनी चाहिए ताकि इसका अधिकाधिक लाभ उपभोक्ताओं को मिल सके।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986की तरह ही भारत सरकार ने वर्ष 2005 में एक और महत्त्वपूर्ण अधिनियम 'सूचना का अधिकार अधिनियम 2005' पारित किया है। यह कानून आम नागरिक के साथ-साथ उपभोक्ता को संरक्षण प्रदान करने में अत्यन्त कारगर सिद्ध होगा। इसके अन्तर्गत भारत के प्रत्येक नागरिक को निम्नलिखित के बारे में सूचनाएँ प्राप्त करने का अधिकार है :

(i) सरकार व किसी भी पंजीकृत संस्थान से प्रश्न पूछना एवं सूचना प्राप्त करना।

(ii) किसी भी दस्तावेज की प्रतिलिपियाँ प्राप्त करना।

(iii) किसी भी दस्तावेज का निरीक्षण करना।

(iv) किसी भी कार्य का निरीक्षण करना।

(v) किसी भी कार्य में प्रयोग लिये गये माल का नमूना प्राप्त करना।

प्रत्येक सूचना प्राप्त करने के लिए राजस्थान राज्य सरकार ने दस रुपये का शुल्क निर्धारित किया है। शुल्क नकद या पोस्टल ऑर्डर द्वारा संस्थान में सूचना प्राप्ति के आवेदन पत्र के साथ जमा करवाया जा सकता है। जन सूचना अधिकारी को आवेदन पत्र प्राप्ति के तीस दिन के अन्दर आवेदक को सूचना देनी होगी।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986देश के सभी उपभोक्ताओं को संरक्षण प्रदान करता है।
2. इस अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ताओं के अधिकारों को महत्त्व दिया है।
3. यह अधिनियम सभी वस्तुओं और सेवाओं पर लागू होता है। सिर्फ नि:शुल्क वस्तुएँ एवं सेवाएँ इसके दायरे में नहीं आती है।
4. यदि कोई व्यक्ति क्रय की गई वस्तु या सेवा को पुन: बिक्री अथवा व्यापार के उद्देश्य से खरीदता है तो उस पर यह अधिनियम लागू नहीं होगा।
5. इस अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ताओं की समस्याओं का

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

निवारण करने हेतु तीन स्तरीय अर्द्धन्यायिक तंत्र की स्थापना की व्यवस्था है।

6. इस अधिनियम द्वारा उपभोक्ताओं को क्षतिपूर्ति हेतु बहुत कम समय लगता है।

7. शिकायत दर्ज कराने हेतु न्यायालय द्वारा कोई फीस नहीं ली जाती है अर्थात् यह नि:शुल्क है।

8. 1986में बना उपभोक्ता संरक्षण कानून आज भी जनता को लाभान्वित करने में सफल नहीं हो पाया है। अत: इस कानून के बारे में अधिकाधिक जानकारी आम उपभोक्ता तक पहुँचनी चाहिए।

9. भारत सरकार ने सन् 2005 में 'सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005' लागू किया है जिसके अन्तर्गत प्रत्येक नागरिक को किसी भी सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थान से सूचना प्राप्त करने का अधिकार है। अत: प्रत्येक नागरिक जागरूक होकर आवश्यकतानुसार इस महत्त्वपूर्ण कानून का लाभ उठा सकता है। यह अधिनियम उपभोक्ता संरक्षण में मददगार सिद्ध होगा।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्न प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम निम्न में से किस वर्ष में लागू किया गया :

(अ) 1956 (ब) 1965

(स) 1986 (द) 2001

(ii) उपभोक्ता संरक्षण कानून का मुख्य उद्देश्य है :

(अ) वस्तुओं को सस्ते दाम पर उपलब्ध करवाना

(ब) नकली माल को पकड़वाना

(स) उपभोक्ता को बेहतर संरक्षण देना

(द) उपरोक्त सभी

(iii) यह अधिनियम किस स्थिति में लागू नहीं होगा :

(अ) वस्तु पुन: बिक्री या व्यापार के लिए खरीदी गई हो

(ब) वस्तु में कोई दोष पाया गया हो

(स) वस्तु व सेवा का उपभोग उपभोक्ता स्वयं कर रहा हो

(द) वस्तु का मूल्य बढ़ाकर माँगा गया हो

(iv) उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत निम्न का प्रावधान है :

(अ) अर्द्धन्यायिक तंत्र की स्थापना

(ब) उपभोक्ता को क्षतिपूर्ति दिलाना

(स) उपभोक्ताओं की शिकायतों को शीघ्र, सरल तरीके से तथा कम समय एवं खर्चों में दूर करना।

(द) उपरोक्त सभी

(v) अर्द्धन्यायिक तंत्र के विभिन्न स्तर निर्भर करते हैं :

(अ) वस्तु या सेवा की मात्रा पर

(ब) मुआवजे के प्रकार पर

(स) मुआवजे की वित्तीय सीमा पर

(द) वस्तु के क्षेत्र की सीमा पर

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) राष्ट्रीय उपभोक्ता दिवस .... को मनाया जाता है?

(ii) जिला मंच के निष्कर्षों को न मानने पर विरोधी पक्ष को न्यायालय द्वारा .... मिल सकती है।

(iii) उपभोक्ता को शिकायत के साथ एक .... भी देना होगा।

(iv) अपनी शिकायत की पुष्टि हेतु आपके पास सभी जरूरी .... का होना आवश्यक है।

(v) यदि मुआवजा 20,00,000 रु. से कम है तो अपनी शिकायत .... में दायर करवायें।

(vi) जब किसी वस्तु या सेवा में .... पाया जाए तक शिकायत दर्ज करवायें।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये :

(i) सुरक्षा का अधिकार

(ii) उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार

(iii) नियंत्रित व्यापार नीतियाँ

(iv) अर्द्धन्यायिक तंत्र

4. उपभोक्ता अपनी शिकायत को कब दर्ज करवा सकता है?

5. शिकायत दर्ज कराने से पहले उपभोक्ता को क्या आवश्यक कदम उठाने चाहिए?

6. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम में उपभोक्ताओं को किस प्रकार बेहतर संरक्षण प्रदान किया जाता है?

7. उपभोक्ता कानून के लागू होने के इतने वर्षों बाद भी आज उपभोक्ताओं को इसका लाभ नहीं मिल पा रहा है, इसके कारणों की पुष्टि कीजिए।

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) स (iii) अ (iv) द (v) स

2. (i) 24 दिसम्बर (ii) सजा (iii) शपथ-पत्र (iv) दस्तावेजों (v) जिला मंच (vi) दोष

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई V – गृहविज्ञान प्रसार शिक्षा

36. गृह विज्ञान – पारिवारिक एवं व्यावसायिक शिक्षा
Home Science- Family and Vocational Education

गृहविज्ञान प्रसार का अर्थ (Meaning of the Home Science Extension Education)–

गृह–विज्ञान की शिक्षा केवल छात्र एवं छात्राओं के लिए आवश्यक नहीं वरन् प्रत्येक गृहिणी को सुखद एवं स्वस्थ पारिवारिक जीवन व्यतीत करने के लिए अनिवार्य है। यह सर्वविदित है कि भारत एक विकासशील देश है तथा यहां 30–35 प्रतिशत व्यक्ति निरक्षर हैं। निरक्षरता की स्थिति ग्रामीणों में, विशेषकर महिलाओं में और भी अधिक गम्भीर है। ऐसी स्थिति में महिलाओं को सस्ते भोज्य पदार्थो का प्रयोग कर परिवार के लिए पोषण की दृष्टि से संतुलित आहार की व्यवस्था करना, बच्चों का पालन पोषण उचित ढ़ग से करना, पारिवारिक वातावरण को शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से आरोग्यवर्धक एवं सुसज्जित बनाना, आकस्मिक दुर्घटनाओं की स्थिति में प्राथमिक चिकित्सा करना, घर में सिलाई, बुनाई आदि को सम्पन्न करने की जानकारी एवं कुशलता की शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। जो इस उपयोगी शिक्षा को विद्यालय में जाकर प्राप्त नहीं कर सकती तो उन्हें इस प्रकार की शिक्षा कार्यकर्ता के माध्यम से दी जा सकती है, जो उन्हें अच्छे गृह व्यवस्थापन के तरीके, वैज्ञानिक तरीकों से बच्चों के पालन पोषण के परिणाम के प्रति सजगता आदि के बारे में जानकारी दे सकता है।

वास्तव में गृह–विज्ञान प्रसार शिक्षा वह शिक्षा है जो लोगों को शिक्षित कर उनके दैनिक जीवन में उस शिक्षा को उपयोगी बनाने के लिए प्रेरित करती है। इस प्रकार प्रसार शिक्षा लोगों के जीवन को गुणवत्तापूर्ण बनाने की दिशा में प्रेरित करने का माध्यम है किन्तु यह परिवर्तन सही दिशा में होना चाहिए और यह स्वप्रेरित होना भी आवश्यक है। बलपूर्वक किया गया कोई परिवर्तन स्थायी नहीं होता, अतः जबरदस्ती नहीं करनी चाहिए। तकनीकी तथा सामाजिक विज्ञान द्वारा ग्रामीणों को स्वयं अपनी सहायता करने योग्य बनाना ही प्रसार शिक्षा का उद्देश्य है। इसी उद्देश्य को जब गृह–विज्ञान क्षेत्र से सम्बद्ध कर दिया जाता है तो वह गृह–विज्ञान प्रसार शिक्षा कहलाती है। ग्रामीण महिलाओं तथा बालिकाओं को जो गृह प्रबन्ध और खेती–बाड़ी से जुड़ी होती हैं, गृह–विज्ञान प्रसार शिक्षा द्वारा शिक्षित एवं प्रेरित किया जाता है जिससे वे अपने समाज में आवश्यक सुधार करके विकास की दिशा में अग्रसर हो सके।

अतः गृह विज्ञान प्रसार का अर्थ है– गृह विज्ञान विषय सम्बंधी ज्ञान को शिक्षण संस्थाओं की परिधि से बाहर निकालकर उन ग्रामीण बालाओं तथा महिलाओं के मध्य ले जाना जो कभी पाठशाला अथवा स्कूल कॉलेज न गई हो अथवा जो किसी कारणवश औपचारिक शिक्षा से वंचित रह गई हो।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि गृह विज्ञान एक व्यावहारिक विज्ञान का विषय है। इसमें विज्ञान व कला के विभिन्न क्षेत्रों का ज्ञान सम्मिलित है। यह विषय पारिवारिक जीवन को सफल एवं समृद्धिशाली बनाने में विशेष योगदान देता है। इस विषय के द्वारा पारिवारिक जीवन के विभिन्न क्रिया–कलापों के सम्पादन में कलात्मक दृष्टिकोण के साथ–साथ वैज्ञानिक आधार को भी प्राथमिकता दी जाती है।

घर, वह स्थान है जहाँ पर परिवार के सभी सदस्यों की विभिन्न शारीरिक, मानसिक, भौतिक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति जीवन पर्यन्त होती रहती है। यही वह जगह है जहाँ परिवार में विभिन्न मूल्यों का न केवल जन्म वरन् उनका विकास भी होता है। एक अच्छा घर धरती पर स्वर्ग के समान होता है क्योंकि अच्छे घर में ही व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है तथा परिवार के जीवन स्तर में भी गुणवत्ता आती है। यह सब घर के वातावरण पर निर्भर करता है।

गृह विज्ञान शिक्षा का ज्ञान व उसका उपयोग इसमें अहम् भूमिका निभाता है।

गृह विज्ञान विषय के पाँचों ही विभाग – खाद्य एवं पोषण, मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बन्ध, पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन, वस्त्र एवं परिधान तथा गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा पारिवारिक जीवन को सफल बनाने के लिए उत्प्रेरित करते हैं। उदाहरणार्थ सन्तुलित आहार के ज्ञान द्वारा परिवार के सभी सदस्यों को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार पौष्टिक तत्त्व प्राप्त होते हैं और उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है। फलस्वरूप वे घर तथा व्यावसायिक क्षेत्र में अपनी जिम्मेदारियों को प्रभावी ढंग से सम्पन्न कर पाते हैं। भोजन के पश्चात् व्यक्ति की आधार भूत आवश्यकताओं में वस्त्र व मकान आते हैं। वस्त्रों के निर्माण से

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

लेकर, चयन, खरीददारी, कटाई, सिलाई, धुलाई, रंगाई, छपाई एवं रखरखाव की जानकारी द्वारा गृहिणी अपने परिवारजनों के लिये उत्तम वस्त्रों का चुनाव अपनी आर्थिक स्थिति के अनुरूप कर अधिकतम् सन्तोष प्राप्त कर सकती है।

मकान परिवार की तीसरी मूलभूत आवश्यकता है। गृह विज्ञान शिक्षा में मकान निर्माण के लिए भूमि का चुनाव, कमरों का व्यवस्थापन, निर्माण, रखरखाव एवं उसकी आन्तरिक व बाह्य साज–सज्जा की विस्तृत जानकारी एक गृहिणी को सुखद भवन निर्माण हेतु सहायता प्रदान करती है। गृह विज्ञान शिक्षा परिवार में सीमित साधनों का विवेक पूर्वक उपयोग कर अधिकतम् संतोष प्राप्त करने में गृहलक्ष्मी को सक्षम बनाती है। परिवार विभिन्न सदस्यों जैसे माता–पिता, पति–पत्नी, भाई–बहन एवं बच्चों का एक समूह है। इन सभी के व्यक्तिगत एवं सामूहिक विकास तथा अन्तर्सम्बन्धों में परस्पर सामंजस्य के लिये मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बन्ध विभाग ज्ञान प्रदान कर एक सुखी परिवार की स्थापना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा विभाग छात्र–छात्राओं को अर्जित ज्ञान का प्रकाश परिवार जनों में फैलाने तथा सामाजिक उत्थान हेतु इसका उपयोग करने के बारे में जानकारी देता है जिससे एक अच्छे परिवार का निर्माण होता है जो कि एक अच्छे राष्ट्र के निर्माण में सहायक है। पारिवारिक शिक्षा के साथ–साथ गृह विज्ञान शिक्षा की व्यावसायिक उपयोगिता भी है, यानि कि गृह विज्ञान शिक्षा सिर्फ घर तक ही सीमित न रहकर व्यावसायिक क्षेत्र में भी दिन–प्रतिदिन प्रासंगिक होती जा रही है।

आज का युग विज्ञान एवं तकनीकी के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच चुका है। औद्योगिकीकरण का विस्तार, शहरीकरण, जनसंख्या विस्फोट, महिला शिक्षा आदि कई ऐसे कारक हैं जिनकी वजह से पारिवारिक स्थितियों में बहुत परिवर्तन आया है। पहले गृहिणियाँ सिर्फ घरेलू जिम्मेदारियों तक ही सीमित थीं लेकिन अब वे घर के कामों के साथ–साथ रोज़गार हेतु घर से बाहर विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत हैं। यही कारण है कि गृह विज्ञान शिक्षा के पाठ्यक्रम में समय–समय पर परिवर्तित कर, ज़रूरतों को ध्यान में रखकर आज के परिपेक्ष्य में तैयार किया जाता है। अब जितना महत्त्व गृह विज्ञान शिक्षा का घरेलू स्तर पर है उतना ही महत्त्व व्यावसायिक स्तर पर भी है। वर्तमान में गृह विज्ञान शिक्षा परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने में भी सहायक है।

गृह विज्ञान शिक्षा के कक्षा 11 व 12 के पाठ्यक्रम द्वारा आपने विभिन्न अध्यायों के अन्तर्गत सैद्धान्तिक ज्ञान एवं प्रायोगिक अनुभव अर्जित किया है। निम्न तालिका 36.1 में कुछ ऐसे विषय अंकित किये गये हैं जिनमें कौशल अर्जित कर आप स्वरोज़गार प्राप्त कर सकते हैं।

तालिका में दिये गये विषयों पर स्वरोजगार प्राप्त करने के अलावा भी कई अन्य ऐसे विषय हैं जो गृह विज्ञान शिक्षा से सम्बन्धित हैं और छात्र उनमें अपनी रुचि के अनुसार विशेष पाठ्यक्रम की सहायता से व्यावसायिक कौशल अर्जित कर स्वरोज़गार प्रारम्भ कर सकते हैं।

गृह विज्ञान शिक्षा से सम्बन्धित स्वरोज़गार के लिये चल रहे कुछ विशेष पाठ्यक्रम एवं संस्थाएँ जो हमारे राज्य में चल रहीं हैं, के बारे में जानकारी प्राप्त करने से पहले उचित होगा कि हम यह समझ लें कि स्वरोज़गार क्या है?इसका आज के परिपेक्ष्य में क्या महत्त्व है, तथा इससे हमें क्या लाभ हो सकते हैं?

तालिका 36.1 गृह विज्ञान विभाग एवं विषय

क्र.सं.	गृह विज्ञान विभाग	विषय
1.	आहार एवं पोषण	खाद्य परिरक्षण – पापड़, बड़ी, अचार, जैम, जैली, शरबत, मुरब्बा, चटनी, सॉस अदि तैयार करना।
2.	मानव विकास एवं एवं पारिवारिक सम्बन्ध	पालना गृह एवं नर्सरी स्कूल खोलना। बच्चों के लिये खिलौने तैयार करना, नये–नये खेल विकसित करना।
3.	पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन	आंतरिक सज्जा, पुष्प सज्जा, फर्श की सजावट, सजावटी वस्तुओं का निर्माण, विभिन्न धातुओं एवं पदार्थों की सफाई करना आदि।
4.	वस्त्र एवं परिधान	सिलाई, बुनाई, छपाई, रंगाई करना, बन्धेज व बाटिक बनाना।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

जैसा कि **''स्वरोज़गार''** से यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति किसी विषय में ज्ञान अर्जित कर स्वयं रोज़गार शुरू करे ताकि उसे अपने जीविकोपार्जन हेतु किसी और के संस्थान में कार्यरत होने के बजाय स्वयं के आर्थिक संस्थान की स्थापना कर जीविका कमा सके। प्रायः आपने देखा होगा कि व्यक्ति अपनी शिक्षा पूरी करने के पश्चात् या तो किसी सरकारी, गैर–सरकारी संस्था में नौकरी के माध्यम से कार्य कर नियमित मज़दूरी या वेतन प्राप्त करता है या किसी औद्योगिक संस्थान में नौकरी कर वेतन या लाभांश प्राप्त करता है जिससे वह अपनी व परिवार के सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

वर्तमान में उपर्युक्त स्थिति में काफी परिवर्तन आया है। आपने कई लोगों से यह सुना होगा कि ''आजकल नौकरियाँ कहाँ मिलती हैं?'' अच्छे–अच्छे, पढ़े–लिखे व्यक्ति जिनके पास ऊँची–ऊँची उपाधियाँ हैं, पर उन्हें उनकी क्षमता अनुसार संस्थानों में नौकरियाँ उपलब्ध नहीं हैं। यदि उपलब्ध हो भी जाती हैं तो वे उनकी कुशलता के अनुरूप नहीं अथवा बहुत कम वेतन पर उपलब्ध होती हैं। फलस्वरूप नवयुवक तथा युवतियों में असंतोष, मानसिक तनाव एवं कुंठा बढ़ती जा रही है। ऐसे में व्यक्ति करे तो क्या करे? इसके निवारण हेतु स्वरोज़गार एक महत्त्वपूर्ण सुझाव है। दिये गये उदाहरण से आप स्वरोज़गार के महत्त्व को भली भाँति समझ सकते हैं।

आपने गृह विज्ञान शिक्षा में कक्षा 11 व 12 के पाठ्यक्रम के कुछ अध्यायों में कपड़े सिलने के बारे में सीखा। आपको कपड़े सिलने में रुचि भी है तथा आपमें सिलाई का कौशल भी है। आप कक्षा 12 उत्तीर्ण करने के पश्चात् इस क्षेत्र में प्रशिक्षण प्राप्त कर सिलाई द्वारा घर पर एक व्यवसाय प्रारम्भ कर सकती हैं। आप विभिन्न प्रकार के परिधान बना, उन्हें विक्रय कर अपने परिवार को आर्थिक सहयोग प्रदान कर सकती हैं। यही **''स्वरोज़गार''** है।

किसी भी क्षेत्र में कौशल अर्जित कर आप दो तरीकों से व्यवसाय कर सकते हैं। एक तो आप उत्पाद तैयार कर किसी लब्धप्रतिष्ठ व्यापारी को दे सकते हैं ताकि वह आपके द्वारा बनाये गये उत्पाद को बाजार में विक्रय करे। दूसरा आपके द्वारा निर्मित विभिन्न उत्पादों का विक्रय आप स्वयं करें। पहली स्थिति में व्यापारी आपसे उत्पाद कम कीमत पर लेकर ग्राहक को अधिक दाम पर बेचेगा ताकि उसे अधिकतम् लाभांश प्राप्त हो जबकि दूसरी स्थिति में यदि आप स्वयं अपने द्वारा निर्मित उत्पाद बेचेंगी तो आपको अधिक लाभ होगा तथा मानसिक संतोष भी मिलेगा। इस प्रकार आप स्वरोज़गार के माध्यम से अपने परिवार की मौद्रिक आय तथा मानसिक आय दोनों में ही वृद्धि कर सकते हैं।

स्वरोज़गार स्थापित करने के कई लाभ हैं :

- लघु स्वरोजगार स्थापित करने हेतु कम पूँजी की आवश्यकता होती है अतः प्रत्येक व्यक्ति जिसमें किसी भी काम को करने का कौशल है अपना व्यवसाय करने हेतु साहस जुटा सकता है।
- बेरोज़गारी हमारे देश की एक ज्वलन्त समस्या है। स्वरोज़गार से रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है तथा बेरोजगारी की समस्या का निराकरण होता है।
- परिवार के सदस्यों एवं मित्रों की सहायता से स्वरोजगार आसानी से स्थापित किया जा सकता है। अतः रोजगार हेतु विस्फोटक स्थिति नहीं आती।
- स्वयं के कार्य करने के तौर–तरीके, तकनीक आदि दूसरे लोगों तक आसानी से नहीं पहुँचती है और रोज़गार का भेद भी आसानी से नहीं खुलता।
- स्वरोजगार का संचालन करना अत्यन्त सरल होता है, इसके लिये किसी विशिष्ट ज्ञान एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती।
- स्वरोज़गार की राष्ट्रीय तथा प्रति व्यक्ति आय वृद्धि में एक अहम् भूमिका है।
- किसी भी लघु एवं घरेलू व्यावसायिक इकाई की स्थापना के तुरन्त बाद ही उत्पादन तथा लाभ प्राप्त होना शुरू हो जाता है।
- स्वरोज़गार द्वारा छोटे–छोटे उद्योग गाँवों में भी लगाये जा सकते हैं क्योंकि बड़े उद्योग बड़े शहरों तक ही सीमित होते हैं।
- मानवीय मूल्यों की दृष्टि से भी स्वरोज़गार अति उत्तम है। इसमें व्यक्ति को मशीन की तरह काम करने की आवश्यकता नहीं होती है।
- स्वरोज़गार द्वारा वस्तुओं का निर्यात भी बढ़ता है।
- स्वरोज़गार लघु स्तर पर होता है अतः उद्यमी को कई व्यापार चक्रों से मुक्ति मिलती है।
- स्वरोज़गार हेतु सरकार कई प्रशिक्षण एवं वित्तीय सहायता का लाभ उद्यमियों को देती है।

उपर्युक्त सभी लाभों के कारण आज हमारे देश में स्वरोजगार के कई अवसर उपलब्ध हैं। आप भी इन सभी का लाभ प्राप्त कर

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

अपना स्वरोजगार सफलतापूर्वक स्थापित कर सकते हैं। यह आप इस पुस्तक में पढ़ चुके हैं कि परिवार सभी आर्थिक क्रियाओं की मूल इकाई है अतः यह पारिवारिक शिक्षा **''गृह विज्ञान''**, स्वरोजगार हेतु एक उत्तम विषय है। अब आप रोजगार प्राप्त करने के साथ ही कई अन्य आशार्थियों को भी रोज़गार उपलब्ध करवा सकते हैं।

स्वरोजगार हेतु कौशल प्राप्त करने कि लिए देश एवं राज्य में चल रहे गृह विज्ञान से सम्बन्धित व्यावसायिक प्रशिक्षणों का ज्ञान अर्जित कर अपनी क्षमता, रूचि, आवश्यकता एवं सुविधानुसार व्यवसाय एवं रोजगार के अवसर चुन सकते है ताकि आप धन कमाकर अपनी जिविका अर्जित कर सकें। कुछ चुनिंदा प्रशिक्षणों से प्राप्त कार्य करने के अवसर निम्न है–

तालिका 36.1 गृह विज्ञान विभाग के विभिन्न प्रशिक्षण एवं उनमें कार्य के अवसर

क्र.सं.	प्रशिक्षण कार्यक्रम	कार्य करने के अवसर
1.	टेक्सटाइल डिज़ाइनिंग	i. टेक्सटाइल डिज़ाइन मिल्स में टेक्सटाइल डिज़ाइनर के रूप में। ii. स्वय उद्यमी के रूप में लघु उद्योग स्थापित कर स्वरोज़गार अपनाने में। iii. फ्लोर कवरिंग डिजाइनर के रूप में। iv. हाथ करघा व खादी के टैक्साटाइल डिज़ाइनर के रूप में। v. ब्लॉक, स्क्रीन और रॉलर प्रिन्टर्स के डिज़ाइनर के रूप में। vi. हाथकरघा, टैक्सटाइल, हैण्ड प्रिन्टेड टैक्सटाइल डिज़ाइनर के रूप में। vii. कशीदे के डिज़ाइनर के रूप में।
2.	इन्टीरियर डेकोरेशन	i. इन्टीरियर डिज़ाइनर के रूप में। ii. होटल, प्रदर्शनी आदि में इन्टीरियर डेकोरेटर के पद पर। iii. प्रदर्शन स्थानों, प्रदर्शनी आदि में सलाहकारों के रूप में। iv. वास्तुकारों के सहायक के रूप में। v. फर्नीचर डिज़ाइनर के रूप में। vi. पुष्प सज्जा, फर्श सजावट विशेषज्ञ के रूप में। vii साज–सज्जा की विभिन्न सामग्री हेतु साफ–सफाई एवं रख रखाव सलाहकार के रूप में।
3.	खाद्य एवं पोषण	i. फलों एवं सब्जियों का परिरक्षण कर स्वरोजगार स्थापित करने में। ii. आहार आयोजिका एवं कुकरी विशेषज्ञ के रूप में (होटल, केन्टीन, होस्टल आदि में)। iii. कुकरी विशेषज्ञ के रूप में। iv. कुकरी प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करने में। v. फलों एवं सब्जियों के परिरक्षण केन्द्र हेतु प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करने में।
4.	पोषण एवं बाल देखभाल	i. पालना घर स्थापित करने में। ii. नर्सरी स्कूल स्थापित करने में। iii. शिशु तथा बच्चों के लिये खेल सामग्री तैयार करने एवं प्रशिक्षण देने में। iv. बच्चों हेतु आहार सलाहकार के रूप में v. बच्चों से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की शिक्षण सामग्री तैयार करने में। vi. बच्चों के विकास हेतु विभिन्न प्रकार के रुचि केन्द्र (Hobby centre) स्थापित करने में।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

क्र.सं.	प्रशिक्षण कार्यक्रम	कार्य करने के अवसर
5.	महिला सशक्तिकरण एवं विकास	i. महिलाओं के लिये जागृति केन्द्र की स्थापना करने में। ii. महिला विकास हेतु प्रशिक्षण संस्था स्थापित करने में। iii. सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं में महिला सशक्तिकरण एवं विकास सलाहकार के रूप में।
6.	उपभोक्ता संरक्षण	i. उपभोक्ता संरक्षण सहायता केन्द्र स्थापित करने में। ii. पदार्थ परीक्षण प्रयोगशाला स्थापित करने में। iii. उपभोक्ता प्रशिक्षण सलाहकार के रूप में। iv. उपभोक्ता संरक्षण से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की शिक्षण सामग्री विकसित करने में। v. उपभोक्ता राहत केन्द्र स्थापित करने में।
7.	हाऊस कीपिंग	i. होटल में इंटीरियर डेकोरेटर के पद पर। ii. गेस्ट हाऊस, सर्किट हाऊस में इंटीरियर डेकोरेटर के पद पर। iii. विभिन्न संस्थानों में हाउस कीपर के रूप में। iv. हाउस कीपिंग प्रशिक्षण अधिकारी के रूप में। v. हाउस कीपिंग प्रशिक्षण प्रोग्रामर के रूप में।
8.	कुकरी	i. कुकरी प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करने में। ii. होटल में कुकरी विशेषज्ञ के रूप में। iii. भारतीय रेलवे में कुकरी विशेषज्ञ के रूप में। iv. भारतीय वायु प्राधिकरण (Indian Air Authority) में कुकरी विशेषज्ञ के रूप में। v. कुकरी सलाहकार के रूप में।
9.	फूड एण्ड बेवरेज सर्विस	i. रेस्टोरेन्ट में सर्विस बॉय/गर्ल के रूप में। ii. क्लब में सर्विस बॉय/गर्ल के रूप में। iii. आऊट डोर केटरिंग व्यवस्थापक के रूप में। iv. विशेष पर्वों (शादी, त्यौहार, जन्मदिन आदि) पर केटरिंग सर्विसेस देकर। v. केटरिंग प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करने में।
10.	होटल प्रबन्धन	i. स्वयं का होटल स्थापित करने में। ii. होटल में विभिन्न पदों (रिसेप्शनिस्ट, रूम मैनेजर, पब्लिक युटिलिटी मैनेजर, लॉजिस्टिक मेनेजर, रेस्टोरेन्ट मेनेजर इत्यादि) पर कार्य करने हेतु। iii. होटल प्रबन्धन प्रशिक्षण संस्थान में कार्य करके।
11.	ज्वैलरी डिजाइनिंग	i. विभिन्न शो रूम्स हेतु ज्वैलरी डिजाइन बनाना। ii. जेम्स व डायमण्ड की असोर्टिंग(Assorting) करना। iii. फैशन डिजाइनर के साथ मिलकर विभिन्न ड्रेस एवं अवसरों हेतु ज्वैलरी डिजाइन करना। iv. कॉस्मेटिक ज्वैलरी डिजाइनर के रूप में। v. ज्वैलरी डिजाइनिंग का प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करना। vi. स्वयं का शोरूम खोलने में

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

हमारे देश में रोजगार हेतु व्यावसायिक अवसरों की कमी नहीं है। यदि प्रत्येक छात्र यह सोच ले कि उसे प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात एक सफल उद्यमी बनना है तो उसे किसी और पर आश्रित रहने की आवश्यकता नहीं है। एक सफल उद्यमी बनने हेतु व्यावसायिक कौशल अर्जित करने के साथ–साथ व्यावसायिक गुणों का होना भी आवश्यक है। व्यक्ति के व्यक्तित्व में जितने गुणों का समायोजन होगा वह उतना ही सफल उद्यमी बनेगा।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु :

1. गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा एक व्यावहारिक शिक्षा का विषय है।
2. इसमें विज्ञान एवं कला के विभिन्न विषयों का ज्ञान सम्मिलित है।
3. गृह विज्ञान शिक्षा के पाँचों ही विभाग–खाद्य एवं पोषण, मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बन्ध, पारिवारिक संसाधन प्रबन्धन, वस्त्र एवं परिधान तथा गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा पारिवारिक जीवन को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
4. समाज के परिपेक्ष्य में गृह विज्ञान शिक्षा सिर्फ घर तक ही सीमित न रहकर व्यावसायिक क्षेत्र में भी दिन–प्रतिदिन प्रगतिशील होती जा रही है।
5. दैनिक जीवन की विभिन्न क्रिया–कलापों को सुचारु रूप से चलाने के साथ अब गृह विज्ञान शिक्षा स्वरोजगार के माध्यम से परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने में भी सहायक है।
6. किसी भी विषय में व्यावसायिक कौशल अर्जित कर स्वयं का औद्योगिक संस्थान स्थापित करना ही ''स्वरोजगार'' है।
7. भारतवर्ष में बेरोज़गारी की समस्या से निवारण हेतु स्वरोजगार एक उत्तम साधन है।
8. स्वरोज़गार स्थापित करने के कई लाभ हैं, जिनमें कम पूँजी की लागत, व्यापार चक्रों से मुक्ति, परिवार जनों का सहयोग, मानवीय मूल्यों में वृद्धि, सरल संचालन इत्यादि प्रमुख हैं।
9. सरकार स्वरोज़गार स्थापित करने हेतु प्रशिक्षण एवं वित्तीय सहायता का लाभ उद्यमियों को देती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर चुनें :

(i) गृह विज्ञान विषय में कितने विभाग हैं :

(अ) चार (ब) तीन
(स) पाँच (द) छः

(ii) निम्न में से कौनसा विषय भूमि चुनाव में सहायता करता है :

(अ) खाद्य एवं पोषण
(ब) मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन
(स) वस्त्र एवं परिधान
(द) पारिवारिक संसाधन प्रबंधन

(iii) वस्त्र एवं परिधान में निम्न विषय नहीं आते हैं :

(अ) सिलाई (ब) बुनाई
(स) बन्धेज (द) नर्सरी स्कूल खोलना

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

(i) गृह विज्ञान शिक्षा के द्वारा पारिवारिक जीवन के विभिन्न क्रिया–कलापों के सम्पादन में कलात्मक दृष्टिकोण के साथ–साथ .... आधार को भी प्राथमिकता दी जाती है।

(ii) एक अच्छा घर धरती पर स्वर्ग के समान होता है क्योंकि अच्छे घर में ही व्यक्ति का ....विकास होता है।

(iii) पारिवारिक शिक्षा के साथ–साथ गृह विज्ञान शिक्षा की .... उपयोगिता भी है।

3. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(i) गृह विज्ञान एक व्यावसायिक शिक्षा (ii) स्वरोज़गार (iii) गृह विज्ञान एवं स्वरोज़गार

4. पारिवारिक जीवन में गृह विज्ञान शिक्षा का क्या महत्त्व है?
5. ''गृह विज्ञान शिक्षा स्वरोजगार हेतु एक उत्तम विषय है'' पर एक निबन्ध लिखिए।

उत्तरमाला :

1. (i) स (ii) द (iii) द
2. (i) वैज्ञानिक (ii) सर्वांगीण (iii) व्यावसायिक

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रायोगिक पुस्तक

इकाई–1 मानव विकास एवं पारिवारिक सम्बंध

प्रयोग–1

1. किशोरावस्था की शक्तियाँ एवं कमजोरियाँ

आपने विभिन्न अध्यायों के अन्तर्गत किशोरावस्था के दौरान होने वाली विकासात्मक प्रकिया एवं उनकी विशेषताओं के बारे में विस्तार से पढ़ा है। इन अध्याय को पढ़ते समय उसमें दिये गये तथ्यों की तुलना स्वयं से जरूर की होगी। स्वयं में उपस्थित किन्हीं दो शक्तियों व उनका अधिकतम उपयोग तथा दो कमजोरियाँ व उनमें कैसे सुधार किया जाये, के बारे में अपनी प्रायोगिक पुस्तिका में लिखें। उदाहरण के लिए प्रत्येक विकास की शक्ति व उसका अधिकतम उपयोग एवं कमजोरी व उसमें सुधार कैसे किया जा सकता है। तालिका : 1 व 2 में दिया जा रहा है ताकि आप इस प्रायोगिक का अच्छी तरह कर सके।

तालिका 1 : किशोरावस्था के दौरान स्वयं की शक्तियाँ एवं उनका अधिकतम उपयोग

	विकास	शक्तियाँ	अधिकतम उपयोग
1.	शारीरिक	उपयुक्त वजन व लम्बाई	विविध प्रकार के खेलों में भाग ले सकता है। शारीरिक श्रम वाले कार्य अच्छी तरह से कर सकता है।
2.	गत्यात्मक	उत्तम पेशीय समन्वय	नृत्य, व्यायाम, तैरना, जिम्नास्टिक आदि में अभ्यास, प्रशिक्षण एवं प्रबल अभिप्रेरण द्वारा भविष्य में इनमें व्यवसाय भी चयन कर सकता है।
3.	यौन	उचित समय पर उपयुक्त परिपक्वता	किशोर–किशोरी आत्मविश्वास, उत्साह, रूचि के साथ प्रत्येक कार्य में भाग लेगा।
4.	संवेगात्मक	जिज्ञासु प्रवृत्ति	किशोरावस्था में जिज्ञासाएं स्वयं में होने वाले शारीरिक परिवर्तन पर केन्द्रित रहती है। जिज्ञासु प्रवृत्ति को आत्म केन्द्रित न कर क्षेत्र विशेष में लगा कर ज्ञान क्षेत्र व सृजनात्मकता में विकास कर सकता है।
5.	सामाजिक	वाक् चातुर्यता	वाक् चातुर्यता से किशोर समाज के हर तबके को प्रभावित कर सकते है। वे अपनी इस अच्छाई से समाज में पनप रहे अंधविश्वास, रूढ़िवादिता के खिलाफ आवाज उठाकर समाज के बड़े बुजुर्गो का ह्रदय परिवर्तन कर सामाजिक उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते है।
6.	संज्ञानात्मक	उच्च बुद्धि लब्धि	इस शक्ति द्वारा किशोर विज्ञान, गणित व अन्य विषयों में सर्वश्रेष्ठ अंक कर अधिकतम सफलता अर्जित कर सकता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 2 : किशोरावस्था के दौरान स्वयं में कमजोरियाँ एवं उनमें सुधार

	विकास	कमजोरियाँ	सुधार
1.	शारीरिक	दुर्बल व कमजोर होना	इस कमजोरी को दूर करने के लिए किशोर को संतुलित आहार लेना चाहिये। यदि किसी बीमारी से ग्रसित है तो समय रहते इलाज करवाना चाहिये ताकि शारीरिक शक्ति पुनः अर्जित कर कार्यक्षमता बढ़ा सके।
2.	गत्यात्मक	पेशीय समन्वय सही न होना	इसमें सुधार के लिए सर्वप्रमि उनका उपहास न करें तथा प्रबल अभिप्रेरण उचित मार्गदर्शन व अभ्यास द्वारा कार्यकलापों को करने के लिए प्रेरित करें ताकि किशोर कम से कम औसत दर्जे का प्रदर्शन कर सके।
3.	यौन	विकास की दर धीमी होना तथा औसत उम्र के बाद होना	ऐसे किशोर स्वयं को हमउम्र साथियों से पिछड़ा समझते है और हीन भावना से ग्रस्त हो जाते है। कई बार शारीरिक विकास में रूकावट या देर भी यौन विकास को प्रभावित करती है अतः संतुलित आहार का सेवन करे। भावना से ग्रसित किशोरों को अपना ध्यान शारीरिक स्वरूप से हटाकर सृजनात्मक कार्यो में लगाना चाहिये ताकि हीन भावना से बाहर निकल सकें।
4.	संवेगात्मक	क्रोधित स्वभाव	क्रोध में आकर किशोर न केवल सामने वाले व्यक्ति को बल्कि स्वयं को भी नुकसान पहुंचाता है। क्रोध पर नियंत्रण करने के लिए किशोर को स्वयं को किसी दिलचस्प काम में व्यस्त कर लेना चाहिये।
5.	सामाजिक	शर्मिला व्यक्तित्व	किशोर अपनी इस कमी में सुधार कर सामाजिक समारोहों में अधिक से अधिक भाग लेकर यथा सम्भव योगदान देकर तथा अधिक से अधिक लोगों से बातचीत व घुल–मिलकर रह सकते है। किशोर के हमउम्र साथी अध्यापक, माता–पिता व परिवार के अन्य सदस्य किशोर की मदद कर सकते है।
6.	संज्ञानात्मक	मंद बुद्धि लब्धि	कमजोर बुद्धि वाले किशोरों को अपना ध्यान मानसिकता कौशल की जगह शारीरिक कौशल युक्त क्रियाकलापों जैसे चित्रकारी, नृत्य, दस्तकारी आदि में लगाना चाहिये।

शिक्षक कक्षा में इन दोनों तालिकाओं के आधार पर किशोर–किशोरियों की विभिन्न शक्तियसें के अधिकतम उपयोग तथा कमजोरियों में सुधार के लिए सुझावों पर एक चर्चा का आयोजन करे। इस प्रायोगिक से छात्र–छात्राओं को इस अवस्था में हो रहे परिवर्तन, उनके कारणों तथा समाजयोजन के विषय में रोचक जानकारी प्राप्त होगी। यह प्रायोगिक छात्र–छात्राओं को अपनी शक्तियों के अधिकतम उपयोग हेतु निर्णय लेने ओर कमजोरियों में सुधार करने की ओर अग्रसर करेगा।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–2

प्रतिवेदन : एक किशोर–किशोरी की केस स्टडी का प्रतिवेदन तैयार करना।

किशोरी का नाम

1. उम्र
2. शैक्षिक योग्यता
3. शारीरिक रचना
4. लम्बाई– भार, माँसपेशियां, बाल, नेत्र एवं शारीरिक कार्य क्षमता
5. गत्यात्मक विकास– माँसपेशियां, चेहरे के हाव–भाव
6. संवेगात्मक विकास– क्रोध, जिज्ञासा, भय, आकुलता, ईर्ष्या, स्पर्धा, स्नेह, हर्ष
7. सामाजिक विकास– स्वभाव, मित्रता, समूह निर्माण, पारिवारिक समायोजन, सामाजिक समायोजन
8. यौन विकास– प्राथमिक यौन विशेषताएँ, द्वितीयक यौन विशेषताएँ

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–3
वृद्धावस्था की समस्याएँ एवं सुझाव

जीवन चक्र की अन्य अवस्थाओं की तरह इस अवस्था में भी कई शारीरिक, सामाजिक, मानसिक एवं संवेगात्मक परिवर्तन होते है। इन परिवर्तनों के साथ–साथ उसे कई समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है। वास्तविक अनुभव के लिए अपने परिवार या आस पड़ोस में रहने वाले एक वृद्ध पुरूष व महिला का निरीक्षण करें और साक्षात्कार कर उनकी विभिन्न समस्याओं की सूचि बनाएं। इस समस्याओं के निराकरण हेतु अपने सुझाव भी दें। यह प्रायोगिक निम्न तालिका के रूप में प्रायोगिक पुस्तिका में लिखें।

तालिका 3,1 : वृद्धावस्था की समस्याएँ एवं सुझाव

समस्या	सुझाव
(अ) शारीरिक (i)आन्तरिक (ii) बाह्य (ब) मानसिक (स) सामाजिक (द) संवेगात्मक (य) आर्थिक (र) व्यक्तित्व	

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई–2 आहार एवं पोषण

प्रयोग–4

भोज्य समूहों की सन्दर्भ इकाई

अध्याय में आपने आहार आयोजन की प्रक्रिया के बारे में विस्तारपूर्वक पढ़ा। सन्तुलित आयोजन की प्रक्रिया को आसान बनाने के लिये विविध भोज्य समूहों की सन्दर्भ इकाइयों का सहारा लिया गया है। आहार आयोजन से पूर्व आपको विविध भोज्य समूहों की सन्दर्भ इकाई के लिये प्रस्तावित का प्रायोगिक अनुभव होना आवश्यक है। अत: विषय अध्यापक की सहायता से भोज्य पदार्थों की इकाई की वास्तविक मात्रा को स्वयं देखें जिससे आपको यह अनुभव हो जाये कि 30 ग्राम अनाज/दाल की मात्रा कितनी होती है। इसी प्रकार 100 ग्राम फल, सब्जियां जैसे–आलू, प्याज, भिण्डी, पालक, केला, आम आदि कितना होता है।

प्रत्येकभ ोज्यस मूहज ैसे–अनाज,द ालें,द ूध,क ंदमूल,ह री पत्तेदार सब्जियां, फल, शक्कर, घी आदि में से कम से कम दो भोज्य पदार्थों का चयन करें। विषय अध्यापक इन भोज्य पदार्थों को इकाई में प्रस्तावित मात्राओं के अनुसार तुलवाकर छात्र-छात्राओं को इन मात्राओं का प्रत्यक्ष अनुभव आपकी सहायता हेतु नमूने के तौर पर निम्न तालिका बनाई जा रही है।

तालिका में दिये गये भोज्य पदार्थों में उपलब्धता के आधार पर परिवर्तन किये जा सकते हैं। सुविधानुसार भोज्य पदार्थों की संख्या भी बढ़ाई जा सकती है। अण्डा, मांस, मछली, मुर्गी आदि की सन्दर्भ इकाई का ज्ञान भी दिया जा सकता है।

II. आहार आयोजन के लिये विविध व्यंजन

आहार आयोजन के लिये सन्दर्भ इकाई के ज्ञान के साथ-साथ विविध व्यंजनों को बनाने के लिये कच्ची भोज्य पदार्थों की मात्रा एवं तैयार व्यंजन की मात्रा का अनुभव भी आवश्यक है। उदाहरण के लिये अनाज की एक सन्दर्भ इकाई अर्थात् 30 ग्राम आटे से बनी चपाती आकार में कैसी होगी? इसी प्रकार 30 ग्राम कच्चा दलिया/दाल आदि पकने के बाद कितनी हो जाएगी? कई बार विविध व्यंजन को बनाने के लिये 2 या 3 भोज्य समूहों का मिश्रण करना पड़ता है। ऐसा करने पर व्यंजन विशेष में सभी भोज्य समूह की सन्दर्भ इकाई की मात्राओं में कुछ फेर-बदल भी किया जाता है। जैसे–1 कटोरी चावल की खीर बनाने के लिए 2½ इकाई दूध यानी कि 250 मि.लि. दूध, 10 ग्राम चावल व 10 ग्राम शक्कर चाहिये जबकि 1 कटोरी सेंवई की खीर बनाने के लिये 150 मि.लि. दूध के साथ 10 ग्राम सेंवई व 10 ग्राम शक्कर चाहिये।

तालिका 4.1 : भोज्य समूह एवं भोज्य पदार्थ

क्र.सं.	भोज्य समूह	भोज्य पदार्थ
1.	अनाज	गेहूं का आटा, चावल
2.	दाल	मूंग/उड़द/चना दाल, बेसन
3.	दूध	दूध, दही
4.	कंदमूल	आलू, प्याज
5.	हरी पत्तेदार सब्जियां	पालक, पत्तागोभी, मैथी, बथुआ
6.	अन्य सब्जियां	भिण्डी, बैंगन, लौकी, तुरई
7.	फल	अमरूद, केला, आम, सेब, पपीता
8.	शक्कर	गुड़, शक्कर
9.	घी/तेल	घी, तेल

तालिका में दिये गये भोज्य पदार्थों में उपलब्धता के आधार पर परिवर्तन किये जा सकते हैं। सुविधानुसार भोज्य पदार्थों की संख्या भी बढ़ाई जा सकती है। अण्डा, मांस, मछली, मुर्गी आदि की सन्दर्भ इकाई का ज्ञान भी दिया जा सकता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

आपकी सहायता के लिये हम घरों में सामान्यतया बनाये जाने वाले कुछ व्यंजनों हेतु कच्चे भोज्य पदार्थों की मात्रा व पकाने के बाद तैयार व्यंजन की मात्रा तालिका में दे रहे हैं। विद्यालय की प्रयोगशाला में विषय अध्यापिका इन व्यंजनों का प्रदर्शन दें तथा प्रत्यक्ष रूप से छात्रों को बतायें कि कच्चे भोज्य पदार्थ की मात्रा कितनी थी तथा पकाने के बाद तैयार व्यंजन की मात्रा कितनी हो गई। अभ्यास के लिये ये व्यंजन आप घर पर भी बनाकर देख सकते हैं।

तालिका 4.2 : सामान्य व्यंजनों के लिये कच्चे भोज्य पदार्थों की आवश्यकता एवं तैयार परोस मात्रा

क्र. सं.	व्यंजन	मुख्य भोज्य पदार्थ (ग्रा.)	मात्रा संख्या	इकाई परोस मात्रा	तैयार
1.	रोटी/बाटी पूरी/पराँठा	आटा घी	30 आवश्यकतानुसार	1	1 1
2.	भरवाँ परांठा/ कचौरी	आटा भरावन (आलू) तेल	30 30 आवश्यकतानुसार	1 1	1
3.	समोसे	मैदा भरावन (आलू, मटर) तेल	30 25+25 10	1 1/4+1/4 तलने के लिये	2 समोसे
4.	सादा दलिया	दलिया घी	30 इच्छानुसार	1	1 प्लेट
5.	मीठा दलिया	दलिया गुड़/शक्कर घी	30 10 इच्छानुसार	1 2	1 प्लेट
6.	दाल वाला दलिया	दलिया मूंग दाल घी	30 15 इच्छानुसार	1/2 1/2	1 प्लेट
7.	उपमा	सूजी प्याज तेल	30 10 5	1 1	1 प्लेट
8.	हलुआ	आटा/सूजी/बेसन घी शक्कर	30 20 30	1 4 6	1 प्लेट
9.	सादे चावल	चावल घी	30 इच्छानुसार	1 –	1/2 प्लेट
10.	पुलाव	चावल आलू, प्याज, मटर तेल	30 50 5	1 1/2 1	1 प्लेट
11.	मीठे चावल	चावल घी शक्कर	30 5 10	1 1 2	1/2 प्लेट
12.	पोहा	पोहा	30	1	1 प्लेट

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

		आलू, प्याज तेल	25 5	1/4 1	
13.	इडली उड़द	चावल दाल	30 10	1 1/3	4 छोटी
14.	खिचड़ी	चावल दाल घी	20 10 इच्छानुसार	2/3 1/3	1 प्लेट
15.	सादी दाल (कोई भी)	दाल घी/तेल	30 5	1 1	1 कटोरी
16.	राजमा/छोले	राजमा प्याज, टमाटर तेल	30 25 5	1 1/4 1	1 कटोरी
17.	दाल पालक	मूँग/दाल पालक तेल	20 25 5	2/3 1/4 1	1 कटोरी
18.	सांभर	अरहर दाल सब्जियां (लौकी, ग्वारफली बैंगन, आलू, प्याज टमाटर) तेल	10 45 5	1/2 1/2 1	1 कटोरी
19.	पकौड़े	बेसन आलू, प्याज या अन्य सब्जियां तेल	40 40 तलने के लिये	1½ 1/2 –	1 प्लेट
20.	आलू बड़ा	बेसन आलू तेल	20 25 तलने के लिये	2/3 1/4 –	2
21.	दही बड़ा	उड़द दाल मूँग दाल 5 – दही तेल	25 50 तलने के लिये	1 1/2 –	2
22.	लड्डू	आटा/बेसन घी शक्कर	30 15 20	1 3 4	2
23.	दूध	दूध शक्कर	200 5	2 1	1 गिलास/ 2 कप

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

24.	चाय/कॉफी	दूध शक्कर	50 5	1/2 1	1 कप
25.	खीर	दूध चावल शक्कर	250 10 10	2½ 1/3 2	1 कटोरी
26.	सेंवई खीर	दूध सेंवई शक्कर	150 5 10	1½ – 2	1 कटोरी
27.	कस्टर्ड	दूध शक्कर फल कस्टर्ड पाउडर	100 10 25 5	1 2 1/4 –	1 कटोरी
28.	दही	दही	100	1	1 कटोरी
29.	रायता	दही सब्जियां/फल	50 25	1/2 1/4	1 कटोरी
30.	बून्दी रायता	दही बून्दी	50 10	1/2 –	3/4 कटोरी
31.	सूखी सब्जी	भिण्डी/आलू/अरवी कद्दू/बैंगन आदि तेल	75 5	3/4 1	3/4 कटोरी
32.	रसे वाली सब्जी	आलू टमाटर तेल	50 25 5	1/2 1/4 1	1 कटोरी
33.	रसे वाली सब्जी	लौकी/तुरई तेल	100 5	1 1	1 कटोरी
34.	फल	मध्यम आकार का फल–सेब/अमरूद/ केला/संतरा	100	1	1
35.	फलों की चाट	मिश्रित फल शक्कर	100 5	1 1	1 प्लेट
36.	फलों का रस	संतरे/मौसमी/फल टमाटर	400	4	1 गिलास
37.	उबला अण्डा	अण्डा	50	1	1

उक्त तालिका में विविध व्यंजनों के लिये दी गई भोज्य पदार्थों की मात्रा में परिवर्तन किये जा सकते हैं। व्यंजनों में प्रयुक्त घी/तेल या गुड़/शक्कर आदि की मात्रा इच्छानुसार/आवश्यकतानुसार ली जा सकती है। तालिका में दी गई फल–सब्जियों की मात्रा में इनके छिलके, बीज आदि सम्मिलित नहीं हैं। फल–सब्जियों की यह मात्रा खाने योग्य भाग के लिये दी गई है। उदाहरण के लिये यदि आप बाजार से 1/2 किलो

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

पालक खरीद कर लाते हैं तो सब्जी बनाने के लिये पालक साफ करने के बाद लगभग आधा यानी कि 250-300 ग्राम ही बचता है। तालिका में विविध व्यंजनों के लिये प्रयुक्त कटोरी एक मध्यम आकार की है जिसकी गहराई लगभग 4 से.मी. व व्यास 8से.मी. है। विविध व्यंजनों के लिये तालिका में प्रयुक्त प्लेट एक मध्यम आकार की प्लेट है जिसका व्यास लगभग6 इंचहै ए कक पच ाय/कॉफी,1 ि गलासद ूधय ा1 क टोरी दाल/खीर आदि से अभिप्राय घरों में आम तौर पर परोसी जाने वाली उस मात्रा से है जिसमें दाल, सब्जी या दूध छलकता या गिरता नहीं है बल्कि भोज्य पदार्थों की मात्रा कप, गिलास व कटोरी की किनारी से कुछ कम होती है।

अध्यापक छात्रों की सहायता से उपरोक्त व्यंजनों का प्रदर्शन देवें तथा उनको कच्चे भोज्य पदार्थों की सन्दर्भ इकाई से तैयार व्यंजन की तैयार परोस मात्रा का अनुभव देवें। उपरोक्त दोनों ही प्रयोग छात्राओं को विभिन्न अवस्थाओं में आहार आयोजन करने में सहायता देंगे।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–5

बाल्यावस्था में आहार आयोजन

शैशवावस्था के बाद बाल्यावस्था के दौरान शारीरिक वृद्धि एवं विकास की दर धीमी व स्थिर हो जाती है। इस अवस्था में शारीरिक, गयात्मक, मानसिक व बौद्धिक विकास की गति तीव्र होती है। बच्चे अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति, चपलता एवं खेलों में अत्यधिक रुचि के कारण भोजन पर बहुत कम ध्यान देते हैं किन्तु इनकी वृद्धि व विकास की दर को बनाये रखने एवं कुपोषण से बचाने हेतु उन्हें सन्तुलित भोजन देना आवश्यक है।

तालिका 5.1 : बाल्यावस्था के लिये सन्तुलित आहार (भोज्य इकाइयां)

भोज्य समूह	ग्राम/सन्दर्भ इकाई	1-3 वर्ष	4-6 वर्ष	7-9 वर्ष	0-12 वर्ष	
					बालक	बालिका
अनाज	30	4	7	9	11	9
दालें	30	1	1.5	2	2	2
दूध (मि.लि.)	100	5	5	5	5	5
कंदमूल	100	0.5	1	1	1	1
हरी पत्तेदार सब्जियां	100	0.5	0.5	1	1	1
अन्य सब्जियां	100	0.5	0.5	1	1	1
फल	100	1	1	1	1	1
शक्कर	5	5	6	6	7	6
घी/तेल	5	4	5	5	5	5

नोट : मांसाहारी बालकों को दाल की एक इकाई (30 ग्राम) के बदले में अण्डा/मांस/मछली की एक इकाई (50 ग्राम) दे सकते हैं।

उक्त तालिका के आधार पर एक 3 वर्षीय पूर्व विद्यालयी तथा 9 वर्षीय विद्यालयी बालक के लिये एक दिन की आहार व्यवस्था तालिका **5.1** से **5.2** तक में दी जा रही है।

तालिका 5.2 : तीन वर्षीय पूर्व विद्यालयी बालक के लिये एक दिन का आहार आयोजन

भोजन का समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह 8.00 बजे	दूध	1 प्याला	दूध शक्कर	100 5	1 1
नाश्ता 9.00 बजे	पोहे	1 प्लेट	पोहे (अनाज) आलू, प्याज (कंदमूल) तेल	30 10 2.5	1 – ½
दोपहर का भोजन 12.30 बजे	भरवां पराँठा रायता	2 1 कटोरी	गेहूँ का आटा (अनाज) पालक (हरी पत्तेदार सब्जियां) मूँग दाल (दाल) तेल दही (दूध) आलू (कंदमूल)	45 50 15 7.5 100 25	1½ ½ ½ 1½ 1 ¼
दोपहर के बाद 3.00 बजे	फलों की चाट	½ प्लेट	सेब, केला, अंगूर, नीबू (फल)	75	¾

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1	2	3	4	5	6
शाम की चाय 5.00 बजे	बिस्कुट केले का शेक	2 ½ गिलास	गेहूँ का आटा (अनाज) घी शक्कर दूध केला (फल) शक्कर	15 5 5 100 25 5	½ 1 1 1 ¼ 1
रात्रि का भोजन 7.30 बजे	चावल दाल सलाद मिठाई	½ प्लेट 1 कटोरी ½ प्लेट 1 टुकड़ा	चावल (अनाज) मसूर (दाल) घी गाजर (कंदमूल) खीरा मावा (दूध) नारियल बूरा शक्कर	30 30 5 25 25 25 5 5	1 1 1 ¼ ¼ 1 – 1
रात्रि सोने से पूर्व 8.30 बजे	दूध	1 प्याला	दूध शक्कर	100 5	1 1

तालिका 5.3 : दिन के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य समूह	सुबह 8.00 बजे	नाश्ता 9.00 बजे	दोपहर का भोजन 12.30 बजे	दोपहर के बाद 3.00 बजे	शाम की चाय 5.00 बजे	रात्रि का भोजन 7.30 बजे	रात्रि सोने से पूर्व 8.30 बजे	कुल योग
अनाज	–	1	1½	–	½	1	–	4
दालें	–	–	½	–	–	1	–	1½
दूध	1	–	1	–	1	1	1	5
कंदमूल	–	–	¼	–	–	¼	–	½
हरी पत्तेदार सब्जियां	–	–	½	–	–	–	–	½
अन्य सब्जियां	–	–	–	–	–	¼	–	¼
फल	–	–	–	¾	¼	–	–	1
शक्कर	1	–	–	–	1+1	1	1	5
घी/तेल	–	½	1½	–	1	1	–	4

तालिका 5.4 : नौ वर्षीय पूर्व विद्यालयी बालक के लिये एक दिन का आहार आयोजन।

भोजन का समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
नाश्ता 7.00 बजे	दूध उपमा	1 गिलास 1 प्लेट	दूध शक्कर सूजी (अनाज) गाजर, प्याज (कंदमूल) तेल	200 5 45 10 2.5	2 1 1½ – ½

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1	2	3	4	5	6
टिफिन 11.00 बजे	बथुए का परांठा गाजर मटर की सब्जी खोए की मिठाई	2 1 कटोरी 1 टुकड़ा	गेहूँ का आटा (अनाज) बथुआ (हरी पत्तेदार सब्जियां) तेल गाजर (कंदमूल) मटर (अन्य सब्जियां) तेल मावा (दूध) शक्कर नारियल बूरा	60 50 5 50 25 2.5 25 5 5	2 ½ 1 ½ ¼ ½ 1 1 –
दोपहर का भोजन 2.00 बजे	चपाती चावल दाल भिण्डी की सब्जी रायता	2 ½ प्लेट 1 कटोरी ½ कटोरी 1 कटोरी	गेहूँ का आटा (अनाज) घी चावल (अनाज) तुअर (दाल) घी भिण्डी (अन्य सब्जियां) तेल दही (दूध) पालक (हरी पत्तेदार सब्जियां)	60 2.5 30 30 2.5 50 2.5 50 25	2 ½ 1 1 ½ ½ ½ ½ ¼
शाम की चाय 6.00 बजे	भेल पूरी फलों का रस	1 प्लेट ½ गिलास	चावल के मुरमुरे (अनाज) आलू, प्याज (कंदमूल) टमाटर (फल) अन्नास (फल)	15 25 25 200	½ ¼ ¼ 2
रात्रि का भोजन	बाटी दाल चूरमे का लड्डू सलाद हरे धनिए की चटनी	2 1 कटोरी 1 लड्डू ½ प्लेट 1 बड़ा चम्मच	गेहूँ का आटा (अनाज) घी उड़द, चना, मूँग (दाल) घी गेहूँ का आटा (अनाज) शक्कर घी चुकन्दर (कंदमूल) खीरा (अन्य सब्जियां) हरा धनिया, पुदीना (हरी पत्तेदार सब्जियां)	60 5 30 2.5 15 10 7.5 25 50 25	2 1 1 ½ ½ 2 1½ ¼ ½ ¼
रात्रि सोते समय 10.00 बजे	दूध	¾ गिलास	दूध शक्कर	150 5	1½ 1

नोट : मसाले, हरी मिर्च, हरा धनिया, अदरक, लहसुन आदि का प्रयोग कम मात्रा में किया जाता है। अत: उपरोक्त तालिकाओं में इनका उल्लेख नहीं किया गया है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 5.6 : दिन के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य	नाश्ता	टिफिन	दोपहर का भोजन	शाम की चाय	रात्रि का भोजन	रात्रि सोने से पूर्व	कुल योग
अनाज	1½	2	2+1	½	2+½	–	9½
दालें	–	–	1	–	1	–	2
दूध	2	1	½	–	–	1½	5
कंदमूल	–	½	–	¼	¼	–	1
हरी पत्तेदार सब्जियां	–	½	¼	–	¼	–	1
अन्य सब्जियां	–	¼	½	–	½	–	1¼
फल	–	–	–	¼+2	–	–	2¼
शक्कर	1	1	–	–	2	1	5
घी/तेल	½	1+½	½+½+½	–	1+½+½	–	6½

उपरोक्त दी गई आहार तालिकाओं की सहायता से अन्य उम्र व लिंग के लिये आहार बनायें।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–6

किशोरावस्था में आहार आयोजन

शैशवावस्था के बाद किशोरावस्था ही तीव्र शारीरिक वृद्धि एवं विकास की अवस्था है जिसके दौरान किशोर–किशोरियों की भोजन एवं पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएं बढ़ जाती है। इसके साथ–साथ किशोरवय में तीव्र संवेगात्मक परिवर्तन भी होते हैं जिनके साथ किशोरों को सामंजस्य बिठाना होता है। किशोर–किशोरी के लिये सन्तुलित आहार तालिका 6.1 में दिया गया है। एक 17–18 वर्षीय किशोर के लिये एक दिन की आहार आयोजना तालिका 6.2 में दी गई है तथा दिनभर के भोजन में इकाइयों का विभाजन व कुल इकाइयां तालिका 6.3 में दी गई हैं।

तालिका 6.1 : किशोरावस्था के लिये सन्तुलित आहार (भोज्य इकाइयां)

भोज्य समूह	ग्राम/संदर्भ इकाई	13–18 वर्ष	
		बालक	बालिका
अनाज	30	14	10
दालें	30	2	2
दूध (मि.लि.)	100	5	5
कंदमूल	100	2	1
हरी पत्तेदार सब्जियां	100	1	1
अन्य सब्जियां	100	1	1
फल	100	1	1
शक्कर	5	7	6
घी/तेल	5	5	5

नोट :- मांसाहारी किशोर/किशोरी 1 इकाई (30 ग्राम) दाल की जगह 1 इकाई (50 ग्राम) मांस/मछली/अण्डे का उपभोग कर सकते हैं।

तालिका 6.2 : 17–18 वर्षीय किशोर के लिये एक दिन की आहार आयोजना

भोजन/ समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह का	दूध	1 गिलास	दूध	200	2
नाश्ता			शक्कर	10	2
8–8.30	सैण्डविच	4	ब्रेड–4 बड़ी (अनाज)	100	3
बजे			आलू (कंदमूल)	75	3/4

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

			मटर हरे (अन्य सब्जी)	50	1
			तेल	5	1
दोपहर का भोजन	चपाती	3	गेहूँ का आटा (अनाज)	90	3
			घी	2.5	1/2
	चावल	1 प्लेट	चावल	60	2
	राजमा	1 कटोरी	राजमा (दाल)	30	1
			टमाटर (फल)	25	1/4
			प्याज (कंदमूल)	25	1/4
			तेल	5	1
	भिण्डी की सब्जी	1/2 कटोरी	भिण्डी (अन्य सब्जी)	75	3/4
			तेल	2.5	1/2
	कद्दू का रायता	1 कटोरी	दही (दूध)	50	1/2
		कद्दू (अन्य सब्जी)	25 1/4		
शाम की चाय 5-5.30 बजे	चाय	1 कप	दूध	50	1/2
			शक्कर	5	1
	बेसन के चीले	2	बेसन (दाल)	30	1
			तेल	2.5	1/2
	फ्रूट चाट	1 कटोरी	सेब, पपीता, अंगूर केला (फल)	100	1
			शक्कर	7.5	1½
रात्रि का भोजन 8-8.30 बजे	चपाती	5	गेहूँ का आटा (अनाज)	150	5
			घी	5	1
	पालक पनीर की सब्जी	1 कटोरी	पालक (हरी पत्तेदार सब्जी)	100	1
			पनीर (दूध)	25	1
			टमाटर (फल)	25	¼
			प्याज (कंदमूल)	25	¼
			तेल	2.5	½
	सैंवई खीर	¾ कटोरी	दूध	100	1
			सैंवई	5	-
			शक्कर	7.5	1½
	सलाद	1 प्लेट मूली,	गाजर (कंदमूल)	50	½

नोट : मसाले, हरी मिर्च, हरा धनिया, अदरक, लहसुन आदि का प्रयोग कम मात्रा में किया जाता है अत: उपरोक्त तालिका में इनका उल्लेख नहीं

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 6.3 : दिनभर के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य समूह	नाश्ता	दोपहर का भोजन	शाम की चाय	रात्रि का भोजन	कुल इकाइयां
अनाज	3	3+2	–	5	13
दालें	–	1	1	–	2
दूध	2	½	½	1+1	5
कंदमूल	¾	¼	–	¼+½	1¾
हरी पत्तेदार सब्जियां	–	–	–	1	1
अन्य सब्जियां	½	¾+¼	–	–	1½
फल	–	¼	1	1/4	1½
शक्कर/गुड़	2	–	1+1½	1½	6
घी/तेल	1	½+1+½	½	1+½	5

उपरोक्त आहार में विभिन्न भोज्य समूहों की इकाइयों का प्रस्तावित मात्रा में समावेश किया गया है (तालिका .5)। उक्त आहार व्यवस्था के आधार पर अन्य किशोर वर्गों के लिए आहार आयोजन में किशोर की आयु व लिंग के अनुसार परिवर्तन किये जा सकते हैं। किशोर विशेष के लिये उक्त आहार नियत नहीं है। इसमें परिवर्तन अपरिहार्य है। उदाहरण के लिये तालिका .4 में 17–18वर्ष के एक किशोर बालक के लिए एक दिन का आहार आयोजन दिया गया है। एक किशोर अपने दिन–प्रतिदिन के आहार में निम्न सुझावों के आधार पर परिवर्तन कर विविधता ला सकता है।

1. कम उम्र के किशोर–किशोरियों (13–15 वर्ष) की आहार व्यवस्था के लिये दोपहर व रात्रि के भोजन में दी जाने वाली चपातियों की संख्या कम कर सकते हैं या नाश्ते में दिये जाने वाले व्यंजनों की मात्रा कुछ कम कर सकते हैं। लेकिन अन्य व्यवस्था लगभग समान ही रहेगी क्योंकि सन्तुलित आहार तालिका के अनुसार उम्र व लिंग के कारण केवल अनाज की उपभोग इकाइयों में ही विशेष परिवर्तन है, अन्य भोज्य इकाइयों में नहीं।
2. कॉलेज, टिफिन लेकर जाने वाले किशोर नाश्ते की मात्रा में कमी कर सकते हैं या फिर दिन का भोजन हल्का ले सकते हैं।
3. ऐसे किशोर जिनकी खुराक कम हो और वे 3–4 चपाती एक समय में न खा सकें तो वे मुख्य आहारों के मध्य बिस्किट, टोस्ट, मक्की या चावल के फुल्ले आदि जलपान (स्नैक्स) लेकर इसकी पूर्ति कर सकते हैं।
4. सुबह एवं शाम के नाश्ते में सैण्डविच के अतिरिक्त बर्गर, नूडल्स, चाउमिन, भरवां पराँठा, पौष्टिक उपमा या दलिया, कचौड़ी चाट, मूँग चाट, इडली, डोसा, उत्तपम, फ्रूट चाट आदि ले सकते हैं।
5. दालों को विविध रूप से जैसे–साबुत दालों को अंकुरित करके चाट बनाकर, पकौड़े, लड्डू, पराँठों के भरावन के रूप में, पापड़, हलुआ आदि बनाकर काम में ले सकते हैं।
6. दिनभर में कम से कम एक बार हरी पत्तेदार सब्जियों का उपयोग अवश्य करें। हरी पत्तेदार सब्जियों को विविध व्यंजनों में भरावन के रूप में, रायते के रूप में या चटनी इत्यादि के रूप में काम में ले सकते हैं।
7. दोपहर व रात्रि के भोजन में रोटी, सब्जी व दाल–चावल के अतिरिक्त दाल–बाटी, कढ़ी–चावल, मक्की की रोटी व सरसों का साग, इडली, डोसा व सांभर आदि मेनू भी आयोजित कर सकते हैं।
8. दिनभर में तले–भुने एवं गरिष्ठ भोज्य पदार्थ एक बार में अधिक न लेवें अन्यथा वसा की मात्रा बहुत अधिक हो जायेगी तथा कील–मुँहासे व मोटापे की सम्भावनाएं भी बढ़ जायेगी।
9. भोज्य पदार्थों के चुनाव में आय का विशेष ध्यान रखना चाहिये तथा आहार व्यवस्था अपने घर की आय के अनुरूप होनी चाहिये।
10. किशोर–किशोरियों के लिये आहार आयोजन करते समय उनकी रुचि का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–7

वयस्कावस्था में आहार आयोजन

युवावस्था में दैनिक आहार व्यवस्था लिंग, व्यवसाय, शारीरिक श्रम, आय, जलवायु/मौसम एवं व्यक्तिगत पसन्द व आदतों आदि द्वारा प्रभावित होती है। पुरुषों को स्त्रियों की अपेक्षा अधिक भोजन की आवश्यकता होती है। मौसम भी प्रभावित करता है।

व्यवसाय एवं श्रम परस्पर विरोधी कारक हैं। ज्यों–ज्यों व्यक्ति का शारीरिक श्रम बढ़ता जाता है त्यों–त्यों उसका व्यावसायिक स्तर गिरता जाता है, तदनुरूप उसकी आमदनी या आय भी कम होती जाती है। हल्के–फुल्के श्रम वाले व्यवसाय तथा सफेदपोश नौकरी वाले व्यक्तियों की आय, भारी–भरकम श्रम करने वाले मजदूरों से बहुत अधिक होती है। श्रम व लिंग के आधार पर युवा वर्ग के लिये सन्तुलित आहार तालिका में दिया गया है।

तालिका 7.1 वयस्कावस्था के लिये सन्तुलित (भोज्य इकाइयां, NIN, 2010)*

भोज्य समूह	ग्राम/सन्दर्भ इकाई	भोज्य पदार्थों की मात्रा (ग्रा.)					
		कम क्रियाशील		मध्यम क्रियाशील		अधिक क्रियाशील	
		पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
अनाज	30	12.5	9	15	11	20	16
दालें	30	2.5	2	3	2.5	4	3
दूध (मि.लि.)	100	3	3	3	3	3	3
कंदमूल	100	2	2	2	2	2	2
हरी पत्तेदार सब्जियां	100	1	1	1	1	1	1
अन्य सब्जियां	100	2	2	2	2	2	2
फल	100	1	1	1	1	1	1
शक्कर	5	4	4	6	6	11	9
घी/तेल	5	5	4	6	5	8	6

नोट : मांसाहारी व्यक्ति एक इकाई दाल (30 ग्राम) की जगह 1 इकाई अंडा/मांस/मछली 50 (ग्राम) का उपभोग भी कर सकते हैं।

तालिका में उच्च आय वर्ग वाले व्यक्ति के लिये महँगे व्यंजन जैसे–ठण्डाई, पालक पनीर, कटलेट्स आदि का चयन किया गया है, जबकि निम्न वर्ग के लिए छाछ, चने की दाल, पालक एवं गुड़–चने का चबैना जैसे–व्यंजन सम्मिलित किये गये हैं जो कि समान रूप से पौष्टिक हैं और सस्ते भी हैं।

तालिका 7.2 : विभिन्न आय वर्ग एवं श्रम करने वाले पुरुषों का तुलनात्मक आहार

भोजन	उच्च आय वर्ग कम श्रम	मध्यम आय वर्ग मध्यम श्रम	निम्न आय वर्ग अधिक श्रम
सुबह की चाय	चाय –	चाय टोस्ट	चाय –
नाश्ता	ब्रेड पोहा –	अंकुरित मूँग का पराँठा –	मिस्सी रोटी लहसुन की चटनी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

	ठण्डाइ –	दूध मौसमी फल	छाछ –
दोपहर का भोजन	चपाती/नान शाही पुलाव दाल मक्खनी बेक्ड शिमला मिर्च श्रीखण्ड –	चपाती चावल दाल बेक्ड टमाटर/अन्य मौसमी सब्जियां बथुए का रायता –	मोटे अनाज-बाजरे/मक्की की रोटी – कढ़ी आलू, बैंगन की सब्जी – सलाद
भोजन के बाद	–	–	चाय
शाम की चाय	– कटलेट – संतरे का रस	– सैण्डविच मूँगफली की चिक्की नीबू की शिकंजी	चाय – गुड़-चना मौसमी फल
रात्रि का भोजन	चपाती पालक पनीर की सब्जी नवरत्न कोरमा पापड़ फ्रूट सलाद	चपाती मूँग-दाल-पालक आलू, पत्तागोभी की सब्जी सलाद सेंवई की खीर	मक्के की रोटी/बाजरा/गेहूँ चना-दाल-पालक – – राब

तालिका 7.3 कम श्रम वाले उच्च आय वर्गीय पुरुष के लिये एक दिन का आहार आयोजन

भोजन/का समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह की चाय 7.00 बजे	चाय	1 प्याला	दूध शक्कर	50 5	½ 1
नाश्ता 8-8.30	ब्रेड पोहा	1 प्लेट	ब्रेड 4 बड़ी (अनाज) आलू, प्याज (कंदमूल) शक्कर	90 25 7.5	3 ¼ 1½
दोपहर का भोजन 1-1.30 बजे	चपाती/नान	3 (अनाज)	गेहूं का आटा/मैदा घी	90 2.5	3 ½
	शाही पुलाव	1 प्लेट	चावल (अनाज) काजू, किशमिश, चेरी, मटर तेल	50 15 2.5	1½ – ½
	दाल मक्खनी	1 कटोरी	राजमा, उड़द/मूँग (दाल) टमाटर (फल) प्याज (कंदमूल) मक्खन (घी)	30 15 25 2.5	1 – ¼ 1
	बेक्ड शिमला मिर्च	2	शिमला मिर्च (अन्य सब्जी) आलू, प्याज (कंदमूल) तेल	50 50 2.5	½ ½ ½
	श्रीखण्ड	¼ कटोरी	दही (दूध) शक्कर	100 10	1 2

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

शाम की चाय 5–5.30 बजे	संतरे का रस कटलेट	½ गिलास 2	संतरे (फल) पोहा (अनाज) आलू (कंदमूल) तेल	200 30 25 2.5	2 1 ¼ ½
	मूँग दाल (भुनी हुई)	1 कटोरी	मूँग दाल	30	1
रात्रि का भोजन 8–8.30 बजे	टमाटर का सूप चपाती	1 प्याला 4	टमाटर (फल) गेहूँ का आटा (अनाज) घी	100 120 5	1 4 1
	पालक पनीर की सब्जी	1 कटोरी	पालक (हरी पत्तेदार सब्जी) पनीर (दूध) तेल	100 25 2.5	1 1 ½
	नवरत्न कोरमा	1 कटोरी	गाजर (कंदमूल) हरे मटर फूलगोभी, शिमला मिर्च (अन्य सब्जियां) तेल	25 100 2.5	¼ 1 ½
	पापड़	1 बड़ा	मूंग (दाल)	15	½
	फ्रूट सलाद	½ प्लेट	सेब, केला, पपीता, अनार, चीकू, अंगूर	100	1

तालिका 7.4 दिनभर के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य	सुबह की चाय	नाश्ता	दोपहर का भोजन	शाम की चाय	रात्रि भोजन	कुल योग
अनाज	–	3	3+1½	1	4	12½
दालें	–	–	1	1	½	2½
दूध	½	¼+1	1	–	1	3¾
कंदमूल	–	¼	¼+½	¼	¼	1½
हरी पत्तेदार सब्जियां	–	–	–	–	1	1
अन्य सब्जियां	–	–	½	–	1	1½
फल	–	–	–	2	1+1	4
शक्कर	1	1½	2	–	–	4½
घी/तेल	–	½	½+½+½+½	½	1+½+½	5

तालिका 7.5 मध्यम श्रेणी का श्रम करने वाले मध्यम आय वर्गीय पुरुष के लिये एक दिन का आहार आयोजन

भोजन का समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह की चाय 7.00 बजे	चाय टोस्ट	1 प्याला 2	दूध शक्कर मैदा (अनाज)	50 5 45	½ 1 1½
नाश्ता 8.00 बजे	अंकुरित मूँग का पराँठा	2	गेहूँ का आटा (अनाज) साबुत मूँग (दाल) तेल	60 15 5	2 ½ 1

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

	दूध	1 प्याला	दूध	100	1
			शक्कर	5	1
	मौसमी फल	1 मध्यम	अमरूद (फल)	100	1
दोपहर का भोजन 1.00 बजे	चपाती	4	गेहूँ का आटा (अनाज)	120	4
			घी	5	1
	चावल	½ प्लेट	चावल (अनाज)	30	1
			घी	2.5	½
	दाल	1½ कटोरी	साबुत मसूर (दाल)	45	1½
			घी	5	1
	बेक्ड टमाटर	2	टमाटर (फल)	50	½
			आलू, अदरक (कंदमूल)	50	½
			तेल	2.5	½
	बथुए का रायता	1 कटोरी	दही (दूध)	50	½
			बथुआ (हरी पत्तेदार सब्जी)	25	¼
शाम की चाय 5.00 बजे	नीबू शिकंजी	1 गिलास	नीबू (फल)	20	–
			शक्कर	5	1
	सैण्डविच	2 बड़ी	ब्रेड (अनाज)	50	1½
			खीरा (अन्य सब्जियां)	50	½
			टमाटर (फल)	25	¼
	मूँगफली चिक्की	1 टुकड़ा	मूँगफली	10	–
			गुड़ (शक्कर)	10	2
रात्रि का भोजन 8.00 बजे	चपाती	5	गेहूँ का आटा (अनाज)	150	5
			घी	5	1
	दाल पालक	1 कटोरी	मूँग (दाल)	15	½
			पालक (हरी पत्तेदार सब्जी)	25	¼
			घी	5	1
	आलू पत्तागोभी सब्जी	½ कटोरी	आलू (कंदमूल)	50	½
			पत्तागोभी (हरी पत्तेदार सब्जी)	50	½
			तेल	2.5	½
	सलाद	1 प्लेट	गाजर, मूली (कंदमूल)	50	½
			ककड़ी (अन्य सब्जी)	100	1
	सेंवई खीर	1 कटोरी	सेंवई (अनाज)	10	–
			दूध	150	1½
			शक्कर	10	2

तालिका 7.6 : दिनभर के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य	सुबह की चाय	नाश्ता	दोपहर का भोजन	शाम की चाय	रात्रि भोजन	कुल योग
अनाज	1½	2	4+1	1½	5	15
दालें	–	½	1½	–	½	2½
दूध	½	1	½	–	1½	3½
कंदमूल	–	–	½	–	½+½	1½
हरी पत्तेदार सब्जियां	–	–	¼	–	¼+½	1
अन्य सब्जियां	–	–	–	½	1	1½
फल	–	1	½	¼	–	1¾
शक्कर	1	1	–	1+2	2	7
घी/तेल	–	1	1+½+1+½	–	1+1+½	6½

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 7.7: अधिक श्रम करने वाले निम्न आय वर्गीय पुरुष के लिये एक दिन का आहार आयोजन

भोजन का समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह की चाय 6-6.30 बजे	चाय	1 प्याला	दूध	25	¼
			शक्कर	7.5	1½
नाश्ता 7.30-8.00 बजे	मिस्सी रोटी	3	गेहूँ एवं जौ का आटा (अनाज)	120	4
			बेसन (दाल)	60	2
			मूली (कंदमूल)	15	-
			पालक/मेथी/बथुआ/चने के पत्ते (हरी पत्तेदार सब्जी)	50	½
			वनस्पति घी	10	2
	लहसुन की चटनी	2 बड़े चम्मच	लहसुन, प्याज (कंदमूल)	25	¼
			तेल	5	1
	छाछ	1 गिलास	छाछ (दूध)	50	½
दोपहर का भोजन 1-1.30 बजे	बाजरे की रोटी	5	बाजरा (अनाज)	240	8
			वनस्पति घी	10	2
	कढ़ी	1½ कटोरी	छाछ (दूध)	300	¾
			बेसन (दाल)	15	½
			तेल	5	1
	आलू बैंगन की सब्जी	1 कटोरी	आलू (कंदमूल)	50	½
			बैंगन (अन्य सब्जियां)	200	2
			तेल	5	1
	सलाद	1 प्लेट	गाजर (कंदमूल)	50	½
दोपहर भोजन के बाद 3 बजे	चाय	1 प्याला	दूध	25	¼
			शक्कर	7.5	1½
शाम की चाय	चाय	1 प्याला	दूध	25	¼
			शक्कर	7.5	1½
	गुड़ चना	1 कटोरी	गुड़ (शक्कर)	30	6
			भुने चने (दाल)	30	1
	मौसमी फल	1	केला (फल)	100	1
रात का भोजन 8-8.30 बजे	मक्के की रोटी	4	मक्के का आटा (अनाज)	210	7
			वनस्पति घी	5	1
	दाल पालक	1 कटोरी	चना (दाल)	15	½
			पालक (हरी पत्तेदार सब्जी)	50	½
			तेल	5	1
	राब	1½ कटोरी	छाछ (दूध)	300	¾
			मक्की का दलिया (अनाज)	30	1

नोट : मसाले, हरी मिर्च, हरा धनिया, अदरक, लहसुन आदि का प्रयोग कम मात्रा में किया जाता है अत: उपरोक्त तालिकाओं में इनका उल्लेख नहीं किया गया है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 7.8 : दिनभर के भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य	सुबह की चाय	नाश्ता	दोपहर का भोजन	दोपहर भोजन के बाद	शाम की चाय	रात्रि भोजन	कुल योग
अनाज	–	4	8	–	–	7+1	20
दालें	–	2	½	–	1	½	4
दूध	¼	½	¾	¼	¼	¾	2¾
कंदमूल	–	½	½+½	–	–	–	1¼
हरी पत्तेदार सब्जियां	–	½	–	–	–	½	1
अन्य सब्जियां	–	–	2	–	–	–	2
फल	–	–	–	–	1	–	1
शक्कर	1½	–	–	1½	1½+6	–	10½
घी/तेल	–	2+1	2+1+1	–	–	1+1	9

उपरोक्त तीनों ही आहार तालिकाओं में भोज्य पदार्थों की इकाइयों का लगभग निर्धारित मात्रा में समावेश किया गया है। प्रस्तावित इकाइयों की संख्या में थोड़ी कमी या अधिकता दिन-प्रतिदिन के आहार में चयन किये गये व्यंजन के प्रकार के कारण है, ऐसे आहारों को हम सन्तुलित ही कहेंगे।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–8

वृद्धावस्था में आहार आयोजन

जीवन चक्र की अन्य अवस्थाओं की भांति इस अवस्था में भी आहार आयोजन बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस अवस्था में शारीरिक क्रियाशीलता को बनाए रखने और शरीर को स्वस्थ रखने के लिए सभी भोज्य समूहों में से विविध भोज्य पदार्थों का आहार में पर्याप्त मात्रा में चयन तालिका के अनुसार किया जाना चाहिये।

तालिका 8.1 : वृद्ध पुरुष व महिला के लिये सन्तुलित आहार (भोज्य इकाइयाँ; NIN 2010)*

भोज्य समूह	ग्राम/सन्दर्भ इकाई	पुरुष	महिला
अनाज	30	9.5	7
दालें	30	2.5	2
दूध (मि.लि.)	100	3	3
कंद मूल	100	2	2
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	100	1	1
अन्य सब्जियाँ	100	2	2
फल	100	2	2
शक्कर	5	4	4
घी/तेल	5	5	4

नोट : मांसाहारी वृद्ध; दाल की एक इकाई (30 ग्राम) के बदले अंडा/मांस/मछली की एक इकाई (50 ग्राम) ले सकते हैं।* नमूने के तौर पर एक वृद्ध पुरुष के लिये एक दिन का आहार आयोजन तालिका– में दिया जा रहा है। वृद्ध व्यक्ति की शारीरिक एवं पौषणिक समस्याओं के आधार पर उसके आहार में परिवर्तन किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिये यदि वृद्ध मधुमेह से पीड़ित है तो उसके आहार में शक्कर व शर्करायुक्त भोज्य पदार्थों का समावेश कम–से–कम किया जाये। यदि वृद्ध के दाँत गिर चुके हैं तो उसे अर्द्ध ठोस व तरल भोज्य दिये जायें।

तालिका 8.2 : वृद्ध पुरुष का एक दिन का आहार आयोजन

भोज्य समय	मेन्यू व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्राम/मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह की चाय 6.00 बजे	चाय बिस्कुट (नमकीन)	1 प्याला 4	दूध शक्कर गेहूँ का आटा	50 5 15	½ 1 ½
नाश्ता 8.00 बजे	दूध– कार्न फ्लेक्स	1 कप ½ कटोरी	दूध कार्न फ्लेक्स (अनाज)	100 30	1 1

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

			शक्कर	5	1
	उपमा	1 प्लेट	प्लेट सूजी	30	1
			प्याज गाजर	25	½
			तेल	5	1
मध्यकालीन नाश्ता 10.00 बजे	पपीता	1 प्लेट	पपीता	100	1
दोपहर का भोजन 1.30 बजे	चपाती	2	गेहूँ का आटा (अनाज)	60	2
			घी	2.5	½
	चावल	1 प्लेट	चावल (अनाज)	30	1
	मसूर दाल	1 कटोरी	दाल	30	1
			घी	2.5	½
	पालक, आलू टमाटर की सब्जी	1 कटोरी	पालक	100	1
			आलू	50	1
			टमाटर	50	½
			तेल	5	1
शाम की चाय 5.00 बजे	ऐपल शेक	1 गिलास	सेब (फल)	100	1
			दूध	100	1
			शक्कर	5	1
	भेल पूरी	1 प्लेट	मुरमुरे (अनाज)	30	1
			नमकीन (दाल)	10	–
			आलू प्याज (कंद मूल)	25	½
			दही (दूध)	50	½
रात्रि भोजन से पूर्व सूप 7.00 बजे	लोकी का सूप	1 गिलास	लोकी (अन्य सब्जी)	100	1
रात्रि भोजन 8.00 बजे	चपाती	2	गेहूँ का आटा (अनाज)	60	2
			घी	2.5	½
	दलिया (नमकीन)	1 कटोरी	दलिया (अनाज)	30	1
			मूँग छिलका (दाल)	15	½
			घी	2.5	½
	मटर आलू की सब्जी	1 कटोरी	मटर	100	1
			आलू	50	½
			तेल	5	1
	पापड़	1 बड़ा	मूँग दाल	15	½
रात्रि सोने से पूर्व 9.00 बजे	दूध	1 कप	दूध	100	1
			शक्कर	5	1

नोट : मसाले, हरी मिर्च, हरा धनिया, अदरक, लहसुन आदि का प्रयोग कम मात्रा में किया जाता है अत: उपरोक्त तालिका में इनका उल्लेख नहीं किया गया है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 8.3 : दिन भर के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं योग

भोज्य समूह	सुबह की चाय 6.00 बजे	नाश्ता 8.00 बजे	मध्यकालीन नाश्ता 10.00 बजे	दोपहर का भोजन 1.30 बजे	शाम की चाय 5.00 बजे	रात्रि भोजन से पूर्व 7.00 बजे	रात्रि भोजन 8.00 बजे	रात्रि सोने से पूर्व 9.00 बजे	कुल योग
अनाज	1/2	1+1	–	2+1	1	–	2+1	–	9½
दालें	–	–	–	1	–	–	½+½	–	2
दूध	½	1	–	–	1+½	–	–	1	4
कंद मूल	–	½	–	½	½	–	½	–	2
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	–	–	–	1	–	–	–	–	1
अन्य सब्जियाँ	–	–	–	–	–	1	1	–	2
फल	–	–	1	½	1	–	–	–	2½
शक्कर	1	1	–	–	1	–	–	1	4
घी/तेल		1	–	½+½+1 =2	–	–	½+½+1 =2	–	5

ऊपर दी गई आहार आयोजन तालिका में वृद्धावस्था को ध्यान में रखते हुए अर्द्ध ठोस व तरल भोज्य पदार्थों का समावेश किया गया है साथ–ही–साथ थोड़ी–थोड़ी देर में विभिन्न व्यंजनों को सम्मिलित किया गया है। उपरोक्त आहार से वृद्ध व्यक्ति की पौषणिक आवश्यकताएं पूर्ण हो जायेगी। वृद्ध महिला के लिये आहार आयोजन आप स्वयं कर सकते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–9

गर्भावस्था में आहार आयोजन

अध्याय में आपने गर्भावस्था के दौरान गर्भवती महिला को होने वाली विविध शारीरिक व पोषण संबंधी समस्याओं एवं उनकी बढ़ती हुई पौषणिक आवश्यकताओं के बारे में पढ़ा। एक गर्भवती महिला को अपना स्वास्थ्य उपयुक्त बनाए रखने तथा अपने गर्भस्थ शिशु के पूर्ण यथोचित विकास के लिए सभी भोज्य समूहों में से विविध भोज्य पदार्थों का पर्याप्त मात्रा में चयन तालिका– के अनुसार करना चाहिए।

तालिका 9.1 : गर्भवती महिला के लिए संतुलित आहार (भोज्य इकाइयाँ NIN, 2010)*

भोज्य समूह	ग्राम/ संदर्भ इकाई	कार्य का प्रकार			गर्भावस्था के अतिरिक्त इकाइयाँ
		कम क्रियाशील	मध्यम क्रियाशील	अधिक लिए क्रियाशील	
अनाज	30	9	11	16	–
दालें	30	2	2.5	3	–
दूध (मि.लि.)	100	3	3	3	+2
कंद मूल	100	2	2	2	–
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	100	1	1	1	+0.5
अन्य सब्जियाँ	100	2	2	2	–
फल	100	1	1	1	+1
शर्करा	5	4	6	9	–
घी/तेल	5	4	5	6	+2

नमूने के तौर पर मध्यम कार्यशील गर्भवती महिला के लिये आहार आयोजन तालिका– तथा इकाइयों का विभाजन एवं योग तालिका– 16.4 में दिया गया है।

तालिका 9.2 : मध्यम क्रियाशील महिला के लिये एक दिन का आहार आयोजन तालिका–

भोजन का समय	मेन्यू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्राम/ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह की चाय 6.30 बजे	चाय टोस्ट	1 प्याला 2	दूध शक्कर गेहूँ का आटा (अनाज)	50 5 50	½ 1 1½
नाश्ता 8.00 बजे	खमण	¼ प्लेट	बेसन (दाल)	30	1

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

			छाछ	–	–
			तेल	5	1
	हरी चटनी	–	–	–	–
	सॉस	–	–	–	–
	मठरी	2	आटा (अनाज)	50	1½
			तेल	5	1
	नारियल बर्फी	1	मावा (दूध)	100	1
			नारियल	–	–
			चीनी	5	1
	चाय	1 प्याला	दूध	50	½
			शक्कर	5	1
भोजन से	फलों की	1 प्लेट	सेब, केला, पपीता,		
पूर्व	चाट		अमरूद, अंगूर, अनार,	100	1
11.00 बजे			नीबू (नमक कालीमिर्च)		
दोपहर का	चपाती	3	गेहूँ का आटा (अनाज)	90	3
भोजन			घी	5	1
1.30 बजे	चावल	½ प्लेट	चावल (अनाज)	30	1
	दाल	1 कटोरी	साबुत मसूर (दाल)	30	1
			घी	2.5	½
	पालक आलू	1 कटोरी	पालक (हरी सब्जी)	100	1
	टमाटर सब्जी		आलू (कंद मूल)	50	½
			टमाटर (अन्य सब्जी)	50	½
			तेल	5	1
	छाछ	1 गिलास	छाछ (दूध)	200	½
भोजन के बाद	ऐपल शेक	1 गिलास	सेव	50	1½
			दूध	100	1
4.00 बजे			शक्कर	150	1½
			कटोरी के लिए	5	1
शाम की	कटोरी	1 प्लेट	गेहूँ का आटा (अनाज)	30	1
चाय	चाट		अंकुरित मूँग (दाल)	15	½
5.30 बजे			आलू प्याज	50	½
			तेल	5	1
			हरी चटनी (धनिया पौदीना)	–	–
			मीठी चटनी (सौंठ)	–	–
	नीबू की	1 गिलास	नीबू		
	शिकंजी		शक्कर	5	1

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

रात्रि का भोजन 8.00 बजे	लौकी टमाटर का सूप	1 गिलास	लौकी (अन्य सब्जी) टमाटर (अन्य सब्जी)	75 25	¾ ¼
	चपाती	3	गेहूँ का आटा (अनाज) घी	90 5	3 1
	मटर आलू की सब्जी	1 कटोरी	मटर (अन्य सब्जी) आलू (कंद मूल) प्याज (कंदमूल) टमाटर (अन्य सब्जी) तेल	100 75 25 25 5	1 ¾ ¼ ¼ 1
	फ्रूट कस्टर्ड	1 कटोरी	दूध फल शक्कर	100 50 5	1 ½ 1

नोट : मसाले, हरी मिर्च, हरा धनिया, लहसुन आदि का प्रयोग कम मात्रा में किया जाता है। अत: उपरोक्त तालिका में इनका उल्लेख नहीं किया गया है।

तालिका 9.3 : दिन भर के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य समूह	**सुबह की चाय**	**नाश्ता**	**भोजन से पूर्व**	**दोपहर का भोजन**	**भोजन के बाद**	**शाम की चाय**	**रात्रि का भोजन**	**कुल योग**
अनाज	1½	1½		4		1	3	11
दालें		1		1		½		2½
दूध	½	1½		½	1½	–	1	5
कंद मूल	–	–	–	½	–	½	1	2
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	–	–	–	1	–	–	–	1
अन्य सब्जियाँ	–	–	–	½	–	–	2¼	2¾
फल	–	–	1	–	1		½	2½
शक्कर	1	2	–	–	1	1	1	6
घी/तेल	–	2	–	2½	–	1	2	7½

ऊपर दी गई आहार आयोजन तालिका– से एक मध्यम श्रम करने वाली गर्भवती महिला को सभी पौष्टिक तत्त्वों की दैनिक आवश्यकताएं प्राप्त होंगी। उपरोक्त आहार अनुसार वांछित परिवर्तन करते हुए कम श्रम एवं कठोर श्रम करने वाली गर्भवती महिला के लिए आहार आयोजन आप स्वयं करें। आहार आयोजन करते समय अध्याय में दर्शाये गए सुझावों को ध्यान में रखें।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–10

धात्रीवस्था में आहार आयोजन

जन्म से 6माह तक तथा 6–12 माह तक शिशु अपने पोषण के लिए क्रमशः पूर्ण व आंशिक रूप से मातृ दुग्ध पर ही निर्भर रहता है। माँ के स्तनों से पर्याप्त दुग्ध का स्रवण होता रहे इसके लिए आवश्यक है कि माँ अपने स्वयं के लिए तथा साथ–ही–साथ शिशु के लिए दुग्ध निर्माण व स्रवण हेतु पूर्ण संतुलित आहार तालिका– के अनुरूप ग्रहण करे।

तालिका : धात्रीवस्था के लिए संतुलित आहार (भोज्य इकाइयाँ; NIN, 2010)*

भोज्य समूह	ग्राम/ संदर्भ इकाई	कार्य का प्रकार			धात्रीवस्था के लिए अतिरिक्त इकाइयाँ
		कम क्रियाशील	मध्यम क्रियाशील	अधिक क्रियाशील	
अनाज	30	9	11	16	+1
दालें	30	2	2.5	3	+2
दूध (मि.लि.)	100	3	3	3	+2
कंदमूल	100	2	2	2	–
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	100	1	1	1	+0.5
अन्य सब्जियाँ	100	2	2	2	–
फल	100	1	1	1	+1
शर्करा	5	4	6	9	–
घी/तेल	5	4	5	6	+2

नोट : (1) मांसाहारी धात्री महिलाएं दाल की एक इकाई (30 ग्राम) के बदले अण्डा/मांस/मछली की एक इकाई (50 ग्राम) का उपभोग कर सकती है।

(2) धात्रीवस्था में दाल की अतिरिक्त इकाई की आपूर्ति सूखे मेवों से पूरी की जा सकती है।

(3) 6–12 माह की धात्री अवस्था के दौरान माँ को धीरे–धीरे अपने आहार को कम करते हुए सामान्य अवस्था के अनुसार कर लेना चाहिए। उक्त तालिका के आधार पर एक साधारण श्रम करने वाली धात्री महिला की 2–6माह की स्तनपान की अवस्था तथा मध्यम श्रम करने वाली महिला की 6–12 माह की स्तनपान की अवस्था के लिए एक दिन का आहार आयोजन किया गया है (तालिका–10.1)।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 10.1 : कम श्रम करने वाली धात्री महिला का (2-6 माह) के लिए एक दिन का आहार आयोजन

भोजन का समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह की चाय प्रात: 7.00 बजे	चाय	1 प्याला	दूध	50	½
			शक्कर	2.5	½
	नमकीन बिस्कुट	4	गेहूँ का आटा	30	1
नाश्ता 8.30 बजे	दूध	1 गिलास	दूध	200	2
			शक्कर	2.5	½
	लड्डू	1	गेहूँ का आटा (अनाज)	30	1
			घी	10	2
			शक्कर	10	2
			काजू, बादाम, किशमिश, खोपरा, गोंद, पिस्ता, फूल मखाने (सूखे मेवे)	30	–
मध्यकालीन नाश्ता 11.00 बजे	नमकीन दलिया	1 कटोरी	दलिया (अनाज)	30	1
			मूँग दाल (दाल)	15	½
			लौकी	50	½
			घी	2.5	½
दोपहर का भोजन 1.30 बजे	चपाती	4	गेहूँ का आटा (अनाज)	120	4
			घी	2.5	½
	तोरई की सब्जी	1 कटोरी	तोरई (अन्य सब्जी)	150	1½
			तेल	2.5	½
	अरबी की सूखी सब्जी	1 कटोरी	अरबी (कंदमूल)	100	1
			तेल	2.5	½
	सलाद	1 प्लेट	खीरा (अन्य सब्जी)	100	1
	पापड़	1 बड़ा	मूँग दाल (दाल)	15	½
भोजन के पश्चात् 4.00 बजे	फल	1	अनार	100	1
शाम की चाय 5.30 बजे	चाय	1 कप	दूध	50	½
			शक्कर	2.5	½
	अंकुरित मूँग	1 प्लेट	अंकुरित मूँग (दाल)	30	1
			तेल	2.5	½
भोजन से पूर्व 7.00 बजे	गाजर एवं टमाटर का सूप	1 गिलास	टमाटर (फल)	100	1
			गाजर (कंदमूल)	50	½
रात्रि भोजन 8.30 बजे	चपाती	3	गेहूँ का आटा (अनाज)	90	3
			घी	2.5	½
	मूँग की दाल	1 कटोरी	मूँग छिलका (दाल)	30	1
			घी	2.5	½
	पालक, आलू टमाटर की सब्जी	1 कटोरी	पालक (हरी सब्जी)	150	1½
			आलू (कंदमूल)	50	½
			टमाटर (फल)	50	½
			तेल	2.5	½
	पापड़	एक बड़ा	मूँग दाल पापड़ (दाल)	15	½
सोने से पूर्व 9.00 बजे	दूध	1 गिलास	दूध	200	2
			शक्कर	2.5	½

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 10.2 : दिन भर के भोजन में भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य समूह	सुबह की चाय 7.00 बजे	नाश्ता 8.30 बजे	मध्यकालीन नाश्ता 11.00 बजे	दोपहर का 1.30 बजे	भोजन के पश्चात् 4.00 बजे	शाम की चाय 5.30 बजे	रात्रि भोजन से पूर्व 7.00 बजे	रात्रि भोजन 8.30 बजे	सोने से पूर्व 9.00 बजे	भोज्य समूह की इकाई कुल योग
अनाज	1	1	1	4	–	–	–	3	–	10
दालें	–	–	½	½	–	1	–	1+½	–	3½
दूध	½	2	–	–	–	½	–	–	2	5
कंदमूल	–	–	-	1	–	-	½	½	–	2
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	–	–	–	–	–	–	–	1½	–	1½
अन्य सब्जियाँ	–	–	½	1½	–	–	–	–	–	2
फल	–	–	–	–	1	–	1	–	–	2
शक्कर	½	½	2	–	–	½	–	–	½	4
घी/तेल	–	2	½	1½	–	½	–	1½	–	6

तालिका 10.3 : मध्यम श्रम करने वाली धात्री महिला (6–12 माह) के लिए एक दिन का आहार आयोजन :

भोजन का समय	मेनू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा (ग्रा./ मि.लि.)	भोज्य समूह की इकाई
1	2	3	4	5	6
सुबह की चाय 7.00 बजे	चाय	1 प्याला	दूध	50	½
			शक्कर	5	1
	टोस्ट	2 बड़े	गेहूँ का आटा (अनाज)	30	1
नाश्ता 8.30 बजे	चाय	1 प्याला	दूध	50	½
			शक्कर	5	1
	मूँग दाल मोगर	½ प्लेट	मूँग दाल (दाल)	30	1
			तेल	2.5	½
	सूजी का उत्तपम	1	सूजी (अनाज)	30	1
			दही (दूध)	50	½
			पत्ता गोभी (अन्य सब्जी)	25	¼
			आलू, प्याज (कंदमूल)	50	½
			हरा धनिया हरी मिर्च (स्वादानुसार)	–	–
			तेल	5	1
	हरी चटनी	1 चाय चम्मच	हरा धनिया, हरी मिर्च, नीबू	–	–
	सॉस	1 चाय चम्मच	टमाटर, अदरक, लहसुन	–	–
मध्यकालीन नाश्ता 11.00 बजे	दूध-दलिया	1 कटोरी	दलिया (अनाज)	30	1
			दूध	100	1
			शक्कर	10	2
			घी	2.5	½
दोपहर का भोजन 1.30 बजे	चपाती	3	गेहूँ का आटा (अनाज)	90	3
			घी	2.5	½
	चावल	1 प्लेट	चावल (अनाज)	30	1
	दाल (मसूर)	1 कटोरी	दाल	30	1
			घी	2.5	½

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

1	2	3	4	5	6
	कद्दू की सब्जी	1 कटोरी	कद्दू (अन्य सब्जी)	100	1
			तेल	2.5	½
	बूंदी का रायता	1 कटोरी	दही	100	1
			बूंदी (दाल)	15	½
	पापड़	1 बड़ा	मूँग दाल	15	½
	सलाद	½ प्लेट	मूली, गाजर (कंदमूल)	100	1
शाम की चाय 5.30 बजे	संतरे का रस	1 गिलास	संतरा (फल)	200	2
			शक्कर	5	1
			ब्रेड स्लाइस (दो पीस)	30	1
	चने की दाल के कटलेट्स	चार	चना दाल	30	1
			पालक (हरी सब्जी)	100	1
			तेल	5	1
	हरी चटनी	1 चाय चम्मच	हरा धनिया, हरी मिर्च, नीबू	–	–
	सॉस	1 चाय चम्मच	टमाटर, अदरक, लहसुन	–	–
रात्रि भोजन 8.30 बजे	चपाती	4	गेहूँ का आटा (अनाज)	120	4
			घी	2.5	½
	लौकी की सब्जी	1 कटोरी	लौकी (अन्य सब्जी)	100	1
			तेल	2.5	½
	मेथी, आलू की सब्जी	1 कटोरी	मेथी (हरी सब्जी)	100	1
			आलू	50	½
			तेल	2.5	½
	सलाद	½ प्लेट	खीरा (अन्य सब्जी)	50	½
	पापड़	1 बड़ा	मूँग दाल (दाल)	15	½
रात्रि सोने से पूर्व 9.30 बजे	दूध	1 गिलास	दूध	200	2
			शक्कर	5	1

तालिका 10.4 : दिन भर के भोजन की भोज्य इकाइयों का विभाजन एवं कुल योग

भोज्य समूह	**सुबह की चाय 7.00 बजे**	**नाश्ता 8.30 बजे**	**मध्यकालीन नाश्ता 11.00 बजे**	**दोपहर का भोजन 1.30 बजे**	**शाम की चाय 5.30 बजे**	**रात्रि का भोजन 8.30 बजे**	**रात्रि सोने से पूर्व 9.30 बजे**	**भोज्य समूह की इकाई कुल योग**
अनाज	1	1	1	4	1	4	–	12
दालें	–	1	–	1+½+½	1	½	–	4½
दूध	½	½	1	1	–	–	2	5
कंद मूल	–	½	–	1	–	½	–	2
हरी पत्तेदार सब्जियाँ	–	¼	–	–	1	1	–	2¼
अन्य सब्जियाँ	–	–	–	1	–	1½	–	2½
फल	–	–	–	–	2	–	–	2
शक्कर	1	1	2	–	1	–	1	6
घी/तेल	–	½+1	½	1½	1	1½	–	6

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग—11

दस्त एवं ज्वर के रोगी हेतु आहार आयोजन

सामान्य बीमारियों के उपचार एवं रोकथाम में डॉक्टर की सलाह, दवाइयाँ, स्वच्छता एवं आराम के साथ-साथ उपयुक्त आहार भी महत्त्वपूर्ण है। अध्यसामान्य बीमारियों के उपचार एवं रोकथाम में डॉक्टर की सलाह, दवाइयाँ, स्वच्छता एवं आराम के साथ-साथ उपयुक्त आहार भी महत्त्वपूर्ण है। अध्याय में दिए गए आहारीय उपचार के आधार पर किसी भी आयु वर्ग के व्यक्ति हेतु एक दिन की आहार तालिका तैयार कीजिये।

तालिका 11.1 : अल्पकालीन दस्त के रोगी हेतु एक दिन की आहार तालिका

क्र. सं.	भोज्य समय	मेन्यू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री मात्रा ग्राम/ मि.लि.ग्राम

तालिका 11.2 : दीर्घकालीन दस्त के रोगी हेतु एक दिन की आहार तालिका

क्र. सं.	भोज्य समय	मेन्यू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री मात्रा ग्राम/ मि.लि.ग्राम

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

तालिका 11.3 : ज्वर के रोगी हेतु एक दिन की आहार तालिका

भोज्य समय	मेन्यू/ व्यंजन	परोस मात्रा	सामग्री	मात्रा ग्राम/ मि.लि.ग्राम

अध्याय में वर्णित एवं बाजार में उपलब्ध जीवन रक्षक घोल के पैकेट पर दिए गए निर्देशानुसार जीवन रक्षक घोल बनाने की विधि लिखिए।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–12

भोज्य पदार्थों में मिलावट की जाँच

भोज्य पदार्थ	मिलावटी अवयव	परीक्षण विधि
1. अनाज व दालें	कंकड़, पत्थर, मिट्टी तिनके आदि	–हथेली पर थोड़ा-सा अनाज/दाल लेकर अवलोकन करें।
	बाजरे में एरगोट फफूंदी	–बाजरे में एरगोट काले दानों के रूप में दिखते हैं। बाजरे को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डालने पर फफूंदी लगे दाने ऊपर तैरते हैं व स्वस्थ दाने नीचे बैठ जाते हैं।
	अरहर एवं चने की दाल में केसरी दाल	–ध्यान से देखने पर केसरी दाल नुकीले सिरे एवं धंसी हुई चपटी होती है जबकि अरहर व चने की दाल गोल एवं उभरी हुई होती है।
	अरहर एवं चने की दाल में केसरी दाल	–50 मि.लि. हाइड्रोक्लोरिक अम्ल दाल में मिलाएं व खदकते हुए पानी पर 15 मिनट के लिए रखें। यदि गुलाबी रंग उत्पन्न होता है तो केसरी की उपस्थिति दर्शाता है
	दाल में लेड क्रोमेट एवं मैटानिल पीला रंग	–लगभग 5 ग्राम दाल एक परखनली या काँच के गिलास में लेकर 5 मि.लि. पानी मिलाकर 10–15 मिनट भीगने दें व कुछ बूँदें हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की डालें। पानी का गुलाबी रंग दाल में रंग की उपस्थिति दर्शाता है।
2. दूध एवं दुग्ध पदार्थ	दूध व मावे में उबले आलू, शकरकंदी एवं अन्य स्टार्च	– दूध या दुग्ध पदार्थ पर आयोडीन की कुछ बूँदें डालने पर दूध का नीला रंग स्टार्च की उपस्थिति दर्शाता है।
	दुग्ध से क्रीम निकालकर पानी मिलाना	– दूध का सापेक्षिक घनत्व लेक्टोमीटर से नापने पर 1.026से कम नहीं होना चाहिए। –क्षैतिज तल पर दूध की बूँद डालने पर स्थिर रहती है अथवा बहती है तो पीछे दूध का निशान छोड़ती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

		जबकि पानी मिला दूध तुरन्त बिना दूध का निशान छोड़े बह जाता है।
3. घी व तेल	शुद्ध घी व मक्खन में वनस्पति घी	–परखनली में 1 चम्मच पिघले घी/मक्खन में बराबर मात्रा में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल डालें व एक चुटकी भर शक्कर डालकर –एक मिनट हिलाएँ व 5 मिनट के बाद देखने पर परखनली की निचली परत का गुलाबी लाल होना वनस्पति घी की उपस्थिति को दर्शाता है। कुछ कोलतार रंग भी उपरोक्त सुनिश्चित परीक्षण देते हैं
	मक्खन में कोलतार रंग	–2 ग्राम पिघले मक्खन में ईथर मिलाएं। अब 2 मि.लि. तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल मिलाकर छोड़ दें। निचली परत का गुलाबी रंग कोलतार रंग का द्योतक है।
	सरसों के तेल में आरजीमोन का तेल	–एक परखनली में 5 मि.लि. सरसों के तेल में 5 मि.लि. साँद्र नाइट्रिक अम्ल मिलाएं। तेल में लाल रंग आरजीमोन तेल की उपस्थिति दर्शाता है।
	खनिज तेल	–2 मि.लि. खाद्य तेल में बराबर मात्रा में N2 एल्कोहोलिक पोटाश मिलाएं। मिश्रण को 15 मिनट उबलते हुए पानी में गरम करें व 10 मि.लि. पानी मिलाएं। किसी प्रकार का मटमैलापन खनिज तेल की उपस्थिति दर्शाता है।
	अरण्डी का तेल	–एक परखनली में खाद्य तेल को पैट्रोलियम ईथर में घोलें व नमक तथा बर्फ के मिश्रण में ठण्डा करें। 5 मिनट में किसी भी प्रकार का मटमैलापन अरण्डी के तेल की उपस्थिति दर्शाता है।
4. मसाले काली मिर्च	पपीते के बीज	–ऐल्कोहल में डालने पर काली मिर्च नीचे बैठ जाती है व पपीते के बीज हलके होने के कारण ऊपर तैरते हैं।
पिसी हलदी	हल्दी में मैटानिल पीला रंग	–हल्दी को 20 मि.लि. गुनगुने पानी में मिलाएं व कुछ बूँदें हाइड्रोक्लोरिक अम्ल अथवा कोई भी घर पर उपलब्ध अम्ल डालें यदि पानी की सतह गुलाबी बैंगनी हो जाती है तो मैटानिल पीला रंग की उपस्थिति दर्शाता है।
साबुत लाल	मिर्च लाल मिर्च में रोडामाइन 'बी' रंग	–थोड़ी–सी रुई को पैराफिन में डुबोकर साबुत सूखी मिर्च पर रगड़ने से रुई का लाल रंग मिर्च में लाल रंग की मिलावट दर्शाता है।
पिसी लाल मिर्च	कृत्रिम रंग	–जल में घुलनशील कृत्रिम रंग का पता लगाने हेतु थोड़ी मात्रा में पिसी लाल मिर्च अथवा पिसी

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

नमक व पिसे हुए मसाले	रेत/ईंट का चूरा/बालू लकड़ी का बुरादा	हल्दी को पानी से भरे गिलास की सतह पर भरकने पर जल में घुलनशील रंग की लंबी व पतली धारी के रूप में अग्रेसित होती दिखाई देती है। –नमक को काँच के बीकर या गिलास के पानी में घोलने पर शुद्ध नमक घुल जाता है व साफ घोल प्राप्त होता है जबकि अशुद्ध होने पर बालू नीचे बैठ जाती है।
लौंग	तेल निकली हुई लौंग	–ध्यान से देखने पर तेल निकाली हुई लौंग सिकुड़ी व बेजान–सी लगती है। उनका तीखा स्वाभाविक स्वाद भी कम हो जाता है।
हींग	हींग में गोंद, रेजिन राल आदि	–शुद्ध हींग पानी में घुलकर दूधिया रंग का घोल बनाती है। आग में जलाने से शुद्ध हींग की लौ चमकीली होती है।
5. शक्कर, गुड़	शक्कर में चाक पाउडर	–चीनी को बीकर या काँच के गिलास में पानी में घोलें। बीकर या गिलास की तल पर जमी तह मिलावट दर्शाती है।
	गुड़ में कपड़े धोने का सोडा	–गुड़ में कुछ बूंद हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की डालने पर बुदबुदाहट मिलावट दर्शाता
6. शहद	शहद में शक्कर की चाशनी	–रुई की बत्ती बनाकर शहद में डुबोकर जलाने से बत्ती सहज रूप से जले तो शहद शुद्ध है। मिलावटी शहद की बत्ती नहीं जलेगी और यदि जलेगी तो चर–चर की आवाज आयेगी।
7. चाय पत्ती	चाय पत्ती में काम में ली हुई पत्ती व कृत्रिम रंग	–चाय पत्ती को गीले सोख्ता कागज पर डालने पर भूरा रंग छूटना या कागज का भूरा हो जाना मिलावट दर्शाता है।
कॉफी	कॉफी में चिकोरी पाउडर	–काँच के बीकर या गिलास में पानी लेकर कॉफी पाउडर छिड़कें। कॉफी पाउडर हलका होने के कारण तैरेगा व चिकोरी पाउडर पानी में भूरा रंग छोड़ेगा व भारी होने के कारण तल में बैठ जायेगा।
8. मूँग छिलका दाल एवं हरी सब्जियाँ	मैलाचाइट हरा रंग	–मिलावटी मूंग छिलका दाल अथवा हरी सब्जी एवं हरी सब्जियाँ के नमूने को गीले सोख्ता कागज पर डालने पर हरे रंग के निशान व पानी में डालने पर पेपर का हरा रंग होना मैलाचाइट हरे रंग की मिलावट दर्शाता है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई–3 वस्त्र एवं परिधान

प्रयोग–13

ऐप्रिन एवं टाँकों का निर्माण

1. सिलाई के आधारीय टांके

अत्यन्त प्राचीन काल से वस्त्रों को सिला जा रहा है। सिलाई मशीन के आविष्कार से पूर्व भी कपड़े सिले जाते थे। जैसे–जैसे विकास होता गया सिलाई का भी आविष्कार हुआ। इसके पश्चात् भी कुछ सिलाइयां मशीन से लगाई जाती है। कुछ टांके आज भी हाथ से लगाये जाते हैं।

हम विभिन्न प्रकार के हाथ व मशीन के टांकों द्वारा न केवल वस्त्र की सिलाई करते हैं बल्कि उनको आकर्षक, आरामदायक व उपयोगी भी बना देते हैं। वस्त्रों को सिलने के लिये उपयोग में लाये जाने वाले हाथ एवं मशीन के टांके निम्नलिखित हैं :

(i) कच्चा टांका : दो कपड़ों को आपस में स्थायी रूप से जोड़ने से पहले ये कच्चा टांका लगाया जाता है अथवा तुरपाई को सही दिशा में करने के लिये कच्चे टांके का प्रयोग किया जाता है। कच्ची सिलाई के लिये दूर–दूर टांके लगाये जाते हैं। इसके लिये लम्बे धागे व लम्बी सूई का उपयोग किया जाता है। जब वस्त्र पर पक्की सिलाई हो जाती है, तब कच्ची सिलाई निकाल दी जाती है।

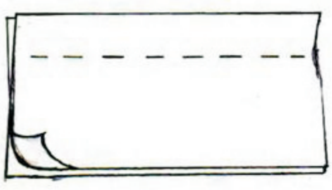

चित्र 13.1 कच्चा टांका

(ii) बखिया टांका : हाथ की सिलाई का यह सबसे मजबूत टांका है। यह टांका मशीन के टांके के समान मजबूत होता है। ये टांके सामने की ओर से मशीन के टांके जैसे दिखाई देते हैं। आल्ट्रेशन के समय कुछ ऐसे भाग होते हैं जहां मशीन द्वारा सिलाई न की जा सके वहां पर बखिया टांके का उपयोग किया जाता है। इस टांके को बनाने के लिये एक सादा टांका लगाया जाता है। अब सूई को वापस पीछे की तरफ उसी जगह से निकालते हैं जहां से पहले निकाली थी और पहले वाले टांके से आगे की ओर ले जाते हैं। अर्थात् हम यह कहें कि सूई एक कदम पीछे और दो कदम आगे की ओर चलती है।

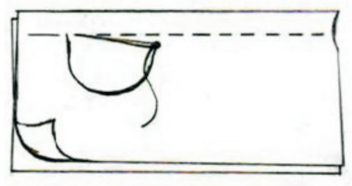

चित्र 13.2 बखिया टांका

(iii) तुरपाई : मशीन और हाथ में लगाये जाने वाले टांकों में सबसे महत्त्वपूर्ण 'स्थायी हस्त टांका' है। सिले हुए परिधान के किनारों को मोड़कर यह टांका लगाया जाता है। तुरपाई परिधान के निचले घेरे, पायजामे, पैंट की मोहरी, गले की पट्टियों, बटन पट्टियां आदि पर की जाती है। इसमें कपड़े के सीधे तरफ टांके न के बराबर दिखाई देते हैं। तुरपाई करने के लिये सर्वप्रथम कपड़े के उस स्थान की अच्छी तरह से प्रेस करें, फिर कपड़े के किनारों को अन्दर की तरफ अच्छी तरह से मोड़ लें। तुरपाई का टांका हमेशा उलटी तरफ से लगाया जाता है। तुरपाई के वस्त्र को बराबर मोड़ते हुए कपड़े को अपने बाएं हाथ की अंगुलियों में फंसाकर, दाएं हाथ से सूई पकड़ कर नीचे वाले हिस्से को लेते हुए ऊपर वाले हिस्से की तरफ छोटा टांका निकालें। इस तरह थोड़ी–थोड़ी दूरी पर टांका लगाते जायें। उलटी तरफ टांका तिरछापन लिये हुए दिखाई देता है।

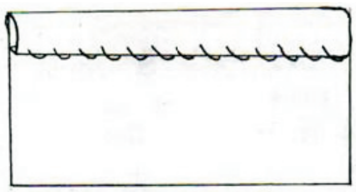

चित्र 13.3 तुरपाई

(iv) चोर सिलाई : यह सिलाई उन वस्त्रों पर लगाई जाती है जिनके किनारे से रेशे सबसे ज्यादा निकलते हैं, जैसे–साटिन, कृत्रिम सिल्क इत्यादि। दोनों कपड़ों को सीधी साइड बाहर की तरफ रख कर कपड़ों के किनारे को सादा सिलाई से सिलें। सिलाई करने के बाद

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

कपड़े को पलट कर उलटे भाग की ओर पड़ने वाली सिलाई को बीच में लेते हुए फिर से टांका लगा दें।

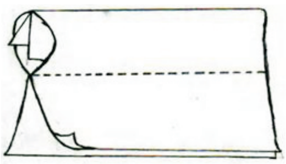

चित्र 13.4 चोर सिलाई

(1) इन्टरलॉक टांका : यह टांका बच्चों के गर्म कपड़े व कम्बलों के किनारों पर सज्जा के लिये लगाये जाते हैं। इसके अलावा फ्रॉक, ब्लाउज आदि के गले व बाँह आदि के किनारों की सुन्दरता बढ़ाने के लिये लगाया जाता है। इसे 'लूप-टाँका' भी कहते हैं। यह हाथ से बनाया जाता है। बायीं ओर से शुरू करते हुए सूई को कपड़े की परत में डालकर, ऊपर किनारे की तरफ आगे को ऊपर डालते हुए लूप बनाते हुए निकालें। इस तरह एक के बाद एक लूप टांका लगाते जाइये। यह टांका धागा न निकले इसके लिये वस्त्रों के किनारे पर लगाये जाते हैं। अगर इस टांके को थोड़ा कस कर बनाएं तो यह ब्लैंकेट टांका कहलाता है। इसे हाथ द्वारा बनाया हुआ इण्टरलॉक टांका भी कहते हैं।

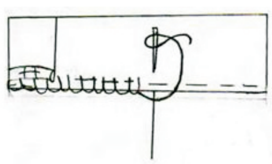

चित्र 13,5 इन्टरलॉकिंग

2. बन्द करने के साधन

अलग-अलग परिधानों को खोलने और पहनने में आसानी हो इसके लिये ही बटन-पट्टियां लगाई जाती है और इन पर बंधक लगाये जाते हैं। अलग-अलग परिधानों पर अलग-अलग तरह के बंधन लगाये जाते हैं, जैसे-पुरुषों की शर्ट पर काज-बटन, पैंट में जिपर, महिलाओं के परिधान में हुक-आई एवं जिपर और बच्चों के परिधानों में प्रेस-बटन, डोरी व कभी-कभी जिपर का उपयोग भी किया जाता है। ये निम्न प्रकार के हैं।

(i) काज-बटन :

कपड़ों की सुन्दरता और अच्छी फिटिंग के लिये काज-बटन किये जाते हैं। बटन लगाने के लिये काज की आवश्यकता होती है। बटन की साइज के अनुसार काज बनाने चाहिये, जैसे-छोटे बटन छोटे काज, बड़े बटन बड़े काज। जैसा कि हमें ज्ञात हैं ये पुरुषों के परिधानों में सबसे ज्यादा उपयोग में लाये जाते हैं। शर्ट की दायीं पट्टी पर बटन व बायीं पर काज बनाया जाता है। परिधान की बटन पट्टी पर जितना बड़ा काज बनाना है उतना निशान लगा कर कपड़े को दोहराकर तेज धार की कैंची से कट लगायें। कटे किनारों पर बारीक कच्चा टांका लगायें। इसके बाद पास-पास में लूप टांका कसकर (ब्लैंकेट टांका) बनाते हुए काज भरना शुरू करें। इस प्रकार दोनों किनारों पर लूप टांके गोलाई में भरकर काज बनाइये।

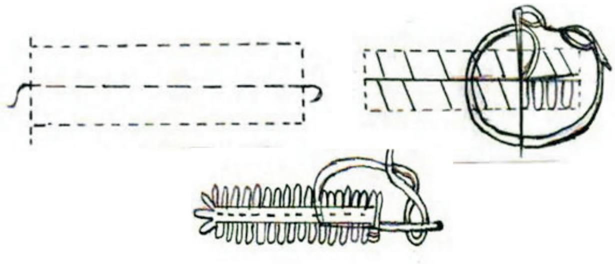

चित्र 13.6

काज बटन की प्रक्रिया

(ii) बटन : बटन शर्ट की दायीं बटन पट्टी पर लगाये जाते हैं। बायीं बटन पट्टी पर लगे काज की दूरी के अनुसार निशान लगाकर बटन लगाये जाते हैं। बटन कई साइज और कई प्रकार के होते हैं। छोटे व बड़े और दो छेद वाले व चार छेद वाले। अत: परिधान पर निर्भर करता है कि कौन सा बटन लगाया जाये। इसको लगाने हेतु शर्ट की रंग के दोहरे धागे का इस्तेमाल करते हैं। निशान पर बटन को सही प्रकार से जमा कर दो छेद या चार छेद के अनुसार, छेद में से सूई निकालें। कपड़े के निचले हिस्से तक सूई को बाहर निकालना चाहिये। इस तरह से कई बार सूई निकाल कर बटन को मजबूती से लगाना चाहिये। बटन के उठाव व मजबूती हेतु बटन को कपड़े की सतह से ऊपर उठाकर बटन के नीचे और कपड़े के ऊपर गोलाई में धागा घुमाकर टांका पक्का करना चाहिये। इस प्रकार करने से बटन सतह से थोड़ा-सा ऊपर उठ जाते हैं और काज में लगाने पर आसानी रहती है।

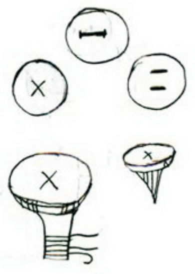

चित्र 13.7 बटन लगाना

(iii) हुक एवं आई :

हुक : इन बन्धनों का उपयोग ज्यादातर महिलाओं के परिधान में किया जाता है। हुक इस प्रकार के मेटल के बने होते हैं जिन पर जंग नहीं लगता। ये परिधान की दायीं तरफ वाली बटन पट्टी पर लगाये जाते हैं। सर्वप्रथम जहां हुक लगाने हैं वहां पर निशान लगा लें। (समान अन्तराल पर) हुक को निशान लगे स्थान पर रख कर चित्रानुसार गोलाई में सूई द्वारा दोहरे धागे को चार-पांच बार निकाल लें। अब हुक की गर्दन पर भी इसी तरह से धागे को दो-तीन बार निकालें और पक्का कर लें। हुक साधारण टांके व बटन होल स्टिच से भी सफाई के साथ लगाये जाते हैं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

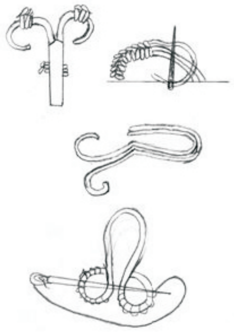

चित्र 13.8 हुक एवं आई

आई : आई भी दो प्रकार की होती है। एक धातु की बनी होती है जिसे हुक के समान ही लगाया जाता है। दूसरी धागे से तैयार की जाती है। धातु से बनी आई को निशान पर रखते हुये दोहरे धागे से साधारण या बटन होल स्टीच से लगायें। धागे से आई बनाने के लिये कपड़े पर निशान लगायें और उस निशान पर धागा लेकर कपड़े के नीचे से एक सिरे से कुछ दूरी पर दूसरा सिरा बनाकर 3-4 बार धागा निकालें। अब इसे काज टांके से मढ़ दें।

3. जिपर या चेन :

इसे सामान्य बोलचाल की भाषा में चेन या जिप कहते हैं। सामान्यत: यह बन्धन पुरुष व महिलाओं के साथ बच्चों के परिधान में भी लगाया जाता है। इसे लगाना आसान है। जिप के दोनों हिस्सों पर नायलॉन के फीते पर दाँते लगे होते हैं। इन फीतों को परिधान की पट्टियों पर रख कर मशीन से सावधानीपूर्वक सिल दिया जाता है।

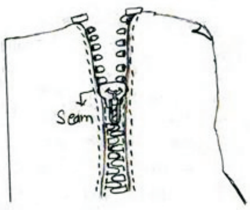

चित्र 13.9 जिपर या चेन

3. पैबन्द लगाना एवं रफू करना

परिधान को प्रयोग में लाने के दौरान कभी-कभी वह फट जाता है। कई बार परिधान किसी बाहरी वस्तु में फंस या अटक कर फट जाता है। कई बार किसी विशेष स्थान पर लगने वाले बार-बार के घर्षण से फट जाता है। परिधान जिस हिस्से में फटा होता है उसके अलावा सारा मजबूत और सही स्थिति में होता है। ऐसे में परिधान की मरम्मत करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। परिधान के फटने और किस्म के आधार पर दो तरह से मरम्मत की जाती है रफू और पैबन्द लगा कर।

(i) रफू करना : रफू करने के लिये लम्बी और बारीक सूई की आवश्यकता होती है। रफू करने के लिये कपड़े की बनावट के अनुसार ही धागा लेना चाहिये या वस्त्र के ही धागे का प्रयोग करना चाहिये। वस्त्र के किनारे या सीवन को खोलकर धागा निकाला जा सकता है। सर्वप्रथम कपड़े के ताने-बाने की दिशा को देख लें। कपड़े को फ्रेम में लगाकर रफू करें ताकि झोल न पड़े। इसके बाद चित्रानुसार खड़ी रेखाओं में ढीला धागा डालें। टांके इतने लम्बे हों कि फटे स्थान से 1/2 सेंटीमीटर कपड़े के ऊपर आ जायें। (फटे स्थान के चारों तरफ) इससे धागे निकलने का भय नहीं होगा व कपड़ा भी मजबूत रहेगा। अब आड़ी दिशा में रेखाएं डालनी है एक धागे को उठाते हुए और एक धागे को दबाते हुए। पूरे स्थान पर रफू हो जाने के पश्चात् वस्त्र पर इस्तिरी करके एकसार कर लें।

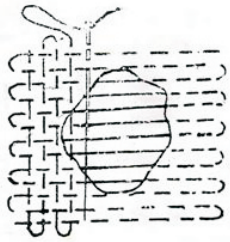

चित्र 13.10 रफू करना

(ii) पैबन्द लगाना : जब वस्त्र अधिक फट जाये या ऐसे फट जाये जिसकी मरम्मत रफू द्वारा नहीं की जा सकती हो तो फटे स्थान पर उसी परिधान का दूसरा टुकड़ा सफाई के साथ लगा देना ही 'पैबन्द लगाना' है। इससे फटे हुए हिस्से पर आई कमजोरी दूर हो जाती है और परिधान सुदृढ़ हो जाता है। पैबन्द लगाने के लिये मूल वस्त्र का कपड़ा ही सर्वोत्तम रहता है। यदि कपड़ा टेढ़ा-मेढ़ा फटा हो तो फटे हुए स्थान के आस-पास का जितना कपड़ा कमजोर या अनियमित हो उसको चौकोर, त्रिकोण, वर्गाकार, गोल या अन्य किसी आकृति में काटकर निकाल देना चाहिये। पैबन्द लगाने वाला कपड़ा फटे हुए स्थान से 2-3 से.मी. लम्बाई व चौड़ाई में अधिक होना चाहिये ताकि फटा हिस्सा ढक जाये और किनारे आसानी से मोड़े जा सकें। पैबन्द वाले टुकड़े को फटे हुए स्थान पर कपड़े की बनावट के अनुसार रखकर सीधी ओर से टांका लगायें फिर कपड़े को उलट कर कटे हुए छिद्र के किनारों पर अच्छे से बखिया या तुरपन करनी चाहिये। पैबन्द वाले टुकड़े को चारों ओर से 1 से.मी. मोड़ कर बखिया या तुरपाई कर दें।

गर्म वस्त्रों में पैबन्द लगाकर किनारे मोड़ने नहीं चाहिये या पैबन्द वाले कपड़े को मूल कपड़े के साथ रफू कर देना चाहिये। छपे हुए, धारीदार व चैक वाले कपड़े पर पैबन्द लगाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि पैबन्द की छपाई व धारी, कपड़े की छपाई व धारी से मिल जाये।

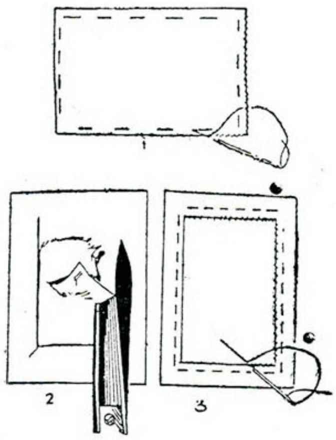

चित्र 13.11 पैबन्द लगाने के चरण

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

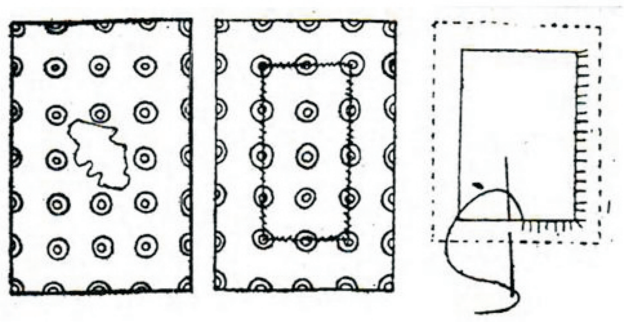

चित्र 13.12 छपे हुए वस्त्र पर पैबन्द लगाना

4. ऐप्रन सिलना

तैयार नाप :

लम्बाई = 32''

चौड़ाई – 24''

अनुमानित कपड़ा : प्रिन्टेड–1 मीटर

प्लेन कपड़ा– 1/2 मीटर (पाइपिन के लिये)

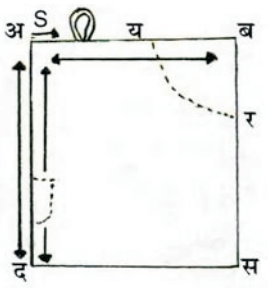

चित्र 13.13 आरेखन

आरेखन : ब्राउन पेपर पर चित्र की सहायता से आरेखन बनायें।

नाप के अनुसार ब्राउन पेपर लें।

अब ब्राउन पेपर को चौड़ाई की तरफ से दोहरा करें।

किनारों को नाम दें, अ, ब, स तथा द।

अ से ब = 12''

अ से द = 32''

अ द = ब स

अ ब + द स

अ से य = 5½''

ब से र = 10''

य को र से गोलाई देते हुए मिलायें। इस तैयार ड्राफ्ट को काटकर पेपर पैटर्न तैयार करें।

ऐप्रन काटना : कपड़े पर पेपर पैटर्न जमाकर काट लें। ध्यान रखें कि कपड़े को लम्बवत ही काटें।

प्लेन कपड़े की 1 इंच चौड़ी उरेब पट्टियां काटें।

सिलाई करना :

* लगभग 40–50 इंच लम्बी एक उरेब पट्टी जोड़कर बना लें।
* सर्वप्रथम य से य, तक पाइपिंग लगा लें।
* दस इंच पट्टी को छोड़कर र से पट्टी लगाते हुए य तक जोड़ें।
* य से 10–12 इंच उरेब को गले में पहनने के लिये छोड़ते हुए फिर से य, से र, तक पट्टी लगायें।
* पूरी उरेब पट्टी को दोहरा मोड़ कर सिल लें।
* द से स तक नीचे घेर में भी पाइपिंग लगा दें।
* मनचाही आकृति की जेब पाइपिंग लगाते हुए लगायें।

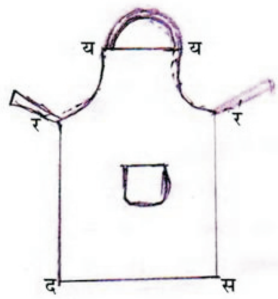

चित्र 13.14 एप्रेन

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–14

तैयार पोशाक का मूल्यांकन

हम सभी कभी–न–कभी अपने स्वयं या परिवार के किसी सदस्य के लिये बाजार से तैयार पोशाक का चयन अवश्य करते हैं। अत: आप किसी भी एक पोशाक (फ्रॉक/सलवार कमीज) का निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर मूल्यांकन कर परिणाम प्रायोगिक पुस्तिका में लिखें।

पोशाक का नाम ....

उम्र ....   लिंग ....

क्र.सं.	जांच के बिन्दु	परिणाम
1.	पोशाक का नाप	
2.	कपड़ा	
3.	सीवन	
4.	तुरपाई	
5.	बटन पट्टी/चुन्नट	
6.	बंधक	
7.	लेस/पाइपिन/ डोरियां/कशीदा	
8.	लेबल	

निष्कर्ष :

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–15

धब्बे छुड़ाने की विधियाँ

विभिन्न प्रकार के धब्बों को पहचान कर, उनके वर्ग को और उनकी प्रकृति को जानकर उपयुक्त विधि से धब्बों को वस्त्रों से सावधानीपूर्वक हटाना चाहिये। धब्बों को छुड़ाने में शीघ्रता नहीं करनी चाहिये बल्कि धैर्य के साथ हटाने चाहिये। शीघ्रता करने और आधे–अधूरे ज्ञान के कारण वस्त्र के खराब होने की सम्भावना रहती है। धब्बे छुड़ाने की प्रक्रिया में वस्त्र की प्रकृति, बनावट एवं रंग का ध्यान रखना चाहिये। ऐसे विरंजकों का प्रयोग न करें, जिससे वस्त्रों का रंग और वस्त्र खराब हो जाये। यहां पर धब्बों को छुड़ाने की विधि दी जा रही है। इनकी सहायता से प्रायोगिक में इन धब्बों को छुड़ाकर प्रायोगिक पुस्तिका में लिखें।

प्रतिकर्मकों के तनु घोल बनाने की विधियाँ : सामान्य तौर पर अधिकांश धब्बे साबुन–पानी के उपयोग से छूट जाते हैं। परन्तु कुछ धब्बों को छुड़ाने के लिये अवशोषकों, घोलकों, रसायनों एवं प्रतिकर्मकों का उपयोग करना पड़ता है। इन रसायनों का प्रयोग वस्त्रों को हानि पहुंचा सकता है अत: इनके तनु घोल बना कर प्रयोग करना चाहिये। इन्हें बनाने की विधियाँ निम्न है :

निर्देश– एक पिण्ट= 20 औन्स

(i) सोडियम हाइपोक्लोराइट : एक भाग गर्म पानी में एक भाग सोडियम हाइपोक्लोराइट मिलाकर तनु घोल तैयार करें।

(ii) सोडियम परबोरेट : एक चाय का चम्मच सोडियम परबोरेट को एक पिण्ट गर्म पानी में मिलाकर घोल बनायें।

(iii) हाइड्रोजन परॉक्साइड : छ: भाग ठण्डा पानी और एक भाग हाइड्रोजन परॉक्साइड को मिलाकर घोल तैयार करें।

(iv) सोडियम हाइड्रोसल्फाइट : 2 पिण्ट पानी में 1/2 oz सोडियम होइड्रोसल्फाइट को मिलायें।

(v) वाशिंग सोडा : एक चाय का चम्मच वाशिंग सोडा को एक पिण्ट पानी में घोलकर तैयार करें।

(vi) बोरेक्स : एक बड़ा चम्मच बोरेक्स को एक पिण्ट गर्म पानी में मिलायें।

(vii) ऑक्जेलिक एसिड : एक बच्चे चम्मच ऑक्जेलिक एसिड को एक पिण्ट पानी में मिला कर लकड़ी के पात्र में रखें।

तालिका 15.1 : विभिन्न धब्बों को छुड़ाने की विधियाँ

क्र.सं.	धब्बा	दशा	वस्त्र		
			सफेद सूती एवं लिनन	रेशमी व ऊनी	कृत्रिम
1.	चाय, कॉफी	ताजा	(i) गर्म पानी की धार धब्बे पर डालें। (ii) साबुन–पानी से तुरन्त धोयें। (iii) नीबू नमक लगा कर गर्म पानी से धोयें।	सफेद सूती वस्त्र के समान।	सोडियम परबोरेट के तनु घोल से साफ करें।
		पुराना/ शुष्क	(i) ग्लिसरीन एवं बोरेक्स के तनु घोल से।	हाइड्रोजन परॉक्साइड के तनु घोल से	रेशमी व ऊनी वस्त्र के समान

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

2.	सब्जी	ताजा पुराना/ शुष्क	(i) साबुन तथा गुनगुने पानी से धोएं व धूप में सुखायें। (i) बोरेक्स के तनु घोल से।	सफेद सूती वस्त्र के समान बोरेक्स के घोल से साफ करने के बाद हाइड्रोजन परॉक्साइड का घोल	सफेद सूती वस्त्र के समान सोडियम परबोरेट से
3.	मक्खन व घी	ताजा पुराना/ शुष्क	(i) गरम साबुन के घोल से धोना (ii) वस्त्र पर अवशोषक पदार्थ डाल दें। वस्त्र पर अवशोषक पदार्थ डाल कर दो ब्लॉटिंग पेपर के बीच रख कर गरम प्रेस करें। (ii) अपमार्जक को गर्म पानी में घोलकर वस्त्र धोयें।	सूती वस्त्रों के समान सूती वस्त्र के समान	सूती वस्त्र के समान सूती वस्त्र के समान
4.	अण्डा	ताजा पुराना/ शुष्क	ठण्डे जल व साबुन से धोओ। जब तक धब्बा न छूटे नमक के घोल में वस्त्र को डाले रखो।	सूती वस्त्र के समान नमक के घोल में	सूती वस्त्र के समान नमक के घोल में
5.	स्याही	ताजा पुराना/ शुष्क	(i) टमाटर के रस को दाग पर लगायें। (ii) खट्टे दही या कच्चे दूध से (iii) नमक और नीबू लगाकर (i) तनु ऑक्जेलिक अम्ल में भिगोकर तनु बोरेक्स के घोल से साफ करें। (ii) इससे पहले साबुन-पानी से भी साफ करें।	सूती वस्त्र के समान सूती वस्त्र के समान	सूती वस्त्र के समान सूती वस्त्र के समान
6.	लिपिस्टिक	ताजा पुराना/ शुष्क	(i) साबुन पानी से साफ करें। (ii) स्प्रिट को रुई पर लगा कर स्पंज विधि से साफ करें। (iii) धब्बों के ऊपर-नीचे ब्लॉटिंग पेपर लगाकर गर्म इस्तिरी करें। (i) ऊपर दी गई विधि को पुनः दोहरायें।	सूती वस्त्र के समान सूती वस्त्र के समान	सूती वस्त्र के समान घोलक, मिट्टी का तेल या

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

			(ii) जैवेल वाटर से धब्बे को विरंजित करें।		तारपीन के तेल से स्पंज विधि से साफ करें।
7.	रक्त	ताजा	(i) ठण्डे पानी व साबुन और अपमार्जक के घोल से धोयें (ii) तनु अमोनिया के घोल से धोयें	ठण्डे जल में धोयें सूती वस्त्र के समान	ठण्डे जल में धोयें सूती वस्त्र के समान
		पुराना/ शुष्क	(i) सतह पर जमे सूखे रक्त को रगड़ कर साफ करें। (ii) ठण्डे जल में नमक के घोल में धब्बा साफ होने तक भिगोयें फिर साबुन से धोयें (एक औंस नमक व आधा लिटर पानी)	स्टार्च का गाढ़ा घोल लगा कर सूखने दें। ब्रश से रगड़ कर साफ करें।	रेशमी व ऊनी वस्त्रों के के समान
8.	ग्रीस	ताजा	(i) गरम जल-साबुन से धोयें (ii) धब्बे के दोनों तरफ अवशोषक पदार्थ लगाकर ब्लॉटिंग पेपर के बीच रखकर इस्तरी करें।	(i) सूती वस्त्र के समान (ii) पुराने व ताजा धब्बे के लिये अगर वस्त्रों को धो न सकें तो अवशोषक पदार्थ लगाकर, ब्लॉटिंग पेपर के बीच रख इस्तिरी करें।	(i) सूती वस्त्र के समान (ii) रेशमी व ऊनी वस्त्र के समान
		पुराना/ शुष्क	(i) किसी भी घोलक जैसे-पेट्रोल, कार्बन टेट्राक्लोराइड एवं मिथाइलेटेड स्प्रिट से स्पंज विधि द्वारा साफ करें।	सूती वस्त्र के समान	सूती वस्त्र के समान
9.	जंग	ताजा	(i) धब्बे पर नीबू या दही लगाकर गर्म पानी डालें। (ii) मिट्टी का तेल लगा कर साबुन पानी से धोयें (iii) ऑक्जेलिक अम्ल व बोरेक्स के घोल का उपयोग करें।	सूती वस्त्र के समान	सूती वस्त्र के समान

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

10.	रंग	पुराना/ शुष्क ताजा, पुराना	(iv) चूने के लवणों के घोल में डुबोयें जैवेल वाटर के उपयोग से साफ करें। साबुन-पानी से साफ करें। (ii) जल मिश्रित अम्ल या क्षार का प्रयोग करें। (iii) अल्कोहल, अमोनिया या तनु एसिटिक एसिड का प्रयोग करें। (iv) विरंजकों का प्रयोग करें। (रंगीन वस्त्र पर सावधानीपूर्वक) (v) जैवेल वाटर का प्रयोग करें।	सूती वस्त्रों के समान (i) सूती वस्त्रों के समान (ii) अम्लों का हलका घोल बना कर (iii) पक्के रंगों के वस्त्रों को विरंजकों के घोल से धो कर तुरन्त जैवेल वाटर का प्रयोग करें।	सूती वस्त्रों के समान (i) सूती वस्त्र के समान (ii) रेशमी व ऊनी वस्त्र के समान

धब्बे छुड़ाने के उपरान्त निम्न तालिका को पूरा करें :

क्र. सं.	धब्बा	पहचान का तरीका	प्रकृति	उपयोग में आये पदार्थ	धब्बा छुड़ाने हेतु उपयोग ली गयी विधि	परिणाम

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–16
जल के तापमान का वस्त्रों पर प्रभाव

तालिका 16.1 : जल के तापमान का वस्त्रों पर प्रभाव

क्र. सं.	वस्त्र	जल का तापमान	प्रभाव
1.	सफेद सूती	जल का ठण्डा/गर्म होना।	कोई प्रभाव नहीं। अधिक गन्दे होने पर गुनगुने पानी का इस्तेमाल कर सकते हैं।
2.	सूती व लिनन के रंगीन वस्त्र	ठण्डा गर्म या गुनगुना पानी	कोई हानिकारक प्रभाव नहीं। रंगीन वस्त्रों को भिगो कर रखने पर रंग खराब हो जाते हैं। अन्यथा कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
3.	ऊनी वस्त्र	* ठण्डा पानी * गर्म पानी * गुनगुना पानी	–कोई हानिकारक प्रभाव नहीं। –ऊनी वस्त्रों को हानि पहुंचाता है। पानी के गर्म ताप से रेशे आपस में जुड़ जाते हैं, लचक व परिसज्जा भी खराब हो जाती है। –भी प्रयोग किया जा सकता है अधिक गंदे वस्त्रों के लिए।
4.	रेशमी	ठण्डा पानी गर्म व गुनगुना पानी	कोई हानिकारक प्रभाव नहीं (रेशमी वस्तरों को शुष्क धुलाई के माध्यम से ही साफ करवाना चाहिए) रेशों व वस्त्रों को हानि पहुंचाता है। रेशे सिकुड़ जाते हैं।

अध्यापिका के निर्देशन में विभिन्न वस्त्रों को गर्म, ठण्डे व गुनगुने पानी से धोयें और अपना निरूपण (निष्कर्ष) प्रायोगिक पुस्तिका में लिखें।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–17
वस्त्र शोधक बनाने की विधियाँ

I. साबुन

आवश्यक सामग्री–

कास्टिक सोडा 250 ग्राम

तेल (नारियल, अलसी, तिल या महुए या रतनजोत का तेल) 1 लिटर

पानी 1 लिटर

मैदा या बेसन 250 ग्राम अथवा 250–500 ग्राम घीया भाटा

विधि :

1. मिट्टी के पात्र में कास्टिक सोडा डाल कर धीरे–धीरे पानी मिलाइये और 6घंटों तक घोल को छोड़ दें।
2. अब कास्टिक सोडे वाले पात्र में तेल धीरे–धीरे धार से डालें और लकड़ी के डण्डे से हिलाते जायें ।
3. तेल व पानी एक सार होने पर मैदा या बेसन अथवा घीया भाटा मिलायें।
4. उपर्युक्त मिश्रण को साबुन के साँचों अथवा आयताकार ट्रे या टब में जमा दें। ठण्डा होने और जमने पर बट्टियों के रूप में चाकू या मोटे मजबूत धागे की सहायता से काटें।

II. डिटरजेण्ट पाउडर

आवश्यक सामग्री :

(i) सोडा एश – 4 किलो

(ii) सोडा बाई कार्ब (खाने का सोडा) – 1 किलो

(iii) एसिड स्लरी – 1 किलो

(iv) पानी – 500 मि.लि.

(v) रंग – 2 ग्राम

विधि :

1. हाथों पर रबर या प्लास्टिक के दस्ताने पहनें।
2. सोडा एश एवं सोडा बाई कार्ब को छलनी से छान लें।
3. पानी को गुनगुना कर प्लास्टिक बाल्टी में डाल दें।
4. पानी में एसिड स्लरी धीरे–धीरे डालते जायें और लकड़ी के डण्डे की सहायता से हिलाते जायें।
5. पत्थर के फर्श पर सोडे के मिश्रण की ढेरी बनाकर बीच में जगह बनाएं और स्लरी का घोल डाल दें।
6. लकड़ी के डण्डे तथा हाथ (दस्ताने पहन कर) की सहायता से मिश्रण में रंग भी मिला दें।
7. मिश्रण को छलनी से छानें और हवा में सुखा कर थैलियों में पैक करें।

III. तरल साबुन

आवश्यक सामग्री :

(I) एसिड स्लरी – 450 ग्राम

(ii) यूरिया – 200 ग्राम

(iii) कास्टिक – 100 ग्राम

(iv) ट्राई सोडियम फॉस्फेट – 15 ग्राम

(v) सोडियम सी.एम.सी.– 15 ग्राम

(vi) पानी– 4 लिटर

विधि :

1. 4 लिटर पानी में क्रमानुसार ऐसिड स्लरी, यूरिया, कॉस्टिक, ट्राई सोडियम फॉस्फेट एवं सोडियम सी.एम.सी. मिलाऐं। उपर्युक्त मिश्रण को कीप की सहायता से बोतल में भरे व लेबल लगाऐं।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

इकाई–4 पारिवारिक संसाधन प्रबंधन

प्रयोग–18
बैंक संबंधित प्रायोगिक कार्य

बैंकों में जमा व निकासी के फार्म भरवाना

(i) बैंकों में धन जमा करने हेतु एक स्लिप दी जाती है जिसे बचत खाता जमा पर्ची कहते है। इसे भरकर साथ में राशि देकर धन जमा करवाया जाता है। इसके बदले में बैंक रसीद देता है।

(ii) बैंक से धन निकासी करना– बैंक से पैसा निकालने के लिए निकासी तथा चैक का उपयोग किया जाता है। चैक का उपयोग करने के लिए बैंक द्वारा चैकबुक दी जाती है लेकिन शर्त यह रहती है कि व्यक्ति के खाते में हमेशा कम से कम पांच सौ या बैंक द्वारा निर्धारित रूपये होना आवश्यक है। निकासी पत्र के साथ पासबुक होना आवश्यक है, तभी बैंक द्वारा भुगतान किया जाता है। पासबुक में विवरण लिख दिया जाता है।

(अ) चैक (Cheque) – चैक बैंक द्वारा जारी किया गया एक साख पत्र होता है जिसमें चैक लिखने वाला व्यक्ति अपने बैंक को आदेश देता है कि उसके खाते से चैक लाने वाले अथवा उस व्यक्ति को जिसके नाम लिखा गया है। चैक में लिखी धनराशि का भुगतान करे। चैक में निम्नलिखित जानकारी भरनी पड़ती है।

1. रूपये प्राप्त करने वाले व्यक्ति का नाम (जैसे श्री रमेश सिंह), प्राप्तकर्ता यदि स्वयं हो तो सैल्फ शब्द लिखा जाता है।
2. जितनी रकम का चैक काटना हो, उतने रूपये अंकों में तथा अक्षरों में लिखने के बाद अंत में सिर्फ लिखा जाता हे।
3. चैक के दाहिनी ओर खातेदार को अपने हस्ताक्षर करने पड़ते है। चैक के बायीं ओर नीचे की तरफ खाता क्रमांक लिखा जाता है तथा चैक में ऊपर दाहिनी ओर दिनांक लिखी जाती है।

चैक के प्रकार

चैक निम्न प्रकार के होते हैं:

1. वाहक चैक (Bearer cheque) – इस चैक में वाहक शब्द लिखा होता है इस चैक का तुरन्त भुगतान होता है। कोई भी व्यक्ति इससे रूपये ले सकता है। इस चैक का दोष यह है कि चोरी हो जाने, या गुम हो जाने पर प्राप्तकर्ता आसानी से इसका भुगतान प्राप्त कर सकता है। सुरक्षा की दृष्टि से यह चैक उचित नहीं है। यदि कभी गुम जाए तो बैंक को सूचित करना चाहिए ताकि बैंक उस चैक का भुगतान रोक दें।

2. आदेशित चैक (Order cheque) – इसमें जिस व्यक्ति का नाम लिखा रहता है वही भुगतान प्राप्त कर सकता है जो व्यक्ति स्वयं नहीं आ सकते वे चैक के पीछे अन्य व्यक्ति का नाम लिखकर उसके हस्ताक्षर को अधिकृत कर स्वयं हस्ताक्षर करते हैं तब बैंक द्वारा भुगतान किया जाता है। ये चैक सुरक्षित रहते हैं।

रेखांकित चैक (Crossed cheque) – ये सर्वाधिक सुरक्षित चैक है। इसमें चैक का भुगतान नगद न करके उस व्यक्ति के खाते में जमा किया जाता है इसमें चैक के ऊपर बांयी ओर दो समानांतर तिरछी रेखाएँ खींच दी जाती हैं। इसे चैक का रेखांकन कहते हैं।

बैंक में खाता खोलना

आपने पिछले अध्याय में बचत करने के महत्व के बारे में विस्तार से पड़ा। इस अध्याय में आपने विभिन्न संस्थाओं के माध्यम द्वारा बचत को विनियोजित करने के तरीकों के बारे में जानकारी प्राप्त की। सैद्धांतिक रूप से ज्ञान अर्जित करने के साथ–साथ डाकघर या बैंक में खाता कैसे खोला जाये, उस खाते में बचत की राशि को कैसे जमा करवाया जाये तथा आवश्यकता पड़ने पर खाते में से रूपये कैसे निकलवाये जाये आदि बातों को स्वयं करना भी आना चाहिये। अतः इस प्रायोगिक के अन्तर्गत अपने शिक्षक के साथ डाकघर या किसी बैंक में जाकर इन संस्थाओं के अधिकृत कार्यकर्ता को बैंक में बुलाकर खाते सम्बंधी विभिन्न प्रपत्र (फार्म) भरकर अनुभव प्राप्त करें। इस सम्बंध में बैंक में खाता कैसे खोल सकते है तथा उसका उपयोग किस प्रकार कर सकते है। इसकी जानकारी निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत दी जा रही है–

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

खाता खोलना–

1. बैंक में जिस प्रकार का खाता खोलना है उस प्रकार का फार्म बैंक से प्राप्त करना पड़ता है।
2. फार्म में पूछी गई आवश्यक जानकारी जैसे– नाम, पिता / पति का नाम, पता, व्यवसाय, दिनांक इत्यादि भरें।
3. साथ ही एक घोषणा पत्र भरें। जिसमें यह घोषणा करनी पड़ती है कि व्यक्ति ने बैंक के सब नियम पढ़ लिये है और वह इन्हें स्वीकार करता है।
4. खाता खोलते समय फार्म पर तथा अन्य एक कार्ड पर हस्ताक्षर करवाये जाते है। खातेदार को वैसे ही हस्ताक्षर करने चाहिये जैसे वह हमेशा करता है।
5. जो व्यक्ति हस्ताक्षर करना नहीं जानते, उनसे अगूँठा लगवाया जाता है तथा राजपत्रित अधिकारी द्वारा उसका सत्यापन करवाया जाता है व पासबुक में खातेदार का फोटो लगवाया जाता है।
6. फार्म पर परिचयकर्ता के हस्ताक्षर करवाये जाते है। परिचयकर्ता ऐसा व्यक्ति होना चाहिये, जिसे बैंक भलीभांति जानता है। वह बैंक के स्टॉफ के सदस्य हो, या कोई अन्य व्यक्ति हो।
7. फार्म पूरा भरने के बाद जितनी राशि का खाता खोलना हो उतनी राशि बैंक में जमा कर उसकी रसीद फॉर्म पर लगा दी जाती है।
8. बैंक अधिकारी पूर्ण जांच करने के बाद खाता खोलने की सहमति देता है व बैंक द्वारा खाता क्रमांक दिया जाता है।
9. बैंक द्वारा एक पासबुक दी जाती है। इसमें व्यक्ति का नाम, खाता क्रमांक, व्यक्ति का पता एवं पासबुक जारी करने की तिथि रहती है और अंदर खाते से संबधित लेन–देन का विवरण लिखा रहता है।
10. पासबुक गुम हो जाने या पता परिवर्तन होने पर बैंक को सूचित करना चाहिये। बैंक द्वारा नयी पासबुक बनाकर दी जाती है।

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

प्रयोग–19

विभिन्न वस्तुओं के लेबल का मूल्यांकन एवं लेबल तैयार करना

I विभिन्न वस्तुओं के लेबल का मूल्यांकन

आपने सैद्धान्तिक रूप से मानक चिन्ह वाले उत्पादों के बारे में सम्बन्धित जानकारी विभिन्न उपभोक्ता अध्यायों में प्राप्त कर ली है। इसके बारे में प्रायोगिक जानकारी प्राप्त करना भी अति आवश्यक है। अतः आप अपने घर, विद्यालय, पड़ौसियों, रिश्तेदारों या फिर दुकान पर जा कर निम्नलिखित वस्तुओं पर मानक चिन्हको पहचानें तथा इस बारे में सारणी में दिये गये विभिन्न बिन्दुओं के माध्यम से जानकारी प्राप्त करें।

क्र. सं.	वस्तु का नाम	ब्राण्ड का नाम	गुण चिन्ह है/नहीं	कौनसा चिन्ह	सही/गलत	चिन्ह साफ/धुंधला	चिन्ह	
							पैकेट पर	डिब्बे या शीशी पर
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.								
2.								
3.								
4.								
5.								
6.								
7.								
8.								
9.								
10.								
11.								
12.								
13.								
14.								
15.								

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

II लेबल तैयार करना

आप के घर में एक लघु गृह उद्योग चलता है जिसके अन्तर्गत आपके परिवार वाले निम्नलिखित वस्तुओं का उत्पादन करते हैः

(i)	तैयार मसाले	(v)	साबुन
(ii)	शहद	(vi)	पापड़
(iii)	घी,	(vii)	बड़ी इत्यादि
(iv)	अचार		

इनमें से किसी एक वस्तु का लेबल अध्याय में दिये गये बिन्दुओं को ध्यान में रखकर बनाइये। नमूने, के रूप में एक लेबल नीचे दिया गया है।

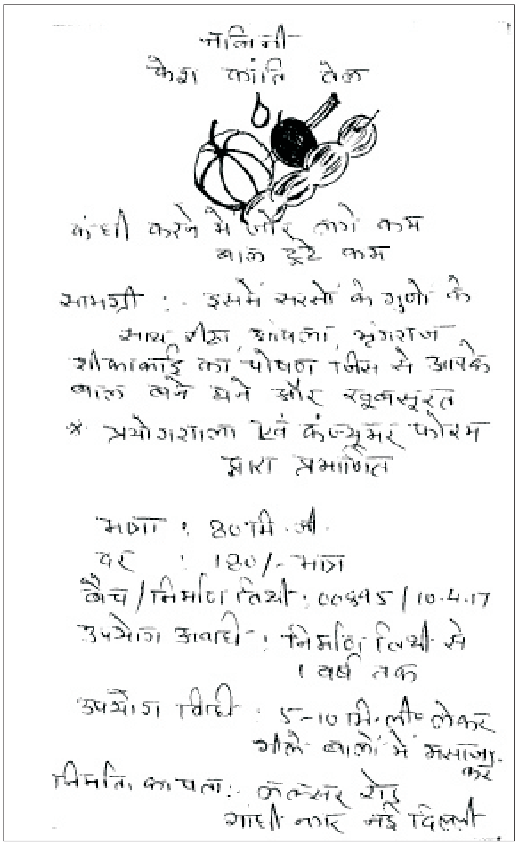

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Downloaded from https:// www.studiestoday.com

Bibliography / ग्रंथ सूची

- बेला भार्गव (1998) वस्त्र विज्ञान एवं धुलाई कला यूनिवर्सिटी बुक हाऊस, जयपुर
- बेला भार्गव (2012) गृह प्रबन्ध, साधन व्यवस्था एवं आन्तरिक सज्जा, यूनिवर्सिटी बुक हाऊस, जयपुर
- माया चौधरी, मधु शर्मा एवं ऋतु सिंघवी (2008), गृह विज्ञान (भाग 1 व 11), माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर
- वृन्दा सिंह (2011), आहार एवं पोषण विज्ञान, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
- वृन्दा सिंह (2011), गृह प्रबन्ध एवं आन्तरिक सज्जा, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
- वृन्दा सिंह (2011), वस्त्र विज्ञान एवं परिधान, पंचशील प्रकाशन, जयपुर

- Bhargava B. (2008) Family Resource Management & Interior Decoration, University Book House (P) Ltd. Jaipur.
- Das, A. Gupta, P and Banerjee, A (2000) Text Book of Home Science. Class XII, Arya Depot, New Delhi.
- Deulkar, D. (1998) Househeld Textiles and Laundary Work, Atma Ram & Sons, Delhi.
- Gopalan C., Shastri, Rama B.V. and Bala Subramanian, S.C. (2004). Nutritive Value of Indian Foods, NIN, ICMR, Hyderabad.
- ICMR (2010). Nutrient requirement and recommended dietary allowances for Indian Council of Medical Research, New Delhi.
- Jacob, T. (1976) Food adulteration, The MacMillan Company of India Ltd. Delhi.
- Khanna, K. (1997). Text Book of Nutrition and Dietetics, Phoenix Publishing House

Downloaded from https:// www.studiestoday.com